ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal

द्विभाषी राष्ट्रसेवक

वर्ष : 73 ❖ अंक : 10 ❖ जनवरी, 2024

मंच पर विराजमान समिति के कार्याध्यक्ष श्री भारत भूषण महंत, केंद्रीय हिंदी निदेशालय और केंद्रीय हिंदी संस्थान, भारत सरकार के निदेशक प्रो. सुनील बाबुराव कुलकर्णी, असम के माननीय राज्यपाल **श्री गुलाब चंद जी कटारिया**, दिल्ली विश्वविद्यालय के पूर्व हिंदी विभागाध्यक्ष प्रो. मोहन एवं समिति के मंत्री डॉ. क्षीरदा कुमार शइकीया (क्रमशः बाएं से)।

दीक्षांत समारोह को संबोधित करते हुए असम के माननीय राज्यपाल श्री गुलाब चंद जी कटारिया और उपस्थित अतिथि एवं गणमान्य व्यक्ति गण।

माननीय राज्यपाल श्री गुलाब चंद कटारिया जी के कर-कमलों से समिति का सर्वोच्च सम्मान **'राष्ट्रभाषा गौरव'** प्राप्त करते हुए वरिष्ठ प्रचारक सर्वेश्वर महंत, सकलदीप राय, मेघनाथ मुसाहारी और शंकर प्रसाद साहू (क्रमशः बाएं से)।

माननीय राज्यपाल श्री गुलाब चंद कटारिया जी के कर-कमलों से प्रवीण उपाधिपत्र प्राप्त करते हुए स्नातक-स्नातिका गण।

भाषण प्रदान करते हुए विशिष्ट अतिथि प्रो. सुनील बाबुराव कुलकर्णी, प्रो. मोहन तथा समिति के मंत्री डॉ. क्षीरदा कुमार शइकीया (क्रमशः बाएं से)।

RNI NO. ASSBIL/2009/31008 ISSN : 2321-4945

एक हृदय हो भारत जननी

द्विभाषी राष्ट्रसेवक

(भाषा, साहित्य, समाज, कला व संस्कृति विषयक शोध-पत्रिका)

UGC CARE Listed Journal

वर्ष : 73 **अंक : 10** **जनवरी, 2024**

परामर्श मंडल

श्री भारतभूषण महंत
कार्याध्यक्ष, असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति
गुवाहाटी (असम)

डॉ. किरण हाजरिका
सम कुलपति, इंदिरा गांधी मुक्त विश्वविद्यालय
नयी दिल्ली-68

प्रो. आर.एस. सर्राजु
सम कुलपति, हैदराबाद विश्वविद्यालय
तेलंगाना-500046

प्रो. प्रदीप के शर्मा
प्रोफेसर, हिंदी विभाग
सिक्किम केंद्रीय विश्वविद्यालय
काजी रोड, गंगटोक, सिक्किम - 737101

डॉ. दीपक प्रकाश त्यागी
प्रोफेसर, हिंदी विभाग
दीन दयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय
गोरखपुर (उत्तर प्रदेश)

डॉ. दिलीप कुमार मेधि
प्रोफेसर, हिंदी विभाग
गौहाटी विश्वविद्यालय, गुवाहाटी (असम)

डॉ. अमूल्य चंद्र बर्मन
पूर्व अध्यक्ष, हिंदी विभाग
कॉटन विश्वविद्यालय, गुवाहाटी (असम)

डॉ. अच्युत शर्मा
पूर्व अध्यक्ष, हिंदी विभाग
गौहाटी विश्वविद्यालय, गुवाहाटी (असम)

प्रधान संपादक

डॉ. क्षीरदा कुमार शइकीया
मंत्री, असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति

संपादक

प्रो. मोहन
हिंदी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय
दिल्ली-1

कार्यकारी संपादक

रामनाथ प्रसाद
प्रभारी साहित्य सचिव
असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति

असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, गुवाहाटी

DWIBHASHI RASTRASEWAK : A Bilingual (Hindi & Assamese) Monthly Research Journal, Focused on Language, Literature Society, Art and Culture, Partially funded by Central Hindi Directorate, Govt. of India and Published by Asom Rastrabhasha Prachar Samiti, Rupnagar, Guwahati-781032.

प्रकाशक :

असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति

गुवाहाटी-32

संपादकीय कार्यालय :

प्रधान संपादक, द्विभाषी राष्ट्रसेवक

असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति

सेवा मंदिर पथ, रूपनगर, गुवाहाटी-32

फोन : 9101541395, 9101541380

ई-मेल : rastrasewak51@gmail.com

सहयोग राशि : 100/- (प्रति अंक)

शब्द संयोजन : रतिकांत कलिता

आवरण पृष्ठ : समिति के दीक्षांत समारोह का एक दृश्य

असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति की ओर से मंत्री डॉ. क्षीरदा कुमार शइकीया द्वारा सराइघाट फोटो टाइप्स प्रा.लि., इंडस्ट्रियल इस्टेट, गुवाहाटी-781021 में मुद्रित, प्रकाशित एवं प्रसारित।

सर्वाधिकार : **असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, गुवाहाटी-32**

'द्विभाषी राष्ट्रसेवक' में प्रकाशित रचनाओं के विचारों से असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति का सहमत होना आवश्यक नहीं है। प्रकाशित सामग्री के उपयोग हेतु प्रकाशक की अनुमति आवश्यक है। सभी कानूनी विवादों का निपटारा गुवाहाटी न्यायालय के अधीनस्थ होगा।

विषय सूची

क्रम	विषय	लेखक	पृष्ठ
	हिंदी विभाग		
	संपादकीय		*5*
1.	असमीया साहित्य में चित्रित भारत के स्वतंत्रता-संग्राम की चेतना	✍ डॉ. रीतामणि वैश्य	7
2.	'अपने-अपने पिंजरे' के उनवान और तजुर्बे पर एक सोच	✍ प्रो. डॉ. मनु	16
3.	हिंदी नाट्य साहित्य में मोहन राकेश का योगदान	✍ डॉ. राजकुमार मोबी सिंह	21
4.	हिंदी कविता और किसान जीवन	✍ प्रो. चंद्रकांत सिंह	25
5.	स्त्री अस्मिता : वर्तमान संदर्भ में	✍ डॉ. शैलजा	31
6.	'काला जल' उपन्यास और आंचलिकता	✍ डॉ. दिनेश साहू	35
7.	महाभोज : लोभ और लाभ की राजनीति	✍ डॉ. संजीव मंडल	42
8.	क्रांतिकारी पुरखिन मीरा	✍ डॉ. रीता नामदेव	50
9.	भारतीय शिक्षा प्रणाली में शिक्षण का बदलता स्वरूप	✍ डॉ. पवन कुमार दुबे	56
10.	ऑनलाइन शिक्षा प्रोग्राम प्रज्ञाता दिशा-निर्देश के प्रति शिक्षकों का दृष्टिकोण : एक अध्ययन	✍ डॉ. रुचि दुबे ✍ डॉ. विधु शेखर पाण्डेय	63
11.	'ढिबरी टाइट' कहानी संग्रह में अभिव्यक्त समाज के विभिन्न स्वरूप	✍ पूर्णिमा सिंह	72
12.	मतांतरण का बोध-विचार एवं व्यवहार	✍ डॉ. कँवर चंद्रदीप सिंह ✍ लकी शर्मा	77
13.	'बात यह नहीं है' कहानी संग्रह में अभिव्यक्त लोक जीवन का सामाजिक पक्ष	✍ बर्णाली खाउंड	83
14.	स्त्री वेदना को प्रकट करता भोजपुरी लोकगीत	✍ सौरभ कुमार	88
15.	व्यंग्यात्मकता की दृष्टि से 'अंधेर नगरी' नाटक : एक अध्ययन	✍ जीनामणि बड़ो	92
16.	भारत को आत्मनिर्भर बनाने में हिंदी भाषा का योगदान	✍ गायत्री ✍ रोबिन	97
17.	समिति समाचार		102

অসমীয়া বিভাগ

18. মিচিং ভাষা ঃ সংকট আৰু সম্ভাৱনা	✍ ত্রিনয়ন দলে ✍ ড° হীৰা মান্না দাস	104
19. চর্যাগীতৰ সাংগীতিক বিচাৰ	✍ ড° নন্দিতা গোস্বামী	111
20. অসমীয়া ভাষাত হিন্দী ভাষাৰ প্রয়োগ ঃ এটি সমাজভাষাবৈজ্ঞানিক বিশ্লেষণ	✍ ড° পুষ্পাঞ্জলি হাজৰিকা	116
21. জাতিভেদৰ বিচাৰ আৰু ভূপেন হাজৰিকাৰ গীত	✍ ড° লুইছ গগৈ	121
22. অদৃশ্যমান সুযোগেৰে আমাৰ সমাজৰ নিবনুৱাসকলক সংস্থাপন দিয়াৰ ক্ষেত্রত ই-নিয়োগৰ ভূমিকা ঃ এক অধ্যয়ন	✍ ৰিমঝিম বৰুৱা বৰা ✍ ড° চয়নিকা সেনাপতি	126
23. মনোৰমা দাস মেধিৰ গল্পত অসম আন্দোলনৰ প্রতিফলন ('নাগৰিক' আৰু 'বিস্ফোৰণৰ পিছত' গল্প দুটাৰ প্রসঙ্গত)	✍ জুনুমণি ডেকা	132
24. মিচিং কথিত অসমীয়াৰ ধ্বনিতত্ত্ব ঃ এটি বিশ্লেষণ	✍ ৰিন্‌চিন্‌ বৰুৱা ✍ ড° দিলাপ ৰাজবংশী	141
25. মহিম বৰাৰ চুটি গল্পত পৰিবেশ চিত্রণৰ ভূমিকা ঃ এটি অৱলোকন	✍ চিক্‌মি বৰা ড° প্রফুল্ল কুমাৰ নাথ	148

❑ ❑ ❑

संपादकीय

राष्ट्रभाषा से विश्व भाषा की ओर

ईस्ट इंडिया कंपनी के सिपाही मंगल पाण्डे ने बैरकपुर में ही 29 मार्च 1857 को एक अंग्रेज अफसर पर गोली चलाई। अपने साथियों से बगावत की अपील की। इस घटना को ही सन् 1957 की ब्रिटिश हुकूमत के विद्रोह की शुरुआत माना जाता है।

भारतीय स्वाधीनता आंदोलन के दौरान भारत की राष्ट्रभाषा के रूप में हिंदी का विकास एक महत्वपूर्ण घटना है। इसका सर्वाधिक श्रेय हिंदीतर भाषी क्षेत्र के समाज सुधारकों, साहित्यकारों एवं राजनीतिज्ञों को जाता है। राष्ट्रभाषा हिंदी को राष्ट्रीय-सांस्कृतिक एकता की भाषा के रूप स्वीकार किया गया। इस दिशा में दयानंद सरस्वती, केशवचंद्र सेन, बाल गंगाधर तिलक, राजगोपालाचारी एवं महात्मा गाँधी ने पहल की। स्वाधीनता आंदोलन में हिंदी की भूमिका एक राष्ट्रीय प्रतीक के रूप में उभरी। जैसे राष्ट्रीय ध्वज, राष्ट्रगीत इसी तरह से राष्ट्रभाषा। हिंदी पूरे देश में एकता, जागरण, समन्वय एवं मानवता की प्रतीक बनी। महात्मा गाँधी ने राष्ट्रभाषा हिंदी को राष्ट्रीय एकता एवं स्वाधीनता आंदोलन का हथियार बना दिया। इसी हथियार के सहारे महात्मा गाँधी ने पूरे राष्ट्र को एक सूत्र में पिरोने का स्वप्न देखा था। इसकी परिणति दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा के रूप में हुई। महात्मा गाँधी ने सन् 1917 में गुजरात के भड़ौंच में गुजरात शिक्षा परिषद् के अधिवेशन में हिंदी के महत्व को घोषित किया। सन् 1920 में गुजरात विद्यापीठ की स्थापना हुई। उसी समय हिंदी पढ़ना अनिवार्य कर दिया था। सन् 1934 की बात है। महात्मा गाँधी के अनुगामी बाबा राघव दास ने बापू के निर्देश पर असम प्रांत में हिंदी प्रचार की नींव डाली। फलस्वरूप गुवाहाटी, जोरहाट, शिवसागर और डिब्रुगढ़ में राष्ट्रभाषा हिंदी के प्रचार का कार्य शुरू हुआ। असम के कई युवक एवं युवतियों ने काशी, प्रयाग एवं गोरखपुर से हिंदी की शिक्षा ली।

बाबा राघव दास अपने आश्रम बरहज से असम की प्रचार-व्यवस्था चलाते रहे। उस समय असम में समिति की स्थापना नहीं हुई थी। धीरे-धीरे प्रचार समिति की आवश्यकता होने लगी। इसी को ध्यान में रखकर असम के प्रथम मुख्यमंत्री लोकप्रिय गोपीनाथ बरदलै के आग्रह से 3 नवंबर 1938 को असम हिंदी प्रचार समिति नामक एक संस्था की स्थापना की गई। इसके संस्थापक अध्यक्ष बने लोकप्रिय गोपीनाथ बरदलै। आगे चलकर आवश्यकता के अनुरूप इसका नाम पड़ा - असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति। लोकप्रिय गोपीनाथ बरदलै के प्रोत्साहन से कार्यकर्ताओं में उत्साह की लहर दौड़ गई। दिसंबर 1945 में महात्मा गाँधी ने असम की अंतिम बार यात्रा की थी। स्वाधीनता के लिए जब-जब आंदोलन तेज हुआ, तब-तब हिंदी की प्रगति का रथ भी तीव्रगति से आगे बढ़ा। हिंदी राष्ट्रीय चेतना का प्रतीक बन गई। नेतृत्व देने वाले नेताओं ने पहचान लिया था कि विगत 600-700 वर्षों से हिंदी संपूर्ण भारत की एकता का कारक रही है। यह संतों, फकीरों, व्यापारियों, तीर्थयात्रियों एवं सैनिकों द्वारा देश के एक भाग से दूसरे भाग में प्रयुक्त होती रही है।

अपना देश बहुभाषी है। शताब्दियों से अपनी-अपनी भाषाओं का प्रयोग करते हुए प्रयोक्ता देश को एक सूत्र में बाँधने में सफल रहे हैं। इन प्रयोक्ताओं ने सांस्कृतिक अस्मिता दी। इसमें सफल भी हुए कि विचार और भावना के क्षेत्र में सहमति के आधार पर देश का विकास हो। हिंदी विश्व की दूसरी सर्वाधिक प्रयुक्त भाषा है। इसे बोलने एवं समझने वालों की संख्या अधिक है। आरंभ से ही हिंदी का विकास संपर्क भाषा के रूप में हुआ। यह हमारी अपनी भाषा है। अपनेपन की भाषा है। इसीलिए इसे जनतंत्र की विजय-गाथा का नाम दिया गया। इस भाषा ने भारत की कई भाषाओं के साथ अटूट संबंध बनाया। मनुष्य के अंदर भाषा ही एक ऐसा व्यापार, व्यवहार एवं लक्षण है, जो प्रकृति की देन है। भाषा हमारे जीवन के सबसे नजदीक होती है और उसी के बारे में हम सबसे कम जानते हैं। ऐसा इसलिए है कि भाषा हमें एक मिली मिलाई चीज लगती है। दूसरी चीजों का हम उपयोग करते हैं। उन्हें जाँचने-परखने में हम माहिर होते हैं। उनकी गुणवत्ता और प्रकृति के प्रति पूर्ण सजग होते हैं। भाषा हमारे समाजीकरण का माध्यम है। हर पल वह हमसे आबद्ध है। भाषा-प्रयोक्ता होने के नाते भाषा के प्रति एक सकारात्मक और व्यापक दृष्टिकोण अपनाना चाहिए। भाषा-प्रयोग से ही व्यक्ति की पहचान संभव हो पाती है। थोड़ी-सी बात करने पर हम जान जाते हैं कि व्यक्ति किस क्षेत्र का है और उसका संस्कार कैसा है। उसकी सांस्कृतिक पृष्ठभूमि कैसा है। कोई भी भाषा चाहे वह एक अल्पसंख्यक समुदाय द्वारा बोली जाती हो या बहुत बड़े समुदाय द्वारा - वह उतनी ही सक्षम है, जीतनी कि दूसरी भाषा। हर भाषा संप्रेषण में सक्षम है।

हिंदी का अपना गौरवशाली अतीत रहा है और विकासशील वर्तमान भी है। इसी के साथ हिंदी विश्व के भविष्य और भारतीत के विश्व की भाषा है। अंत में मैं इस अंक के सभी सम्मानित लेखकों को साधुवाद देता हूँ। ❑

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

आलेख

असमीया साहित्य में चित्रित भारत के स्वतंत्रता-संग्राम की चेतना

डॉ. रीतामणि वैश्य

सह प्राध्यापक, हिंदी विभाग
गौहाटी विश्वविद्यालय
9435116133
ritamonibaishya841@gauhati.ac.in

1.1. भारतीय स्वतंत्रता संग्राम और असम :

भारतीय स्वाधीनता आंदोलन का इतिहास बहुत लंबा है। सन 1885 ई. में स्थापित भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के नेतृत्व में हमारे देश में स्वतंत्रता आंदोलन का प्रारंभ होता है। शेष भारत की तरह असम के लोग भी स्वतंत्रता आंदोलन में कूद पड़े थे। सन 1826 ई. के यंडाबू संधि की शर्त के अनुरूप असम ब्रिटिश के अधीन आता है। इस घटना के कुछ समय बाद सन 1828 ई. और सन 1830 ई. में असम में ब्रिटिश के विरुद्ध विद्रोह होता है। सन 1857 ई. के विद्रोह ने असम को भी पूरी तरह प्रभावित किया था। सन 1905 ई. में अंग्रेज सरकार द्वारा घोषित बंग भंग के विरोध का ज्वार सारे देश में फैल गया था। सन 1920-21 ई. में महात्मा गांधी ने अंग्रेज सरकार के विरुद्ध अहिंसा नीति से असहयोग आंदोलन का प्रारंभ किया था। इसी समय से अर्थात सन 1920 ई. से भारत के स्वतंत्रता आंदोलन असम पर गहरा प्रभाव छोड़ने लगा था और यह प्रभाव स्वतंत्रता प्राप्ति तक रहा। असमीया साहित्य की विविध विधाओं में स्वाधीनता आंदोलन का चित्रण मिलता है।

1.2. असमीया कविता में स्वाधीनता संग्राम :

असमीया काव्य जगत में कई ऐसे कवि हुए, जिन्होंने अपनी रचनाओं से अपने देश के प्रति गहन प्रेम की अभिव्यक्ति दी है। ये कवि कभी प्रत्यक्ष रूप से देश की स्वतंत्रता की बात करते हैं तो कभी देश के सनातन मूल्यबोध, अतीत गौरव का गान करते हैं। कमलाकांत भट्टाचार्य की कविताओं में स्वदेश प्रीति की चिंगारी देखी जाती है। लक्ष्मीनाथ बरुवा, चंद्रधर बरुवा, नीलमणि फूकन, नलिनीबाला देवी, प्रसन्नलाल चौधुरी, बिनंद बरुवा, अतुलचंद्र हजारिका, पद्मधर चलिहा, ज्योतिप्रसाद अगरवाला, हेमकांत बरुवा, विष्णुप्रसाद राभा आदि की कविताओं में देश प्रेम की धारा बहती है। हेमचंद्र गोस्वामी और राधानाथ फूकन की गीति कविताओं में स्वदेश प्रेम मिलता है। कर्मवीर नवीन चंद्र बरदलै की कविताओं में राजनीतिक चेतना और संग्राम के भाव मिलते हैं। वे एक सच्चे देशकर्मी थे। लोगों में देशात्मबोध के अभाव को देखकर कवि उन्हें जागृत करने का प्रयास करते हैं।

भारत को अंग्रेजों से मुक्त कर स्वाधीन करना बरदलै की कविताओं का मूल लक्ष्य है। देश के वीर-वीरांगनाओं को साहस की वाणी देते हुए वे लिखते हैं-

'आमार बिरल पण
पूर्ण स्वाधीनता लभिम लभिम
आगत थै मरण।'[1]

अर्थात-

है हमारा विरल पण
पूर्ण स्वाधीनता मिलेगी मिलेगी
सामने रख मरण।

कवि पद्मनाथ गोहाईं बरुवा की कविताओं में देशोद्धार के महान मंत्र मिलते हैं। कवि लोगों में स्वाधीनता की चेतना के संचार के लिए लिखते हैं-

'चेतना उदिछे चोवा बल बुद्धि साह लोवा
देशर दुर्गति
आजि समस्यार दिने दूर करौं प्रतिक्षण
स्थिर करा मति।'[2]

अर्थात-

चेतना उदित हुई देखो बल बुद्धि साहस लो
देश की दुर्गति
आज समस्या के दिन दूर करें प्रतिक्षण
स्थिर करो मति।

अंबिकागिरी रायचौधुरी की कविताओं में देश की स्वाधीनता के तीखे स्वर सुनने को मिलते हैं। देश रक्षा के रण में समवेत आम जनता के कंठ को कवि ने शब्दबद्ध किया है। सन 1926 ई. के पांडू कांग्रेस का उद्घाटन गीत लिखते हुए कवि की स्वतंत्रता की ललक देखी जा सकती है-

'आजि बंदो कि छंदेरे समागत बिराट
नरनारायण रूप
पंकिल पराधीन कुंचित छित्त मन
नाइ फुल चन्दन धूप।'[3]

अर्थात-

आज छंद से वंदन करता हूँ
एकत्रित विराट

भारतीय स्वराज आंदोलन को खत्म करने के लिए अंग्रेजों ने कई हथकंडे अपनाए थे। इसमें से प्रमुख था 'फूट डालो और राज करो' की नीति। वे सदियों से सद्भाव से रह रहे भारतवर्ष के हिंदू और मुसलमानों में भेदभाव लाने में सक्षम हुए थे। आवाहन युग के इन कहानीकारों ने अपनी कहानियों से यह संदेश दिया था कि ऐसी चिंता समस्त मानवता के लिए चुनौती है। लक्ष्मीधर शर्मा की कहानी 'चिराज', महम्मद बाहारुद्दिन अहमद की 'आदर्श अनुसरण', ज्ञाननाथ बरा का 'मइ हिंदू', प्रभातचन्द्र गोस्वामी की 'कबिता शेष', महीचन्द्र बरा की 'जीवन अमिया' आदि कहानियों में हिंदू और मुसलमानों में एकता स्थापित करने का प्रयास किया गया।

नरनारायण रूप
पंकिल पराधीन कुंचित चित्त मन
नहीं फूल चन्दन धूप।

कवयित्री नलिनीबाला देवी की कविताएँ देशभक्ति की प्रतीक हैं। कवयित्री देश के युवाओं पर पूर्ण आस्था रखती हैं-

'भारतीये बिचारिछे
शताब्दीर संचित पापर
ग्लानिमय दासत्वर शापर मुकुति
.....
बिचारिछे तरुणर
जीवनर श्रेष्ठ अवदान।'[4]

अर्थात-

भारती चाह रहा है
शताब्दी के संचित पापों से
ग्लानि की दासता के शाप से मुक्ति
.....
चाह रहा है तरुणों के
जीवन का श्रेष्ठ अवदान।

1.3. असमीया उपन्यासों में स्वाधीनता संग्राम :

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के नेतृत्व में भारतवर्ष में

स्वाधीनता आंदोलन के प्रारंभ होने के समय ही असमीया उपन्यास साहित्य की धारा का भी शुभारंभ होता है। भारत के स्वतंत्रता आंदोलन के विविध स्तरों का प्रभाव असमीया उपन्यास में पड़ा है। स्वाधीनता संग्राम की पृष्ठभूमि में लिखे गए कई असमीया उपन्यास मिलते हैं। इन उपन्यासों को इन कोटियों में रखा जा सकता है–

1.3.1. स्वाधीनता आंदोलन के प्रत्यक्ष प्रभाव से लिखे गए उपन्यास

1.3.2. स्वाधीनता आंदोलन के परोक्ष प्रभाव से लिखे गए उपन्यास

1.3.3. कथानक को आंशिक रूप से प्रभावित करने वाले उपन्यास

1.3.4. पात्रों के द्वारा स्वाधीनता आंदोलन को चित्रित करने वाले उपन्यास

1.3.5. उप-घटनाओं और संवादों को आंदोलन को चित्रित करने वाले उपन्यास

1.3.1. स्वाधीनता आंदोलन के प्रत्यक्ष प्रभाव से लिखे गए उपन्यास :

प्रत्यक्ष रूप से इस आंदोलन को केंद्र में रखकर लिखे गए उपन्यासों की संख्या कम है। ऐसे तीन उपन्यास मिलते हैं– पशुपति भरद्वाज का 'रङा तेज' (1967), वीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य का 'मृत्युंजय' (1970) और कांचन बरुवा का 'अशांत प्रहर' (1977)। 'रङा तेज' बयालीस के आंदोलन के ज्वलंत परिवेश पर आधारित है। स्वाधीनता आंदोलन के अंतिम स्तर पर उभरे आंदोलन के हिंसात्मक रूप का चित्रण यहाँ किया गया है। रेलवे पुल को उखाड़ना, तराबान हवाई अड्डे के निर्माण कार्य में आगजनी, बरनगर पोस्ट ऑफिस और स्कूल में आगजनी, बरनगर थाने पर आक्रमण कर वहाँ राष्ट्रीय ध्वज फहराना आदि घटनाओं को उपन्यास में मूर्त किया गया है।

'मृत्युंजय' उपन्यास में भी भारतीय स्वाधीनता आंदोलन के अंतिम स्तर की कहानियों को कथानक के रूप में चुना गया है। असम के नगांव जिला और उसके निकटवर्ती अंचलों को केंद्र में रखकर पूरे असम को लिया गया है। भारत के स्वाधीनता आंदोलन के दोनों रास्तों– हिंसा और अहिंसा पर उपन्यास को केंद्रित किया गया है। बयालीस के आंदोलन का एक स्पष्ट रूप इस उपन्यास के जरिए प्रकाशित हुआ है। उपन्यास में कई ध्वंसात्मक घटनाओं के प्रसंग प्रभावी रूप से रखे गए हैं, जिनमें से मिलिटरी की आपूर्ति को बंद कर देना, पुल उखाड़ना, रेल गिराना, टेलीफोन के तार काटना आदि प्रमुख हैं। उपन्यास की इन पंक्तियों में ऐसी गतिविधियों का चित्रण देखिए–

'भिभिरामर मनर बंध दुवार हठाते खोल खाइ गॅल। धनपुरेइ पताका तुलिछिल। सेइदिनाइ ताक सि माति नि शांतिसेनात भर्ति करि 'करिम बा मरिम' पण लोवाले। शांतिसेनाबोरे केंप करि आछिल कामपुरर ओचरते। धनपुर केंपलै नगॅल धूमपान बंध करिब लागे बुलि। भिभिरामहँतर खङउठिछिल,किन्तु नेताबोर ग्रेप्तार है योवार पिछत कर्मीबोरक कर्मसूची दिब लगा हॅल। कर्मसूची हॅल मिलिटेरीर योगान बंध करि दलङभाङियातायात भंग करा।'[5]

अर्थात– भिभिराम के मन का दरवाजा अचानक से खुल गया। धनपुर ने ही पताका फहराया था। उसी दिन उसे ले जाकर उसे शांतिसेना में भर्ती कराया था और 'करेंगे या मरेंगे' प्रण दिलाया था। शांतिसेना कामपुर के पास कैंप में थी। धूम्रपान छोड़न न पड़े, इसीलिए धनपुर कैंप नहीं गया था। भिभिराम लोगों को गुस्सा आया था, पर नेताओं के कैद हो जाने से उन्हें कर्मियों को कार्यसूची देनी पड़ी। कार्यसूची थी मिलिटेरी की आपूर्ति बंद कर पुल तोड़कर यातायात बंद करना।

कांचन बरुवा का 'अशांत प्रहर' स्वाधीनता की पृष्ठभूमि पर आधारित अन्य एक उपन्यास है। उपन्यास में आंदोलन के अंतिम स्तर की हिंसात्मक और अहिंसात्मक गतिविधियों का स्वर प्रमुख है। दूसरे विश्वयुद्ध में असम के अशांत परिवेश से आश्रय लेकर मुक्तिकामी युवा द्वारा मिलिटरी की रेल गिराने का चित्रण यहाँ मिलता है।

1.3.2. स्वाधीनता आंदोलन के परोक्ष प्रभाव से लिखे गए उपन्यास :

भारत के स्वतंत्रता आंदोलन को चित्रित करने वाले उपन्यासों के अध्ययन से यह देखा जाता है कि लगभग

आधे उपन्यासों में स्वाधीनता आंदोलन का परोक्ष चित्र ही खींचा गया है। इन उपन्यासों में जुलूस, सत्याग्रह, विदेशी चीजों का बहिष्कार, खादी का प्रचलन, नशा मुक्ति आदि के प्रसंग तो आते हैं, पर स्वाधीनता संग्राम का प्रत्यक्ष वर्णन नहीं मिलता। ऐसे कुछ प्रमुख उपन्यास हैं- दंडीनाथ कलिता के 'साधना'(1928) और 'आविष्कार'(1929), दैवचन्द्र तालुकदार के 'एइ पथे रिङियाय', 'तरुण असम' 'अपूर्ण' और 'बिद्रोही', दीननाथ शर्मा का 'नदाइ'(1956), सैयद अब्दुल मलिक के 'बनजुइ'(1956) और 'रूपाबरिर पलस (1980)', नीलिमा दत्त का 'आकाशबन्ति'(1967), चन्द्रप्रसाद सइकिया का 'एदिन', वीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के 'प्रतिपद' (1970) और 'फुलकोंवरर पखीघोंरा', होमेन बरगोहाईं का 'पिता-पुत्र' (1975), मेदिनी चौधुरी के 'फेरेंगादाओ' (1987) और 'बिपन्न समय' (1996), उमाकांत शर्मा का 'एजाक मानुह एखन अरण्य', भवेंद्रनाथ सइकिया का 'अंतरीप'(1986), तिलोत्तमा मिश्र का 'स्वर्णलता' (1991), अरुण शर्मा का 'आशीर्बादर रङ' (1996) आदि।

1.3.3. कथानक को आंशिक रूप से प्रभावित करने वाले उपन्यास :

ऐसे कुछ उपन्यास भी मिलते हैं, जहाँ स्वतंत्रता आंदोलन ने कथानक को आंशिक रूप से प्रभावित किया है। वे हैं- बीणा बरुवा का 'जीवनर बाटत' (1944), नवकांत बरुवा का 'कपिलीपरीया साधु' (1954), योगेश दास का 'डावर आरु नाइ' (1955), वीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य का 'इयारुइंगम', त्रैलोक्य भट्टाचार्य का 'साँचिपातर पुथि' (1973), चन्द्रप्रसाद सइकिया का 'जन्मांतर'(1978), भवेंद्रनाथ सइकिया का 'रम्यभूमि', अरूपा पटंगीया कलिता का 'अयनांत' (1994) आदि।

1.3.4. पात्रों के द्वारा स्वाधीनता आंदोलन को चित्रित करने वाले उपन्यास :

असमीया साहित्य में पात्रों के द्वारा स्वाधीनता आंदोलन को चित्रित करने वाले उपन्यास मिलते हैं। वे हैं- सैयद अब्दुल मलिक का 'रूपतीर्थर यात्री' (1963), वीरेन्द्र कुमार बरठाकुर का 'बाईसाहेबा'(1980), बीरेन बरकटकी का 'मृत्यु गचकि आना जय जिनि' (1988), चन्द्रप्रसाद सइकिया का 'तोरे मोरे आलोकरे यात्रा' (1992), निरूपमा बरगोहाईं का 'अभियात्री'(1992-93) आदि। 'अभियात्री' में भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन की यथार्थ छवि प्रकाशित हुई है-

'1929 चनर ऐतिहासिक लाहोरर कंग्रेसत भारतीय जातीय कंग्रेसे पूर्ण स्वाधीनताइ कंग्रेसर लक्ष्य बुलि घोषणा करि प्रस्ताव लॅले आरु कंग्रेस वर्किङ कमिटिक असहयोग आन्दोलनर कार्यसूची लॅबलै दायित्व अर्पण करिले। एइ वर्किङ कमिटियेओ जानुवारीर 2 तारिखे कार्यसूची प्रस्तुत करिले आरु 26 जानुवारीटो स्वाधीनता दिवस हिचापे पालन करिबलै सिद्धान्त लॅले। स्वाधीनतार खचराखन प्रस्तुत करि ओलियाले स्वयं गांधीजीये। इयार पिछत गांधीजीये आरंभ करिछिल दांडि अभियान। सबरमति आश्रमर परा छियाशीजन आश्रमबासीक लगत लै तेओँ लोण आइन अमान्य करिबलै दांडिलै यात्रा करिछिल। भारतबर्षर राजनीतित एनेबोर घटना द्रुतगतित घटिबलै धरार पिछत तार बतरा असमर चुके-कोणेओ बियपि परिबलै धरिले।'[6]

अर्थात- सन 1929 ई. के ऐतिहासिक लाहौर कांग्रेस में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने पूर्ण स्वाधीनता ही कांग्रेस का लक्ष्य घोषित करते हुए प्रस्ताव लिया और कांग्रेस वर्किंग कमेटी को असहयोग आंदोलन का कार्यक्रम लेने के लिए जिम्मेदारी सौंपी। इस वर्किंग कमेटी ने भी जनवरी की 2 तारीख को कार्यक्रम प्रस्तुत किया और 26 जनवरी को स्वाधीनता दिवस के रूप में मनाने का निर्णय लिया।

स्वयं गांधीजी ने स्वाधीनता का मसौदा तैयार किया। इसके बाद गांधीजी ने दांडी यात्रा शुरू की। साबरमती आश्रम से छियासी आश्रमवासियों को साथ लेकर नमक कानून तोड़ने के लिए दांडी की यात्रा की थी। भारतवर्ष की राजनीति में ऐसी घटनाएँ तेजी से घटने के बाद उसकी खबर असम के कोने-कोने तक फैलने लगी।

असमीया साहित्य का भंडार अति विशाल है। इसमें मौखिक और लिखित दोनों प्रकार के साहित्य की समृद्धि मिलती है। लोक गीतों के साथ-साथ आधुनिक असमीया साहित्य की विविध विधाओं में भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन का चित्रण हुआ है। यह चित्रण कहीं-कहीं प्रत्यक्ष रूप से हुआ है तो कहीं-कहीं परोक्ष रूप से। महात्मा गांधी के नेतृत्व में चलने वाले देश के स्वतंत्रता आंदोलन ने असम को भी व्यापक रूप से प्रभावित किया था। आंदोलन को लेकर गांधी जी की जो नीति रही, उन सबका असम में अनुसरण किया गया था। हिंदू-मुस्लिम एकता, जात-पात का भेदभाव परिहार, विदेशी वस्त्रों का बहिष्कार आदि को असमीया लोगों ने भी अपनाया था, जिनकी छवि असमीया साहित्य में प्रकाशित हुई है।

1.3.5. उप-घटनाओं और संवादों से आंदोलन को चित्रित करने वाले उपन्यास :

कुछ उपन्यासों में उप-घटनाओं और संवादों से स्वाधीनता आंदोलन को स्वर देने का प्रयास मिलता है। ऐसे उपन्यास हैं- दैवचन्द्र तालुकदार के 'केर्केटुवा', 'आदर्शपीठ', और 'सोणपाही', प्रफुल्लदत्त गोस्वामी का 'शेष कॅत', कैलाश शर्मा का 'बिद्रोही नगार हातत', मेदिनी चौधुरी का 'तात नदी आछिल' (1977), देबेन्द्रनाथ आचार्य का 'जंगम' (1982), लीला गगै का 'नै बै याय' (1983), रङबङ तेराङ का 'रङमिलिर हाँहि' (1981), मामोनी रायसम गोस्वामी का 'दँताल हातीर उँये खोवा हाओदा' (1988) आदि।

1.4. असमीया कहानियों में स्वाधीनता संग्राम :

असमीया साहित्य में 'आवाहन युग' (सन् 1929 से 1940 ई. तक) का समय भारतीय स्वाधीनता आंदोलन का समय है। इस समय भारत की स्वतंत्रता आंदोलन से जुड़ी कथा की पृष्ठभूमि पर आधारित कई कहानियाँ लिखी गईं। महात्मा गांधी द्वारा संचालित भारत के स्वतंत्रता आंदोलन से असम के लेखकों में नए मूल्यबोध का बीजारोपण किया था। गांधी जी के आंदोलन से जहाँ एक ओर असमीया लोग अपने देश की स्वाधीनता के प्रति आकर्षित हुए, वहीं दूसरी ओर गणतांत्रिक मूल्यबोध के प्रति भी उनका झुकाव स्पष्ट रूप से देखने को मिला। व्यक्ति, समाज और देश की मुक्ति के लिए गणतांत्रिक मूल्यबोध का होना अनिवार्य है, आवाहन युग के असमीया लेखकों ने इस बात को बखूबी अनुभव किया था। इस समय की कहानियों में स्वतंत्रता आंदोलन को प्रत्यक्ष रूप से वाणी देने के प्रयास के परिणामस्वरूप कलात्मक दृष्टि से ये कहानियाँ कमजोर पड़ गई थीं। महात्मा गांधी के आंदोलन की मूल वाणी मूलत: गणतांत्रिक मूल्यबोध है, इस बात का अनुभव करने वाले कहानीकारों में कृष्ण भूयाँ और उमेशचन्द्र सइकिया प्रमुख हैं। भूयाँ ने अपनी कहानी 'कारागार' तथा उमेशचन्द्र सइकिया ने 'नबीन' शीर्षक कहानी में कहानी कला के तत्वों का निपुणता से उपयोग करते हुए गणतांत्रिक मूल्यबोध की अभिव्यक्ति दी है। गोविन्दराम दास की 'सन्यासिनी', योगकान्त बरुवा की 'स्वदेशी' आदि कहानियाँ भी इसी कोटि में आती हैं।

इन कहानिकारों ने मानवीय मूल्यबोध की प्रतिष्ठा के साथ-साथ इस मूल्यबोध के लिए घटक समाज की नकारात्मक चिंताओं को जड़ से मिटाने का भी प्रयास किया। भारतीय स्वराज आंदोलन को खत्म करने के लिए अंग्रेजों ने कई हथकंडे अपनाए थे। इसमें से प्रमुख था 'फूट डालो और राज करो' की नीति। वे सदियों से सद्भाव से रह रहे भारतवर्ष के हिंदू और मुसलमानों में भेदभाव लाने में सक्षम हुए थे। आवाहन युग के इन कहानीकारों ने अपनी कहानियों से यह संदेश दिया था कि ऐसी चिंता समस्त मानवता के लिए चुनौती है। लक्ष्मीधर शर्मा की कहानी 'चिराज', महम्मद बाहारुद्दिन अहमद की 'आदर्श अनुसरण', ज्ञाननाथ बरा का 'मइ हिंदू', प्रभातचन्द्र गोस्वामी की 'कबिता शेष', महीचन्द्र

बरा की 'जीवन अमिया' आदि कहानियों में हिंदू और मुसलमानों में एकता स्थापित करने का प्रयास किया गया। इसके साथ ही हिंदू समाज में व्याप्त जात-पात के भेदभाव से संबंधित कई कहानियाँ लिखी गईं। लक्ष्मीधर शर्मा की 'गौरी' कहानी इस दिशा में महत्वपूर्ण है। कहानी में ब्राह्मण और शूद्र के बीच की विषमता से उद्भुत कटु परिस्थिति का चित्रण अति कलात्मकता से किया गया है। लीला और गौरी जैसे चरित्रों के द्वारा समाज में सामाजिक बदलाव की आवश्यकता को भी स्वर दिया गया है। इस तरह आवाहन युग की कहानियों में समाज के प्रति जिम्मेदारी परिलक्षित होती है।

1.5. असमीया नाटकों में स्वाधीनता संग्राम :

असमीया के कई नाटकों में स्वदेशानुराग की अभिव्यक्ति मिलती है। इनमें से लक्ष्मीनाथ बेजबरुवा का 'बेलिमार' (1915) उल्लेखनीय है। नाटक के आमुख में नाट्यकार ने स्पष्ट शब्दों में लिखा है कि भास्कर बर्मन, चक्रध्वज सिंह और रुद्र सिंह के असम का किस तरह पतन हुआ, इसी को दर्शाना नाट का उद्देश्य है। इसी उद्देश्य की पूर्ति करते हुए नाटककार भारतीय स्वतंत्रता संग्राम का प्रसंग लाते हैं। नाट में राजमाओ कहती हैं-

'...किन्तु सेइ बुलि आमार देशखन इङराजक लालबंदी करि दिबलै गॅले देशखन बंदी करि दियार अपबादे मोक पाब।'[7]

अर्थात-

...पर हमारे देश को अंग्रेजों को लालबंदी कर देने से मुझ पर देश को बंदी बनाने का अपवाद नहीं लगेगा क्या ?

अतुल चन्द्र हजारिका के नाटकों से यह पता चलता है कि वे भारतीय दृष्टिकोण से स्वदेश के प्रति आसक्त हैं। पराधीन भारतवर्ष के उद्धार के लिए वे हर क्षण देशवासियों से आग्रह करते हैं। स्त्री के सहयोग के बिना केवल पुरुष द्वारा इस देश को स्वाधीन करना संभव नहीं

है। इसीलिए वे नारी जागरण के जरिए पराधीन भारत को स्वाधीन बनाने की मानो योजना बनाते हैं। उनका ऐतिहासिक नाट 'कन्नौज कुँवरी' (1936) मोहम्मद गौरी के दो बार भारत पर आक्रमण और हिंदू राजाओं की दूरदर्शिता के अभाव की कथा को लेकर लिखा गया है। नाट की कथा का मूल स्वर नाटककार के गंभीर स्वदेश प्रीति का मनोभाव है। उनके 'छत्रपति शिवाजी' नाट में भारत को एक स्वतंत्र रामराज्य बनाने का सपना देखा जाता है। नाट में स्वामी रामदास के उपदेश से विदेशी के पैरों से कुचले जाने से हुए कीचड़ साफ कर एक नए भारत के निर्माण की बात की गई है। नाट में गोलाप सिंह कहते हैं-

'माराठापतिर स्वदेश मंत्रत दीक्षा लै मातृभूमि भारतवर्षर मुक्ति अभियानर योगेदि जीवन धन्य करिब।'[8]

अर्थात-

मराठापति के स्वदेश मंत्र में दीक्षा लेकर मातृभूमि भारतवर्ष की मुक्ति के अभियान के द्वारा जीवन धन्य हो जाएगा।

सुरेन्द्र नाथ सइकिया के 'कुशल कोंवर' नाट में स्वदेशानुराग की छवि प्रकाशित हुई है। कुशल कोंवर बयालीस के गण विप्लव के एक शहीद हैं। नाटककार ने नाट के प्रमुख चरित्र कुशल कोंवर के साथ नीलपद्म और बैकुंठ बिहारी सिंह के द्वारा दुर्दिन में देश के प्रति अपना कर्तव्य निभाने का आग्रह देशवासियों से किया है। कुशल कोंवर ने देश को अंग्रेजों के कब्जे से स्वतंत्र करने के लिए देशवासियों को स्वराज के मंत्र में दीक्षित करने का प्रयास किया है। इस वीर को फाँसी की सजा सुनाई जाती है। पर देश के लिए अपने जीवन का त्याग करने में कुशल कोंवर को कोई आपत्ति नहीं है। उन्हें विश्वास है कि उनके बलिदान से देशवासियों के मन में स्वदेशोद्धार की प्रेरणा और अधिक तीव्र हो उठेगी। वे कहते हैं-

'.....मोर बलिदाने यदि देशर सामान्य उपकारत आहिब पारे, यदि भारतबर्ष मुक्त हय-स्वाधीन हय, महात्मा जीर रामराज्य स्थापित हय,प्रभु चाओँकचोन मोर आत्माइ कत सुख पाब ! धन्य मानिम निजर मरणकेइ। मरणतेइ मोर आनंद। मोरतो इ मृत्यु नहय-आत्मार पूर्ण प्रकाशर सपोन आरु प्रथम जययात्रा।'[9]

अर्थात,

...मेरे बलिदान से यदि देश का थोड़ा सा भी भला होता है, यदि भारतवर्ष मुक्त होता है-स्वाधीन होता है, महात्मा जी के रामराज्य की स्थापना होती है, तो हे प्रभु देखें! मेरी आत्मा को कितना सुख मिलेगा! अपने मरण को ही मैं धन्य मानूँगा। मरण में ही मुझे आनंद मिलेगा। मेरी यह मृत्यु नहीं होगी-आत्मा के पूर्ण प्रकाश का सपना और पहली जययात्रा।

'मणिराम देवान' प्रवीण फूकन की नाट्य कृति है, जिसमें भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के प्रथम असमीया शहीद मणिराम देवान के देशप्रेम की अमर गाथा मिलती है। मणिराम ने देवान ब्रिटिश शासन को मिटाकर देश की स्वतंत्रता के लिए अथक श्रम किया था। मणिराम देवान ने कहा है-

'मणिराम : ..... अकल तोमार लॅरा छोवालीर कथा भाबि थाकिलेइ नचलिब। देशर हाजार हाजार लॅरा छोवाली आछे, सिहँते पेट भराइ खाबलै पोया नाइ।.... सिहँतर हयतो घरबारी गोरा पल्टने पुरि छाँइ करि दिछे।...ठग प्रबंचक बगा दलक एनेदरे पुरिबा याते .....तार परा आकौ नतुनकै गजालि उलाब।'[10]

अर्थात-

मणिराम : ..... केवल तुम्हारे बाल-बच्चों की बातें सोचने से नहीं होगा। देश में हजारोंबाल-बच्चे हैं, उन्हें भर पेट खाना नहीं मिल रहा है। बहुत के घरद्वार गोरे पलटन ने जलाकर राख कर दिए हैं। ठग प्रवंचक गोरे अंग्रेजों के दल को ऐसे भून डालना ताकि... उससे फिर वे जड़ न जमा पाएँ।

1.6. असमीया बिहू गीतों में स्वाधीनता संग्राम :

असम के जातीय त्योहार बिहू के समय गाए जाने वाले बिहू गीतों में भी स्वतंत्रता आंदोलन की छवि मिलती है। निम्नलिखित बिहू गीत में हरि भक्ति के साथ-साथ देशप्रेम की अभिव्यक्ति हुई है। यहाँ स्वराज के लिए

भारतवासियों को जगने का आग्रह किया गया है–

'राम नामर नौकाखनि
हरि नामर बठा
स्वराज यदि पाब लागे
भारतवासी उठा ॥'[11]

अर्थात–
राम नाम की नाव
पतवार हरि नाम का है
स्वराज यदि लाना है
भारतवासी जगना है॥

अन्य एक बिहू गीत में 'इंकलाब जिंदाबाद' का नारा दिया गया है–

'इंकिलाब जिंदाबाद
आहिब साम्यबाद
आहिब समाजबाद
कॅले बेया लागे
लगर सामनीयाइ
जेलत खाइ आछेगै भात ॥'[12]

अर्थात–
इंकलाब जिंदाबाद
आ रहा है साम्यवाद
आ रहा है समाजवाद
कहने को दुख होता है
हमारे साथी मित्र
जेल में खा रहे हैं भात॥

बिहू गीतों में महात्मा गांधी, बाल गंगाधर तिलक, मोतीलाल नेहरू जैसे भारत के स्वतंत्रता सेनानियों के साथ ही असम के कनकलता बरुवा, कुशल कोंवर, मणिराम देवान, पियली फूकन आदि के चरम त्याग की कहानियाँ भी मिलती हैं। निम्नलिखित बिहू गीत में स्वतंत्रता के लिए कनकलता बरुवा द्वारा प्राण बलिदान देने की करुण कहानी कही गई है–

'ऑ मनोमती
जानाने ऐ भनीटि कनकलतार काहिनी
कनकलता आछिल असमीया छोवाली
स्वाधीनतार कारणे बुकु पाति दिलेहि
बियाल्लिछर रणते गहपुर थानाते
कनकलताक मारिले इडराजर पुलिचे ॥'[13]

अर्थात –
ए मनोमति
बहना क्या जानती हो तुम कनकलता की कहानी
कनकलता थी एक असमीया लड़की
स्वाधीनता के लिए छाती पर गोली खाई
बयालीस के रण में गोहपुर थाने में
कनकलता को मारा अंग्रेज की पुलिसों ने॥

अन्य एक बिहू गीत में अंग्रेजों द्वारा कुशल कोंवर और मणिराम देवान को फाँसी पर चढ़ाने की कथा है–

'कुशल कोंवरर फाँची हॅल
मणिरामर फाँची हॅल
हाय हाय गांधी ईश्वर ऐ
देशर खबर किनो हॅल ॥'[14]

अर्थात –
कुशल कोंवर की फाँसी हुई
मणिराम की फाँसी हुई
हाय हाय गांधी ईश्वर ए
देशर की खबर कैसी हुई ॥

असमीया साहित्य का भंडार अति विशाल है। इसमें मौखिक और लिखित दोनों प्रकार के साहित्य की समृद्धि मिलती है। लोक गीतों के साथ-साथ आधुनिक असमीया साहित्य की विविध विधाओं में भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन का चित्रण हुआ है। यह चित्रण कहीं-कहीं प्रत्यक्ष रूप से हुआ है तो कहीं-कहीं परोक्ष रूप से। महात्मा गांधी के नेतृत्व में चलने वाले देश के स्वतंत्रता आंदोलन ने असम को भी व्यापक रूप से प्रभावित किया था। आंदोलन को लेकर गांधी जी की जो नीति रही, उन सबका असम में अनुसरण किया गया था। हिंदू-मुस्लिम एकता, जात-पात का भेदभाव परिहार, विदेशी वस्त्रों का बहिष्कार आदि को असमीया लोगों ने भी अपनाया था, जिनकी छवि असमीया साहित्य में प्रकाशित हुई है।

लिप्यंतरण संबंधी नीति :

इस शोध पत्र की प्रस्तुतिकरण में आवश्यकतानुसार असमीया उद्धरणों का लिप्यंतरण किया गया है। असमीया भाषा में 'स' उच्चारण वाले दो वर्ण हैं- 'च' और 'छ'। असमीया भाषा में 'स' के लिए कोमल 'ह' का उच्चारण होता है। असमीया के 'स', 'च' और 'छ' इन तीनों वर्णों के लिए हिंदी लिप्यंतरण में क्रमश: 'स', 'च' और 'छ' रखे गए हैं। हिंदी भाषा के 'य' वर्ण के लिए असमीया भाषा में दो वर्ण चलते हैं-एक का उच्चारण 'य' ही है और दूसरे का उच्चारण 'ज' होता है। असमीया 'य' के लिए हिंदी में भी 'य' रखा गया है। असमीया 'य' के 'ज' वाले उच्चारण के लिए लिप्यंतरण में 'य' रखा गया है। ❑

संदर्भ सूची :

1. कबि आरु कबिता- नन्द तालुकदार, पृष्ठ संख्या- 48
2. वही, पृष्ठ संख्या-49
3. वही, पृष्ठ संख्या-49
4. वही, पृष्ठ संख्या-51
5. मृत्युंजय-वीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य, पृष्ठ संख्या-8
6. अभियात्री- निरूपमा बरगोहाईं, पृष्ठ संख्या-183
7. कुरि शतिकार प्रथमार्द्धर असमीया ऐतिहासिक नाटकत प्रकाशित स्वदेशानुरागर छवि : एटि बिश्लेशानात्मक अध्ययन - महेंद्र कुमार बरगोहाईं, पृष्ठ संख्या- 128
8. कुरि शतिकार प्रथमार्द्धर असमीया ऐतिहासिक नाटकत प्रकाशित स्वदेशानुरागर छवि : एटि बिश्लेशानात्मक अध्ययन - महेंद्र कुमार बरगोहाईं, पृष्ठ संख्या- 136
9. कुरि शतिकार प्रथमार्द्धर असमीया ऐतिहासिक नाटकत प्रकाशित स्वदेशानुरागर छवि : एटि बिश्लेशानात्मक अध्ययन - महेंद्र कुमार बरगोहाईं, पृष्ठ संख्या- 142
10. कुरि शतिकार प्रथमार्द्धर असमीया ऐतिहासिक नाटकत प्रकाशित स्वदेशानुरागर छवि : एटि बिश्लेशानात्मक अध्ययन - महेंद्र कुमार बरगोहाईं, पृष्ठ संख्या- 148
11. बिहुनामर बर्णाली - सूर्य दास, पृष्ठ संख्या- 275
12. वही, पृष्ठ संख्या-275
13. वही, पृष्ठ संख्या-275
14. वही, पृष्ठ संख्या-282

ग्रंथ सूची :

तालुकदार,नन्द. कबि आरु कबिता. छठा. गुवाहाटी : बनलता, 2014

दास, सूर्य, संपा. बिहुनामर बर्णाली. प्रथम. गुवाहाटी : असम बुक ट्रस्ट, 2017

बरगोहाईं, निरूपमा. अभियात्री. सप्तम. गुवाहाटी : जर्नल एम्परीयम, 2016

बरुवा, प्रह्लाद कुमार. असमीया चुटि गल्पर अध्ययन. गुवाहाटी : डिब्रुगढ़, बनलता, 2015

बुजरबरुवा, पल्लवी डेका, संपा. तुलमूलक साहित्यतत्व. प्रथम. डिब्रुगढ़, बनलता, 2013

भट्टाचार्य, वीरेन्द्र कुमार. मृत्युंजय. नवम. गुवाहाटी : चन्द्र प्रकाश, 2019

शोध ग्रंथ :

बरगोहाईं, महेंद्र कुमार. कुरि शतिकार प्रथमार्द्धर असमीया ऐतिहासिक नाटकत प्रकाशित स्वदेशानुरागर छवि : एटि बिश्लेशानात्मक अध्ययन, गुवाहाटी विश्वविद्यालय, 2007

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

आलेख

'अपने अपने पिंजरे' के उनवान और तजुर्बे पर एक सोच

प्रो. डॉ. मनु

प्रोफेसर व विभागाध्यक्ष
हिंदी एवं तुलनात्मक
साहित्य विभाग
केरल केंद्रीय विश्वविद्यालय
पेरिया, कासरगोड, केरल
8848952575
drmanughazal@gmail.com

पिंजरा लफ्ज खूब करब देने वाला है। मगर अचानक सुनने पर इसकी गहराई तक का कोई पता नहीं लग जाएगा। इसे पिंजड़ा भी कहा जाता है। शायद पिंजड़े का तलफ्फुज पिंजरा ही होगा। पिंजरा का माना मामूली तौर पर घोंसला दिया जाता है। मगर पिंजरा और घोंसला में बहुत बड़ा फर्क है, जमीन आसमान का फर्क है, मगर दोनों रहने की जगह हैं। जिस तरह इंसान अपने लिए घर बना देता है, उसी तरह परिंदा भी अपने लिए घर बना देता है। परिंदे का घर ही घोंसला है। उससे परिंदे का पूरा रिश्ता जुड़ा हुआ होता है। मगर इंसान परिंदे के लिए जो घर बना देता है उसे ही पिंजरा कहा जाता है। इसलिए घोंसले में आजादी की महक है तो पिंजरे में गुलामी की। घोंसले में सफर की आजादी है, चाहे परिंदा कब भी अपना सैर जारी रख पाए और अपनी मर्जी के मुताबिक रह भी पाए। मगर पिंजरे में हजर की गंदगी है। यह उनवान या शीर्षक सोचने के लिए खूब मजबूर कर देता है कि यह सिर्फ नैमिशराय का पिंजरा नहीं है औरों का भी है। इसलिए यहाँ अपने-अपने का मतलब औरों का भी है। हर शख्स अपनी जात के पिंजरे में पड़ा हुआ है। अपना तजुर्बा थोड़ा हेर फेर करने पर यह औरों का भी हो सकता है। रेख्ता शब्दकोश में दिया गया माना 'अपने अपने पिंजरे' आत्मकथा के लिए सौ फीसदी सही निकल आता है। ''ऐसा स्थान जहाँ से किसी का बाहर निकलना प्राय: असंभव या दुष्कर हो।'' [1]

आत्मकथा हकीकी दास्तान है। इसकी रचना के लिए अंदाज की गुंजाईज नहीं है। दलित आत्मकथाएँ दलितों की जिंदगी का आईना हैं। दलितों की दस्तानें नई संवेदना की महफिल की ओर शख्स को ले जाती हैं। अपने नए-नए तजुर्बों के एहसासों का सही इजहार करने में ज्यादातर आत्मकथाएँ काबिल हो चुकी हैं। सदियों से लेकर दलित जानवरों की जिंदगी से गुजारा है। नैमिशराय अपनी जिंदगी के संघर्ष की चेतना का बयान यों कर देते हैं। उनकी बस्ती का नाम चमार गेट है। फिर चमार दरवाजा हुआ। इसे लोग चमार दरवाजा ही पुकारते थे। बस्ती में कुलीन जात का एक मंदिर था। दलितों को मंदिर जाना मना है। यह मंदिर बहुत ही आम है कि हर दिन जब जब शाम ढल जाए दयिर का आबिद मंदिर के

आँगन में प्रसाद बाँटता था। आसपास के सारे बच्चे प्रसाद लेने आते थे। ईश्वर के करीबी पुजारी में बे इंसानियत का मंदिर तब-तब दिखाई देगा, जब वे चमार के बच्चों से दूर रहके प्रसाद देना चाहते हैं। छुआछूत दर्दनाक बे इंसानी एहसास है। यह सच्चाई अगर ईश्वर के करीबी समझ न पाएँ तो कौन समझ पाए। मजहब, ईश्वर, जात, मंदिर को न मानने वाले सुर्खवाले बराबरी की बात करते हैं तो मजहब व मंदिर पे भरोसा व आस्था रखने वाले कैसे बे बराबरी की बात सोच सकते हैं। इसलिए वर्तमान सामाजिक माहौल में किसी से भी छुआछूत दिखाने वाले सब जरूर ही गुनहगार हैं। पुजारी चमार बच्चों को हाथ ऊपर करके ही प्रसाद देते थे। अक्सर प्रसाद नीचे ही गिर जाता था। दर्दीली बात यह है कि नीचे गिरे प्रसाद अगर चमार के बच्चे न उठाएँ तो फिर कभी उसको प्रसाद नहीं दिया जाएगा। नैमिशराय अपना तजुर्बा यों कह डालते हैं कि एक दिन प्रसाद लेते हुए उनकी उँगलियाँ नैमिशराय की उँगलियों से छू गईं तो पुजारी को खूब गुस्सा आया फिर पुजारी चिल्लाने लगे, ''तु चमार का है न। सब कुछ भरस्ट कर दिया। कितनी बार कहा तुम ढोरों से, प्रसाद दूर से लिया करो।'' [2]

सियासी दल भी दलित को मुख्तलिफ टुकड़ों में बाँध कर अपने-अपने नफे के लिए इस्तेमाल करते हैं। दूसरी बात यह कि एक परिवार को आरक्षण की सहूलियत मिल जाए तो दूसरी बार भी उसे यह आरक्षण मिल जाता है। आरक्षण मिल जाने पर वह गाँव या अपनी बस्ती छोड़कर शहरबाश्त बनकर जीना चाहते हैं। इसलिए दलित का मसाइल आसानी से खत्म नहीं किया जा सकता। जब एक मसाइल खत्म हो जाएगा तो जल्दी ही जल्दी दूसरा मसाइल उन्हें आखेट करने के लिए जरूर आएगा। फिर भी उम्मीद है की दलित की सिमत और हालत में बेहतरीन बदलव जरूर ही आई है।

नैमिशराय का संघर्ष भरे दिल की नवा नई चेतना के साथ बाद में यों फैल गई। उनकी वह नवा गुहार नहीं थी नई पुकार थी, नई ललकार थी। सदियों से दबे फुसफुसाहट की खुली आवाज फूट कर बाहर निकली। ''थू तुम्हारा मंदिर और तुम्हारा प्रसाद।''[3] दलितों की गुहार पुकार, ललकार और चेतावनी में तब्दील होने का मौका उनकी इस छोटे जुमले में शामिल है। यह दलितों के लिए आह्वान है अपना आंदोलन शुरू करने का। हर शख्स को इस तरह कुलीन खानदान जात के लोगों के खिलाफ आवाज उठाने का आह्वान। सदियों से झेले, सहे, बर्दाश्त किए दर्दों की राहत उनकी इन सरगर्मियों में भरी पड़ी हुई है। नैमिशराय के दर्द, नफरत, घुटन व अफसोस, सारे के सारे एहसास व जिंदगी की जिद्दोजहद और संघर्ष दलित समाज के हर पहलू में देखा जा सकता है। दलितों के सामाजिक हकों का रद्दोबदल होता रहता है तो नैमिशराय अपनी आत्मकथा से नए जिद्दोजहद के लिए दलितों के दिलोदिमाग में बूता भर देते हैं ।

पिंजरे का मतलब दरबा है। 'अपने अपने पिंजरे' उत्तर प्रदेश की पिछड़ी चमार जात में जन्मे एक संवेदनशील युवक की आत्मकथा है। उन्होंने अपने खिलाफ की सिमत और हालत में अपनी तालीम मुकमल की है। दलित अदब ने काफी हद तक साहित्य के कुलीन खानदानी किरदार को तोड़ दिया है। नैमिशराय ने अपनी हयात की तल्ख, सख्त, बेरहम सच्चाइयों को इस आत्मकथा में उकेर दिया है। इसमें इजहार किए हुए तजुर्बों का रिश्ता मासी से जुड़ा हुआ होता है, हाल से इनका कोई सरोकार नहीं है। जिस स्कूल में मोहनदास नैमिशराय ने अपनी तालीम की सरगर्मियाँ की हैं, उसको बाहर के लोग

अक्सर चमारों का स्कूल ही कहा करते थे। कुलीन लोग हर संज्ञा के साथ विशेषण का इस्तेमाल किया जाना चाहते थे कि चमार गली, चमार स्कूल, चमार पंचायत, चमार नीम, चमार नल, चमार पानी। इससे यह मालूम हो जाता है कि कुलीन जात के लोग चमार का नाम जोड़कर उसकी कीमत को कम करके दिखाना चाहते हैं। जात पहले बाकी बाद में, यह समाज में फैली बदी बुराई की जीती जागती मिसाल है, बानगी है। स्कूल के पहले चमार, नल के पहले चमार, पंचायत के पहले चमार। चमार यहाँ विशेषण बनकर संज्ञा की अहमियत को कम कर देता है। यही कुलीन जात का मकसद है। स्कूल में अध्यापकों की कमी होती थी। स्कूल चमारों की बस्ती में है और पढ़ने वाले सब चमार ही होते हैं। इसलिए यहाँ अध्यापक लंबी छुट्टियाँ लेते थे, नहीं तो तबादला अपनाने की कोशिश करते थे। सबसे बड़ा दर्द यह है कि लोग चमार को गाली के तौर पर इस्तेमाल भी करते थे।

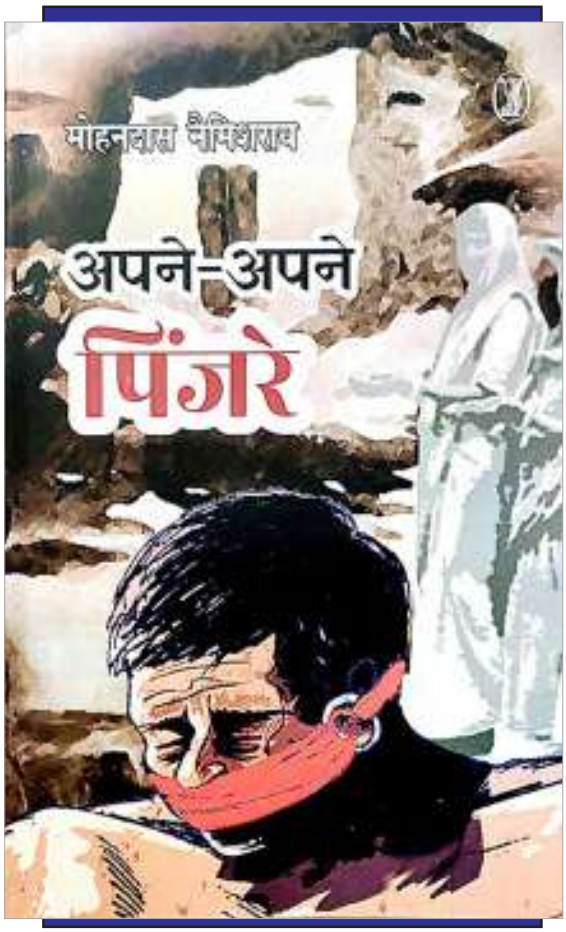

इस आत्मकथा के पहले पहलू में मेरठ शहर की हकीकी इतिहास और तहजीब का शानदार बयान हुआ है। माँ की मौत, फिर सौतेली माँ का आना जिंदगी में आने वाली तब्दीली का मोड़ है। मगर संयुक्त परिवार रहने के सबब से कोई खास बदलाव उन पर नहीं हुआ था। उस वक्त पैसे का तंग और कहर था, मगर शहरबाश्त होने की वजह जात का हमला उनपर बिल्कुल नहीं हुआ था। अपनी बस्ती के बाहर उनकी जात की कोई पहचान नहीं हुई थी। चमार की बस्ती में कुछ मुस्लिम परिवार भी रहते थे। अपनी आत्मकथा में बस्ती के दर्जनों किरदारों का बयान उन्होंने सही तर्ज पे उकेर दिया है। नूर मुहम्मद कसाई पर कुछ जुमलों के सहारे उसके शील पे नैमिशराय ने नूर डाला है। नूर की नजर में ''एक जानवर है दूसरा औरत है। एक को काटते थे, दूसरे को पीटते थे।''[4] उच्च जातों के बारे में एक जगह लेखक ने यों लिखा है, ''वे अपनी आदतों के गुलाम थे और हम उनके गुलाम।''[5] यह उनकी बस्ती का हकीकी आईना है। इस मुल्क के नगर, महानगर, शहर और कस्बे की बस्ती में छोटे-छोटे घरौंदे व झोंपड़ियों में हाशिये पे जीने वाले मजदूर ही रह रहे हैं। इनमें ज्यादातर दलित ही बस रहे हैं। मुश्किल से अपनी रोजगार जिंदगी काट देते हैं। इसलिए यह बस्ती दलितों की नुमाईंदा बस्ती है। अपनी दास्तान बताने के बीच उन्होंने गरीब मुसलमान लोगों की दास्ताँ भी बताई है।

चमार चमार होते हैं न हिंदू होता है न मुसलमान होता है। यह जो कथन है वह बालक नैमिशराय के दिल में आग का सवाल पैदा कर देता है। उन सवालों में एक सवाल यह भी था अगर हम न हिंदू हैं और न मुसलमान हैं तो फिर हम हैं क्या ? चमार कौन होते हैं ? इस सवाल के जवाब की खोज में लेखक बाद के जीवन के संघर्ष

से इसका जवाब ढूँढ़ निकाला है। यहीं से जात को लेकर उसके मन में अनेक सवाल उठने लगते हैं।''आदमी जब पैदा होता है, उसकी जाति लिखाई जाती है और मरने पर भी। यही जाति पहले सरकारी रजिस्टर में दर्ज होती है या लोगों के दिलों में। इनका सबका विश्लेषण करने की न समझ थी, न उम्र।''[6]

लेखक अपनी मानसिकता का बयान करते हुए आत्मकथा के शीर्षक की सार्थकता साफ-साफ इजहार कर देते हैं। ''मैं अपने आप से बिछुड़ता जा रहा था। अपना ही शहर बेगाना-सा लगने लगा, मेरे लिए वह शहर जैसे पिंजरा बन गया था।'' [7] एक जगह लेखक खुलकर लिखते हैं कि एक ईसाई लड़की लेखक की तरफ कशिश हो गई थी। मुंबई से फिर लेखक मेरठ की ओर जाते हैं तब लड़की बिल्कुल उदास व मायूस हो जाती है। लड़की का बयान खूब फिकरमंद है; क्योंकि पिंजरा सिर्फ दलितों के लिए नहीं, बल्कि ईसाई लड़की के लिए भी है। लड़की अपने पिंजरे में है। लेखक अपनी चमार बस्ती के पिंजरे से अभी बाहर आए हैं। लड़की के जुमले इस तरह हैं, ''इधर हम पिंजरे में बंद होने की माफिक फड़फड़ाता है। यह पिंजरा तोड़कर किधर जाये?''[8] सूजी अपने पिंजरे में बँधुआ बन गई है, नैमिशराय अपने मेरठ के पिंजरे में। रसवंती दूसरे पिंजरे में बँधुआ है।''इसमें लेखक सचमुच उस पिंजरे को तोड़कर सदा के लिए आजाद हो सका है?''[9] नहीं, उसे फिर मेरठ वापस जाना पड़ता है, अपने पुराने पिंजरे में। अपने अपने पिंजरे आत्मकथा से समाज को यही बताना चाहते हैं कि हर आदमी अपने-अपने पिंजरे का बँधुआ है। उससे बच पाना बहुत ही मुश्किल है। कोई सियासी पिंजरे में, और कोई छुआछूत के पिंजरे में और कोई बेतालीम के पिंजरे में, दूसरा कोई गरीबी के, पराया कोई जात के। पिंजरा कहीं खत्म नहीं होता है, एक पिंजरे से रिहाई मिल जाने पर हर कोई अनजाने या जाने दूसरे पिंजरे में बँधुआ बन जाता है। इस शोध तहरीर का तरफदारी या ताईद के लिए अपनी एक नज्म भी काबिल ए जिक्र समझता हूँ। ''घोसले में आजादी की महक है / पिंजरे में गुलामी की / घोंसले में सफर की आजादी है / अपनी मर्जी के मुताबिक रहने, जाने, उड़ने की आजादी / पिंजरे में हजर की गन्दगी है। / जमी हुई गर्द की बदबू / पिंजरे में बंधुआ परिंदा / आजाद होके, चैन पाके भी अपने भीतर के पिंजरे को तोड़ न पाए /''

लेखक अपने नपुंसक भाई का बयान करने में भी नहीं हिचकते हैं। गरीबी सह पाएँगे, रहने का घर छोटा घरौंदा रहे, पानी जात की वजह न मिले, अपनी बस्ती से लेखक मुंबई की तरफ पलायन कर देते हैं। मुंबई का हाल भी एक तरह बराबर है। मगर जात का हमला बिल्कुल नहीं होता है। जात के नाम पर जिन-जिन चीजों पे रोकथाम लगाई जाती है, वह मुंबई में नहीं है। अपनी हालत का बयान लेखक ने यों ही किया है।''मुम्बई में भूख थी, गरीबी थी और बेरोजगारी थी, लेकिन आदमी-आदमी के बीच जातियों की दीवारें न थीं। कभी किसी ने जाति न पूछी थी, न ही धर्म।''[10]

दूसरे हिस्से में दलितों की कई उप-जातियों का बयान लेखक करते हैं। जब तक दलित कई मुख्तलिफ जात के टुकड़ों में रहे तो उसका संघर्ष नाकाम रहेगा। एक और एक ग्यारह होता है। यह जब तक दलित समाज नहीं समझ पाएँगे, तब तक उनका आंदोलन कुकुरमुत्ते का संघर्ष ही रहेगा। ''दलितों के भीतर की जाति तथा उप-जातियों की अनगिनत सुरंगें थीं, जो कभी-कभी दलित अस्मिता और पहचान को बाँटती तथा तोड़ती थीं। हालाँकि एक सुरंग से दूसरी सुरंग में जाने के रास्ते बंद थे। जातियों की रचना प्रक्रिया में उलझाव ही अधिक थे।''[11] इस उलझाव को सुलझा न पाए तो दलितों की सिमत और हालत बेहतर नहीं बन पाएगी। दलित में भी उच्च, मध्य और निम्न तबके की अस्मिता उनके बीच में भी संघर्ष की शुरुआत कर देती है। लेखक अपनी बेबसी का इजहार करते हुए लिखते हैं कि ''उत्तर प्रदेश में चमार, रविदास, जैसवार, अन्तवैदी, कुरील, धुसिया, जाटव, दोहरे, अहरवार, गुलिया, रैदासी, संखवार- ये सभी एक जाति परिवार की विभिन्न शाखाएँ थीं। आजादी से पहले और बाद में भी पश्चिमी उत्तर प्रदेश में इन लोगों को 'जाटव' नाम से संगठित किया था। अपने को क्षत्रिय वंश से जोड़कर कुछ अपने नाम

के सामने 'सिंह' लगाने लगे। इनमें से कुछ अपने नाम के आगे पिप्पल, कर्दम, केल, खेल, निम, पिपरिया लिखने लगे। कभी-कभी दलित के भीतर जात एक दूसरे को मानते ही नहीं। दलितों में ही 'जाटव' और 'वाल्मीकि' जातियों के बीच संवाद का अभाव तो था ही। आपस में घृणा और तनाव का वातावरण भी रहता था।''[12] इन दोनों समुदायों के व्यवसाय, खान-पान, रहन-सहन में अंतर है। एक सुअर खाते हैं दूसरे सुअर देखना भी पसंद नहीं करते। दलित संघर्ष को यह कमजोरी पहचाने की ताकत होनी चाहिए। इसलिए ही लेखक ने अपनी आत्कथा के जरिए इस तरह की बातें पेश की हैं। सियासी दल भी दलित को मुख्तलिफ टुकड़ों में बाँध कर अपने-अपने नफे के लिए इस्तेमाल करते हैं। दूसरी बात यह कि एक परिवार को आरक्षण की सहूलियत मिल जाए तो दूसरी बार भी उसे यह आरक्षण मिल जाता है। आरक्षण मिल जाने पर वह गाँव या अपनी बस्ती छोड़कर शहरबाश्त बनकर जीना चाहते हैं। इसलिए दलित का मसाइल आसानी से खत्म नहीं किया जा सकता। जब एक मसाइल खत्म हो जाएगा तो जल्दी ही जल्दी दूसरा मसाइल उन्हें आखेट करने के लिए जरूर आएगा। फिर भी उम्मीद है की दलित की सिमत और हालत में बेहतरीन बदलव जरूर ही आई है। ❑

(दयिर का आबिद = मंदिर का पुजारी। तलफुज : उच्चारण, अलफाज का अदा करना। हजर = residence at home, opposite of journey घर में रहना, 'सफर' का उलटा। जिद्दोजहद : प्रयत्न, संघर्ष। तरफदारी : ताईद, समर्थन)

संदर्भ संकेत :

(1) गूगल सर्च : रेख्ता डिक्शनरी
(2) मोहनदास नैमिशराय : अपने अपने पिंजरे : पृ 31
(3) मोहनदास नैमिशराय : अपने अपने पिंजरे : पृ 32
(4) वही : पृ 22
(5) वही : पृ 22
(6) वही : पृ 57
(7) वही : पृ 127
(8) वही : पृ 140
(9) वही : पृ 7
(10) वही : पृ 14
(11) वही : पृ 62
(12) वही : पृ 67

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

आलेख

हिंदी नाट्य साहित्य में मोहन राकेश का योगदान

डॉ. राजकुमार मोबी सिंह

हिंदी विभाग
डी.एम. विश्वविद्यालय
इंफाल (मणिपुर)-795001
9856531364
rkmobisingh@gmail.com

भूमिका :

हिंदी नाट्य साहित्य में राकेश का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। भारतेंदु हरिश्चंद्र के नाट्य लेखन ने आधुनिक हिंदी रंगमंच की सही शुरुआत की थी। इसके बाद जयशंकर प्रसाद ने हिंदी नाट्य साहित्य को काव्यात्मकता एवं कलात्मकता देकर नई प्रतिष्ठा प्रदान की है। लक्ष्मीनारायण मिश्र ने इसे समकालिन यथार्थ से जोड़ा। स्वतंत्रता के बाद जगदीश चंद्र माथुर, उपेन्द्रनाथ अश्क और लक्ष्मीनारायण लाल के मध्यवर्गीय स्त्री-पुरुष से संबंधित महत्वपूर्ण नाट्यय-कृतियों का प्रकाशन हुआ। परंतु सच यह है कि इन सबके बावजूद जून 1958 में प्रकाशित मोहन राकेश का नाटक 'आषाढ़ का एक दिन' आधुनिक हिंदी नाटक और रंगमंच के नए आंदोलन के आरंभ का सबसे पहला और महत्वपूर्ण प्रमाण है। दूसरे शब्दों में हिंदी नाट्य साहित्य में यदि लीक से हटकर कोई नाम आता है तो सिर्फ मोहन राकेश का। राकेश ने हिंदी नाटक को 'अंधेरे बंद कमरे' से बाहर निकलवाकर उसे स्वतंत्र रूप दिया। उन्होंने हिंदी नाटक को पहली बार अखिल भारतीय स्तर ही नहीं, विश्व नाटक के स्तर तक उठाया है। अत: राकेश ने व्यापक स्तर पर हिंदी नाट्य साहित्य को प्रभावित किया है। यह भी कहा जाता है कि 'आषाढ़ का एक दिन' से हिंदी के नए रंगान्दोलन की शुरुआत की है, 'लहरों के राजहंस' ने उसे परिपक्व बनाया है और 'आधे-अधूरे' ने उसे व्यापकता एवं लोकप्रियता प्रदान करके हिंदी नाट्य साहित्य को विश्व स्तर तक उठाया है।

विषय-विस्तार :

राकेश ने 'आषाढ़ का एक दिन', 'लहरों के राजहंस' और 'आधे-अधूरे'- ये तीन पूरे नाटक लिखे और 'पैर तले की जमीन' अधूरा ही रह गया, जिसे उनके मृत्योपरांत उनके मित्र कमलेश्वर ने पूरा किया। मोहन राकेश आधुनिक भावबोध के लेखक रहे हैं। उन्होंने ऐतिहासिकता के माध्यम से प्राचीन काल की प्रशंसा की बजाय वर्तमान समस्याओं को उठाया है। 'आषाढ़ का एक दिन' और 'लहरों के राजहंस' - दोनों इतिहास पर आधारित नाटक हैं। 'आषाढ़ का एक दिन' इतिहास पुरुष कालिदास से संबंधित है और 'लहरों के राजहंस' की कथा का आधार

'अश्वघोष' के प्रसिद्ध महाकाव्य 'सौंदरनंद' से लिया गया है। इन नाटकों के द्वारा नाटककार ने ऐतिहासिक कथानक नहीं दोहराए, उनको नए परिवेश और आधुनिक संदर्भों में प्रस्तुत किया है। 'लहरों के राजहंस' में एक ऐसे कथानक का वर्णन है, जिसमें सांसारिक सुखों और आध्यात्मिक शांति के पारस्परिक विरोध तथा उनके बीच खड़े हुए व्यक्ति के द्वारा निर्णय लेने का अनिवार्य द्वंद्व निहित है। इसके साथ-साथ यह आधुनिक स्त्री-पुरुष संबंध को भी व्यक्त करता है। 'आषाढ़ का एक दिन' में कालिदास ऐतिहासिक पात्र नहीं, बल्कि हमारे सृजनात्मक शक्तियों का प्रतीक है। नाटक में यह प्रतीक उस अंतर्द्वंद्व को संकेतित करने के लिए है, जो किसी भी काल में सृजनशील प्रतिभा को आंदोलित करता है। 'आधे-अधूरे' और 'पैर तले की जमीन' समकालीन जीवन के तनाव को पकड़ने में समर्थ हैं। यह नाटक आधुनिक मध्य वर्गीय स्त्री-पुरुष के बीच के तनाव को व्यक्त करते हैं, तो एक तरफ पारिवारिक विघटन को भी व्यक्त करते हैं। 'आषाढ़ का एक दिन', 'लहरों के राजहंस', 'आधे-अधूरे' और 'पैर तले की जमीन' को एक साथ देखें तो चारों का मूल समस्या लगभग एक सा ही है- आधुनिक पारिवारिक संबंधों में तनाव, खासकर स्त्री-पुरुष संबंध को लेकर। चारों के कथ्य हमें अपने आप से, अपने आस-पास के जीवन और परिवेश से परिचित कराता है। हमें हमारी ही यथार्थ दुनिया का साक्षात्कार कराता है।

राकेश ने अपने नाटकों में आधुनिक समस्याओं को उठाया है। उनकी समस्याएँ आधुनिक समाज की समस्याएँ हैं। 'आषाढ़ का एक दिन' की मल्लिका और कालिदास का संबंध बड़ा स्नेह और मधुर है। दोनों भावना के स्तर पर अत्यंत दुख एवं पीड़ा के साथ मल्लिका को छोड़कर चला जाता है। 'लहरों के राजहंस' भी 'आषाढ़ का एक दिन' की तरह पारिवारिक संबंधों, खासतौर से दांपत्य संबंध के बीच उत्पन्न तनाव को रेखांकित करता है। 'लहरों के राजहंस' में नंद और सुंदरी दोनों विवाहित पति-पत्नी हैं। फिर भी दोनों में तनाव है, दोनों में अहं का बोध है। एक दूसरे को न समझ पाने की स्थिति है। नंद घर में नहीं रह पाता, सुंदरी उसे रोक नहीं पाती। अत: पति-पत्नी के बीच कड़ुआहटपन, असंतोष एवं पराजय के भाव हैं। पति-पत्नी के कलहपूर्ण जीवन में पति की स्थिति को मोहन राकेश नंद के शब्दों में इस प्रकार प्रकट करते हैं, ''मैं चौराहे पर खड़ा एक नंगा व्यक्ति हूँ, जिसे सभी दिशाएँ लीन लेना चाहती हैं ओर अपने को बचाने के लिए उसके पास कोई आवरण नहीं है।''[1] 'आधे-अधूरे' के पति-पत्नी विवाहित ही नहीं, बाल-बच्चे वाले भी हैं। पर दोनों में भी अलगाव, पीड़ा एवं घुटन ही हैं। सावित्री-महेन्द्रनाथ असफल वैवाहिक जीवन का बोझ ढो रहे हैं। दोनों अपने आप में अधूरे होते हुए भी एक दूसरे को नीचा दिखाते हैं, दोनों में पूर्णता खोजते हैं। पति की अधूरी एवं असहाय स्थिति से ऊब कर पत्नी सावित्री यह तक कह देती है, ''मत कहिए मुझे महेन्द्र की पत्नी। महेन्द्र भी एक आदमी है, जिसके अपना घर-वार है, पत्नी है, यह बात महेन्द्र को अपना कहने वालों का शुरू से ही रास नहीं आई हैं।''[2] अयूब और सलमा 'पैर तले की जमीन' नाटक के पति-पत्नी हैं। दोनों के दांपत्य जीवन में भी वही तनाव है, जो अन्य नाटकों में है। अपनी पत्नी को छोड़कर अयूब अपने शरीर की भूख

मिटाने के लिए अपने घर से बाहर भटकता है। अत: आज पति-पत्नी में कहीं किसी धरातल पर तारतम्य नहीं है। अपने-अपने विचारों पर चलने वाला यह दंपति एक दूसरे को न समझ पाने के कारण अपनी अपनी विक्षप्तता में जी रहा है। वे अंतर्द्वंद्व में जीते हुए आत्मपीड़न झेलते हैं। उनके नाटक इन समस्याओं के कारणों एवं समाधानों से भी परिचित कराते हैं।

राकेश के नाटक सामान्य तौर पर आधुनिक तथा विशेष रूप से मध्यवर्गीय जीवन की समस्याओं को व्यक्त करते हैं। उनके नाटकों में पारिवारिक संबंधों को व्यक्त किया गया है। उनके स्त्री-पुरुष संबंधों से आधुनिक स्त्री-पुरुष संबंधों के बीच उत्पन्न विसंगति, पीड़ा एवं घुटन आदि को समझा जा सकता है। आज परिवार की दूसरी बड़ी समस्या है पारिवारिक सदस्यों में आपसी रिश्ते का क्रमश: विघटन। पति-पत्नी, माँ-बेटी, भाई-बहन आदि रिश्ते जो परिवार के सदस्यों को स्नेह के गहरे बंधन में बाँधे रखते हैं, वे आज अनुपस्थित हैं। आज परिवार अनिश्चितता की समस्या से भी ग्रस्त है, जो आज के आधुनिक परिवार के अनिश्चितता को सार्थक करते हैं। व्यक्तिगत स्तर पर अतृप्त काम 'सेक्स' राकेश के पात्रों की व्यापक समस्या है। राकेश के अधिकांश पात्र अनेक स्वभाव विकृतियों से ग्रसित हैं। स्वभाव-विकृति हमें आधुनिक जीवन की विविध समस्याओं से परिचय कराते हैं। राकेश के नाटकों के माध्यम से आधुनिक भारतीय समाज के जीवन यथार्थ को समझा जा सकता है। राकेश के नाटक हमें आधुनिक समस्याओं से अवगत कराते हैं।

मोहन राकेश के नाटकों में पारिवारिक संबंधों की विभिन्न स्थितियाँ और उससे उत्पन्न तनाव का विश्लेषण किया गया है। उनके नाटकों में आधुनिक पारिवारिक संबंधों की समस्याओं की मीमांसा की गई है। इनके माध्यम से नाटकों के चरित्रों के अंतरंग की पहचान कराई है। साथ ही आधुनिक व्यक्ति की मानसिकता को भी व्यक्त किया गया है। राकेश के इन पारिवारिक संबंधों के द्वारा पात्रों के चारित्रिक वैविध्य का प्रकाशन हुआ है।

मोहन राकेश अभिव्यक्ति के लिए भाषा से उलझने की समस्या को अपनी समस्या मानते हुए जानने की भाषा के बजाय निरंतर जीने की भाषा की तलाश करते थे। एक जगह राकेश ने लिखा था, ''मैं जानने की भाषा के बजाय निरंतर जीने की भाषा की ओर जाना चाहता हूँ।''[3] राकेश ने अपने नाटकों में नवीन संवेदना के अनुरूप भाषा का सर्जनात्मक संस्कार किया है। उनकी भाषा समकालीन संवेदना से सीधे साक्षात्कार कराने में समर्थ है। उन्होंने पूर्ववर्ती भाषा के बने-बनाए ढाँचे को तोड़कर आधुनिक संवेदना के अनुरूप भाषा का निर्माण किया है, जो आधुनिक बोलचाल की भाषा के गुणों से परिपूर्ण है। राकेश की भाषा जीवंत और प्रभावशाली है। उनकी भाषा अर्थ के विभिन्न आयामों को उद्घाटित करती है, बिंबों का विधान करती है। उनकी भाषा आंतरिक अनुभवों को भी व्यक्त करने में समर्थ है। राकेश की भाषा जीवंत बोलचाल की भाषा है। उन्होंने एक प्रकार की प्रचलित किताबी भाषा से मुक्त एवं रंगमंच के लिए उपयुक्त भाषा को चुना है।

राकेश के नाटकों की भाषा बोलचाल की भाषा की सर्जनात्मक उपलब्धि की और संकेत करती है। अपने कथ्य के अनुरूप उनकी भाषा जीवन के सामान्य अनुभवों को सामान्य लोगों तक व्यक्त करती है। उनकी भाषा आधुनिक यथार्थ को पकड़ने में पूर्ण समर्थ है। इसकी उपलब्धि इसका यथार्थ होना मात्र नहीं और न इसे केवल बोलचाल की भाषा कहना। वस्तुत: उसकी महत्ता उसके सर्जनात्मक प्रयोग में निहित है। उनकी भाषा जन-सामान्य और दैनंदिन जीवन के बहुत निकट है। उनकी भाषा जीवन की विविध विसंगतियों को व्यक्त करने में समर्थ है। सबसे बड़ी बात यह है कि स्थितियों की विसंगति को व्यक्त करने के लिए वे उसी के अनुरूप भाषा को तोड़ते-बनाते हैं। अत: उनकी भाषा आधुनिक जीवन की संवेदनाओं को व्यक्त करने में सक्षम है।

निष्कर्ष :

राकेश का सारा नाट्य लेखन गहरे रंगानुभव से जुड़ा है। राकेश ने रंगमंच को बाहर से 'नया' या 'आधुनिक' रूप देने के बजाय भारतीय परिवेश और रंगधर्मिता के अंदर से विकसित किया है। उन्होंने

तकनीकी रूप से समृद्ध और संश्लिष्ट पाश्चात्य रंगमंच के स्थान पर भारतीय रंगमंच को महत्व दिया है। उन्होंने न्यूनतम उपकरणों के साथ संश्लिष्ट प्रयोग कर भारतीय रंगमंच को समृद्ध बनाया है। मोहन राकेश यह मानते हैं कि पश्चिमी रंगमंच हमें 'बंद गली की ओर' ले जा रहा है, जो हमारे लक्ष्य के विपरीत है। इस पर राकेश का कथन है, ''पश्चिम का तकनीकी रूप से समृद्ध और संश्लिष्ट रंगमंच भी अपने में विकास की एक दिशा है परंतु उससे हटकर एक दूसरी दिशा भी है और मुझे लगता है कि हमारे प्रयोगशील रंगमंच की वही दिशा हो सकती है। वह दिशा रंगमंच के शब्द और मानव पक्ष को समृद्ध बनाने की है, अर्थात न्यूनतम उपकरणों के साथ संश्लिष्ट से संश्लिष्ट प्रयोग कर सकने की।''[4] उन्होंने 'शब्द' को महत्व दिया है।

'भारतीय रंगमंच शब्द का रंगमंच है'–इस बात पर जोर देकर राकेश ने भारतीय रंगकर्मियों को एक नया मार्ग दर्शाया है। राकेश की अपनी रंग–दृष्टि है। उन्होंने रूढ़ियों को तोड़ा है, नई दिशा की तलाश की है। साथ ही उन्होंने रंगमंच के बारे में एक नए सिरे से सोचने की शुरुआत जरूर की है और लोगों को भी सोचने की प्रेरणा दी है। ❑

संदर्भ सूची :

1. लहरों के राजहंस, मोहन राकेश, परिवर्द्धित संस्करण : 1965, राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नेताजी सुभाष मार्ग, नई दिल्ली–2, पृ. 122
2. मोहन राकेश के संपूर्ण नाटक, मोहन राकेश, संपादक : नेमिचन्द्र जैन, संस्करण : 1993, राजपाल एंड सन्ज, कश्मीरी गेट, दिल्ली–6, पृ. 316
3. इनैक्ट 73–74 में मोहन महर्षि के द्वारा लिया गया राकेश का इंटरव्यू 'चेंजिंग रोल ऑफ वर्ड'
4. साहित्य और सांस्कृतिक दृष्टि : मोहन राकेश, संस्करण : 1975, राधा कृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, दरियागंज, नई दिल्ली–2, पृ. 86

संदर्भ–ग्रंथ :

1. आज के हिंद रंग नाटक : परिवेश और परिदृश्य – जयदेव तनेजा, प्रथम संस्करण 1980, तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली–2
2. रंगशिल्पी मोहन राकेश – डॉ. नरनारायण राय, प्रथम संस्करण : 1991, कादम्बरी प्रकाशन, नई दिल्ली–15
3. आधुनिक हिंदी नाटक और रंगमंच – नेमिचन्द्र जैन, प्रथम संस्करण (1978) मॉडर्न प्रिंट्स दिल्ली–32
4. आधुनिक नाटक का मसीहा : मोहन राकेश, डॉ. गोविन्द चातक, प्रथम संस्करण 1975, इन्द्रप्रस्थ प्रकाशन, दिल्ली–5

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

आलेख

हिंदी कविता और किसान जीवन

प्रो. चंद्रकांत सिंह

प्रोफेसर (हिंदी विभाग)
हिमाचल प्रदेश केंद्रीय
विश्वविद्यालय,
धौलाधार परिसर-एक,
धर्मशाला, जिला-कांगड़ा,
हिमाचल प्रदेश -176215
09805792455
chandrakantonlineclass@gmail.com

शोध सार :

हिंदी कविता आरंभ से ही किसान-संवेदना को लेकर जागरूक रही है। चूँकि भारत कृषि प्रधान देश है, इसलिए आरंभ से ही हिंदी कविता किसान को आधार बनाकर अपने भावों, प्रतीकों आदि के द्वारा काव्य का मूल रचती आई है। आदिकाल में जहाँ सामंतीय-बोध केंद्रीभूत रहा, वहीं भक्तिकाल में आम जनता के सरोकार केंद्र में रहे। यही नहीं, रीतिकालीन कविता जो दरबारों में पोषित और पल्लवित हुई, उसकी भी मूल धुरी आम जनता ही रही, जो खेतों में काम करती है, प्रकृति के साथ अविरल तालमेल स्थापित करती है। इस तरह आदिकाल से लेकर मध्यकाल की समूची चेतना मूल रूप से किसानपरक रही। हालाँकि भारतेंदु युग में कुछ बुनियादी परिवर्तन हुए, तार्किकता और वैज्ञानिकता ने देश को प्रभावित किया, किंतु वहाँ भी नवजागरण की देश-बानी किसान ही रहे। शनैः शनैः द्विवेदी युग, छायावाद, प्रगतिवाद, प्रयोगवाद, नई कविता, समकालीन कविता के नाम पर कई युगांतर घटित हुए, किंतु काव्य के मूल में सामान्य जनता ही रही जो बेकारी, महँगाई सभी को आत्मसात करती हुई प्रकृति के साथ सहजीवी के रूप में विकास करती रही। इस समूचे आलेख में इसी सामान्य जनता को देखने का लघु प्रयास किया गया है, जिसकी आत्मा खेतों में निवास करती है, जो भारत की मूल प्रकृति है, शक्ति है।

बीज शब्द :

सामंतीय जीवन, किसान-बोध, लोक, महानगरीय-बोध, श्रम की संस्कृति, भूमंडलीकरण ।

मूल आलेख :

कविता का जन्म समाज की चिंताधारा के बीच होता है। समाज की प्रवृत्तियों और घटनाओं का बारीक अंकन कविता में दिखता है। किसी भी देश की कविता हो, किसी भी समय की कविता हो, यदि उसमें तत्कालीन समय और समाज की चिंता नहीं है तो वह निश्चय ही निष्प्राण होगी। हिंदी काव्य-धारा ने अपनी आरंभिक यात्रा के साथ ही समय और परिवेश की व्याख्या की है। हिंदी कविता में

प्रारंभ से मध्य वर्गीय समाज का चित्रण दिखता है। बात यदि आदिकालीन साहित्य की करें तो यह राजे-रजवाड़ों का साहित्य है, कविता में दरबारीपन की स्पष्ट झलक भी मिलती है, किंतु सामंतीय जीवन के बीच आदिकालीन काव्य ने सिद्धों और नाथों की देशनाओं द्वारा समाज को नवीन दिशा देने का कार्य किया। सामंतीय समाज की काव्यधारा के बीच आदिकालीन साहित्य ने निम्न मध्य वर्गीय समाज का प्रतिबिम्ब प्रस्तुत किया है। इस साहित्य में विशेष प्रकार का तनाव देखते बनता है, सिद्धों ने वर्चस्वशील समाज के आधिपत्य को ध्वस्त कर मानवीय मूल्यों की स्थापना की। हिंदी कविता आदिकाल से ही किसान जीवन के प्रतीकों को ग्रहण करते हुए क्रमिक रूप से बढ़ रही है। हाँ, इतना अवश्य है कि आदिकाल में सामंतीय चेतना केंद्र में थी। इस वजह से कई बार शौर्य और पराक्रम की अतिशयता के बीच कविता की लोक चेतना दब-सी गई। किंतु तत्कालीन कवियों ने लोक के प्रवाह को पहचाना था और कविता को जीवन से जोड़कर देखना चाहा था ।

यदि भक्तिकालीन कविता की बात करें तो इस कविता में अभिव्यक्त किसान-बोध लोक के कारण ही अभिव्यक्ति पाता है। लोक ही इस कविता की शक्ति है, जहाँ से कविता को प्रेरणा और उत्साह मिलता है। भक्तिकालीन अधिकांश कवियों ने किसान-जीवन को अपनी कविताओं में अभिव्यक्ति दी है। भक्तिकालीन अधिकांश कवि स्वयं किसान हैं, इस ओर ध्यान आकृष्ट करते हुए डॉ. राम विलास शर्मा जी संपूर्ण भक्ति आंदोलन को जन सरोकारों के साथ देखने के आग्रही हैं। वे स्पष्टत: कहते हैं कि- ''जुलाहे और किसान इस आंदोलन को शक्ति देने वाले हैं। सौदागर उसके सहायक हैं, हिंदू और मुसलमान, सूफी और संत दोनों उसमें शामिल हैं। भक्ति आंदोलन एक जातीय और जनवादी आंदोलन है।''[1] समग्र भक्ति की कविता का असल बोध किसान-बोध है, जहाँ से कवि को प्रेरणा मिलती रही है।

कबीर की कविताओं में जो प्रगतिशील मूल्य हैं, वे किसान जीवन के कारण हैं । कबीर ने भोजपुरी समाज के जन-जीवन को अपनी कविताओं में सार्थक स्थान दिया है। कबीर की कविता में जो जीवात्मा का चित्रण है, वह धुर किसानी बाला रूप में संकेतित है, जिसे नए परिप्रेक्ष्य में देखने और समझने की आवश्यकता है। कबीर ने भोजपुरी किसान-जीवन के ऐंद्रिय-संवेदनों के सहारे कविता का निर्माण किया है। उनकी कविताओं में जीवात्मा का चित्रण किसान की बहू रूप में हुआ है, जिसके सिर के ऊपर गागर है-

चली जात देखी एक नारी, तर गागरि ऊपर पनिहारी ।
चली जात वह बाटहिं बाटा, सोवनहार के ऊपर खाटा ।
जाड़न मरै सषेदी सौरी, खसम न चीन्हैं धरनि भी चौरी।
सांझ सकार दिया लै बारै, खसस छोंड़ि सुमिरै लगवारै ।
के संग निसु दिन राची, पिय से बात कहै नहिं साँची ।
सोवत छाँड़ि चली पिय अपना,
ई दु:ख अब दहुँ कहब कैसना।[2]

सूरदास की कविताओं का सांगोपांग विवेचन करने पर पता चलता है कि उनका जो कवि मन है, वह 'कृषक-मन' है । सूर की कविताओं में किसान जीवन की अपूर्व गाथा मिलती है, जिसे सूर ने रूपाकार दिया है। कृष्ण के जन्म के समय गाई जाने वाली गारी, सोहर, आदि मंगल-गीतों को देखने पर स्पष्टत: यही संकेत मिलता है कि सूर की कविता के केंद्र में लोक है, और यह लोक कृषक लोक है, जिस पर सूर अपनी कविता को साधते चलते हैं। सूर की कविता में किसान-जीवन का चित्रण करते हुए डॉ. मैनेजर पांडेय लिखते हैं कि - ''सूर के काव्य में खेती से जुड़ी हर छोटी-बड़ी बात का जितना आत्मीय ज्ञान है, वह किसान-जीवन से तादात्म्य के बिना संभव नहीं। उसमें खेती की भूमि के गुण-धर्म की पूरी पहचान है।''[3]

रीतिकालीन कवियों की कविता का आकलन करने पर ज्ञात होता है कि इस कविता में व्यापक किसान-बोध है। हालाँकि इस कविता को दरबारी कविता कहकर खारिज करने की परंपरा भी हिंदी में खूब रही, किंतु महत्वपूर्ण बात यह है कि इस कविता में केवल विलासिता के गीत भर नहीं हैं, अपितु लोक की अविरल-धारा के भी दर्शन होते हैं। इस दृष्टि से देखने योग्य है पद्माकर की कविता, जिसमें कवि ने सार्थक उपमानों के प्रयोग किए

हैं। उनकी कविता में प्रकृति का मनोहारी चित्रण है, गेहूँ और जवास जैसे प्रतीकों के सहारे विरह में झुलसती हुई गोपिकाओं की व्यथा है, जिसे हिंदी साहित्य की महत्वपूर्ण धरोहर कहा जा सकता है –

बरसत मेह नेह सरसत अंग अंग,
झरसत देह जैसे जरत जवासो है ।
कहै पद्माकर कालिंदी के कदम्बन पै,
मधुपनि कीन्हों आइ महता मवासौ है ।
उधौ यह ऊधम जताई दीजौ मोहन कों,
ब्रज को सुवासौ भयौ अगिन अवासौ है।[4]

भारतेंदु युगीन कवियों ने आम जनता की पीड़ा को साहित्य में उतारना चाहा है। इस काल में टैक्स की समस्या, किसानों पर अनावश्यक आरोपित ऋण-बोझ आदि देखने योग्य हैं, जिन्होंने भारतीय व्यवस्था को जर्जर एवं अशक्त कर दिया था। तत्कालीन कवियों ने जमींदारों द्वारा किए जा रहे उत्पीड़न और अंग्रेजों की दासता के बीच पिसते हुए किसानों की दुर्दांत कथा को साहित्य में उतारा है। बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमघन' की कविता 'अब काल पड़ा है भारी' इस दृष्टि से देखने योग्य है, जिसमें कवि ने अकाल की दारुण-व्यथा को उजागर किया है। अकाल के कारण कृषि का विनाश और कृषकों की विषम स्थिति का जैसा चित्रण इस कविता में मिलता है, वह देखने योग्य है –

भागो, भागो अब काल पड़ा है भारी,
भारत पी घेई घटा बिपत की कारी !
सब गए बनिज व्यापार इतै सौं भागी,
उद्यम पौरूष नसि दियो बनाय अभागी,
अब बची-खुची खेती हू खिसकन लागी,
चारहूँ दिसी लागी है महंगी की आगी,
सुनी चिल्लाएं सब,परजा भई भिखारी,
भागो, भागो अब काल पड़ा है भारी![5]

द्विवेदी युग के कवियों में देश-प्रेम की भावना प्रबल रही। इन कवियों की अधिकांश कविताएँ देश-प्रेम से प्रभावित हैं। यहाँ कवियों ने अपने समाज और देश की परिधि को पहचाना। द्विवेदी युग की अधिकांश कविताओं में जो देश-राग है, वह गँवई जीवन से प्रभावित है। इस युग में कवियों ने किसान-चेतना को स्पष्ट आधार बनाया है। कवियों को लगा कि देश का निर्माण अपनी

माटी से है और अपनी माटी का दुलारा किसान जब तक सुखी नहीं है, तब तक देश-भला कैसे सुखी हो सकता है। यही कारण है कि इस युग की कविताओं में किसान चेतना की विस्तृत अनुगूँज सुनाई पड़ती है। द्विवेदी युग में गया प्रसाद शुक्ल 'सनेही' जैसे कवियों का महत्वपूर्ण योगदान रहा, जिन्होंने ऐसी कविताएँ लिखीं, जिनमें किसान केंद्रित भावनाओं की प्रधानता है। त्रिशूल, गया प्रसाद शुक्ल सनेही आदि की कविताओं में किसान चेतना का ज्वार दिखाई पड़ता है। त्रिशूल को तो किसान केंद्रित कविता लिखने के कारण पहला 'राष्ट्र कवि' मान लिया गया था तथा 'कवि सम्राट' की उपाधि दे दी गई थी।[6]

तत्कालीन किसानों की परिस्थितियों को देखा जाए तो वह दयनीय थीं। उस समय किसान आत्महत्याएँ कर रहे थे । उन पर महाजनी सभ्यता का आतंक दिखता है। गया प्रसाद शुक्ल ने अपनी कविताओं में किसानों की दीनता का चित्र खींचना चाहा है। उनके 'कृषक-क्रंदन' काव्य को चिह्नित करते हुए ब्रह्मस्वरूप शर्मा कहते हैं कि - ''गया प्रसाद शुक्ल 'सनेही' का 'कृषक-क्रंदन' एक महत्वपूर्ण काव्य-ग्रंथ है । इसमें कथानक का अभाव है। कवि ने भारतीय किसानों की दीनहीन अवस्था का मर्मस्पर्शी चित्रण किया है। वादबद्धता से दूर इस काव्य में राष्ट्रीय भावना का पोषण हुआ है। उनकी मुक्तक कविताओं में भी दीन-हीन वर्ग की भावनाओं और अभावों का मार्मिक चित्रण हुआ है।''[7]

छायावादी कवियों में निराला अपने काव्यगत विकास के आरंभिक दौर से ही सजग कवि के तौर पर दिखाई पड़ते हैं, जिनकी कविताओं में दलितों एवं किसानों के प्रति सहज आत्मीयता का भाव है। निराला की कविता में किसानों की दीनता के प्रति मार्मिक करुणा का भाव भर नहीं है, बल्कि धरती का असीम राग उनकी कविताओं का वास्तविक सौंदर्य है। बदलते परिवेश के साथ धरती का बदलता हुआ नया रूप निराला की कविता का केंद्रीय तत्व है। 'सखी बसंत आया' कविता ने निराला की कविताओं को नया रूप दिया है। इस कविता में कवि ने धरती का गीत गाया है, जो देखने योग्य है -

आवृत सरसी-उर-सरसिज उठे,
केशर के केश कली के छुटे,
स्वर्ण-शस्य-अंचल,
पृथ्वी का लहराया।[8]

रामेश्वर शुक्ल 'अंचल' छायावादोत्तर हिंदी कविता के प्रखर स्तंभ हैं, जिनके यहाँ ताल, पोखर, नदी आदि का दुर्लभ संगीत सुना जा सकता है। किसान जीवन के जितने बहुविध प्रतीक हैं उनकी कविता में साकार हो उठते हैं। 'वो विहगवाही गगन' कविता में कवि ने खेतों की मेड़ आदि की हरीतिमा और कृषक गीत के साथ ग्राम्य संस्कृति का स्मरण किया है -

यों मुझे छोड़ो न सागर की धुँएली छाँह पर
साथ ले लो साथ अपने ओ विहगवाही गगन!
लौटती तानें, भटकते राग, मेड़ों की थिरक
हूँ सहेजे मैं सभी भोगे-अभोगे संचरण [9]

प्रयोगवादी कविता ने शिल्प के स्तर पर कई प्रयोग किए, शहरी जीवन की यातना के स्वर भी इस कविता में देखे जा सकते हैं। लेकिन केवल इतना ही सच नहीं कि कविता महानगरीय बोध से भरी हुई है, अपितु इसमें सहज मानवीय चेतना का उभार द्रष्टव्य है। इस कविता में प्रकृति के मनोरम रूप और धरती के राग-रंग की तस्वीर दिखती है, जिसे कवियों ने बहुविध पिरोया है। अज्ञेय की कविता 'हवाई यात्रा : ऊंची उड़ान' में महानगरी व्यवस्था और गँवई चेतना का पारस्परिक सहजीवन है। श्रमरत किसान की व्यथा से भरी हुई कारुणिक कहानी को यह कविता रखती है-

उतरो थोड़ा और सांस ले गहरी
अपने उड़न खटोले की खिड़की को
खोलो और पैर रखो मिट्टी पर
खड़ा मिलेगा वहां सामने तुमको
अनपेक्षित प्रतिरूप तुम्हारा
नर, जिसकी अनछिप आँखों में
नारायण की व्यथा भरी है।[10]

प्रगतिशील कवियों की चेतना का आधार किसान जीवन है । इन कवियों ने किसान जीवन को केंद्र में रखा

और कविता को रचा है। चाहे नागार्जुन हों, केदार नाथ अग्रवाल हों या त्रिलोचन-इन कवियों के वैचारिक सरोकार जनता के बीच से उपजते हैं। इन कवियों की प्रतिबद्धता का उभार किसान जीवन के मूल्यों के कारण ही है। केदारनाथ अग्रवाल की कविता में बुंदेलखंड की जनता के जन-जीवन की झाँकी दिखती है, जिसे कवि अपनी कविता में जगह देते हैं। 'गाँव की औरतें' कविता में कवि केदारनाथ अग्रवाल ने ग्रामीण स्त्री के दुख को व्यक्त किया है। गंदी कोठरियों में, भूख से लगातार संघर्ष करती हुई औरतों की व्यथा को कवि ने शब्दांकित किया है -

गाँवों की औरतें
गंदी कोठरियों में हांफती-
खांसती,खासोताती रूखे बाल
घिसती हैं जाँता जटिलतर;
गाँवों की औरतें
सूखा पिसान फांक-फांक कर
पीठ-पेट एक कर-हाड़ तोड़
मरती हैं पत्थर रगड़कर !! [11]

केदारनाथ अग्रवाल के कवित्व पर बात करते हुए दिनेश कुशवाह कहते हैं कि - ''वे जन कविता के शिल्पकार हैं। उनकी संवेदना और दृष्टि जीवन के शिल्पकारों को जानती और पहचानती है। वे उन्हीं के बीच बसते और रचते हैं। हमारे समाज में जो लोहार है, कुम्हार है, सोनार है, लखेरा है, तमेरा है ठठेरा है, राजगीर है, बढ़ई है, यानी कि जो कमेरा है, वही भारतीय जनजीवन का शताब्दियों से शिल्पकार है। विडंबना यह है कि यही शिल्पकार भारत का सबसे अधिक दलित-प्रताड़ित और वंचित-जन है। केदारनाथ का कवि इसी दलित-प्रताड़ित और वंचित जन का सखा-बंधु-अनुचर है।''[12]

नक्सलबाड़ी आंदोलन से समकालीन हिंदी कविता की रेख बनी। इस कविता ने ग्रामीण संस्कृति को व्यापक संदर्भों में देखा । आज जिस तरह दुनिया में तब्दीली आ रही है और एक ही दिन में सब पुराना होता जा रहा है, यह चिंताजनक है। भूमंडलीकरण के बीच सूचनाएँ महत्वपूर्ण हो गई हैं और संबंधों में बदलाव हो रहा है। कवि अरुण कमल की कविता 'नए इलाके में' वर्तमान परिदृश्य का साक्षात्कार कराती है, जिसमें हर चीज पुरानी पड़ती जा रही है और स्मृतियों का विलोपन तेजी से जारी है। आज गाँव जिस तरह मिट रहे हैं वह चिंताजनक है, क्योंकि गाँवों का मिटना केवल स्थान विशेष में बुनियादी परिवर्तन भर नहीं है, बल्कि गाँवों के बहाने समूची संस्कृति का खत्म होना है -

यहाँ रोज कुछ बन रहा है
रोज कुछ घट रहा है
यहाँ स्मृति का भरोसा नहीं
एक ही दिन में पुरानी पड़ जाती है दुनिया
जैसे वसंत का गया पतझड़ को लौटा हूँ
जैसे बैशाख का गया भादों को लौटा हूँ [13]

समकालीन हिंदी कविता का जनवाद व्यापक सरोकार लिए हुए है, जिसमें उपभोक्तावादी जनजीवन के प्रति क्षोभ की भावना है, जो लगातार उद्वेलित करती है। कुमारेन्द्र पारसनाथ सिंह की कविता 'गाँव खड़े हो रहे हैं' में गाँवों का समकालिक स्वर है। कवि ने हँसुआ, कुदाल की भाषा को दुबारा सिरजने का काम किया है। गाँवों की आत्मनिर्भरता और श्रम की संस्कृति का उभार इस कविता में देखा जा सकता है-

गाँव खड़े हो रहे हैं-
गाँव धूल और धुएँ के बीच से सर उठाकर खड़े हो रहे हैं
दमन की लाठी से उनके चूल्हे सर्द पड़ गए हैं-
गाँव सोये हुए संगीत को जगाने के लिए
हँसुवा,कुदाल और फावड़े का स्वर पकड़कर खड़े हो रहे हैं [14]

कवि केदारनाथ सिंह की कविता 'कपास के फूल' किसान-जीवन के सार्थक योगदान पर बात करती है। यह कविता आज के उपभोक्तावादी समाज पर व्यंग्य कही जा सकती है, जिसमें हर चीज उत्पाद में तब्दील हो रही है। साथ ही इस कविता में कहीं-न-कहीं इस बात का स्वीकार भी है कि आज की जीवन-शैली में हम चाहें कितने ही उपभोक्ताजीवी होते जाएँ, कभी भी हम

किसानी सभ्यता के ऋण से उऋण नहीं हो सकते–

पर क्या कभी सोचा है आपने
वह जो आपकी कमीज है
किसी खेत में खिला
एक कपास का फूल है
जिसे पहन रखा है आपने
जब फुर्सत मिले
तो कृपया एक बार इस पर सोचें जरूर
की इस पूरी कहानी में सूत से सुई तक
सब कुछ है
पर वह कहाँ गया
जो इसका शीर्षक था[15]

निष्कर्ष :

आदिकाल से लेकर अब तक की हिंदी कविता में लोक चेतना का अजस्र प्रसार देखा जा सकता है। आदिकाल में विद्यापति की काव्य संवेदना नितांत ग्रामीण रही और उसी संवेदना का अविरल रूप भक्तिकालीन कवियों से होते हुए समकालीन काव्यधारा का उपजीव्य है।

समकालीन हिंदी कविता में जो किसान–मूल्य हैं, वे हमारी परंपरा से आ रहे हैं। विगत कुछ दशकों से कृषकों का जीवन लगातार हाशिए पर है और देश भर के किसान आत्महत्याएँ कर रहे हैं, ऐसे में कविता के सहज संवेदन की आवश्यकता है, जो भारतीय किसान–बोध को बचाए, भूमंडलीकरण के बीच श्रम की संस्कृति, सामुदायिक, सहभागिता और सहस्तित्व की संस्कृति को फैलाए, जिससे कि सामाजिक रचाव की सक्रियता को अक्षुण्ण रखा जा सके। ❑

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. रामविलास शर्मा, 'भारतेंदु और हिन्दी नवजागरण', पृष्ठ- 35
2. सुधाकर पांडेय (संपादन), 'हिन्दी काव्य गंगा', नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, पृष्ठ-33
3. मैनेजर पांडेय, 'भक्ति आंदोलन और सूरदास का काव्य', पृष्ठ- 295
4. प्रो. चमन लाल गुप्त (संपादन), 'प्राचीन काव्य-संचयन', पृष्ठ- 70
5. योगेन्द्र दत्त शर्मा, 'देशभक्ति की कविताएँ', पृष्ठ-03
6. विजयमोहन सिंह, 'बीसवीं शताब्दी का हिन्दी साहित्य', पृष्ठ- 16
7. ब्रह्मस्वरूप शर्मा, 'आधुनिक हिंदी साहित्य', पृष्ठ-19
8. सूर्यकांत त्रिपाठी निराला, 'गीतिका', पृष्ठ- 35
9. रामेश्वर शुकल 'अंचल', चयनिका, पृष्ठ- 14
10. अज्ञेय, अज्ञेय रचना सागर : मोती और सीपियाँ', पृष्ठ-59
11. केदारनाथ अग्रवाल,'जो शिलाएं तोड़ते हैं', पृष्ठ -77
12. अरुण कमल (संपादन), आलोचना त्रैमासिक, सहस्त्राब्दी अंक बयालीस, जुलाई-सितंबर 2011, पृष्ठ- 56
13. अरुण कमल, 'नये इलाके में', पृष्ठ- 13-14
14. कुमारेन्द्र पारसनाथ सिंह, 'पत्थरों का गीत', पृष्ठ -84
15. केदारनाथ सिंह, 'सृष्टि पर पहरा', पृष्ठ -14

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

आलेख

स्त्री अस्मिता : वर्तमान संदर्भ में

डॉ. शैलजा

असिस्टेंट प्रोफेसर
श्री गुरुनानक देव खालसा कॉलेज
(दिल्ली विश्वविद्यालय)
देव नगर, नई दिल्ली-110005
9868617559
drshailjamohan@gmail.com

वर्तमान में स्त्री-चिंतन स्त्री-विमर्श के रूप में साहित्य के केंद्र में है। स्त्री-विमर्श के संदर्भ में यह कहा जाता है कि स्त्री की पीड़ा, उसका दुख-दर्द जितना स्त्री-लेखिका समझ सकती है, अनुभूत कर सकती है और उसे जिस रूप में अभिव्यक्त कर सकती है, उसे पुरुष उस रूप में वाणी नहीं दे सकता। हिंदी की चार कहानी-लेखिकाओं - शिवरानी देवी, सुभद्रा कुमारी चौहान, कमला देवी और हेमवती देवी की कहानियों की आलोचना के माध्यम से हजारी प्रसाद द्विवेदी उपर्युक्त तथ्य-सत्य की तह तक जाकर रूढ़ मान्यताओं पर प्रहार करते हैं - 'प्रचलित विश्वास यह है कि स्त्री को स्त्री ही ठीक-ठीक समझ सकती है। इसके साथ जो अनुमान अपने आप उपस्थित होता है, उसे प्राय: भुला दिया जाता है। वह अनुमान यह है कि पुरुष को पुरुष ही समझ सकता है और वही उसे व्यक्त भी कर सकता है। स्पष्ट ही यह अनुमान सत्य से बहुत दूर है और इसीलिए उसकी अनुमापक प्रतिज्ञा भी उतनी ही असत्य है। यह विचार कि स्त्री ही स्त्री को समझ सकती है और पुरुष स्त्री को नहीं समझ सकता, किसी बहके दिमाग की कल्पना मात्र है।'[1]

यह स्त्री तब और पीड़ित होती है जब उसकी व्यवस्थाएँ न्न-भिन्न होती हैं। आधुनिक काल में आई व्यावसायिक क्रांति के कारण स्त्री-निर्मित कृषिमूलक सभ्यता के ह्रास, परिवार और वर्ग की भावना के पराभव को वे वैयक्तिक स्वाधीनता के विकास का कारक मानते हैं। हजारी प्रसाद द्विवेदी आधुनिक काल की व्याख्या में यह अनुभव करते हैं कि इस युग के स्त्री-पुरुष को यह स्वीकार्य नहीं था कि स्त्री रहस्य बनी रहे। उन्हीं के शब्दों में 'पुरुष ने स्त्री को समझने की कोशिश की और स्त्री ने इस कार्य में उसे सहायता पहुँचाई और साहित्य नये सुर में बजने लगा।'[2]

निश्चय ही यह नया सुर 'स्त्री विमर्श' का था। उसके नये आख्यान का था। स्त्री अस्मिता के प्रश्न, वर्तमान संदर्भ में स्त्री-मुक्ति के उस अंकुर से समझा जा सकता है, जिससे दीनता और पराधीनता का बोध और उससे मुक्ति की इच्छा प्रस्फुटित हो रही थी। स्त्री अस्मिता की चेतना के लिए पुरुष की सोच में बदलाव होना एवं स्त्री एवं पुरुष के बीच समानता का व्यवहार होना आवश्यक है। स्त्री-मुक्ति की चेतना के लिए स्त्रियों को स्वयं सचेत रहकर अपने साथ हो रहे अत्याचार, उत्पीड़न और अन्याय का प्रतिरोध करना आवश्यक है। वर्तमान समय में स्त्रियों ने उन्नति करने के लिए कड़ी मेहनत की है। आज स्त्रियाँ स्वाभिमान और आत्मविश्वास के साथ पारिवारिक बंधनों से स्वयं को निकालकर नौकरी और

व्यवसाय के क्षेत्र में अपना स्थान बना रही हैं। वर्तमान समय में स्त्रियाँ पुरुषों पर निर्भर रहते हुए विभिन्न क्षेत्रों में स्वयं काम कर रही हैं।

वर्तमान समय में विभिन्न परिवर्तनों के साथ स्त्रियों के जीवन में भी परिवर्तन हो रहा है। आज की स्त्रियाँ आर्थिक रूप से स्वावलंबी होकर स्वयं के स्वतंत्र व्यक्तित्व को सजग होकर स्थापित कर रही हैं। स्त्री मुक्ति की चेतना के कारण स्त्रियों में स्वाभिमान और आत्मविश्वास की भावना के साथ जीवन जीने की इच्छा बढ़ने लगी है। आज स्त्रियाँ पुरुषों के समान स्तर पर आत्मविश्वास के साथ खड़ी हैं। स्त्रियों ने आज सभी क्षेत्रों में स्वयं के महत्व को दर्शाया है। आज स्त्रियाँ स्वयं निर्णय लेने की क्षमता रखती हैं।

स्त्रियों की स्थिति में सुधार होने के साथ-साथ स्त्रियों की सोच में भी बदलाव आया है। स्त्रियाँ अपने कर्तव्य और अधिकारों के प्रति जागृत हो चुकी हैं। साथ ही स्त्रियाँ अपनी अस्मिता को हमेशा बनाए रखती हैं. स्वतंत्रता प्राप्त करने के बाद भारतीय समाज में अत्यंत तेज गति से बदलाव होने लगा। स्त्री मुक्ति आंदोलन, स्त्री जागरण, स्त्री सुधार आंदोलन, कानून आदि विभिन्न कारणों से स्त्रियाँ अपने साथ हुए अन्याय और अत्याचारों का प्रतिरोध करने में सक्षम हुई हैं। इस संघर्षशील युग में स्त्रियाँ केवल भावुक होकर कोई भी कार्य नहीं करतीं बल्कि व्यावहारिक होकर भी कार्य करती हैं और पुरुषों के समान स्थिति में स्वयं को बनाए रखती हैं। इसी कारण संघर्षरत स्त्रियों ने परिवार एवं समाज में स्वतंत्र अस्तित्व को निर्मित किया है। आज स्त्रियों का जीवन निराशा और बंधनों से घिरा नहीं है।

स्त्री आज स्त्री अस्मिता के प्रति सक्रिय और सजग हो गई है। स्त्रियाँ वर्तमान में अपने साथ हुए अन्याय एवं अत्याचारों का ही केवल तिरस्कार नहीं करतीं बल्कि दूसरी स्त्रियों के साथ हुए अन्याय के विरोध में संघर्ष करती हैं। आज स्त्रियों का संघर्ष केवल स्वयं तक ही सीमित नहीं रहता है। प्रभा खेतान के अनुसार 'समाज में नारीवादी बौद्धिकता की भी एक विशिष्ट भूमिका है। इस नई स्त्री को पहचान मिल चुकी है, वह हर कहीं, हर जगह नजर आती है। हर जाति और वर्ग में ऐसी स्त्रियाँ सक्रिय हैं। व्यक्ति होने के नाते उनमें प्रतिनिधित्व की क्षमता है। अपना मत-अमत जाहिर करने की भाषा उनके पास है। आज स्त्री ने सदियों की खामोशी तोड़ी है। उसकी नियति में बदलाव है। उसके व्यक्तिगत जीवन का उद्देश्य, दर्शन, उसका मन-मिजाज सभी तो बदल रहा है और इस नई भूमिका की अपनी धार है। उसका अपना वजूद महसूस किया जा सकता है। न केवल अपने हक के लिए वह सत्ता से सवाल करती है बल्कि औरों के लिए भी वह रूढ़िवादी परंपरा और वैचारिक दुराग्रहों को खँगालती है, खुरचती है। वह समझ चुकी है जिसे वह अपना यथार्थ समझती रही वह महज एक पितृसत्तात्मक सामाजिक निर्मिति है।' [3]

स्त्री-मुक्ति की चेतना ने आज स्त्रियों के परंपरागत छवि को तोड़ा है, जिससे स्त्रियों ने नई चेतना के साथ अपने अस्तित्व और स्वतंत्र जीवन प्राप्ति के लिए संघर्षरत होना सीख लिया है। स्त्रियाँ समाज में नवीन मूल्यों को स्थापित करने के लिए भी संघर्षरत हैं। स्त्री-शिक्षा के कारण विपरीत परिस्थितियों से लड़ना स्त्रियों ने सीखा है। मनुष्य जाति के निर्माण एवं विकास में स्त्रियों की मुख्य भूमिका रहती है। स्वस्थ समाज की कल्पना स्त्रियों के बिना असंभव है। वर्तमान समय में स्त्रियाँ व्यक्तित्व विकास के द्वारा शिक्षा एवं स्वतंत्रता के द्वारा, मेहनत और निष्ठा के द्वारा महत्वपूर्ण उपलब्धियों को प्राप्त कर रही हैं। स्त्रियों ने नये दृष्टिकोण को विकसित कर स्वयं की पहचान को स्थापित किया है। स्त्रियों के संघर्ष का ही परिणाम है कि शिक्षा, सामाजिक और पारिवारिक

जीवन में उनकी भागीदारी बढ़ गई है। रोजगार के अवसरों ने स्त्रियों को आर्थिक रूप से मजबूत बनाया है।

भारतीय समाज में पहले विधवा स्त्रियाँ उपेक्षित रहकर अपना जीवन व्यतीत करती थीं। पहले पति की मृत्यु के बाद विधवा स्त्रियाँ बेबस और आश्रयरहित जीवन बिताते हुए असहनीय यातना सहन करती रहीं पहले विधवाओं को समाज में सम्मानजनक दृष्टि से नहीं देखा जाता था, परंतु आज स्त्री आंदोलन और शिक्षा के कारण विधवा स्त्रियों की स्थिति में बदलाव आया है। अब विधवा स्त्रियाँ भी समाज में सम्मान के साथ रहने लगी हैं। नवीन युग की चिंतन-प्रणाली से स्त्रियों की नई पहचान बनी है। आज स्त्रियों में अपने साथ हुए न्याय-विरुद्ध आचरण को रोकने का साहस दिखाई पड़ता है। स्त्रियाँ अपने निर्णय-क्षमता के द्वारा स्वयं ही समस्याओं से लड़ती हैं। व्यक्तिगत स्वतंत्रता प्राप्त करने के लिए स्त्रियों ने प्राचीन रूढ़ियों और परंपरा को तोड़ा है। आधुनिक दृष्टि को अपनाकर स्वचेतना, स्वाधीनता, शिक्षा के कारण स्वावलंबी होकर स्वयं का व्यक्तित्व विकास कर स्त्रियों ने स्वयं को आधुनिक रूप में बदला है। आज स्त्रियाँ अपनी अस्मिता को पहचानकर शोषण का प्रतिरोध कर समान अधिकार की इच्छा रखती हैं। वर्तमान समय में स्त्रियाँ पुरुषों के अहंकार को तोड़कर सशक्त रूप से अपने कर्तव्यों को पूर्ण करती हुई दिखाई देती हैं।

अनामिका कहती हैं कि 'स्त्री मुक्ति एक साझा चूल्हा है! मुझे हमेशा लगता है कि जैसे एक स्त्री को शिक्षित करना पूरे परिवार को शिक्षित करना है, स्त्री-मुक्ति में सब की मुक्ति है। तैयार करनी है एक ऐसी फिजां, जहाँ सच कहते या सुनते किसी की आँख ना झुके, कोई किसी का हक छीने नहीं, सबकी दुनिया, सबकी धरती हरी-भरी, उत्फुल्ल हो और झूठ किसी जीवन का चंद्रखिलौना न हो। बालपन से तो निकलना है। वयस्क होना है। इस पूरी मनुष्यता को उस सम्यक दृष्टि के साथ जो 'जिसकी लाठी, उसकी भैंस' के अराजकतावादी दर्शन में बिल्कुल विश्वास नहीं करती और इतिहास की भूलों से सीख लेकर हर तरह की आतंकप्रवर छीनझपट का अहिंसक किंतु अटल प्रतिरोध करती है।'[4]

स्त्री-चेतना का अभिप्राय परिवार को तोड़ना नहीं बल्कि परिवार से जुड़े सभी दायित्वों का निर्वाह करना है। आदर्श परिवार की स्थापना स्त्री-चेतना द्वारा ही संभव है। स्त्री-चेतना स्त्रियों को परंपरागत रूप से निकालकर उनके स्वतंत्र अस्तित्व की स्थापना कर उन्हें नवीन दिशा प्रदान करना है। स्त्री-मुक्ति की चेतना का अभिप्राय पुरुषों का विरोध कर उनसे संघर्ष करना नहीं है, अपितु स्वयं की अस्मिता का निर्माण एवं पुरुषों के समकक्ष स्थान प्राप्त करना है। वर्तमान समय में भूमंडलीकरण के कारण स्त्रियाँ सशक्त बन रही हैं। आज स्त्रियाँ आत्मसम्मान और आत्मविश्वास के साथ आत्मनिर्भर बन रही हैं। आज स्त्रियाँ अपने अधिकारों को प्राप्त करने के लिए सजग रहती हैं। सशक्त एवं समर्थ बनकर अपने आत्म सम्मान के साथ उन्नति कर रही हैं। स्त्री-चेतना समाज में स्त्रियों को विकसित एवं सर्व संपन्न बनाने के लिए नवीन विकल्प एवं संभावनाओं का निर्माण करती है। स्त्री-चेतना एक सतत प्रक्रिया है और स्त्री अस्मिता को जागृत करने का उद्देश्य समाज में स्त्रियों को समान रूप से भागीदार बनाना है।

स्त्री अस्मिता को सशक्त कर अपनी क्षमताओं को पहचान कर स्त्रियाँ नवीन ढंग से जीवन को देख रही हैं, जिससे समाज का भी उत्थान हो रहा है। भूमंडलीकरण प्रबल माध्यम बनकर स्त्रियों की अस्मिता को प्रबल करने में मुख्य भूमिका निभा रहा है। वैश्वीकरण में विश्व के संचार और तकनीक माध्यम एक होकर लोगों के मध्य सांस्कृतिक चेतना को विकसित कर रहे हैं। इससे लोगों के आचार-व्यवहार में परिवर्तन हो रहा है। इस परिवर्तन के कारण स्त्रियाँ मुक्त होकर एक ओर सकारात्मक व्यक्तित्व का विकास कर रही हैं, तो दूसरी तरफ स्त्रियाँ स्वयं की इच्छा से स्वयं का वस्तुकरण भी करने लगी है। वर्तमान समय में स्त्रियाँ बाजारवाद, मीडिया एवं उपभोक्तावाद युग में सभी उत्पादों के विज्ञापनों में दिखाई देने लगी हैं। 'महिला सशक्तिकरण में मीडिया ने विगत दो दशकों के दौरान भारत में रेडियो तथा समाचार पत्रों के द्वारा महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया है। दूरदर्शन के विस्तार ने भी महिलाओं को एक नई दिशा दी है। शहरी क्षेत्रों में शिक्षित-प्रशिक्षित महिलाओं ने

सूचना प्रौद्योगिकी क्षेत्र में नित नई उपलब्धियाँ हासिल की हैं।'[5]

वास्तव में मीडिया ने भिन्न-भिन्न कार्यक्रमों के द्वारा स्त्रियों को सशक्त किया है। आज स्त्रियों की भी विचारधारा में परिवर्तन हो चुका है और स्त्रियों के सामने उन्नति का पथ खुला हुआ है। इस प्रगति के पथ पर चलते हुए स्त्रियों को सर्वदा अपनी समस्याओं को, जीवन के प्रति दृष्टिकोण को, अपनी विचारधारा को खुले ढंग से व्यक्त करने के लिए तत्पर रहना होगा। वर्तमान समय में अस्मिता की रक्षा के लिए तमाम विपरीत परिस्थितियों से टकराते और जूझते हुए स्त्रियाँ समाज में अपना स्थान बनाने के लिए संघर्ष कर रही हैं। स्त्री जाति के साथ हुए अन्याय के विरुद्ध संगठित होकर स्त्रियों ने समाज के दृष्टिकोण को बदलने का प्रयास भी प्रारंभ किया है. तसलीमा नसरीन स्त्रियों की स्थिति के विषय में कहती हैं कि 'यह पौधे भी पीपल की तरह बढ़ सकते हैं। लेकिन मिट्टी नहीं है। वैसी उर्वर मिट्टी नहीं है, जिसमें मनचाहे ढंग से बढ़ा जा सके। जो मिट्टी है भी उसमें कंकड़ पत्थर ही ज्यादा है, पानी नहीं है, खाद नहीं है, इसलिए इसमें पौधे बड़े नहीं होते।'[6]

आज स्त्रियाँ दासत्व से मुक्ति पाने, स्वतंत्र ढंग से जीवन व्यतीत करने और समानता के अधिकार के प्रति जागरूक हो रही हैं। अस्तित्वहीन तथा अस्मिताहीन जीवन जीने की घुटन ने स्त्रियों में एक चेतना का संचार किया है। और इस चेतना ने ही समाज में स्त्री विरोधी मानसिकता को तोड़ने का संकल्प लिया है पहले की तरह ही स्त्रियाँ आज भी दलदल में फँसी हुई हैं। हालांकि आज स्त्रियाँ अधिक संख्या में शिक्षित होकर उच्च पदों पर भी पहुँच गई हैं, परंतु सही अर्थों में स्त्रियाँ आज भी स्वतंत्र नहीं हो पाई हैं। वर्तमान समय में भी स्त्रियाँ शोषण का शिकार हो रही हैं, किंतु वर्तमान समय में शोषण का स्वरूप बदल चुका है।

वर्तमान समय में तसलीमा नसरीन, कृष्णा सोबती, महाश्वेता देवी, मन्नू भंडारी, मेहरून्निसा परवेज आदि स्त्रियाँ अपने लेखन द्वारा स्त्री अस्मिता के लिए संघर्ष कर स्त्रियों के स्वतंत्र अस्तित्व के विकास के लिए पथ-प्रदर्शक का कार्य कर रही हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि कोई साहित्य स्त्री-मुक्ति की चेतना को तभी दर्शाता है, जब उस साहित्य में स्त्री के दमन और संघर्ष की अभिव्यक्ति के साथ-साथ चेतना मिश्रित होती है। ❑

संदर्भ :

1. हजारी प्रसाद द्विवेदी ग्रंथावली, भाग-10, महिलाओं के लिए लिखी कहानियां, नामक निबंध, पृष्ठ-186
2. हजारी प्रसाद द्विवेदी ग्रंथावली, भाग-10, महिलाओं के लिए लिखी कहानियां, नामक निबंध, पृष्ठ-186
3. खेतान प्रभा, उपनिवेश में स्त्री, संस्करण-6, 2016, पृष्ठ : 53-54, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
4. अनामिका, स्त्री विमर्श का लोकपक्ष, संस्करण-1, 2012, पृष्ठ : 77, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली
5. नईम मुहम्मद, महिला सशक्तिकरण : चुनौतियाँ एवं समाधान, संस्करण-1, 2014, पृष्ठ : 46, यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन, नई दिल्ली
6. कुमार राकेश, नारीवादी विमर्श, संस्करण-1, 2011, पृष्ठ : 201, आधार प्रकाशन, हरियाणा

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

आलेख

'काला जल' उपन्यास और आंचलिकता

डॉ. दिनेश साहू

सहायक प्रोफेसर, हिंदी विभाग
सिक्किम विश्वविद्यालय
काजी रोड, गंगटोक,
सिक्किम-737101
7864878427
dshahu@cus.ac.in

सार-संक्षेप :

'काला जल' हिंदी साहित्य के सर्वाधिक महत्वपूर्ण उपन्यासों में से एक है। इसमें छतीसगढ़ के एक विशेष क्षेत्र 'बस्तर' की आंचलिकता का वर्णन है। इस उपन्यास में गुलशेर खान शानी ने बस्तर के लोगों के जन-जीवन, परिवेश, पर्व-त्योहार और उनकी स्थानीय संस्कृति का सर्वांगीण विवरण प्रस्तुत किया है। शानी के आंचलिकता वर्णन ने इस कथा को बस्तर केंद्रित रखते हुए भी इसे अंचल से निकालकर पूरे देश की कथा बना दिया है। उपन्यास का विषय तत्कालीन समय के तमाम रूढ़ियों, अंधविश्वासों के साथ-साथ बस्तर की आंचलिकता है। बस्तर प्राकृतिक रूप से समृद्ध क्षेत्र रहा है। शानी ने इस उपन्यास में बस्तर के रहन-सहन, खानपान, पर्व-त्योहार, प्रकृति चित्रण आदि के माध्यम से आंचलिकता का चित्रण किया है, जो अत्यंत प्रभावशाली है।

बीज शब्द :

आंचलिकता, रूढ़िवादिता, अंधविश्वास, सांप्रदायिक सद्भाव, फोटोग्राफिक शैली, लोकधर्मी भाषा, जातिवाद, प्राकृतिक सुंदरता, भौगोलिक परिवेश, दिशाहीनता, अवरुद्धता, पर्व, त्योहार, महक।

1. प्रस्तावना :

स्वातंत्र्योत्तर हिंदी उपन्यासों में आंचलिक उपन्यासों का योगदान अद्वितीय रहा है। आंचलिक उपन्यास अपनी विशिष्टताओं के कारण अन्य उपन्यासों से भिन्न हैं। प्रत्येक अंचल या क्षेत्र अपनी सांस्कृतिक विरासत के कारण आंतरिक और बाह्य रूप से भिन्न प्रतीत होता है। आंचलिक उपन्यासों में कथाकार अपने प्रदेशांचल के व्यावहारिक जीवन का जीता-जागता यथार्थ स्वरूप प्रस्तुत करता है। इस क्षेत्र में फणीश्वरनाथ 'रेणु', 'नागार्जुन', 'अमृतलाल नागर', 'शैलेश मटियानी', 'रांगेय राघव', 'उदयशंकर भट्ट', 'विवेकी राय', 'गुलशेर खान शानी' आदि को हिंदी साहित्य में विशेष ख्याति प्राप्त है। इनके द्वारा रचित आंचलिक उपन्यासों में विशिष्ट परिवेश, नवीन कथा विन्यास, पात्रों की परिवर्तित मन:स्थितियाँ तथा आंचलिक संदर्भों की अभिव्यक्ति का यथार्थ वर्णन हुआ है एवं इनके उपन्यासों की भाषा

स्थानीय लोक जीवन की संस्कृति को पूर्ण रूप से अभिव्यक्त करने में सक्षम है।

हिंदी साहित्य जगत में गुलशेर खान शानी द्वारा रचित 'काला जल' उपन्यास में भी बस्तर क्षेत्र की आंचलिकता का वर्णन पूर्णत: देखने को मिलता है। गुलशेर खान शानी एक ऐसे अमर शिल्पी कथाकार हैं, जिन्होंने अपने अधिकतर उपन्यासों में ग्रामीण एवं आंचलिक समाज के यथार्थ को उद्घाटित किया है। इनकी रचनाएँ अपनी संरचना, शिल्प और स्वाद में एक अलग और नई पहचान लेकर उपस्थित होती हैं। वर्तमान समय में उपन्यास की लोकप्रियता इसके विस्तृत स्वरूप के कारण भी है, क्योंकि आधुनिक युग में मानव का जीवन जटिल एवं उलझाऊ हो गया है। स्वरूप के अनुसार ही उपन्यासों में मानव-जीवन का सघन और विस्तृत चित्रण का स्पेस मिलता है, जिससे उपन्यासकार इच्छित काल-खंड, क्षेत्र, पात्र, विषय आदि के वर्णन को लेकर स्वतंत्र होता है। हिंदी के कई उपन्यासों में क्षेत्र विशेष के रहन-सहन, बोल-चाल, खान-पान, भाषा-शैली आदि का चित्रण मिलता है। ऐसे उपन्यासों में किसी अंचल के बहाने पूरे देश की कथा को चित्रित किया जाता है। शानी का उपन्यास 'काला जल' भी छत्तीसगढ़ के एक विशेष क्षेत्र 'बस्तर' का विशिष्ट वर्णन प्रस्तुत करता है। उनका 'काला जल' उपन्यास का प्रकाशन सन 1965 ई. में हुआ था। इस उपन्यास में दो त्योहारों 'शबेबरात की फातिहा और मुहर्रम' के माध्यम से मुस्लिम समाज के सामाजिकरूढ़ियों और अंधविश्वासों को उकेरा गया है। राजेंद्र यादव इस उपन्यास की भूमिका में लिखते हैं - ''काला जल इसलिए कतई महत्वपूर्ण उपन्यास नहीं है कि वह एक पिछड़े हुए इलाके के दो मुस्लिम परिवारों की कहानी है और हमारे सामने उस समाज की तस्वीर रखता है, जिसके बारे में हम बहुत कम जानते हैं। हालाँकि उसे इस समाज का पहला प्रामाणिक उपन्यास होने का श्रेय दिया जाता रहा है।'' (शानी 2021:9) मुस्लिम समुदाय का ऐसा प्रामाणिक चित्रण शायद ही पहले किसी अन्य कृति में हुआ हो, इसे किसी नैतिकता के आवरण में लपेटकर प्रस्तुत नहीं किया गया, बल्कि इसे तत्कालीन समाज के अनुरूप जस का तस रखने की कोशिश की गई है। इस उपन्यास में छत्तीसगढ़ राज्य के बस्तर जिले का चित्रण है। वर्तमान समय में बस्तर जिले का नाम आते ही दिमाग में नक्सली समस्याएँ उभरती हैं, परंतु उस समय का बस्तर एकदम अलग था -''उन दिनों बस्तर कुछ और ही था और जगदलपुर एक निहायत ही छोटा और गाँवनुमा कस्बा। कुल मिलाने पर तथा ले-देकर खास सड़क भी एक थी, जो राजमहल से निकलती और बाजार तक जाती।'' (शानी 2021:36)

2. अध्ययन का उद्देश्य एवं महत्व :

इस अध्ययन से छत्तीसगढ़ के बस्तर क्षेत्र की तत्कालीन आंचलिक संदर्भों का सजीव चित्र प्रस्तुत किया जा सकता है। इससे पाठक वहाँ के भौगोलिक वातावरण और वहाँ के लोगों के सामाजिक जीवन एवं सथानीय संस्कृति को समझने में सक्षम होंगे। इस शोधालेख के माध्यम से हिंदी उपन्यास के इतिहास में 'काला जल' के आंचलिक महत्व का मूल्यांकन किया जा सकता है। इसके साथ ही इस उपन्यास के संवेदनात्मक वैशिष्ट्य को जाना जा सकता है और उपन्यास में प्रस्तुत क्षेत्र विशेष की विभिन्न विशेषताओं और समस्याओं से परिचित हो सकते हैं।

3. अध्ययन में व्यवहृत पद्धति :

अध्ययन की पद्धति विश्लेषणात्मक है। उद्धरण एवं संदर्भ ग्रंथ सूची में एमएलए शैली का प्रयोग किया गया है। अध्ययन के लिए आधार ग्रंथ के रूप में 'काला जल' उपन्यास को लिया गया है एवं इसके साथ अन्य पुस्तकों की भी सहायता ली गी है।

4. विश्लेषण एवं निर्वचन :

'काला जल' उपन्यास में दो मुस्लिम निम्न मध्यम वर्गीय परिवार की तीन पीढ़ियों की कहानी है। हिंदी उपन्यास साहित्य में इस उपन्यास को प्रामाणिक मुस्लिम जीवन चित्रण का प्रथम उपन्यास भी माना जाता है। विभाजन के दंश ने ग्रामीण अंचलों के धार्मिक और सांप्रदायिक सद्भाव को प्रभावित किया था, जिसका संक्षिप्त चित्रण इस उपन्यास में मौजूद है। 'काला जल'

शीर्षक का अभिप्राय ऐसे जल से है, जिसमें बहाव न हो अर्थात जमा हुआ जल या सड़ा हुआ जल। उपन्यास में मोती तालाब इसका प्रतीक है। मोती तालाब के वर्णन से इसकी पुष्टि होती है-''मोती तालाब के सिवार ढँके काले जल से भींगकर आती वही बिसायन्ध भरी हवा और अमराई पार के नल से जल का गगरा लेकर लौटती वही प्रौढ़ा, जवान या अधेड़ औरतों की राह चलती ठिठोलियाँ...।'' (शानी 2021:23) जल का यह बहाव अचानक नहीं अवरुद्ध हुआ, यह सदियों से जारी है। उपन्यास का कथानक लगभग 1910 ई. से शुरू है, परंतु उपन्यास में स्वाधीनता संग्राम की कोई आहट भी नहीं है। उपन्यास के लगभग सभी पात्र सामाजिक रूढ़ियों और धार्मिक अंधविश्वासों में लिप्त हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरांत भी मुख्यधारा से दूर भारतीय ग्रामीण क्षेत्रों में अंग्रेज और लोकतांत्रिक शासन में कोई बुनियादी फर्क महसूस नहीं हुआ। गोपाल राय इसकी तुलना फणीश्वर नाथ 'रेणु' के 'मैला आँचल' के मेरीगंज से करते हैं - ''यहाँ की स्थिति मैला आँचल के मेरीगंज से कुछ भिन्न नहीं है। जिस प्रकार मैला आँचल में देश के स्वाधीन होने पर वे लोग सत्ता हथिया लेते हैं, जिन्होंने आंदोलन में भाग नहीं लिया था, बल्कि उसका विरोध ही किया था, वही बात बस्तर में भी होती है। एक अंतर यह है कि मैला आँचल में स्वाधीनता के बाद जहाँ राजनीतिक गतिविधियाँ तेज हो जाती हैं वहाँ बस्तर में जड़ता और घुटन ज्यों की त्यों बनी रहती है।'' (राय 2019:290) 'मैला आँचल' की तरह इस उपन्यास में भी लेखक ने कथानक को फोटोग्राफिक शैली में इस प्रकार प्रस्तुत किया है कि छत्तीसगढ़ राज्य के संपूर्ण बस्तर अंचल सजीव, साकार और यथार्थ रूप में हमारे सामने प्रस्तुत होता है।

अंचल का अर्थ कोई विशेष क्षेत्र या देश या प्रांत का एक भाग होता है। इसी विशेष क्षेत्र या भाग से संबंधित होने के अर्थ में 'आंचलिकता' शब्द का प्रयोग किया जाता है। हिंदी उपन्यास साहित्य में आंचलिक उपन्यास की सीमा और विशेषता निर्धारित करना कठिन रहा है। सामान्यत: आंचलिकता का अर्थ स्थानीय जीवन के पुट से लगा लिया जाता है, जो इसका अर्थ-संकुचन करता है। प्राय: सभी रचनाकार अपने दैनिक अनुभवों में अलग-अलग क्षेत्र की ही विशेषता रखते हैं, परंतु सभी उपन्यासकारों के उपन्यासों को आंचलिक नहीं कहा जा सकता। इस संदर्भ में रामदरश मिश्र मानते हैं कि - ''कथा जिस प्रदेश में बहती है, वहाँ की प्रकृति, वेशभूषा, रीति-रिवाज की रंगत लेखक उपन्यास में देता चलता है। आंचलिक उपन्यास तो अंचल के समग्र जीवन का उपन्यास है।'' (मिश्र 2016:235) 'हिंदी साहित्य कोश' में आंचलिक उपन्यास का अर्थ स्पष्ट करते हुए डॉ. धीरेन्द्र वर्मा ने लिखा है- ''कुछ उपन्यासों में किसी प्रदेश-विशेष का यथा तथ्य और बिम्बात्मक चित्रण प्रधानता प्राप्त कर लेता है और उन्हें प्रादेशिक या आंचलिक उपन्यास कहा जाता है।'' (वर्मा 2020:14) शंभूसिंह का मानना है- ''आंचलिक उपन्यास का प्रतिपाद्य कोई ग्राम, नगर, प्रांत या क्षेत्र विशेष से होता है, जिसकी अपनी कुछ विशेषताएँ होती हैं और वह सामाजिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक मानदंडों की दृष्टि से एक इकाई होता है।'' (सिंह 1979:21) इन परिभाषाओं के आधार पर कहा जा सकता है कि आंचलिक उपन्यास एक सीमित अंचल या क्षेत्र विशेष के सर्वांगीण जीवन को, जिसमें वहाँ के साधारण-असाधारण विवरण, परिचित-अपरिचित भूमियों का उद्घाटन, विविध छवियों का अंकन आदि निहित होता है, वस्तुमुखी दृष्टि से रूपायित करता है तथा इसमें रचनाशीलता का नया आग्रह एवं

लोकधर्मी भाषा, बोलियों-उपबोलियों की भी विविध भंगिमाएँ निहित होती हैं एवं विशिष्ट क्षेत्र के निवासियों का समग्र चित्रण लेखक करता है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद उपन्यासों में जो सच्चे ग्रामीण भारत की तस्वीर उभरती है, उसमें आंचलिक उपन्यासों की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। ऐसे उपन्यासों में भारत के उन प्रांतों की तस्वीर उभरकर हमारे सामने आई जो राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, वैज्ञानिक आदि क्षेत्रों में मुख्यधारा से काफी पिछड़े थे। ऐसे सभी प्रांत आजादी के बाद भी गरीबी, भुखमरी, अशिक्षा, बेरोजगारी, अविकसित आधारभूत संरचना, जातिवाद, सामंतवाद आदि समस्याओं का दंश झेल रहे थे। आंचलिक उपन्यासों में लोक की गंध बसी होती है। लोक का यह चित्रण सतही या उथला नहीं होता है, बल्कि उस क्षेत्र विशेष की परंपरा, सभ्यता, संस्कृति, लोक-प्रचलन आदि के साथ उसके समग्र जीवन का गहन चिंतन-मनन होता है। भारत को गाँवों का देश कहा जाता है। यहाँ के गाँव में हास-परिहास, व्यंग्य, प्रशंसा, अवसाद, उम्मीद, घुटन, उन्मुक्तता सब कुछ है। 'काला जल' उपन्यास का रचनाकाल भारतीय समाज के वैसे समय के समकक्ष है, जब संपन्न गाँवों का विकास कस्बों में, कस्बों का नगरों में, नगरों का महानगरों में हो रहा था, लेकिन जो गाँव संपन्नता से दूर थे वह और पिछड़ते चले गए। कहने को तो लोकतंत्र का आगमन हो चुका था, परंतु इन गाँवों में जाति प्रथा और जमींदारी प्रथा अपना घर जमाए हुई थी। लोकतंत्र में चुनाव का क्या महत्व है? इन गाँवों के लोगों को नहीं पता था। संविधान में समानता की बातें लिखी हैं, ये बात उच्च जाति वालों के सामने सर झुकाते वक्त नहीं जानते थे। ऐसे कई गाँव जैसे मैला आँचल का मेरीगंज, सागर लहरें और मनुष्य का वर्सोवा गाँव, ब्रह्मपुत्र का पिसांगमुख, आधा गाँव का गंगोली, रागदरबारी का शिवपालगंज, जल टूटता हुआ में गोरखपुर का कछार अंचल, काला जल का बस्तर आदि हिंदी उपन्यास में यथार्थ रूप में चित्रित किए गए। आंचलिक उपन्यास में भले ही लोक का चित्रण होता है, परंतु वह समग्रता में देखा जाए तो कहा जा सकता है कि इसमें पूरे देश का चित्रण होता है। 'काला जल' उपन्यास में जिस बस्तर प्रांत को कथा का केंद्र बनाया गया है, वह भारत के हर एक वैसे कस्बों का प्रमाणिक दस्तावेज है, जो मुख्यधारा से कटा-बसा है। वर्तमान समय में भी भारत के प्राय: सभी राज्यों में ऐसे बस्तर विद्यमान हैं। उपन्यास में इंद्रा नदी का जिक्र है, जिसके तट पर बस्तर संभाग का जगदलपुर कस्बा बसा हुआ है। जगदलपुर में कोई विशेष हलचल नहीं होती है, एकदम शांत कस्बा है। उपन्यास के पात्र सल्लो आपा, मोहसिन, मैं, छोटी फूफी, सोफिया सबमें त्योहारों और परंपराओं को लेकर विशेष उत्साह और उमंग है। प्रकृति चित्रण की दृष्टि से लेखक पूरे बस्तर जिले को उकेर के रख देते हैं। उनकी लेखन शैली से वहाँ के नदी, तालाब, पशु-पक्षी, खेत, जंगल, झाड़ सब जीवंत हो उठे हैं। यह क्षेत्र वैसे भी प्राकृतिक सौंदर्य से परिपूर्ण है। 'काला जल' में चित्रित आंचलिकता किसी विशेष आग्रह के बगैर भी सादगी में पूर्ण है। ''काला जल का परिवेश भी आंचलिक है। पर रेणु, उदयशंकर भट्ट, शैलेश मटियानी, रामदरश मिश्र वाली आंचलिकता के प्रति आग्रह इसमें बिल्कुल भी नहीं है।'' (राय 2019:291)

शानी का आंचलिकता चित्रण इस रूप में भी भिन्न है कि उन्होंने वर्णन में लोक के किसी निर्दिष्ट पक्ष को जबरदस्ती लंबा नहीं खिंचा है। इससे उपन्यास की प्रवाहमयता अबाध बनी हुई है। आवश्यकतानुसार हिंदी के इतर उर्दू-फारसी-अरबी शब्दों का प्रयोग भी प्रशंसनीय है। उन्होंने पात्र के अनुकूल शब्दों का चयन किया है। बस्तर क्षेत्र के मुस्लिम संस्कृति का सहज चित्रण इस उपन्यास की विशेषता है। दोनों त्योहारों शबे-बरात का फातिहा और मुहर्रम का संबंध मृत्यु और उदासी से है। लेकिन इन दोनों त्योहारों के वर्णन में पूरा परिवेश शामिल है। मिर्जा करामत बेग जिस कहानी की नींव रखते हैं वह मोहसिन तक आते-आते थम सा जाता है। 'मैं' यानी बब्बन और नायडू कथा प्रवर्तन करते हैं। इन तीन पीढ़ियों के वर्णन में जगदलपुर का स्वरूप भी बदलता है। प्राकृतिक दृश्य के वर्णन में शानी ने बस्तर के तमाम प्राकृतिक सुंदरताओं को जगह देते हैं। रायपुर और बिलासपुर दोनों

शहरों का जिक्र उपन्यास में है। ये दोनों शहर नि:स्संदेह छत्तीसगढ़ के बड़े व्यापारिक शहर हैं। मिर्जा बेग और रज्जु मियाँ दोनों चूड़ियों के व्यापार के लिए अक्सर रायपुर जाते हैं। उपन्यास के आरंभ में जिस चूड़ी का व्यापर मिर्जा बेग, रज्जु मियाँ, बी दरोगिन आदि करते हैं, वह उपन्यास का अंत आते-आते ठप्प हो जाता है। पहले गाँव के लोग बाजार में चूड़ियाँ लेने आते हैं, परंतु धीरे-धीरे लोग बड़े शहरों से खरीदना पसंद करते हैं। पूँजीवाद का आगमन और छोटे व्यापारों का संकट यहाँ हुबहू वर्णित है। पीर और औलियायों से मनौती माँगना और उसपे विश्वास करना तत्कालीन समाज के अंधविश्वासों को पुख्ता करता है। 'काला जल' उपन्यास संपूर्ण बस्तर जिले के गंध को समेटे हुए है।

उपन्यास में परिवेश के निर्माण में शीर्षक 'काला जल' को केंद्र में रखा गया है। काले जल की सड़ांध ही पूरे उपन्यास के सभी पात्रों के दिशाहीनता एवं अवरुद्धता को उभारती है। सल्लो आपा और मोहसिन इस घेरे से बाहर निकलना चाहते हैं, लेकिन अंतत: हार जाते हैं। रूढ़िवादिता के विरुद्ध इन दोनों की जंग महज एक चिंगारी बनकर बुझ जाती है। सल्लो आपा उन सारे अंधविश्वासों से लड़ती है, जिसे एक लड़की के लिए कानून बना के हमारे समाज में उन्हें कैद किया जाता है। किशोरवय यौन आकर्षण सहज एवं स्वाभाविक है। लेखक और सल्लो आपा के बीच भी जो यौनाकर्षण पनपता है, वह मनोवैज्ञानिक दृष्टि से तो द्रष्टव्य है ही, तत्कालीन सामाजिक परिवेश में भी उसका आशय विस्तृत एवं व्यापक है। फातिहा पढ़ने के क्रम में कथावाचक 'मैं' की स्मृति में तमाम पात्रों की उपस्थिति दर्ज होती जाती है। यह भयानक स्मृति ही पूरे बस्तर को उकेरती है। बस्तर के एक सुदूर गाँव से अविकसित कस्बा बनने तक के गवाह ये पात्र अनायास ही हमारे मानस पटल पर अंकित नहीं हो जाते हैं। उपन्यास में बस्तर का भौगोलिक ही नहीं, बल्कि आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक इतिहास भी दर्ज है। उपन्यास के शुरुआत में ही साड़ी ऊपर करके पानी भरने के कारण सुनार वैद्य द्वारा सुनारिन की पिटाई कोई अकस्मात घटना नहीं, बल्कि इस अंचल की अशिक्षा की जकड़ता का प्रमाण है। ग्रामीण अंचल की पितृ सत्तात्मक व्यवस्था की झलक रज्जु मियाँ द्वारा अपनी बहू पर जोर जबरदस्ती की घटना से भी संबद्ध है। रज्जु मियाँ के सौतेले बेटे रोशन की पत्नी 'फूफी' यह बात कभी किसी से कह नहीं पाती है। मालती के पेट में रज्जु मियाँ का बच्चा ठहरता है, जिससे मालती को घर से भगा दिया जाता है, जबकि दोनों ही मामले में रज्जु मियाँ बेदाग रह जाते हैं। उपन्यास में रज्जु मियाँ के पात्र को बड़ी बारीकी और सच्चाई के साथ बुना गया है। रूढ़िवादिता की जड़ उनसे निकलकर ही अन्य पात्रों तक पहुँचती है। मुस्लिम समाज में स्त्रियों की मुक्ति का सपना देखने वाली लड़कियों का तत्कालीन समाज द्वारा मालती और सल्लो आपा जैसा हश्र किया जाता है। इन दोनों की मौत पर घर में कोई आँसू नहीं गिरते, कोई मातम नहीं मनाया जाता, बल्कि इस घटना को नियति मानकर स्वीकार कर लिया जाता है। बड़ी विडंबना की बात ये है कि इन दोनों ही घटनाओं को अंजाम देने में घर की बुजुर्ग औरत का ही हाथ होता है। प्रत्येक स्त्री पात्र उपन्यास में बच्चे पैदा करने की मशीन ही समझी जाती है। लड़कियों की शिक्षा की सुगबुगाहट भी पूरे उपन्यास में नहीं मिलता है।

मोहसिन और नायडू के मार्फत कथा में स्वाधीनता आंदोलन की सुगबुगाहट जगती है, जो अंतत: देश विभाजन और भारतीय मुसलमानों के विश्वास के प्रश्नों पर समाप्त होती है। तत्कालीन समय और समाज के एक बड़े मुद्दे को शानी ने निर्भीकतापूर्वक इस उपन्यास में चित्रित किया है। आरंभ में मोहसिन और नायडू कंधे से कंधा मिलाकर आजादी की लड़ाई लड़ते हैं, परंतु देश के बँटवारे के पश्चात मोहसिन को पाकिस्तान परस्त माना जाता है। दो बड़े संप्रदायों के बीच जो खाई सियासतदारों द्वारा खोदी गई, उसमें बस्तर जैसे सुदूर अंचल के गाँवों में भी सहभागिता से रह रहे लोगों के मध्य धार्मिक विष पनपने लगती है। उपन्यास के अंत तक मोहसिन की स्थिति मानसिक विक्षिप्तों जैसी हो जाती है। वह देर रात तक भटकता रहता है, घर नहीं जाता। मोहसिन जैसा पात्र जो आरंभ में अपने उग्र स्वाभाव

के कारण प्रत्येक सामाजिक बंधनों को तोड़ता नजर आता है, वह इस विभाजन की घटना के पश्चात पागलों जैसा हालात लिए घूमता है। यह घटना बस्तर की नहीं रह जाती, बल्कि पूरे देश के मुसलमानों के ऊपर उठे देशभक्ति साबित करने के प्रश्न का करारा जवाब भी देती है।

प्रकृति चित्रण में दंडकारण्य की गंध बिखरी हुई है। जगदलपुर अंचल का बस्तर क्षेत्र प्राकृतिक दृष्टि से समृद्ध है। उपन्यास के आरंभ में जब देश में अंग्रेजों का शासन था, तब यहाँ पहुँचना भी दूभर होता था। बरसात के समय पूरा इलाका कीचड़ों से बजबजाता था। यातायात भी ठप हो जाता था और खाने-पीने के सामानों का भी अभाव झेलना पड़ता था। शानी ने इस अंचल की खूबसूरती के साथ-साथ यहाँ की परेशानियों को भी अपनी लेखनी से उभारा है। इस उपन्यास में अमराई और नीम के पेड़ की चर्चा सर्वाधिक है। मोती तालाब तो कथा के केंद्र में है ही। अमराई उन्मुक्तता का प्रतीक है तो नीम का पेड़ घर के किसी बुजुर्ग सा हर छोटी-बड़ी घटनाओं पर एकटक मौन नजर रखता हुआ है। नीम का पेड़ मोहसिन के विद्रोही स्वभाव को निहारता है तो सल्लो आपा की मृत्यु का भी गवाह है। मोहसिन और बब्बन के बचपन के चित्रण में अमराई, अमरूद और जामुन के बगीचों का विशेष महत्व है। उपन्यासकार ने बस्तर के भौगोलिक स्थिति के अनुरूप ही शाल के जंगल और उसकी चटक सुंदरता का वर्णन भी उन्होंने बखूबी किया है- ''गर्मियों के अंतिम दिन। शाल वृक्षों ने अपने पाँच पंखुड़ियों वाले कत्थई फूल धरती पर गिरा दिए थे और आकाश में बाँहें फैलाये हुए टहनियाँ पहली बरसात की बाट देख रही थीं। पेड़ों के नीचे-नीचे जहाँ तक निगाह जाती, शाल फूलों के पाँख पाँख सायों में छितराये पड़े मिलते।'' (शानी 2021:143)

मोती तालाब के जिक्र के बिना इस प्रकृति वर्णन की चर्चा शायद अधूरी ही रहेगी। शानी ने मोती तालाब के मार्फत तीनों पीढ़ियों को दिशा अवरुद्ध हो कर विनष्ट होते दिखलाया है। यह बात भी समझ से परे लगती है कि कथा में मोती तालाब का चित्रण लेखक ने किया है या मोती तालाब ने ही लेखक को ऐसी कहानी बुनने के लिए मजबूर किया है। मोती तालाब के काले जल का रूपक ही इस कथा का निष्कर्ष है। बब्बन सल्लो आपा को बचा सकता था, मोहसिन विक्षिप्त होने से बच सकता था, इस परिवार की रूढ़ियों पर पूर्ण विराम लग सकता था, परंतु तब मोती तालाब का बिंब इतना भीषण नहीं बन पाता। प्रकृति चित्रण के अलावा उपन्यास में वर्णित पर्व-त्योहार भी आंचलिकता के महत्वपूर्ण अंग बने हैं। शबेबारात का फातिहा और मुहर्रम, दोनों त्योहारों का वर्णन इस उपन्यास में हुआ है। इसके अलावा चहल्लुम का भी चित्रण है। शबेबारात और मुहर्रम दोनों त्योहारों का मनुष्य के अस्तित्व के साथ संबंध है। ''इन दोनों त्योहारों का संबंध मृत्यु और अवसाद से है। यह चित्रण भी प्रतीकात्मक है, और इस बात का संकेत करता है कि अवसाद और घुटन ही इस समाज की नियति है।'' (राय 2019:290)

कथावाचक 'मैं' यानी बब्बन फातिहा पढ़ते हुए पूरी कहानी को याद करता है। तीन पीढ़ियों के घुटन और अवसाद को इस त्योहार के सहारे दर्शाया गया है। मनुष्य के जीवन में उत्सव आनंद का प्रतीक माना जाता है, लेकिन उसके ठीक विपरीत यहाँ उदासी भरे दो त्योहारों का आरंभ और अंत में चित्रण मिलता है। फातिहा पढ़ने से जिस कहानी की शुरुआत होती है वह मुहर्रम तक आते-आते शिथिल हो जाती है। मुहर्रम के मेले में पूरा अंचल शामिल होता है। इसमें खोमचे वाले से लेकर चाय वाले तक सभी छोटे दुकानदारों का चित्रण है। मुहर्रम का वर्णन भी शानी के शैली के अनुरूप ही है - ''मर्सिया पढ़ने वालों के पीछे पीछे मातम करने और छातियाँ पीटने वाले पच्चीस तीस लोगों का समूह घेरा बनाकर चल रहा है। सबके शारीर पर काली कमीजें हैं, बाल बेतरतीब, आँखें डबडबायी और होठों पर हाय हुसैन की आह। कदम कदम पर जुलुस रुकता है, मर्सिया वाले कोई दर्दीला टुकड़ा उठाते हैं, और मातम वाले एक घेरा बनाकर शेर के हर शब्द और लय-तान के साथ समवेत रूप से अपनी-अपनी छातियाँ दोनों हाथों से कूटते हैं...।'' (शानी 2021:207) मुस्लिम समाज का चित्रण होने के बावजूद इस उपन्यास में शानी ने उर्दू

भाषा का बेवजह प्रयोग नहीं किया है। शानी की भाषा नई राह दिखाती है। इस उपन्यास की भाषा में बस्तर की महक के साथ-साथ देशीपन भी लबालब भरा हुआ है। अंचल में प्रचलित शब्दों के प्रयोग ने इसे और विशिष्ट बनाया है। जमुहाई, दुलदुल, बिसायन्ध, हौदिया, जमीकंद, दड़बानुमा आदि शब्द अंचल से निकलकर देशज शब्द बनते हैं।

5. निष्कर्ष :

निष्कर्षत: 'काला जल' उपन्यास अन्य आंचलिक उपन्यासों के बरक्स बिना किसी विशेष आग्रह या वर्णन वाला उपन्यास है। इसमें बस्तर अंचल का चित्रण है। वर्तमान समय में हमारे मानस पटल पर बस्तर की जो छवि बनी है, उससे कोसों दूर यह उपन्यास आजादी के पूर्व एवं पश्चात की सामाजिक स्थिति को दर्शाता है। राजनैतिक चित्रण में यह उपन्यास 'राग दरबारी' या 'मैला आँचल' जैसे उपन्यासों से बहुत पीछे है, परंतु शानी ने बस्तर के आँचलिक चित्रण को मेरीगंज के बराबर ला खड़ा किया है। मुस्लिम समाज के अंतर्विरोधों और सामाजिक रूढ़ियों का वास्तविक चित्रण मोती तालाब के काला जल बिंब को पुष्ट करता है। प्रकृति चित्रण, पर्व- त्योहारों और धार्मिक रीति-रिवाज में भी अंचल की गंध मौजूद है। शानी के आंचलिकता वर्णन ने इस कथा को बस्तर केंद्रित रखते हुए भी इसे अंचल से निकालकर पूरे देश की कथा बना दिया है। उपन्यास का विषय तत्कालीन समय की तमाम रूढ़ियों, विषमताओं और अंधविश्वासों पर केंद्रित है। बस्तर के जंगल, पेड़-पौधे, फल-फूल, जीव- जंतु आदि जीवंत हो उठे हैं। स्वतंत्रता संग्राम का चित्रण तत्कालीन ग्रामीण अंचलों में स्वाधीनता आंदोलन के प्रति दृष्टिकोण को उकेरता है। सुदूर कस्बाई समाज में स्वाधीनता संग्राम के सारे दृष्टिकोण वर्णित हैं। विभाजन का प्रश्न अभी भी आजादी के बाद का सबसे यक्ष प्रश्न है। भारी पलायन, दंगे, मारकाट, नुकसान के अलावा सांप्रदायिक तत्वों का उद्भव भी शामिल है। बहुत छोटे प्रसंग में इसका जिक्र होने के बावजूद यह प्रभावशाली है। बस्तर पिछले कई दशकों से नक्सली समस्या से जूझ रहा है। वर्तमान समय में इसलिए भी इस उपन्यास का महत्व ज्यादा है कि एक छोटे अंचल की कथा में देश के तमाम बड़े मुद्दे किस खूबसूरती के साथ अपनी नैसर्गिक गंध लिए शामिल हैं। बस्तर का प्राकृतिक सौंदर्य उसकी विरासत है, जिसके सारे पहलू इस उपन्यास में चित्रित हैं। आंचलिकता के कई पक्ष होते हैं मसलन प्राकृतिक चित्रण, भाषाई प्रभाव, लोक-पर्व-त्योहार, खान-पान आदि। शानी ने इस उपन्यास में बस्तर के इन तमाम पक्षों को उद्धृत करते हुए इस अंचल के सभी रीति-रिवाज और सामाजिक परंपराओं को भी अपनी लेखनी दी है। मुस्लिम समाज के बहाने तत्कालीन समय के अंचल विशेष का राजनैतिक और सामाजिक विचारों को भी दर्शाया है। तमाम पात्र अपने लोक-जुड़ाव के कारण ही विशिष्ट हैं। वे न तो अपनी मिट्टी छोड़ना चाहते हैं और न ही परंपरा। इस सम्मोहन का कारण ही आंचलिकता की पुष्टि है। अंतत: यह कहा जा सकता है कि 'काला जल' उपन्यास आंचलिक चित्रण के बहाने वर्तमान बस्तर की प्राकृतिक, राजनैतिक और सामाजिक पड़ताल है। शानी ने इस उपन्यास में छत्तीसगढ़ प्रांत के एक विशेष हिस्से के जीवन पद्धति एवं आंचलिकता को सर्वांगपूर्ण चित्रित करके हिंदी साहित्य में अपनी एक अलग पहचान स्थापित की है। ❑

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. मिश्र, रामदरश, हिंदी उपन्यास एक अंतर्यात्रा, नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन, 2016 ई.
2. राय, गोपाल, हिंदी उपन्यास का इतिहास, नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन, 2019 ई.
3. वर्मा, डॉ. धीरेन्द्र, हिंदी साहित्य कोश' वाराणसी : ज्ञानमंडल प्रकाशन, द्वितीय संस्करण, 2020 ई.
4. शानी, काला जल, नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन, 2021 ई.
5. सिंह, शंभू, रांगेय राघव और आंचलिक उपन्यास, अजमेर : सुशील प्रकाशन, 1979 ई.

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

आलेख

महाभोज : लोभ और लाभ की राजनीति

डॉ. संजीव मंडल

सहायक प्राध्यापक
हिंदी विभाग
नगांव महाविद्यालय
(ऑटोनोमस)
8135054304
666mandal@gmail.com

प्रस्तावना :

'महाभोज' उपन्यास हिंदी की प्रख्यात कथाकार मन्नू भंडारी द्वारा रचा गया है। यह उपन्यास सन 1979 ई. में प्रकाशित हुआ था। मन्नू भंडारी ने 'एक इंच मुस्कान' (1962 ई.), 'आपका बंटी' (1971 ई.), 'स्वामी' शीर्षक और तीन उपन्यासों की भी रचना की है। 'महाभोज' उपन्यास की कथा का मन्नू भंडारी ने 'महाभोज' नाम से ही नाट्य रूपांतर भी किया है। यह नाटक बहुत लोकप्रिय हुआ है। 'महाभोज' उपन्यास हिंदी का एक सशक्त राजनीतिक उपन्यास है । बिसू नामक एक व्यक्ति की मौत को दो राजनीतिक दल के नेता अपने फायदे के लिए भुनाना चाहते हैं। सरोहा विधानसभा क्षेत्र की सीट के लिए उपचुनाव होने वाला है और दोनों दल इस चुनाव को जीतना चाहते हैं। पिछली बार के चुनाव में हार गए भूतपूर्व मुख्यमंत्री इस सीट के लिए चुनाव में खड़े हो रहे हैं। इस कारण विरोधी दल के लिए यह चुनाव बहुत महत्व रखता है। साथ ही यह सत्तारूढ़ दल के लिए भी महत्व रखता है। इसके पीछे कारण यह है कि विरोधी दल के उम्मीदवार जो दस साल तक प्रांत के मुख्यमंत्री रह चुके हैं, वे एक बार विधानसभा में चुनकर आ जाए तो वर्तमान मंत्रिमंडल को जोड़-गाँठ करके गिरा भी सकते हैं। बिसू के हत्यारे को सजा दिलाने की कसम खा रखी है बिसू के दोस्त बिंदा ने। पर वर्तमान मुख्यमंत्री उसी को बिसू का हत्यारा साबित कर देते हैं।

विश्लेषण :

'महाभोज' उपन्यास को मन्नू भंडारी बिसेसर की लाश के साथ शुरू करती हैं। बिसेसर जो मर चुका है, वह पूरे उपन्यास में छाया रहता है। जोरावर ने हरिजनों की बस्ती में आग लगवाई थी और नौ लोग इस आगजनी में मारे गए थे-

''महीने-भर पहले की ही तो बात है - गाँव की सरहद से जरा परे हटकर जो हरिजन-टोला है, वहाँ कुछ झोपड़ियों में आग लगा दी गई थी, आदमियों सहित। दूसरे दिन लोगों ने देखा तो झोपड़ियाँ राख में बदल चुकी थीं और आदमी कबाब में।'' (भंडारी 2021:7)

किसी दुर्घटना के बाद अपना उल्लू सीधा करने के लिए हमारे देश के नेता

दुर्घटनास्थल पर जाकर खोखली सहानुभूति प्रकट करते हैं और अखबार वाले भी अपना अखबार रंगने के लिए वहाँ पहुँचते हैं। किसी प्रकार की कोई मानवीयता इन लोगों में नहीं होती। आखिर किसी असहाय, मजलूम की हत्या से किसी को क्या फर्क पड़ता है। दुर्घटना का विवरण पढ़कर देशवासी भी बड़े आहत होते हैं, पर अखबार पढ़ने तक । पढ़ लेने के बाद जिस प्रकार अखबार रद्दी की टोकड़ी में चला जाता है, उसी प्रकार दुर्घटना के शिकार लोगों के लिए चिंता भी रद्दी की टोकड़ी में ही चली जाती है। उपन्यासकार ने इस संदर्भ में टिप्पणी की है –

''नेताओं ने गीली आँखों और रुँधे हुए गले से क्षोभ प्रकट किया और बड़े-बड़े आश्वासन दिए। अखबारनवीस आए तो दनादन उस राख के ढेर की ही फोटो खींचकर ले गए। दूसरे दिन अखबार में छापकर घर-घर पहुँचा भी दिया – इस घटना का सचित्र ब्योरा। किसी ने सवेरे खुमारी में अँगड़ाई लेते हुए, तो किसी ने चाय की चुस्की के साथ पढ़ा, देखा। देखते ही चेहरे पर विषाद की गहरी छाया पुत गई। चाय की घूँट भी कड़वा हो गई शायद। ढेर सारी सहानुभूति और दुख में लिपटकर निकला –'ओह, हॉरिबलजसिम्पली इनह्यूमन! कब तक यह सब और चलता रहेगा? त्...त्...त्!' और पन्ना पलट गया । थोड़ी देर बाद गाँव वालों की जिंदगियों की तरह ही अखबार भी रद्दी के ढेर में जा पड़ा।'' (भंडारी 2021:8)

पुलिस ने हरिजन बस्ती में आगजनी के केस को ठंडे बस्ते में डाल दिया था। बिसेसर इस केस को पुन: चालू करने के लिए सबूत इकट्ठा कर रहा था। इसके अलावा चौदह क्लास तक पढ़ा बिसेसर गाँव वालों को सरकार द्वारा निर्धारित रेट से कम मजूरी पर काम न करने के लिए जागरूक करता रहता था। गाँव के बड़े किसान और अन्य संपन्न लोग इससे काफी तंग आ गए थे। अत: एक दिन जोरावर दो गुंडों द्वारा बिसेसर उर्फ बिसू की हत्या करवा देता है । इस हत्या के मामले का राजनीतिक फायदा उठाने के लिए भूतपूर्व मुख्यमंत्री सुकुल बाबू और वर्तमान मुख्यमंत्री दा साहब पूरे उपन्यास में प्रयासरत हैं । सरोहा में उपचुनाव होने वाला है, जिसमें चुनाव में हार गए विरोधी पार्टी के सुकुल बाबू और दा साहब द्वारा समर्थित लखनसिंह एक दूसरे की प्रतिद्वंद्विता में आमने-सामने खड़े हो रहे हैं। जोरावर ने ही बिसू की हत्या करवाई है, यह बात सभी लोग जानते हैं। किंतु किसी में इतनी हिम्मत नहीं है कि उसके खिलाफ बयान दे सके। पर कोई साहस करता भी है तो उसकी बात कोई नहीं सुनता। उसे चुप करा दिया जाता है। लखनसिंह ने हिसाब लगाकर देख लिया है कि बिसू की हत्या के कारण अब उसका चुनाव में जीतना संभव नहीं होगा। विरोधी पार्टी इस घटना का पूरा फायदा उठाएगी। किसी व्यक्ति की हत्या हो जाना सत्तारूढ़ दल की कमजोरी और उसकी असमर्थता को ही दर्शाता है। अत: बिसू की मौत का जिम्मेदार दा साहब और उनकी पार्टी की असमर्थता को ही माना जाएगा। ऐसी हालत में उनके किसी उम्मीदवार का चुनाव में जीतना संभव नहीं रह जाएगा। इसका सीधा मतलब है कि लखनसिंह चुनाव में हार जाएगा। लखनसिंह इस बात से दुखी भी है और बौखलाया हुआ भी है। दा साहब को वह कहता है–

''विरोधी दल के नेता इस घटना को ऐसा भुनाएँगे कि हम सब टापते ही रह जाएँगे। यह बिसू की नहीं, समझ लीजिए एक तरह से मेरी हत्या हुई है, मेरी।'' (भंडारी 2021:16)

दा साहब अखबार की स्वतंत्रता की बात करते हुए बड़े ही निर्लज्ज लगने लगते हैं । वे खुद 'मशाल' पत्र के संपादक दत्ता बाबू को उनके और उनकी पार्टी के खिलाफ कुछ भी न छापने की हिदायत देते हुए लालच और धमकी एक साथ देते हैं। दा साहब नैतिकता की बड़ी-बड़ी बातें करते हैं ।'मशाल' पत्र पर प्रतिबंध लगाने की बात जब लखनसिंह दा साहब से करता है, तब दा साहब नैतिकता बघारते हैं –

''अखबारों को तो आजाद रहना ही चाहिए । वे ही तो हमारे कामों का, हमारी बातों का असली दर्पण होते हैं । मेरा तो उसूल है कि दर्पण को धुँधला मत होने दो । हाँ, अपनी छवि देखने का साहस होना चाहिए आदमी में। बड़ी हिम्मत और बूता चाहिए उसके लिए । इससे

जो कतराता है, वह दूसरे को नहीं, अपने को ही छलता है।'' (भंडारी 2021:17)

एक दूसरी जगह दा साहब अखबारों की ईमानदारी और सच्ची बात कहने के साहस का पक्ष लेते हुए पूर्ववर्ती सरकार के अखबारों के साथ किए गए अन्याय पर खेद प्रकट करते हुए कहते हैं -

''पिछली सरकार ने कुछ अखबारों को विज्ञापन न देने का आदेश दे रखा था सरकारी महकमों में। सही बात कहने का साहस दिखलाया था इन अखबारों ने । उसी की सजा थी यह शायद । पर भाई मेरे, साहस को तो पुरस्कृत होना चाहिए। मैंने वे सारी पाबंदियाँ हटा दी हैं । अखबारों पर किसी तरह की भी पाबंदी हो, प्रजातंत्र की हत्या है यह ।'' (भंडारी 2021:44)

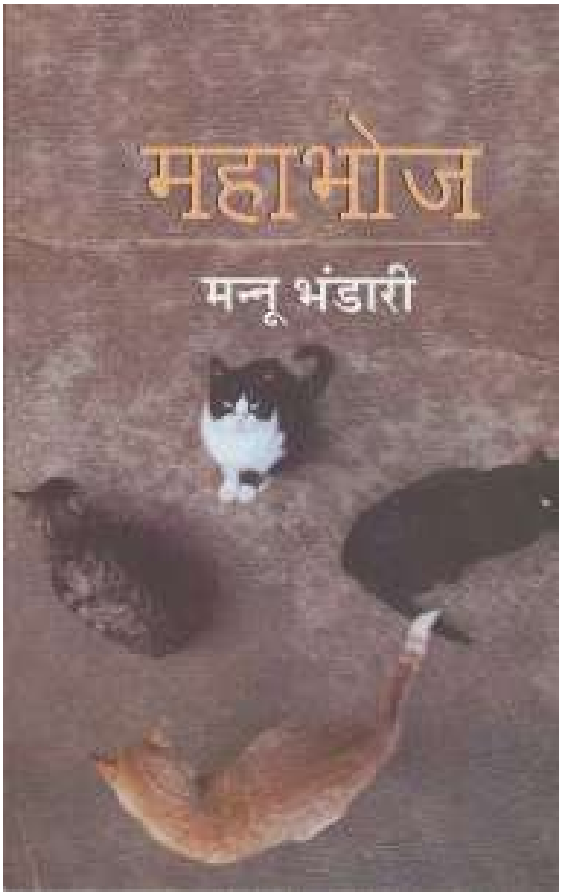

दा साहब पुलिस विभाग को ईमानदारी से कार्य करने की स्वतंत्रता दिए जाने के भी वकालत करते हैं । पर यह उनका ढोंग है । नीचता की पराकाष्ठा, क्योंकि बिंदा को बिसू की हत्या के मामले में फँसाने का आदेश उनका ही था। बिंदा जो बिसू का अभिन्न मित्र था। उसे जेल भेजकर जोरावर को बचाने के लिए उनके आदेश पर ही डी.आई.जी. सिन्हा ने झूठी रिपोर्ट तैयार की थी। पर दा साहब लखनसिंह को पुलिस विभाग की स्वतंत्रता पर भाषण देते हुए कहते हैं-

''पुलिसवालों का काम है कि बयानों और प्रमाणों के आधार पर रिपोर्ट तैयार करें और ईमानदारी से करें। इसी बात की तनख्वाह दी जाती है उन्हें। ऊपर से आदेश थोपा जाएगा तो न्याय कैसे करेंगे? इन्हीं स्थितियों के खिलाफ लड़ने के लिए तो इतनी बड़ी क्रांति की हमने!'' (भंडारी 2021:20)

दा साहब के सामने विरोधी पार्टी तो है ही, अपनी पार्टी के अंदर भी उनके मंत्रिमंडल को गिराने की साजिश चल रही है । इन साजिश करने वाले नेताओं में प्रमुख हैं त्रिलोचनसिंह रावत उर्फ लोचन भैया । लोचन भैया ने और चार मंत्रियों को अपने साथ मिला लिया है, जो मंत्रिमंडल से इस्तीफा देने के लिए तैयार हैं । पार्टी के एक सौ चालीस सदस्यों में से पिचासी सदस्य उनके साथ हैं। लखनसिंह इस खतरे से आगाह करता है दा साहब को। वह कहता है-

''जानते तो हैं, लोचन भैया कितने दिनों से अपनी खिचड़ी अलग पका रहे हैं । देखिए, इस घटना से कैसा उफान आता है उनकी खिचड़ी में । जोड़-तोड़ करके अविश्वास का प्रस्ताव ले आए तो आपको भी लेने-के-देने पड़ जाएँगे मैं कहे देता हूँ।'' (भंडारी 2021:17)

मंत्रिमंडल गठित करते वक्त उन लोगों को प्राप्य नहीं मिला- यह उनका मूल अभियोग हैं । पार्टी के अध्यक्ष अप्पा साहब उसे समझाने का बहुत प्रयास करते हैं । पर उसके निर्णय को बदलने में असमर्थ रहते हैं। इसी के साथ उन्हें इस बात से भी आपत्ति है कि दा साहब ने अयोग्य होने पर भी लखनसिंह को सिर्फ इसलिए

सरोहा उपचुनाव का टिकट दिया है कि वह उनका चमचा है। लखनसिंह खुद भी यह अनुभव करता है कि चुनाव का टिकट पाने की योग्यता उसमें नहीं है। उपन्यासकार ने उसे पार्टी ऑफिस में टेबल-कुर्सियाँ उठाने लायक बताया है। लखनसिंह जानता है कि चुनाव अगर वह जीतेगा तो दा सहाब की वजह से ही-

''यह तो लखनसिंह भी जानता है कि अपनी योग्यता से नहीं, दा साहब की कृपा से ही उसे इस चुनाव के लिए टिकट मिला है । बहुत उठा-पटक करनी पड़ी है दा साहब को उसके लिए । सुकुल बाबू के मुकाबले तो उसकी कोई हस्ती नहीं; अपनी पार्टी के और लोगों के सामने भी बहुत हलका पड़ रहा था । पर दा साहब ने बाँह थामी तो सारे विरोधियों को चित करते हुए ला पटका किनारे पर । वरना उसकी अपनी लियाकत तो पार्टी-दफ्तर में कुर्सियाँ उठाने-बिछाने तक की ही है । यही उसका इतिहास भी रहा है । और यदि वह चुनाव जीता तो वह दा साहब की सूझ-बूझ और प्रयत्न से ही होगा।'' (भंडारी 2021:19)

सुकुल बाबू दस साल तक प्रांत के मुख्यमंत्री रहे हैं। पर पिछले चुनाव में वे हार गए। उनकी पार्टी सत्ता में नहीं आ पाई। पिछले आठ महीने से दा साहब की पार्टी सत्ता में है । पर सुकुल बाबू के सामने विधानसभा में पहुँचने का एक मौका आ गया है सरोहा में एक विधानसभा सीट के लिए होने वाले उपचुनाव के रूप में । बिसू की हत्या से जीतने की संभावना भी बन गई है । एक बार विधानसभा में किसी प्रकार पहुँच जाए तो जोड़-तोड़ करके फिर से एक बार मुख्यमंत्री बनने की योजना भी बना ली है-

''एक बार जीतकर किसी तरह विधानसभा में पहुँच जाएँ तो फिर वहाँ बवंडर का सिलसिला शुरू करेंगे! जोड़-तोड़ करने की अपनी क्षमता पर काफी भरोसा है सुकुल बाबू को । फिर सत्तर दरारवाली खोखली नींव पर खड़े इस मंत्रिमंडल को गिराना यों भी कोई मुश्किल बात नहीं । अपने लोग जरा-सा साथ दें तो बाएँ हाथ का खेल है यह उनके लिए।'' (भंडारी 2021:27)

अपना उद्देश्य पूरा करने के लिए साम, दाम, दंड, भेद की नीति युगों-युगों से काम में लाई जाने वाली एक बहुत ही कारगर नीति है । दत्ता बाबू को अपने पक्ष में खबरे छापने के लिए मजबूर करने में दा साहब उपर्युक्त में से दो नीतियाँ अपनाते दाम और दंड की नीति। पहले तो दा साहब दत्ता बाबू को सरकारी विज्ञापन और कागज का कोटा देने का लालच देते हैं, अर्थात दाम नीति का प्रयोग करते हैं-

''सरकारी विज्ञापन मिलने लगे... कागज का कोटा मिल रहा है... ?

जी, उसी में थोड़ी दिक्कत पड़ रही है । बात यह... ।

.....

हो जाएगा...हो जाएगा । उसके लिए जो खानापूरी करनी है कर दीजिए। और कुछ परेशानी हो तो बताइए।'' (भंडारी 2021:45)

इसके बाद दा साहब दत्ता बाबू को एक प्रकार से धमकाते हैं, डर दिखाते हैं-

''आपके साप्ताहिक के कुछ अंक देखे हैं मैंने! बात की असलियत पर उतना ध्यान नहीं रहता आपका । जासूसी किस्से-कहानियों की तरह बहुत चटपटा और सनसनीखेज बनाकर छापते हैं आप बातों को। आगे से ऐसा न हो।'' (भंडारी 2021:45)

हरिजनों की बस्ती क्यों जलाई गई, बिसू की हत्या क्यों हुई आदि कई प्रश्न पाठकों के मन में उठते हैं। ये दो प्रश्न, ये दो घटनाएँ उपन्यास की चालिका शक्ति हैं । उपन्यास की सारी गतिविधि, सारी घटनाएँ इन्हीं की वजह से आकार लेती हैं । सुकुल बाबू के भाषण से सारी बातें बड़े सुलझे हुए ढंग से खुल जाती हैं-

''क्या दोष था इन हरिजनों का ? यही न कि सरकारी रेट पर मजदूरी माँग रहे थे ? गुनाह था यह ? पर शायद था - तभी तो जिंदा जला दिए गए और जिन्होंने जलाया, उन पर कोई उँगली उठाने वाला तक नहीं । बेचारे बिसू ने उँगली उठाने की कोशिश की तो हमेशा के लिए चुप करा दिया गया उसे।'' (भंडारी 2021:30)

राजनेता अपने फायदे के लिए पीड़ित के घर तक

जाना, उनसे मिलना, भीख के तौर पर थोड़ी राशि दे देना ही काफी मानते आ रहे हैं । उनकी सहानुभूति झूठी होती है । स्वार्थ से प्रेरित होता है उनका हर कदम। उनको सिर्फ दिखावा करना होता है। अगर उन्होंने समाज के लिए कुछ किया तो वह ज्यादा से ज्यादा लोग देख ले, उनका यही उद्देश्य होता है। सुकुल बाबू भी सभा करके लौट रहे होते हैं, तब उन्हें ख्याल आता है कि वे तो बिसू के घर जाना ही भूल गए । अत: वे गाड़ी मोड़कर बिसू के घर जाने लगते हैं । पर वहाँ उन्हें बिसू के माँ-बाप नहीं मिलते । घर में मौजूद दो बच्चे बताते हैं कि माँ-बाप दोपहर को ही शहर चले गए हैं । तब सुकुल बाबू अपने इस कार्य की उपयोगिता-व्यर्थता की बात सोचने लगते हैं-

''सुकुल बाबू थोड़ा ठनकते माथे से ही गाड़ी पर लौटे । बिसू के बाप को घर पर मिलना चाहिए था । वे आखिर बिसू की गमी में ही तो आए थे । कल से ऐलान करवा दिया था। उसके बावजूद कम्बख्त शहर चला गया । इन देहातियों का कोई भरोसा नहीं - किस करवट बैठें । आज उसे सुकुल बाबू की बातें सुननी चाहिए थीं। बातें न भी सुनता तो कम-से-कम उन्हें अपने घर आया तो देखता । खैर, गाँववालों ने तो देखा ही है - कैसे इतनी दूर पैदल चलकर वे गए । गाँववालों पर तो जरूर इसका असर हुआ होगा ।'' (भंडारी 2021:36)

बिसू की मौत से अगर कोई सबसे ज्यादा बौखलाया हुआ है तो वह है उसका मित्र बिंदा । पर विडंबना यह है कि अंत में दा साहब की साजिश का शिकार होकर वही बिसू का हत्यारा घोषित हो जाता है । पूरे उपन्यास में बिंदा एक तेज-तर्रार और बेखौफ पात्र है, जो बिसू की हत्या और हरिजन बस्ती की आगजनी की घटना के सबूत लेकर दोषियों को सजा दिलवाने के लिए दौड़-धूप करता है। दा साहब जब गाँव आकर बिसू की मौत पर घड़ियाली आँसू बहाते हैं, तब बिंदा उनकी पोल खोल देता है । बिंदा में क्रोध ज्यादा है और आक्रोश भी । उपन्यास के अंत में सारे खलपात्र भोज खा रहे हैं। लखनसिंह की ओर से जोरावर पार्टी देता है, क्योंकि हरिजनों का एक मुखिया यह आश्वासन देकर गया है

हर जगह लोभ और लाभ की राजनीति का बोलबाला है । सत्ता का लोभ बड़ा भयानक होता है । इस लोभ का कारण सत्ता से प्राप्त होने वाला लाभ ही है। सत्ता में रहने वालों को धन-जन सभी का लाभ होता है। सत्ता की दौड़ में कितने कितनों को कुचलकर आगे बढ़ जाना चाहते हैं और बढ़ जाते हैं - यह बताने की आवश्यकता नहीं। राजनीति एक युद्ध है । इस युद्ध में निहत्थे और असहाय लोग ही बलि का बकरा बनते हैं। कोई अगर कुछ अच्छा करना भी चाहता है, उसके सामने अपने पद पर बने रहने की चुनौती उसे करने नहीं देती।

कि उनके सारे वोट लखनसिंह को मिलेंगे । अत: लखनसिंह की जीत निश्चित हो जाती है । सुकुल बाबू और उनके साथी भी पार्टी कर रहे हैं कि उन्होंने एक पूरी तरह सफल ऐसी रैली निकाल ली जैसी रैली प्रांत के इतिहास में पहले कभी नहीं निकली थी । डी.आई.जी. सिन्हा भी पार्टी मना रहे हैं, क्योंकि दा साहब के कहे अनुसार रिपोर्ट बनाकर बिंदा को ही बिसू का हत्यारा साबित करने के कारण उनका प्रोमोशन हो गया है। वे आई.जी. बन गए हैं । 'मशाल' पत्र के संपादक दत्ता बाबू और उनके साथी भी पार्टी मना रहे हैं, क्योंकि दा साहब के पक्ष में खबरें छापने के कारण कागज की तंगी के इन दिनों में भी कागज के डबल कोटे का परमिट और ढेरों विज्ञापन उन्हें मिल गए हैं। बिसू की मौत का लाभ सभी ने उठाया है। सभी भोज खा रहे हैं । अत: यह महाभोज हैं। मेरे अनुसार उपन्यास का शीर्षक इसी कारण

महाभोज है।

अगर जुर्म किसी अमीर और संपन्न वर्ग के व्यक्ति के हाथों होता है, तो वह साफ बच जाता है । पर गरीब हर जगह पीसता है। हरिजनों की बस्ती में आग लगवाने वाला, बिसू की हत्या करवाने वाला संपन्न वर्ग का है । अत: उसे सजा होना या उस पर कोई आँच आना तो बहुत दूर की बात है । इन संपन्न लोगों के पैसे और रुतबे का लाभ उठाकर ही तो दा साहब जैसे लोग चुनाव जीतते हैं । जिनके बल पर सत्ता का सुख भोगने को मिलता है। जिस पेड़ पर बैठे हुए हैं, उसकी डाल काटने जितने मूर्ख तो नहीं होते राजनेता। बिंदा इस बात को भली प्रकार जानता है और दा साहब जैसी हस्ती पर आरोप लगाकर उनके सामने ही इस सत्य को व्यक्त करने का साहस भी उसमें है-

''प्रमाण की ऐसी की तैसी। कौन नहीं जानता कि आग किसने लगवाई ? आप नहीं जानते ? फिर पकड़वाते क्यों नहीं...अभी किसी गरीब का मामला होता तो पीसकर रख दिया जाता बेचारे को।'' (भंडारी 2021:70)

बिंदा में साहस है और अपने मित्र बिसू की मौत का दुख भी है। पर उसका आक्रोश ही उसके लिए मुसीबत का कारण बन जाता है। वह दा साहब को चुनौती देता हुआ कहता है-

''पुरानी बातों से बहकाइए मत । बिसू की मौत का हिसाब लेकर ही रहूँगा मैं आपसे...पाई-पाई का हिसाब । बिंदा डरेगा भी नहीं...चुप भी नहीं रहेगा और बिकेगा भी नहीं इन टुकड़ों से, जो आप डालने आए हैं ।'' (भंडारी 2021:71)

यह चुनौती दा साहब स्वीकार कर लेते हैं और बिंदा को बिसू की ही हत्या के आरोप में जेल भिजवा देते हैं। समाज में बिंदा जैसा सीधा और स्पष्टवादी आदमी खप नहीं सकता ।

आज राजनीति में कोई मूल्य नहीं रह गया है । नैतिकता, सत्य, न्याय जैसी अवधारणाएँ केवल एक-एक निर्जीव शब्द बनकर रह गई हैं । राजनेता अवसरवादी हो गए हैं । सत्ता के मद में चूर या सत्ता पाने को लालायित । इसके लिए कोई भी हथकंडा, कोई भी दाँव चलने में पल भर को भी नहीं झिझकते हैं । अपने स्वार्थ में लोगों को डराना-धमकाना, गुंडागर्दी करना ही आज की राजनैतिक सच्चाई है । धन बल और बाहुबल का भरपूर इस्तेमाल सत्ता पाने के लिए किया जाना आज एक आम बात है । सुकुल बाबू के साथी काशी की कही गई निम्नलिखित बात में राजनीति में विचारों का क्षरण और बाहुबल की आजमाइश के प्रमाण ही मिलते हैं-

''देखो, सुकुल बाबू, राजनीति हमारी विचार-शून्य तो थी ही...इधर कुछ सालों से आचार-शून्य हो गई है । पर राजनीति के नाम पर यह मारपीट और हुड़दंग मचाने वाली गुंडागर्दी हमारे बस की नहीं है ! साफ कहे देते हैं हम !'' (भंडारी 2021:81)

बिसेसर को सुकुल बाबू के शासनकाल में बिना आपराध के जेल में डाल दिया गया था। इस बात को भुनाने का प्रयास करते हुए बड़ी चालाकी से दा साहब बिसू की हत्या को आत्महत्या साबित कर देते हैं-

''बात एक अकेले बिसेसर की नहीं । ऐसे हजारों नेक और भले बिसेसर जेलों में ठूँस दिए गए थे। हम लोगों ने जब उन्हें छोड़ा तो एकदम पस्त ? सारी जीवनी-शक्ति ही निचुड़ गई हो जैसे। कुछ भी झेलने-सहने लायक नहीं छोड़ा उन्हें। इसकी आत्महत्या के पीछे यह भी एक कारण है ।'' (भंडारी 2021:72)

अपने विरोधी और दस साल तक प्रांत के मुख्यमंत्री रहे सुकुल बाबू के खिलाफ जहर उगलने में भी दा साहब नहीं चूकते। चुनाव के दौरान सभाओं में इस प्रकार की छींटाकशी आम बात हो गई है। अपने विपक्षी पर इल्जाम लगाकर अपने को पाक-साफ साबित करना राजनेताओं के चरित्र की एक विशेषता बन गई है । विपक्षी पर वार करते हुए जनता की तारीफ करना और जनता की शक्ति को सर्वोपरि साबित करने से बहुत से काम सध जाते हैं - यह बात हर राजनेता ने भलीभाँति हृदयंगम कर लिया है । दा साहब सभा में गाँव वालों को संबोधित करते हुए कहते हैं-

''इस बार तो देख लिया सबने कि जनता की एकता में बड़ा जोर है । तूफानी जोर । तूफान आता है तो

बड़े-बड़े राज्य उलट देता है। फिंका हुआ आदमी ही इस बात को सबसे ज्यादा महसूस करता है। कुर्सी पर बैठना है तो जनता में फूट डालो...कुर्सी बचानी है तो जनता में फूट डालो । जनता की एकता - कुर्सी के लिए सबसे बड़ा खतरा है।'' (भंडारी 2021:72)

इस भाषण की प्रतिक्रिया में बिंदा बहुत उपयुक्त बात ही कहता है कि सब एक ही जैसे हैं-

''तीस साल से आप लोगों की बातें ही तो सुनते-समझते आ रहे हैं । क्या हुआ आज तक ? पेट भरने के लिए अन्न नहीं, आपकी बातें...खाली...बातें! जैसे सुकुल बाबू, तैसे आप।'' (भंडारी 2021:72)

राजनीति में सच्चाई की जगह नहीं है । राजनीति में केवल लाभ देखा जाता है । सत्ता ऐसा चुंबक है, जिसके खिंचाव से बच कर निकलना किसी भी व्यक्ति के लिए संभव नहीं होता । बिसू की मौत पर सुकुल बाबू, दा साहब सभी उसके परिवारजनों के प्रति खोखली सहानुभूति दिखाते हैं। मौका मिलने पर बिसू के दोस्त बिंदा पर ही उसकी हत्या का आरोप लगाकर जेल भेज दिया जाता है । बिंदा की पत्नी रुक्मा बिसू की छात्रा रही है और बिसू की मौत पर वह बेहद दुखी होती है । बिसू से उसका पवित्र स्नेह का नाता है। इस स्नेह पर दा साहब अवैध संबंध का लेबुल लगाकर बिंदा द्वारा अपनी पत्नी के प्रेमी की हत्या को तर्कसम्मत सिद्ध करते हैं । बिंदा का बिसू से संबंध और बिसू की हत्या के मामले में बिंदा की तत्परता को इन संबंध में समझा जा सकता है-

बिंदा बिसू का खास दोस्त है...बेहद गुस्सैल और बेधड़क । डरता नहीं किसी से और न किसी का लिहाज करता है । उसकी बीवी रुक्मा भी बड़ी बदमिजाज और बदजबान औरत है । शादी से पहले बिसू के स्कूल में पढ़ती थी और बहुत मानती थी बिसू को। बिसू की मौत से दोनों बौखलाए फिर रहे हैं और कानूनी सलाह-मशवरा करने के लिए वकीलों के पास गए थे । दा साहब के हाथों बिकनेवाला जीव नहीं है वह! सरेआम गालियाँ देता फिरता है सबको ?'' (भंडारी 2021:76)

सत्य की तह तक जाने के लिए प्रयासरत एस.पी. सक्सेना को सस्पेंड कर दिया जाता है। दा साहब राजनीति के मंजे हुए खिलाड़ी हैं, जिनका खेल अमानवीय हो गया है । इस उपन्यास के अधिकतर क्षमतासंपन्न लोग स्वार्थी हैं। अपने स्वार्थ के लिए किसी को मार डालना, किसी को गलत आरोप में फँसाकर जेल भेज देना और किसी भी अधिकारी को निलंबित कर देना इनके लिए कोई बड़ी बात नहीं है । इन लोगों को एक पल के लिए भी पछतावा या दुख नहीं होता । सारे लोग स्वार्थ के कठोर पुतले हो गए हैं । सत्ता का मोह लोगों को इतना पतित बना सकता है, इतना नीचे गिरा सकता है । राजनेताओं में जमीर नाम की कोई चीज नहीं बची है।

लोचन बाबू दा साहब को मुख्यमंत्री पद से हटाने के लिए शक्ति परीक्षण का दिन तय करने के उद्देश्य से पार्टी के अध्यक्ष अप्पा साहब से मीटिंग करते हैं। अप्पा साहब अपनी पार्टी को टूटते हुए नहीं देखना चाहते। ऐसा होने पर पार्टी को बहुत नुकसान होगा । अत: वे लोचन बाबू को समझाने का बहुत प्रयास करते हैं। कम-से-कम सरोहा के उपचुनाव तक ठहर जाने को कहते हैं-

''देखो इस पार्टी को बनाने में तुम्हारा बहुत सहयोग रहा है और मैं जानता हूँ कि इस पार्टी में आस्था है तुम्हारी...बल्कि कहूँ कि मोह है तुम्हें । अपनी बनाई चीज से होता ही है । इसलिए कह रहा हूँ कि अपने इस निर्णय को थोड़े समय के लिए स्थगित ही रखो । चुनाव के बाद जैसा चाहोगे, वैसा ही होगा । निश्चय ही दा साहब को नए सिरे से अपने विधायकों का विश्वास प्राप्त करना होगा।'' (भंडारी 2021:58)

लोचन बाबू तो सोच रहे थे उनके साथ जो लोग मंत्रिमंडल से इस्तीफा देने को तैयार हो गए हैं, वे दा साहब की नीतियों से असंतुष्टि और असहमति के कारण इस निर्णय पर पहुँचे हैं । पर जब राव और चौधरी इस काम के लिए कीमत देने की बात करते हैं, तब लोचन बाबू को अप्पा साहब की कही यह बात याद आती है कि जो लोग हर दिन बिकने के लिए तैयार खड़े रहते हैं, बड़ा प्रलोभन मिलने पर लोचन बाबू का भी साथ छोड़ देंगे। ऐसे लोगों के भरोसे कोई निर्णय लेना बेवकूफी

होगी-

''तुम जिन लोगों के भरोसे त्यागपत्र देने जा रहे हो, उन पर विश्वास कर सकते हो इतना कि और ज्यादा बड़ा प्रलोभन मिलने पर भी वे तुम्हारा साथ नहीं छोड़ेंगे ? फेन्स पर बैठकर हर दिन अपना मोल-भाव करने वाले लोगों के बूते पर तुम यह निर्णय ले रहे हो...मुझे डर है, तुम्हें कहीं मुँह की न खानी पड़े !'' (भंडारी 2021:56)

राव और चौधरी के मोल-भाव करने और उनके लालच को देखकर लोचन बाबू मानसिक द्वंद्व से ग्रस्त हो जाते हैं। उन्होंने कुछ अच्छा करने के लिए सुकुल बाबू की पार्टी छोड़ी थी, विधानसभा छोड़ी थी । पर अब उनके जरिए जो होने जा रहा है, वह उन्हें बहुत पीड़ा पहुँचाता है । वे अपने आप से प्रश्न करते हैं-

''क्या इसी परिवर्तन के लिए सुकुल बाबू की पार्टी और विधानसभा छोड़ी थी उन्होंने ? इसी क्रांति का सपना देखा था ? और क्या इसी टुच्चेपन की सौदेबाजी के लिए मंत्रिमंडल गिराने की बात सोच रहे हैं वे ? नाम, चेहरे, लेबुल भले ही अलग-अलग हों- पर अलगाव है कहाँ- सुकुल बाबू...दा साहब....राव...चौधरी... ।'' (भंडारी 2021:62)

इस उपन्यास के अंत में एस.पी. सक्सेना और रुक्मा को आगजनी और बिसू की मौत से संबंधित सबूत लेकर सेकेंड क्लास के रेल के डिब्बे में बैठे हुए दिखाया गया है। झूठ कितना भी बलबान हो सच हार नहीं मानता । विभिन्न घात-प्रतिघातों का अतिक्रमण करते हुए आखिर सच सामने आ सकता है। उपन्यास का अंत हमें ऐसी आशा करने का अवसर देता है ।

निष्कर्ष :

हर जगह लोभ और लाभ की राजनीति का बोलबाला है । सत्ता का लोभ बड़ा भयानक होता है । इस लोभ का कारण सत्ता से प्राप्त होने वाला लाभ ही है। सत्ता में रहने वालों को धन-जन सभी का लाभ होता है। सत्ता की दौड़ में कितने कितनों को कुचलकर आगे बढ़ जाना चाहते हैं और बढ़ जाते हैं - यह बताने की आवश्यकता नहीं। राजनीति एक युद्ध है । इस युद्ध में निहत्थे और असहाय लोग ही बलि का बकरा बनते हैं। कोई अगर कुछ अच्छा करना भी चाहता है, उसके सामने अपने पद पर बने रहने की चुनौती उसे करने नहीं देती। लोचन भैया कुछ सकारात्मक करना चाहते थे। पर उनके पास शक्ति नहीं थी। जिन लोगों का साथ वे चाहते थे, वे मतलब के यार थे। किसी सिद्धांत में उन लोगों का कोई विश्वास नहीं था। राजनीति में हमेशा हलचल होती रहती है ।

कौन किसे कब कहाँ उठा कर पटक दे अनुमान लगाना भी मुश्किल होता है । पर राजनेताओं की अपनी उठा-पटक में आम लोग ही धूल चाँटते हैं । आम लोग राजनेताओं के हाथ में खिलौनों की भाँति हो जाते हैं, जिनसे राजनेता जब चाहे खिलवाड़ कर सकते हैं और जब चाहे उसे तोड़ भी सकते हैं। उपन्यासकार ने सिर्फ एक उदाहरण पेश किया है।

देश-दुनिया में ऐसे हजारों बिसू हर दिन राजनेताओं के पद प्राप्त करने का साधन बनते रहे हैं। यह एक वास्तविकता है। इस वास्तविकता को उपन्यासकार ने बड़े ही सुलझे हुए ढंग से हमारे सामने पेश किया है। उपन्यासकार कहीं भी भावुक नहीं हो गई हैं । जो वास्तविकता है उसे बिल्कुल बेबाकी से उघाड़ कर रख दिया है। अलग-अलग राजनेताओं के चरित्र की बारीकियों को बड़े ही कौशल से हमारे सामने प्रस्तुत करने में उपन्यासकार सफल हुई हैं। यह उपन्यास हमारी देश-दुनिया की राजनीति का सच्चा चित्र प्रस्तुत करता है। ❑

ग्रंथ सूची :

भंडारी, मन्नू. महाभोज. ग्यारहवाँ संस्करण. दिल्ली : राधाकृष्ण प्रकाशन, 2021.

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

आलेख

क्रांतिकारी पुरखिन मीरा

डॉ. रीता नामदेव

सह प्राध्यापक
हिंदी विभाग
भगिनी निवेदिता कॉलेज
(दिल्ली विश्वविद्यालय)
पता : प्लॉट-110, खैरा एक्सटेंशन, नियर पेट्रोल-पंप, नजफगढ़, नई दिल्ली-110043
9953198016
reeta.namdev@bn.du.ac.in

शोध सार :

दास्तां के बंधन तोड़ने वाली स्त्रियों की पुरखिन है मीरा। गुलजार के निर्देशन में बनी फिल्म 'मीरा' उदाहरण है कि स्त्री के हाथ से कलम छीन ली गई तो उसे अपने संघर्ष का इतिहास अपने रक्त से लिखना पड़ा। मीरा ऐसे अलौकिक पुरुष से प्रेम करती है जो अशरीरी, अजन्मा है उसके प्रेम से स्वयं उसके पति भोजराज तक को कोई आपत्ति नहीं है। फिर भी समाज उसे स्वीकार नहीं करता, समाज के ठेकेदार उसे विष का प्याला पीने के लिए मजबूर करते हैं। फिर भी उसके प्राण बच जाते हैं, तब उसकी मृत्यु मंदिर में जिस तरह रहस्यमयी ढंग से होती है, उस रहस्य से आज तक पर्दा नहीं उठ सका है। हम इस फिल्म में यह भी देखते हैं कि लड़कियाँ राजनीतिक स्वार्थों के लिए बलिदान की जाती हैं और वे एक शब्द तक मुँह से नहीं निकालतीं।

भूमिका :

मध्यकालीन युग में देश छोटे-छोटे टुकड़ों में विभाजित था। वे आपस में निरंतर लड़ते रहते थे। मुस्लिम आक्रमण भी लगातार हो रहे थे। मुस्लिम शासक तो हिंदुओं के साथ जो दुर्व्यवहार कर रहे थे, सो फिर भी शायद सहन हो जाता, किंतु स्वयं हिंदू, हिंदू के साथ जात-पात, छुआछूत, ऊँच-नीच के आधार पर जिस तरह से भेदभाव हो रहा था उससे आम जनता पर दोहरी मार पड़ रही थी। इससे यह संसार उनको नश्वर तथा निर्दयी प्रतीत होने लगा और वे परमात्मा की शरण में मन की शांति खोजने लगे! भविष्य में अपनी-अपनी कल्पना अनुसार समाज परिवर्तन की अभिलाषा वाले समाज की कविता अपने काव्य में करने लगे। जात-पात, छुआछूत का विरोध, साकार-निराकार सगुण-निर्गुण परमात्मा की स्थापना मध्य युग में की गई। ये सभी पुरुष संत, समाजसुधारक और कवि के रूप में युग के सितारे, साहित्य जगत के नक्षत्र बन गए, किंतु स्त्री की दुर्दशा की ओर ध्यान जाने की कौन कहे इन संत कवियों ने स्त्री के जीवन को और अधिक नारकीय बनाने वाले उपदेश दिए। सिर्फ सूरदास की गोपियाँ थीं, जो परपुरुष से ज्ञान के आवरण में स्वतंत्र प्रेम कर रही थीं।

विश्लेषण :

मध्यकालीन युग में स्त्री की दशा तो और भी अधिक शोचनीय थी! किसी ऐशोराम के लिए तो कहीं कोई राजनीतिक स्वार्थ-सिद्धि के लिए, संतान उत्पत्ति के लिए बहुविवाह की प्रथा चर्म पर पहुँच रही थी। स्त्री विलास की वस्तु बन कर रह गई थी! बड़े-बड़े राजाओं की अगर नजर तिरछी हो जाती तो रानियों का जीवन दासियों से भी कष्टकारक हो जाता था। अनेक पत्नियाँ सौतनों या प्रेमिकाओं के बीच अपना स्थान बनाए रखने की चिंता में सौंदर्य प्रसाधनों में डूबी रहती थीं। पुरुष, जोग ले या मर जाए दोनों ही स्थिति में अनेक स्त्रियाँ अनाथ हो जाती थीं। कोई राजा युद्ध में हार जाए तो स्त्रियों को जौहर करके सामूहिक आत्महत्या करनी पड़ती थी, वरना बलपूर्वक भी चिता में ढकेली जाती थीं। लगभग पति की मृत्यु होने पर भी स्त्रियों की दशा यही थी, स्वेछा से सती होकर आत्मदाह करना पड़ता था या बलपूर्वक पति की चिता में ढकेल दी जाती थी। मलिक मोहम्मद जायसी द्वारा रचित 'पद्मावत' में उपरोक्त वर्णन के चिन्ह बखूबी देखे जा सकते हैं। नारी का यह तिरस्कार और उपेक्षा देख कर एक स्त्री का इस नश्वर संसार, पुरुष-प्रधान समाज का अन्याय और अत्याचार देख कर यदि इस अन्यायी जगत से मोह-भंग हो जाता है तो समाज के ठेकेदार धर्म का दम भरने वाले किस तरह अत्याचार की सीमाओं को लाँघते हैं- यह हमें 'मीरा' फिल्म में बखूबी दृष्टिगोचर होता है।

सहायक प्राध्यापक नियुक्त होने के कुछ दिनों के उपरांत एक बार मुझे जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय के प्रोफेसर रामवक्ष का वक्तव्य सुनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। उनके वक्तव्य ने मेरे मस्तिष्क में प्रश्न उठाया। उस सामंती युग में राजसत्ता से टकराकर बाहर निकलना, ज्ञान की खोज करना, प्रेम करना, भक्ति करना मीरा का साहस था या दु:सहास, अधिकार था या अपराध! क्या यह वही संघर्ष नहीं था, जिससे आज तक नारी जूझती जा रही है! इन प्रश्नों ने मेरे मस्तिष्क में जिज्ञासा उत्पन्न कर दी! मुझे प्राथमिक कक्षा में सिखाई गई राग की एक पंक्ति बार बार याद आने लगी-

''लोग कहे मीरा बड़ी रे बावरी,
सास कहे कुल नासी रे।''

'मीरा' फिल्म देखने के बाद मुझे, 'मदर-इंडिया' का लता मंगेशकर और उषा मंगेशकर की आवाज में गाया वह गीत याद आने लगा-

''दुनियाँ में हम आए हैं तो,
जीना ही पड़ेगा।
जीवन है अगर जहर तो,
पीना ही पड़ेगा।''

न जाने क्यों हर युग में हर क्षण स्त्री को ही जहर क्यों पीना पड़ता है? अप्रत्यक्ष जहर पीने की आदत तो लगभग उसने डाल ली है, किंतु प्रत्यक्ष रूप में भी कैसे समाज उसे कभी प्यार से तो कभी दुत्कार कर जहर पिलाता है- यह हम 'मीरा' फिल्म में देखते हैं। कृष्णा मीरा की चचेरी बड़ी बहन, राजा वीरनदेव की बेटी है। पिता वीरनदेव कृष्णा का विवाह राजा विक्रमजीत के छोटे भाई भोजराज से तयकर देते हैं, जिस से पुरखों के समय से चल रही शत्रुता को मित्रता में बदला जा सके। कृष्णा का भाई जयमल उसका विवाह अजमेर के राज घराने में पक्की कर देता है! संयोग से दोनों ही परिवारों में एक ही तिथि निश्चित हो जाती है और दोनों तरफ से बरात आ जाती है। राजा वीरनदेव समझ जाते हैं कि अब हजारों लोग डोली के लिए कट कर मर जाएँगे। अपने दरवाजे पर रक्त की नदी बहने से बचाने के लिए वह कृष्णा को हीरे की अँगूठी दे कर कहते हैं बेटी मेरी इज्जत अब तुम्हारे हाथ में है। कृष्णा समझ जाती है कि उसे अब क्या करना है। बिना कोई प्रश्न किए अँगूठी से हीरा निकाल कर खा लेती है। (हीरा जहर का कार्य करता है, अर्थात हीरे में जहर होता है।)

''वीरनदेव—पता नहीं मैंने ठीक किया है, या भूल की है! बेटी, मैंने तुम्हारी शादी भोजराज से तय की थी। एक आदर्श के लिए। टुकड़ों-टुकड़ों में बँटे राजपूतों को बचाने का मेरे पास यही रास्ता था। बेटी! पुरखों से चली आ रही दुश्मनी को खत्म करने के लिए मैं अपनी जान के टुकड़े की कुर्बानी दे दूँ, किंतु सब बेकार हो गया! हजारों राजपूतों को कट मरने से बचाने का मेरे पास

कोई रास्ता नहीं है। बेटी! अब इसे तुम बचा सकती हो। बेटी!''

राणा विक्रमजीत को इस हत्या में कोई चाल लगती है। इस लिए वह क्रोधित हो कर कहते हैं, कृष्णा राठौरों की बेटी नहीं, सिसोदियों की बहू थी! अब इसकी अर्थी को अग्नि चितौड़ में ही दी जाएगी! उनके क्रोध से बचने के लिए तथा फिर उसी आदर्श के लिए कृष्णा की जगह अपने छोटे भाई की बेटी मीरा का विवाह भोजराज के साथ कर दिया जाता है। वीरनदेव की पत्नी रानी कुँवर बाई, राणा विक्रमजीत से बड़े गर्व से कहती है—

''मुझे गर्व है अपने पति पर जो अपने देश की जरूरत के लिए अपनी बेटी को जहर दे सकता है और उस से भी ज्यादा गर्व है अपनी बेटी पर जिसने पिता के आदर्श के लिए एक सवाल नहीं पूछा।''

इस फिल्म के आरंभ में कृष्णा से अपने आदर्श के लिए जहर खाने का अनुरोध किया जाता है और वह जहर खा लेती है। फिल्म के अंत में मीरा को समाज के ठेकेदार जबरदस्ती जहर देते हैं। मीरा का अपराध बस इतना है कि वह इस शरीर को नश्वर मानती है इसीलिए वह किसी पुरुष को नहीं, अपितु आदिपुरुष कृष्ण को अपना पति मानती है। इस युग में अनेक विचारधारा के संत-पुरुष हुए हैं, परंतु किसी को जहर नहीं खाना पड़ता, मगर मीरा को स्त्री होने का दंड देता है यह समाज।

पर्दा प्रथा, जात-पात, स्त्री-पुरुष का भेदभाव करने वाले समाज के नियम उसे व्यर्थ मालूम होते हैं। यही अपराध है उसका जिसके लिए उसे जहर का प्याला दिया जाता है। इस पर भी जब वह नहीं मरती, तब उसकी मृत्यु रहस्यमय ढंग से हो जाती है, जो आज भी रहस्य ही है। अब हम मीरा के कुछ प्रमुख संवादों को देखते हैं—

''मीरा की ननंद ऊदा—पूछिये इससे क्या कर रही थी वहाँ मंदिर में? और यह तारा किसने दिया है?

मीरा—झील किनारे एक बाबा थे, उन्होंने दिया है।

ऊदा—बाबा नहीं भैया, वही चमार रैदास।

मीरा प्रसन्न होकर—क्या, क्या वे संत रैदास थे!

ऊदा—भईया, जरा पूछो इस से कैसे हाथ-पैर मार मार कर नाच रही थी!

भोजराज—मीरा सुबह-शाम की उलझन न बनो मेरे लिये।

मीरा—इस घर में भजन-कीर्तन की रस्म नहीं है क्या!

भोजराज—इस घर की यही रस्म है कि इस घर की बहू बेटियाँ बिना आज्ञा के घर से बाहर नहीं जातीं।

मीरा —आपने कहा था मैं इस घर में बंदी नहीं हूँ।

भोजराज—तुम आजाद हो मैंने यह भी नहीं कहा था!''

मीरा की ननद ऊदा, मीरा के विरुद्ध, भोजराज के बड़े भाई राणा विक्रमजीत को भड़काने में सफल हो जाती है और मीरा को मायके जाने का हुक्म दे दिया जाता है! मेवाड़ पहुँचने पर भाई जयमल यह कहकर मीरा को दरवाजे से लौटा देता है कि अब उसके पाप-

पुण्य सब पति के घर में हैं। निराश मीरा वहाँ से लौट आती है। स्त्री को असहाय व कमजोर बनाए रखने के लिए समाज ने नियम बनाया कि मायके वाले लड़की को ससुराल में मिलने वाले दुख-सुख से मतलब न रखें और यह बात मायके वालों ने मान ली, क्योंकि उन्हें भी तो किसी की बेटी को अपने घर आज्ञाकारी सेविका बनाना था। आज्ञाकारी सेविका बनाने की कड़ी में स्त्री को कमजोर बनाने के उद्देश्य में सबसे पहले स्त्री के सिर से सुरक्षित छत छीन ली गई, धन के स्रोतों पर अधिकार छीन लिए गए। इसके बाद एक सुरक्षित छत के लिए और आर्थिक स्रोतों पर अधिकार पाने के लिए अपने दमनकारी नीति का हिस्सा स्त्रियों को बनाकर स्त्री को ही स्त्री के विरोध खड़ा कर दिया जैसे लोहा, लोहे को काटता है, वैसे ही स्त्री स्त्री की जड़ को काटने लगी और पुरुष का उद्देश्य सार्थक होने लगा।

मायके के दरवाजे से लौटी मीरा की हृदय गति कैसी रही होगी, इसकी कल्पना ही की जा सकती है। मीरा के पति बड़े ही सहृदय हैं, जो शायद उसके दुख को कुछ कम करने के लिए घर में कृष्ण का मंदिर बनवा देते हैं ताकि वह घर से बाहर न जाए और अकबर के विरुद्ध युद्ध में चले जाते हैं। अपने साथ मीरा की लाई कृष्ण की मूर्ति को ऊदा, कुएँ में डाल देती है! मीरा को लगता है कि उसका न कोई मेवाड़ में है, न चितौड़ में! व्याकुल और घायल-हृदय मीरा इस संसार से विक्षुब्ध हो मन की शांति की तलाश में घर की चहारदीवारी से बाहर निकल जाती है। जोगन तो वह थी ही, मंदिर में पुजारियों-संतों के सुर में सुर मिला कर कृष्ण प्रेम के गीत गाने लगती है। उसकी आवाज से प्रभावित होकर बादशाह अकबर अपनी माला उपाहार में दे देते हैं। जिस बादशाह ने हजारों सिर कटाने वाले शूरवीरों के सामने अपना सिर नहीं झुकाया था, उसका सिर मीरा की मधुर आवाज और साहसपूर्ण उत्तर के सामने झुक जाता है। मीरा का यह साहस राणा विक्रमजीत की नजरों में इतना बड़ा अपराध होता है कि वे धर्म-अदालत बुलाने के लिए विवश हो जाते हैं। धर्म के ठेकेदार तो इस घड़ी की प्रतिक्षा कर ही रहे थे। वे मीरा से अनेक ऐसे प्रश्न करते हैं, जो पुरुष से नहीं किए जाते।

राज पुरोहित—ब्रह्मणों और प्रजा जनो! राज कुँवर भोजराज की पत्नी, राजरानी मीरा पर आरोप है कि इसने एक नहीं कई नियमों का खंडन किया है। उन पर विचार करने के लिए ये धर्म-अदालत बुलाई गई है। ईश्वर की इच्छा और प्रजाजनों की अनुमति से मैं धर्म-अदालत का कार्य आरंभ करता हूँ।

मीरा के दोष प्रजाजनों को पढ़कर सुनाए जाते हैं। जो दोष, जो आक्षेप मीरा के पति ने भी मीरा पर नहीं लगाए थे वे बातें भी मीरा के चरित्र का दोष बताई जाती हैं-

धर्मगुरु कहता है, प्रथम धर्मशास्त्र और समाज के नियम के अनुसार निश्चित है कि पत्नी अपने पति का धर्म स्वीकार करे। मीरा ने अपने पति का धर्म स्वीकार करने से इनकार किया। मीरा ने पर पुरुषों से संबंध जोड़े।

इस युग में स्त्री बिस्तर की शोभा तथा घर की टहल करने वाली दासी से अधिक अपना कोई महत्व नहीं रखती थी। एक पुरुष के मरने पर कई-कई स्त्रियाँ एक पुरुष के साथ जल जाती थीं या जला दी जाती थीं। किंतु उनकी आह सुनने के लिए कोई धर्म-अदालत नहीं थी। सूरदास की गोपियाँ इस समय भले ही आत्मा और परमात्मा के आवरण में कृष्ण के साथ अपने अपने घरों से निकल कर यमुनातट पर रास रचा रही थीं, किंतु यथार्थ धरातल की सच्चाई यही है कि एक हाड़-माँस स्त्री ने घर से बाहर उसी कृष्ण के लिए कदम रखा तो उस पर परपुरुषों के संयोग का लाँछन लगाकर ऐसा दंड देने की योजना बनाई गई कि दूसरी सभी स्त्रियों की रूह काँप जाए। फिर कोई स्त्री ऐसा साहस न कर सके।

''धर्म अदालत द्वारा मीरा से कई प्रश्न किए गए-

पुरोहित—क्या तुमने अपने पति का धर्म स्वीकारने से इनकार किया?

मीरा—मारो धर्म तो एकहि साँचो
भवसागर संसार सब आँचो।

महंत—क्या तुम स्वीकार करती हो कि भोजराज

के अलावा कोई और भी तुम्हारा पति है?

मीरा—जाके सिर मोर मुकुट,
मेरो पति सोई।

महंत—तो अदालत यह मान ले कि तुम्हारे एक नहीं दो पति हैं?

मीरा—मेरे तो गिरिधर गोपाल,
दूसरो न कोई।

महंत—पत्नी होने के नाते पति के प्रति तुम्हारे क्या कर्तव्य हैं?

उसे संतान भी दे सकती हो, जिसे तुम अपना पति मानती हो, नारी का यह कर्तव्य तो तुम अच्छी तरह जानती होंगी।

मीरा—मैं आत्मा हूँ शरीर नहीं। मैं भावना हूँ किसी समाज का विचार नहीं। मैं प्रेमी हूँ प्रेमिका नहीं। केवल प्रेम नाम की जोगन किसी संबंध की कड़ी नहीं। किसी परिवार के खूँटी से बंधी साँकल नहीं।''

मीरा ने संपूर्ण जनलोक के सामने अपनी सफाई दी और जिन अधिकारों को वे अपने हाथों में ले रही थी, उन पर अनेक तर्क भी दिए कि ये अधिकार मानव होने के कारण उसके अपने हैं। किंतु उसके हर तर्क को धर्म व समाज के ठेकेदारों ने नकार दिया। सिर्फ इसलिए कि वे हाड़-माँस के मनुष्य को अपना पति स्वीकार नहीं करती। अपना परमेश्वर नहीं मानती। अपने शरीर पर पुरुष को अधिकार नहीं दिया। संतान उत्पन्न करने वाली मशीन नहीं बनी। उसके इसी अपराध के लिए उसका मृत्यु-दंड निश्चित किया जाता है।

धर्म-अदालत मीरा को मृत्यु दंड की घोषणा कर ही रही थी कि राणा विक्रमजीत आकर धर्म-अदालत को बताते हैं कि—राजा वीरनदेव युद्ध में वीरगति को प्राप्त हो गए हैं। मीरा इस परिवार की आखिरी निशानी है। धर्म-अदालत मीरा का न्याय विचारते हुए उस पर दया और सहानुभूति के साथ विचार करे। इस अनुरोध पर धर्म-अदालत मीरा के सामने शर्त रखती है कि यदि वह अपने पति का धर्म स्वीकार कर ले और जनलोक के सामने क्षमा माँग ले तो उसे क्षमा कर दिया जाएगा, किंतु मीरा ऐसा नहीं करती और उसे जहर का प्याला पीने को दे दिया जाता है। जब उस जहर से मीरा की मृत्यु नहीं होती तब मंदिर में प्रवेश करने के बाद किसी को नहीं मालूम किस रहस्यमयी तरीके से उसकी मृत्यु हो जाती है। उसका शव तक किसी को नहीं मिलता। आज भी यह रहस्य अनुमानों के दायरे में ही सीमित है।

राजा वीरनदेव ने अपने देश की रक्षा के लिए अपनी बेटी कृष्णा को जहर दे दिया, बेटा जयमल उनकी आँखों के सामने ही मुगलों से लड़ते हुए वीरगति को प्राप्त हो गया था, स्वयं वे भी देश पर न्योछावर हो गए, विचारकर देखें तो मेवाड़ राजघराने का पूरा परिवार राणा विक्रमजीत के ध्वज की शान रखने के लिए बलिदान हो गया, किंतु अपने वचन से नहीं फिरा। सिर्फ वीरनदेव के भाई की बेटी मीरा ही आखिरी निशानी के रूप में राणा वंश में बची थी, मीरा के साथ जिस मेवाड़ ने अपना सर्वस्व चित्तौड़ को दे दिया था वही चित्तौड़ मीरा के अधिकारों की रक्षा तो क्या क्षमा भी नहीं कर सका। चित्तौड़ हजारों योद्धाओं तथा मेवाड़ के राजकुँवर जयमल का बलिदान और भोजराज के असंख्य घाव देख चुका था । आखिर कौन-सी विजय मिल गई थी राजपूतों को, यदि ऐसे में मीरा ने अपने सात्विक गुणों पर या फिर अपनी संगीत कला के प्रभाव से बादशाह का मन जीत लिया था तो क्या उसका अपराध यही था कि उसने बादशाह को तलवार से नहीं जीता। उस पर चाहे जितने अपराधों का आरोप हो, किंतु मुख्य अपराध तो उसका यही माना गया था कि वह अपने पति को परमेश्वर नहीं मानती। महंत बंद मंदिर खोलने की शर्त रखता है कि वह करवाचौथ का व्रत रखे। आखिरी-आखिरी समय तक अपने पति का धर्म स्वीकार करने और पिछले कार्यों के लिए क्षमा माँगने पर अदालत उसे क्षमादान देने के लिए तैयार हो जाती है। किंतु यहां प्रश्न यह उठता है कि यह धर्म सिर्फ स्त्री के लिए ही क्यों था? इतिहास ऐसे उदाहरणों से भरा पड़ा है कि पुरुष ने विवाह किया, किंतु घर की जिम्मेवारियों को माया-मोह के आवर्ण में स्त्री को सभी पापों और दुख की खान बताकर त्याग दिया, अब वह किसी दूसरे के योग्य भी नहीं रही, संतान भी नहीं दी, संतान उत्पन्न तो की, किंतु उसका पालन किए बिना अल्पायु में ही

त्याग दिया। स्त्री और संतान के प्रति बिना कर्तव्य पालन किए संत हो गए ऐसे पुरुषों को समाज ने कोई दंड नहीं दिया। अपितु उसे अपनी आँखों में बैठा कर उसके चरणों की पूजा की है और आज भी कर रहा है। क्या यही है धर्म ? क्या यही है राज-सत्ता का न्याय ?

जिन अधिकारों के लिए मीरा ने दासता के बंधनों को तोड़ा था उसमें परिवर्तन तो देखने को मिलता है, मगर संघर्ष भी जारी है।

1. मीरा, मंदिर जाती थी : आज स्त्री समाज के सभी संस्थानों में जाती है। मीरा का मंदिर जाना सिर्फ मंदिर जाना नहीं अपितु कैद की चारदीवारी को तोड़ कर स्वतंत्रता, समानता, एकता, मानवता, शिक्षा, ज्ञानचर्चा, आत्मोन्नत्ति का अधिकार है।

2. मीरा परदा-प्रथा का विरोध करती थी : आज यह प्रथा लगभग समाप्त हो गई है । कोई स्त्री अब इसे स्वीकार नहीं करना चाहती। वह जानती है कि इस परदे ने किस तरह उसके लिए पिंजरे का काम किया है।

3 नृत्य करती थी और भजन गाती थी : यदि किसी लड़की में नृत्यांगना या गायिका बनने के गुण हों तो वह अपनी इस कला से समाज में सम्मान प्राप्त करती है।

4 संतों के साथ आत्मा-परमात्मा की चर्चा करती थी : आज स्त्री शिक्षा के महत्व को सभी जानते हैं। वह विद्यालयों, महाविद्यालयों, विश्वविद्यालयों में बैठकर समाज के सभी विषयों पर विचार-विमर्श करती है।

यह अधिकार अभी भी हर स्त्री को हर क्षेत्र में प्राप्त नहीं है। आवश्यकता अभी भी बड़े संघर्ष एवं बलिदान की है। यही अधिकार मीरा भी चाहती थी, जिसके लिए उसे मृत्यु दंड दिया गया था।

निष्कर्ष :

मैं उपरोक्त बिंदुओं पर विचार करती हूँ तो मुझे महसूस होता है कि पूर्व मध्यकाल में चाहे कितनी ही कुरीतियों-विकृतियों, आडंबरों को तोड़ने और धर्म तथा समाजसुधार की उन्नति पर आवाज उठी हो और कलम चली हो, किंतु स्त्री के अधिकारों को तो मीरा ने ही समझा था। इस महान नारी ने जो बलिदान आज से पाँच सौ वर्ष पूर्व किया था, उन्हीं अधिकारों के लिए नारी आज भी जूझ रही है। ❑

संदर्भ सूची :

फिल्म : मीरा
अभिनेता - हेमा मालिनी (मीरा), विनोद खन्ना-राणा भोजराज (मीरा के पति), शम्मी कपूर (विक्रमजीत)
निर्देशक- गुलजार/ पटकथा, संवाद-गुलजार
निर्माता- प्रेम जी/रिलीज वर्ष- 1979, सुचित्रा इंटरनेशनल द्वारा कृत
गायिका : लता मंगेशकर और उषा मंगेशकर,
गीत : दुनियाँ में आए हैं तो (फिल्म : मदर इंडिया)
पद्मावत / मलिक मोहम्मद जायसी / संपा. वासुदेव शर्ण अग्रवाल
गोस्वामी तुलसीदास : रामचरितमानस
आचार्य रामचंद्र शुक्ल : भ्रमर गीत सार
प्राथमिक कक्षा में सीखा गीत, अध्यापिका : शांती नंगल
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय के प्रो. रामवक्ष का वक्तव्य, पुनष्चर्या पाठ्यक्रम वर्ष : 2010, स्थान : सीसीपीडी दिल्ली विश्वविद्यालय दिल्ली-110007

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

आलेख

भारतीय शिक्षा प्रणाली में शिक्षण का बदलता स्वरूप

डॉ. पवन कुमार दुबे

असिस्टेंट प्रोफेसर, शिक्षक-शिक्षा विभाग, शिक्षा संकाय, नेहरू ग्राम भारती (मानित विश्वविद्यालय), प्रयागराज (उ.प्र.),
9452223717
pawandubeypbh@gmail.com

सारांश :

शिक्षा के माध्यम से पुरानी पीढ़ी के व्यक्तियों द्वारा नई पीढ़ी के विद्यार्थियों का बौद्धिक, सांवेगिक, सामाजिक, शारीरिक विकास आदि व्यक्तित्व के सभी पहलुओं का समन्वित रूप से विकास करना प्रमुख दायित्व होता है। विद्यार्थियों के व्यक्तित्व के विकास में शिक्षकों की महती भूमिका होती है। भारतीय परंपरा में शिक्षक द्वारा अपने विद्यार्थियों को शिक्षा देने के तरीके (विधियों) में समय-समय पर परिवर्तन आता रहा है, कभी शिक्षक-केंद्रित शिक्षण तो कभी छात्र-केंद्रित।

वर्तमान समय में छात्र-केंद्रित शिक्षा पद्धति होने के कारण शिक्षक के दायित्व में भी बदलाव आता रहा है। शिक्षक की जो शिक्षण विधि मौखिक या व्याख्यान विधि से प्रारंभ होकर धीरे-धीरे संश्लेषण, विश्लेषण, आगमन, निगमन, दृष्टांत, कहानी-प्रश्नोत्तर करके सीखना, खोज विधि, डाल्टन विधि, प्रोजेक्ट विधियों के साथ-साथ कुछ नवीन पद्धति का भी समावेश होता रहा है। उच्च शिक्षा में कुछ डिजिटल पहल की गई है, जैसे स्वयं एवं स्वयं प्रभा, राष्ट्रीय शैक्षणिक डिपॉजिटरी (NAD), नेशनल डिजिटल लाइब्रेरी (NAD), राष्ट्रीय शिक्षा मिशन, आईसीटी के माध्यम से नेशनल प्रोग्राम ऑन टेक्नोलॉजी इनहांसिंग लर्निंग, ई-शोध सिंधु, आभासी वर्चुअल लैब्स, ई-यंत्र, कैंपस कनेक्टिविटी, शिक्षण से बात करें (टॉक टू टीचर) ई-आचार्य, ई-कल्प एवं ई-विद्वान आदि के माध्यम से शिक्षण में इंटरनेट द्वारा क्रांतिकारी परिवर्तन किया जा रहा है।

कुँजी शब्द :

शिक्षा प्रणाली, शिक्षण, शिक्षण स्वरूप।

प्रस्तावना :

मानव एक सामाजिक प्राणी है तथा समाज में रहते हुए वह सभी क्रिया-कलापों को संपन्न करता है। समाज अपनी आवश्यकता को पूरा करने हेतु मनुष्य पर आश्रित होता है, अस्तु इस कार्य में शिक्षा की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाती है। शिक्षा ही एक ऐसा माध्यम है, जिसके द्वारा समाज की संरचना में आमूल-चूल परिवर्तन होता है, जिसका उद्देश्य एक प्रगतिशील एवं उन्नतशील

समाज का निर्माण करना होता है। शिक्षा एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसके माध्यम से व्यक्ति के व्यवहार में यथोचित सकारात्मक परिवर्तन किया जाता है। किसी भी व्यक्ति, समाज अथवा राष्ट्र की आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति अधिकतर उसकी शिक्षा पर निर्भर करती है। अत: जिस देश का शैक्षिक स्तर उन्नत होगा, वहाँ का आर्थिक स्तर भी उन्नत होगा। शिक्षा के तंत्र को प्रतिबिंबित करने हेतु उसकी प्रणाली अथवा पद्धति को भी सुनियोजित एवं सुस्पष्ट होना चाहिए। भारतीय शिक्षा का अपना एक इतिहास रहा है। हमारे यहाँ यूँ तो शिक्षा-दीक्षा कार्य अति प्राचीनकाल से किए जाते रहे हैं। औचारिक तरीके से इसका इतिहास वैदिक काल से देखने को मिलता है। सभी कालों यथा- बौद्ध काल, मुस्लिम एवं ब्रिटिश काल आदि सभी की अपनी शिक्षा प्रणाली रही है। प्राचीन काल में हमारे यहाँ गुरुकुल शिक्षा-प्रणाली रही है।

भारत पर अनेक लोगों ने शासन किया और सभी ने अपनी आवश्यकता के अनुरूप शिक्षा पद्धति को क्रियान्वित किया, जिसमें जब अंग्रेज भारत पर शासन कर रहे थे, तब इस गुरुकुल शिक्षा प्रणाली को मिटाना प्रारंभ किया। तत्पश्चात 1830 में लॉर्ड 'थामस बर्विगटन मैकाले' आधुनिक शिक्षा (ब्रिटिश शिक्षा प्रणाली) को भारत लाए, जिससे भारतीय शिक्षा प्रणाली में आमूल-चूल परिवर्तन हुए। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात कुछ भारतीय दर्शन की महत्ता एवं विचारधारा को शिक्षा-प्रणाली में शामिल करने हेतु विभिन्न आयोगों एवं समितियों ने सिफारिशें कीं तथा विभिन्न राष्ट्रीय शिक्षा नीतियाँ आईं, जिसके कारण शिक्षा संबंधी विविध आयामों में भी परिवर्तन आता गया। इस संबंध में 'अखिल भारतीय शिक्षा समिति' एवं 'बेसिक शिक्षा समिति' का गठन किया गया, जिसके द्वारा कुछ योजनाएँ बनाई गईं, फलस्वरूप विभिन्न स्तर (प्राथमिक, माध्यमिक एवं उच्च) के शिक्षण संस्थान स्थापित किए गए।

संपूर्ण शिक्षा प्रणाली में छात्र, शिक्षक एवं पाठ्य-वस्तु की अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका होती है, इन तीनों स्तंभों में शिक्षक भी महत्वपूर्ण अंग होता है। शिक्षा की प्रक्रिया में शिक्षक विद्यार्थियों को प्रेरित, प्रोत्साहित एवं शिक्षित करने का कार्य करता है। इस संदर्भ में डॉ. राधाकृष्णन के अनुसार, ''समाज में अध्यापक का स्थान बहुत महत्वपूर्ण है, वह एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को बौद्धिक परंपराएँ तथा तकनीकी कौशल पहुँचाने का केंद्र है एवं सभ्यता के प्रकाश को प्रज्ज्वलित रखने में सहायता देता है।''[1]

एक शिक्षक शिक्षण कार्य को अधिक रोचक बनाने हेतु कई नई तकनीकों का भी प्रयोग करता है, जिसमें शिक्षण के तीनों अवस्थाओं यथा-पूर्व क्रियात्मक, अंत:क्रियात्मक एवं उत्तर क्रियात्मक में शिक्षक अपने शिक्षण के उत्तरदायित्वों को विभिन्न गतिविधियाँ विद्यार्थियों के व्यवहार में शिक्षण अधिगम के फलस्वरूप परिवर्तन लाता है। शिक्षण अधिगम प्रक्रिया का संपादन शिक्षक अति प्राचीन काल से कर रहा है, जिसमें समय एवं परिस्थितियों के अनुकूल भिन्न-भिन्न स्वरूपों में हमारे समक्ष आती रही है। शिक्षण विधियों के स्वरूपों में जो परिवर्तन देखा जा रहा है, इसका प्रभाव शिक्षण के परिणामों पर सहज ही परिलक्षित हो रहा है, जो कि विश्लेषण का विषय है।

विभिन्न कालों में शिक्षण का स्वरूप :

भारत वर्ष में शिक्षा का इतिहास कई कालखंड में देखने को मिलता है। वैदिक काल में गुरुकुल प्रणाली प्रचलन में थी, जिसके अंतर्गत मौखिक रूप से शिक्षा देने कार्य प्रश्नोत्तर, वाद-विवाद, शास्त्रार्थ विधि, अग्रशिष्य प्रणाली (कक्षा नायकीय पद्धति), उदाहरण, सूत्र एवं मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों के प्रयोग के अतिरिक्त वैदिक काल की कुछ अन्य विधियों में लोकोक्ति, कहानी के साथ ही कुछ शिक्षण सूत्रों का भी प्रयोग शिक्षक करता था।

बौद्ध काल में शिक्षण विधियों का जो रूप मिलता है, उनमें कुछ प्रमुख-व्याख्यान प्रणाली, सम्मेलन, प्रवचन विधि (अशुद्धियों के शोधन के साथ), कक्षा नायकीय पद्धति, प्रश्नोत्तर प्रणाली देशाटन एवं प्रकृति निरीक्षण विधि, वाद-विवाद एवं शास्त्रार्थ प्रणाली, पुस्तकों का अध्ययन एवं निध्यासन आदि के माध्यम में शिक्षण कार्य किया जाता था।

मुस्लिम काल में भी शिक्षक शिक्षण कार्य अनुकरण, अभ्यास, स्मरण, भाषण, व्याख्यान, तर्क स्वाध्याय प्रदर्शन एवं प्रयोग आदि विधियों को प्रयोग करता था। ब्रिटिश शासन काल में भी शिक्षण की विधियों में कुछ विशेष बदलाव देखने को नहीं मिलता है, बल्कि पूर्व के कालों की भाँति ही था।

ब्रिटिश शासन में शिक्षा से संबंधित कुछ आयोग गठित किए गए, जिसने विभिन्न शैक्षिक पहलुओं पर अपनी संस्तुतियाँ दीं, जिससे शिक्षा जगत में सुधार होते गया। इन आयोगों में मुख्यत: वुड का घोषणा पत्र 1954 हंटर आयोग (भारतीय शिक्षा आयोग), 1882 भारतीय विश्वविद्यालय आयोग 1902, कलकत्ता विश्वविद्यालय आयोग (सेंडलर आयोग) 1919, सार्जेंट योजना 1944 आदि के द्वारा शैक्षिक ढाँचे का आधारभूत परिमार्जन किया गया। भारत की आजादी के बाद भारतीय दर्शन को आधार मानकर विभिन्न आयोगों ने अपनी सिफारिशें दीं, जिनमें से कुछ प्रमुख आयोग- विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग (राधाकृष्ण आयोग) 1949, माध्यमिक शिक्षा आयोग (मुदालियर आयोग) 1953, शिक्षा आयोग (कोठारी आयोग) 1966 एवं राष्ट्रीय ज्ञान आयोग 2009 आदि ने शिक्षा के सभी पहलुओं में शिक्षण, अधिगम एवं मूल्यांकन आदि को समुन्नत करने हेतु सुझाव दिए। परिणामस्वरूप यथासंभव कार्यान्वित किया जा रहा है।

शिक्षण की प्रक्रिया एवं उसके रूप में इंटरनेट का आविष्कार वैश्विक परिदृश्य में अमेरिका में होने के बाद परिवर्तन देखा जाने लगा। भारत में जन सामान्य हेतु इंटरनेट सेवा की शुरुआत 15 अगस्त, 1995 को विदेश संचार निगम लिमिटेड द्वारा की गई। इसका प्रयोग शिक्षण अथवा शैक्षिक क्षेत्र में भी किया जाने लगा।

21वीं सदी में शिक्षण का स्वरूप :

इंटरनेट के प्रचलन के साथ ही शिक्षण, शोध एवं मूल्यांकन आदि शैक्षिक क्षेत्र में भी क्रांतिकारी परिवर्तन

देखे जा सकते हैं। इसका प्रभाव शिक्षण के तीनों स्तर (स्मृति, बोध एवं चिंतन) पर देखा जा सकता है। अन्य प्राचीन काल से चली आ रही शिक्षण विधियों के साथ ही डिजिटल अधिगम, सिंक्रोनस एवं एसिंक्रोनस के माध्यम से ऑनलाइन शिक्षण के साथ ही अध्ययन सामग्री को भी ई-मेल आदि के माध्यम से उपलब्ध करवाया जा रहा है। टेलीकॉन्फ्रेंसिंग, वीडियो कांफ्रेंसिंग, रेडियो, टेलीविजन आदि का भी उपयोग करते हुए आज सुदूर बैठे हुए छात्रों तक शिक्षा के अवसरों को आसानी से पहुँचाया जा रहा है। पुस्तकों की पहुँच छात्रों एवं शिक्षकों के लिए डिजिटल रूप से स्थापित पुस्तकालयों के माध्यम से सुनिश्चित की जा रही है। अत: 21वीं सदी में शिक्षण का स्वरूप काफी परिवर्तित हो गया है। उच्च शिक्षण संस्थाओं पर बदलाव का सबसे बड़ा दबाव वर्तमान समय में दिख रहा है, जहाँ लचीले, वैयक्तिकृत एवं वास्तविक समय के शैक्षिक अनुभव की माँग बढ़ गई है, जहाँ उच्च शिक्षण संस्थाओं को छात्रों के अनुभव के केंद्र में रखने की आवश्यकता है (यसनर[2] 2020, होस्किन्स [3] 2018; स्टोक्स तथा अन्य [4] 2019) के अध्ययन से प्राप्त परिणाम यह पुष्ट करता है कि डिजिटल परिवर्तन के मूल में उसके छात्र हैं और प्रौद्योगिकी केवल उपकरण हैं, जहाँ 94 प्रतिशत साक्षात्कारकर्ताओं का मानना है कि डिजिटल परिवर्तन का सबसे महत्वपूर्ण परिणाम छात्रों में सुधार करना है।

प्रसन्ना एवं चौधरी [5] (2013) संकेत देते हैं कि संतुष्ट छात्र किसी विश्वविद्यालय के लिए सबसे अच्छा विज्ञापन हैं, इसके अतिरिक्त, सेरेस तथा अन्य [6] (2018) एवं स्पाइज[7] (2017) के शोध के परिणाम इंगित करते हैं कि उच्च शिक्षा के डिजिटल परिवर्तन का लक्ष्य उपयोगकर्ताओं पर केंद्रित सेवाएँ प्रदन करने के लिए काम करने के नए तरीके तैयार करना है।

विभिन्न काल की शिक्षण पद्धति का वर्तमान में प्रभाव एवं उपयोगिता :

वैदिक काल से प्रारंभ हुई शैक्षिक प्रणाली से लेकर वर्तमान समय तक की शिक्षण की विधियाँ नवीन शिक्षण विधियों के लिए आधार का कार्य करती हैं। शिक्षण विधि पद का प्रयोग व्यापक अर्थ में होता है। एक तरफ तो इसके अंतर्गत अनेक प्रणालियाँ एवं योजनाएँ शामिल की जाती हैं तथा दूसरी तरफ हम कह सकते हैं कि इसका क्षेत्र अधिक व्यापक है, इसमें मौखिक विधि, वाद-विवाद विधि, प्रश्नोत्तर विधि उदाहरण सूत्र आदि का वर्तमान की संश्लेषण, विश्लेषण, आगमन-निगमन करके सीखना आर्मस्ट्रांग की शोध विधि, लिपेट्रिक की प्रोजेक्ट विधि, हेलेन पार्कहस्ट्र की डाल्टर योजना विधि से घनिष्ठ संबंध है। बल्कि यूँ कहे कि यह नवीन विधियों को आधार प्रदान करने का कार्य प्राचीन काल में प्रचलित शिक्षण विधियाँ ही हैं।

डिजिटल लर्निंग में भी प्राचीन काल की शिक्षण विधियों का अधिक उपयोग किया जाता है। अत: हम कह सकते हैं कि प्राचीन काल से ही शिक्षण के क्षेत्र में उपयोग में लाई जा रही विधियाँ वर्तमान परिदृश्य में अत्यंत उपयोगी सिद्ध हो रही हैं।

शैक्षिक क्षेत्र में शिक्षण हेतु कुछ प्रमुख डिजिटल पहल :

शिक्षण के क्षेत्र को और भी प्रभावी एवं व्यापक रूप प्रदान करने के उद्देश्य से भारत सरकार द्वारा अनेक प्रयास किए जा रहे हैं। उन्हीं में से कुछ डिजिटल पहल हैं, जो इस प्रकार हैं-

स्वयं एवं स्वयं प्रभा :

इसकी शुरुआत डिजिटल क्रांति के रूप में 9 जुलाई, 2017 को तत्कालीन राष्ट्रपति द्वारा की गई।

- स्टडी बेब्स ऑफएक्टिव लर्निंन फॉर यंग स्पायरिंग माइंड्स (SWAYAM) यह कक्षा 9वीं से स्नातकोत्तर स्तर तक ऑनलाइन पाठ्यक्रम प्रदान करता है।
- स्वयं प्रभा 24 घंटे सप्ताह में सातों दिन संपूर्ण देश में D.T.H. के माध्यम से उच्च गुणवत्ता वाले 32 चैनल प्रदान करता है। इसका प्रसारण प्रतिदिन 4

घंटे और पाँच बार किया जाता है। इसके अतिरिक्त शिक्षा मंत्रालय ने राष्ट्रीय शैक्षिक डिपाजिटरी (NAD)एवं राष्ट्रीय डिजिटल लाइब्रेरी (N.D.L.) प्रारंभ की।

● राष्ट्रीय शिक्षा मिशन आई.सी.टी. के माध्यम से नामांकन दर (GER)में 5 प्रतिशत की वृद्धि करना है तथा ऑनलाइन शिक्षकों की उपलब्धता भी इसका प्रमुख उद्देश्य है।

● नेशनल प्रोग्राम ऑन टेक्नोलाजी एनहांसिंग लर्निंग (N.P.T.E.L) योजना शिक्षा मंत्रालय द्वारा वित्त पोषित है, जो कि भारत की सात I.I.T. एवं I.T.Sc. बंगलौर द्वारा प्रारंभ की गई। यह वेब आधारित लर्निंग विकसित करती है।

● फोजी FOSSEE फ्री एंड ओपेन सोर्स सॉफ्टवेयर फॉर एजुकेशन एक प्रकार का ओपेन सोर्स सॉफ्टवेयर को शैक्षिक संस्थानों को उपयोग हेतु बढ़ावा देने वाली एक परियोजना है। इसके माध्यम से लगभग 2000 से अधिक के कॉलेजों के छात्र एवं शिक्षक शिक्षण सामग्री जैसे-प्यूटोरियल्स, डाक्यूमेंटेशन जागरूकता कार्यक्रम (ट्रेनिंग कार्यक्रम) आदि संचालित किया जाता है।

● **वर्चुअल लैब :**

यह एक ऐसी योजना है, जो व्यक्ति के ज्ञान एवं समझ का मूल्यांकन करने एवं प्रश्नों के उत्तर देने हेतु पूर्णतया इंटरैक्टिव सिमुलेशन एनवायरमेंट विकसित करती है। समस्या समाधान की क्षमता को विकसित करने हेतु आधुनिकतम कम्प्यूटर सिमुलेशन तकनीक के साथ आभासी प्रयोगशाला को विकसित करती है। यह लगभग 15 लाख से अधिक छात्रों को लाभ प्रदान कर रही है।

● **ई-शोध सिंधु :**

इसके अंतर्गत अंतर्राष्ट्रीय ई-जर्नल्स एवं ई-पुस्तकें उच्च शिक्षण संस्थाओं को उपलब्ध कराई जाती हैं। इसको शिक्षा मंत्रालय ने तीन संस्थाओं को मिलाकर स्थापित किया है-

● UGC-INFONET डिजिटल लाइब्रेरी कंसोर्टियम

● N-LIST (नेशनल लाइब्रेरी एंड इनफॉर्मेशन सर्विसेज इंफ्रास्ट्रक्चर फॉर स्कॉलर कॉन्टेंट)

● INDEST-AICTE (इंडियन नेशनल डिजिटल लाइब्रेरी इन इंजीनियरिंग साइंसेस एंड टेक्नोलॉजी)

● इस योजना को INFIBNET गांधीनगर गुजरात लागू कर रहा है।

● **ई-यंत्र :**

यह 'नेशनल मिशन ऑन एजुकेशन थ्रू इनफॉर्मेशन एंड कम्यूनिकेशन टेक्नोलॉजी (NMEICT) की पहल है। इसमें रोटिक्स के माध्यम से इंजीनियरिंग के छात्रों की प्रतिभागिता बढ़ाई जाती है तथा शिक्षकों को प्रशिक्षित किया जाता है।

● **शिक्षक से बात करें (टॉक टू टीचर) :**

यह शिक्षा पर राष्ट्रीय मिशन है, जो कि 'आई.आई.टी. बाम्बे' द्वारा विकसित किया गया। इसमें स्नातक एवं स्नातकोत्तर स्तर के कुछ पाठ्यक्रमों में प्रवेश के साथ ही अमृता विश्वविद्यालय द्वारा विकसित 'ए-ब्यू सहयोग' एक प्लेटफॉर्म, जहाँ पर देश भर के संकायों (फैकल्टी) को आभासी कक्षाएँ प्रदान करने हेतु विकसित किया गया है।

● **ई-आचार्य :**

यह NMEICT का इंटीग्रेटेड ई-कंटेंट पोर्टल है, जिसके द्वारा सभी सामग्री इसके डिपाजिटरी प्लेटफॉर्म पर INFLIBNET सेंटर गांधीनगर में रखी गई है।

● **ई-कल्प :**

यह शिक्षा मंत्रालय एवं NMEICT की पहल पर आधारित है। यह भारत में डिजाइन हेतु डिजिटल लर्निंग प्लेटफॉर्म बनाता है। यह एक प्रकार का शिल्प क्षेत्र सहित डिजिटल डिजाइन संसाधन डेटाबेस हायर लर्निंग हेतु सोशल नेटवर्किंग है।

- **ई-विद्वान :**

यह इनफॉर्मेशन एवं लाइब्रेरी नेटवर्क से संबंधित है। इसको NMEICT से वित्तीय एवं विशेषज्ञता के रूप में सहायता मिलती है। यह शोध लेखों को एकत्रित करता है एवं नेटवर्किंग के अवसर उपलब्ध कराने का कार्य करता है।

- **साक्षात पोर्टल :**

यह राष्ट्रीय मिशन पोर्टल द्वारा भारतीयों को नि:शुल्क शिक्षा इंटरनेट के माध्यम से उपलब्ध कराता है। इसमें शैक्षिक संसाधनों, छात्रवृत्ति, टेस्टिंग एवं चर्चा के अवसर उपलब्ध होते हैं।

- **राष्ट्रीय ज्ञान नेटवर्क** (NKN) :

इसके माध्यम से विज्ञान पाठ्यक्रम एवं वाई-फाई कनेक्टिविटी के साथ सभी छात्रों को डिजिटल परिसरों, वीडियो कॉन्फ्रेंस, कक्षा हॉट-स्पॉट, लैपटॉप एवं डेस्कटॉप आदि उपलब्ध करवाए गए हैं।

- **एडुसेट** (EDUSET) :

इसके माध्यम से ग्रामीण क्षेत्र में सैटेलाइट कनेक्टिविटी आई। इग्नू ऑन लाइन पाठ्यक्रम को प्रस्तुत करने के लिए उपग्रह, टी.वी., इंटरनेट आदि का प्रयोग कर रहा है।

- **वृहस्पति :**

यह ई-लर्निंग प्लेटफॉर्म का ओपेन स्रोत है। इसे आई.आई.टी. कानुपर द्वारा विकसित किया गया है।

- **ग्रिड गरूण :**

यह डेटा और अन्य अनुप्रयोगों के विकसित करने हेतु शैक्षणिक, वैज्ञानिक एवं अनुसंधान समुदायों को एक साथ लाने वाला पहला ग्रिड है। यह राष्ट्रीय ज्ञान आयोग से जुड़ा है।

निष्कर्ष एवं सुझाव :

भारत वर्ष ही नहीं, किसी भी राष्ट्र की प्रगति का माध्यम शैक्षिक रूप से संपन्नता होती है। अत: निष्कर्षत: यह कहा जा सकता है कि प्रत्येक राष्ट्र अपनी शिक्षा पद्धति अथवा शिक्षा प्रणाली सुदृढ़ एवं सशक्त रखना चाहता है। भारतीय शिक्षा में प्राचीन समय से वर्तमान तक विभिन्न कालखंडों में शिक्षण का स्वरूप समयानुरूप परिमार्जित होता रहा है, जिसका परिणाम परंपरागत शिक्षण विधियों के साथ नवीन शिक्षण विधियों जैसे आनुभविक अधिगम, प्रोजेक्ट विधि, स्मार्ट कक्षा-कक्ष शिक्षण, मिश्रित शिक्षा प्रणाली, एवं बहु विषयक शिक्षण विधियों का भी प्रयोग होने लगा है। भावी शिक्षण विधियों के रूप में यह कहा जा सकता है कि बहुआयामी शिक्षण को शामिल किया जाना चाहिए। शिक्षण में आधुनिक तकनीकी का प्रयोग करते हुए शिक्षण को प्रभावी बनाया जा सकता है। ❑

संदर्भ ग्रन्थ सूची :

1. कुमार, विमल-शिक्षक एवं समाज: एक पुनर्दृष्टि, दृष्टि, नई दिल्ली, 6 सितम्बर 2022, पृष्ठ संख्या 1-2
2. यसनर-इन ए0, फर्नांडिज ; बी0, गोमेज ; के0, बिन्जाकू एवं ई0के0, मे0से0, (2023) उच्च शिक्षा संस्थानों में डिजिटल परिवर्तन पहल: एक बहुभाषी साहित्य समीक्षा एजूकेशन एण्ड इनफारमेशन टेक्नोलॉजी, 28 (1), 12351-12382, (2020)
3. होस्किन्स-इन ए0, फर्नांडिज ; बी0, गोमेज ; के0, बिन्जाकू एवं ई0के0, मे0से0, (2023) उच्च शिक्षा संस्थानों में डिजिटल परिवर्तन पहल: एक बहुभाषी साहित्य समीक्षा एजूकेशन एण्ड इनफारमेशन टेक्नोलॉजी, 28 (1), 12351-12382, (2018)
4. स्टोक्स तथा अन्य- इन ए0, फर्नांडिज ; बी0, गोमेज ; के0, बिन्जाकू एवं ई0के0, मे0से0, (2023) उच्च शिक्षा संस्थानों में डिजिटल परिवर्तन पहल: एक बहुभाषी साहित्य समीक्षा एजूकेशन एण्ड इनफारमेशन टेक्नोलॉजी, 28 (1), 12351-12382, (2019)
5. प्रसन्ना, पी0 एवं चौधरी, एस0-उच्च शिक्षा में परिवर्तन के तरीके, (2013) उपलब्ध:

https://www.cognizant.com/insightwhitepapers/transfromation-strategies-for higher-education.pdf.

6. सेरेस तथा अन्य-इन ए0, फर्नांडिज ; बी0, गोमेज ; के0, बिन्जाकू एवं ई0के0, मे0से0, (2023) उच्च शिक्षा संस्थानों में डिजिटल परिवर्तन पहल: एक बहुभाषी साहित्य समीक्षा एजूकेशन एण्ड इनफारमेशन टेक्नोलॉजी, 28 (1), 12351-12382, (2018)
7. स्पाइज-इन ए0, फर्नांडिज ; बी0, गोमेज ; के0, बिन्जाकू एवं ई0के0, मे0से0, (2023) उच्च शिक्षा संस्थानों में डिजिटल परिवर्तन पहल: एक बहुभाषी साहित्य समीक्षा एजूकेशन एण्ड इनफारमेशन टेक्नोलॉजी, 28 (1), 12351-12382, (2017)
8. मदान, के0वी0एस0 एवं मदान अंशु बाला-शिक्षण एवं शोध अभियोग्यता, पियरसन एजूकेशन पाब्लिकेशन, (2020)
9. मंगल, एस0के0 एवं मंगल उमा-शिक्षा तकनीकी, पी0एच0आई0 लर्निंग प्राइवेट लिमिटेड, दिल्ली-110092, (2019)
10. लाल, रमन बिहारी एवं शर्मा कृष्ण कान्त-भारतीय शिक्षा का इतिहास, विकास एवं समस्याएँ, आर लाल बुक डिपो, मेरठ, उ0प्र0 250001, (2013)
11. कुलश्रेष्ठ, डॉ0 एस0पी0-शैक्षिक तकनीकी के मूल आधार, अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा; 2 उ0प्र0, (2008)
12. सिंह, डॉ0 कर्ण-भारत में शिक्षा प्रणाली का विकास, गोविन्द प्रकाशन लखीमपुर खीरी-262701, (2013)

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

आलेख

ऑनलाइन शिक्षा प्रोग्राम प्रज्ञाता दिशा-निर्देश के प्रति शिक्षकों का दृष्टिकोण : एक अध्ययन

डॉ. रुचि दुबे
असिस्टेंट प्रोफेसर, शिक्षा शास्त्र विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय,
प्रयागराज, उत्तर प्रदेश-211001
9415237694
ruchidubey31@gmail.com

डॉ. विधु शेखर पाण्डेय
असिस्टेंट प्रोफेसर, शिक्षक-शिक्षा विभाग, शिक्षा संकाय, नेहरू ग्राम भारती (मानित विश्वविद्यालय), प्रयागराज (उ.प्र.),
7985571465
vvv.net007@gmail.com

सारांश :

प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य ऑनलाइन शिक्षा प्रोग्राम प्रज्ञाता दिशा-निर्देश के प्रति शिक्षकां के दृष्टिकोण का अध्ययन करना था। न्यादर्श के रूप में प्रयागराज शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के तीन वित्तपोषित एवं तीन स्ववित्तपोषित विद्यालयों से 100 शिक्षकों का चयन यादृच्छिक न्यादर्श विधि से किया गया है। अध्ययन हेतु आँकड़ों के संग्रहण क लिए स्वनिर्मित प्रज्ञाता दिशा-निर्देश के प्रति शिक्षक दृष्टिकोण मापनी उपकरण का प्रयोग किया गया है। प्रदत्तों के विश्लेषण हेतु प्रतिशत विश्लेषण एवं टी-अनुपात का प्रयोग किया गया है एवं निष्कर्ष के रूप में पाया गया कि शहरी विद्यालय के शिक्षक ग्रामीण विद्यालय के शिक्षकों की अपेक्षा प्रज्ञाता दिशा-निर्देश के प्रति अधिक जागरूक हैं; वित्तपोषित विद्यालय के शिक्षक, स्ववित्तपोषित विद्यालय के शिक्षकों की अपेक्षा अधिक प्रज्ञाता दिशा-निर्देश से संतुष्ट हैं; वित्तपोषित विद्यालय के शिक्षक, स्ववित्तपोषित विद्यालय के शिक्षकों की अपेक्षा अच्छी तरह प्रज्ञाता गाइडलाइन का पालन करते हैं; ज्यादातर शिक्षकों का मानना है कि प्रज्ञाता दिशा-निर्देश ऑनलाइन शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को प्रभावित करता है; ज्यादातर शिक्षकों का मत है कि प्रज्ञाता दिशा-निर्देश डिजिटल शिक्षा और शिक्षक प्रशिक्षण के लिए राष्ट्रीय पहल है; वित्तपोषित एवं स्ववित्तपोषित विद्यालय के शिक्षकों का प्रज्ञाता दिशा-निर्देश के प्रति दृष्टिकोण में सार्थक अन्तर है एवं ग्रामीण एवं शहरी विद्यालय के शिक्षकों का प्रज्ञाता दिशा-निर्देश के प्रति दृष्टिकोण में सार्थक अन्तर है।

कुंजी शब्द : ऑनलाइन शिक्षा, प्रज्ञाता दिशा-निर्देश, अधिगम, शिक्षक आदि।

प्रस्तावना :

वर्तमान परिदृश्य में डिजिटल शिक्षा एक नवीन एवं उभरता हुआ क्षेत्र है, जो प्रमुख रूप से ऑनलाइन माध्यम का उपयोग करते हुए सीखने एवं सीखाने की प्रक्रिया से संबंधित है। यह डिजिटल माध्यम पाठ संसाधनों को साझा करने और असाइनमेंट ऑनलाइन माध्यम से जमा करने वाले विद्यार्थियों की क्रिया कलाप से विकसित हुआ है। जिससे ऑडियो, विडियो एवं मल्टीमीडिया संसाधनों जैसे विभिन्न प्रकार की सामग्री उपलब्ध हुई है। शिक्षा आज डिजिटल प्लेटफॉर्म के माध्यम से काफी सुगम हो गयी है, जो राज्य/केन्द्र शासित प्रदेशों में कई शिक्षकों द्वारा शिक्षण प्रक्रिया में ICT को एकीकृत कर उपयोग किया जा रहा है। [1]

14 जुलाई 2020 को मानव संसाधन विकास मंत्रालय (भारत सरकार) ने कोविड-19 महामारी के दौरान स्कूल शिक्षा के संचालन हेतु एक गाइडलाइन तैयार की, जिसको 'प्रज्ञाता' नाम दिया गया हैं इस दिशा निर्देशन में उन विद्यार्थियों के लिए जिनके पास उपकरण है तथा जिनके पास नहीं है या सीमित है, दोनों के लिए एन.सी.ई.आर.टी. के वैकल्पिक शैक्षणिक कलेण्डर के उपयोग पर बल दिया गया है। इसलिए विभिन्न डिजिटल माध्यमों से मौखिक एवं गैर-मौखिक तरीकों से संवाद करते हुए शिक्षकों का अत्यधिक सावधानी बरतना महत्वपूर्ण है।[2] प्राथमिक स्तर पर परामर्शदाता होने के कारण शिक्षकों पर विद्यार्थियों के मानसिक एवं शारीरिक स्वास्थ्य के देखभाल की जिम्मेदारी होती है। शिक्षक, विद्यार्थियों के जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, इसलिए प्रज्ञाता दिशा-निर्देश के प्रति शिक्षकों का दृष्टिकोण जानना अत्यन्त आवश्यक विषय है। प्रज्ञाता डिजिटल शिक्षा के प्रमुख आठ चरण इस प्रकार हैं [3]-**(i) योजना :** विद्यार्थियों के ऑनलाइन सीखने के लिए शिक्षक द्वारा विस्तारपूर्वक पाठ योजना तैयार करना; प्रत्येक कक्षा में विद्यार्थियों की संख्या' ऑनलाइन कक्षा की अवधि एवं समय-सारणी पाठ; आयु एवं कक्षा के अनुसार पाठ्यक्रम की योजना; वार्षिक कैलेण्डर तैयार करना; विद्यार्थियों के लिए डिजिटल उपकरणों की पहुँच; शिक्षकों अथवा विद्यालय के लिए डिजिटल उपकरणों की उपलब्धता; सकुशल एवं सुरक्षित परिवेश; तथा सतत् एवं व्यापक मूल्यांकन **(ii) समीक्षा :** विद्यालय या शिक्षकों के लिए उपलब्ध सभी संसाधनों की पहचान करने तथा विद्यार्थियों के विभिन्न समूहों के लिए विभिन्न उपकरणों या माध्यमों का निर्धारण करने के पश्चात् समीक्षा करना; समयावधि; संसाधन की गुणवत्ता; असाइनमेंट के दायरे; आकलन के तरीके; साइबर सुरक्षा; तथा तकनीकों के साथ विषयों की उपलब्धता [4] **(iii) व्यवस्था :** एकत्र की गयी सूचनाओं की समीक्षा के बाद, उनके दैनिक/साप्ताहिक अथवा मासिक संप्रेषण के लिए उनकी उचित व्यवस्था और संगठन किया जाना चाहिए। **(iv) मार्गदर्शन :** शिक्षकों के मार्गदर्शन के अन्तर्गत अथवा स्व-अध्ययन के माध्यम से विद्यार्थियों द्वारा सीखे जाने वाले विषयों के बारे में माता-पिता अथवा विद्यार्थियों को सूचित करने की आवश्यकता है। इंस्टैंट तत्काल मैसेजिंग एस.एम.एस., विडियो चैटिंग जैसे विभिन्न तरीकों का उपयोग करते हुए विद्यार्थियों का मार्गदर्शन किया जा सकता है। **(v) बातचीत (वार्ता):** मार्गदर्शन के दौरान शिक्षकों को यह स्पष्ट करना चाहिए कि समूह के सदस्यों एवं विद्यार्थियों में सीखने के प्रति अभिरूचि जाग्रत हो और विद्यार्थी गतिविधियों के माध्यम से भी सीखें।[5] **(vi) कार्य सौंपना :** असाइनमेंट; दो अथवा तीन विषयों को पूरा करने के पश्चात् शिक्षक, विद्यार्थियों को कुछ रोचक कार्य दे सकते हैं। ये रचनात्मक कार्य (असाइनमेंट) विद्यार्थियों के पास उपलब्ध तकनीकी उपकरणों के आधार पर व्यक्तिगत कार्य या समूह गतिविधियाँ हो सकती हैं। **(vii) पता लगाना :** सत्र के दौरान की गयी परिचर्चा और दिये गए कार्य का पता लगाना अथवा फॉलोअप बहुत अनिवार्य है; शिक्षकों को छात्रों में विकसित आदतों-कौशलों व मूल्यों का पता लगाना होगा, क्योंकि वे वैकल्पिक दृष्टिकोणों का उपयोग करके शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं। **(viii) सराहना :** आवश्यक है कि प्रत्येक कार्य पूर्ण होने पर शिक्षक बच्चों की प्रशंसा संदेश भेजकर अथवा उन्हें फोन करके उनकी सराहना करें।[6] कुमार [7] (2011) ने ई-अधिगम के प्रति उच्च शिक्षा में अध्यापनरत शिक्षकों के दृष्टिकोण का अध्ययन किया तथा निष्कर्ष के रूप में पाया कि तकनीकी रूप से सक्षम एवं अक्षम शिक्षकों में ई-अधिगम के प्रति दृष्टिकोण में सार्थक अन्तर है। प्रस्तुत अध्ययन में ऑनलाइन शिक्षा प्रोग्राम प्रज्ञाता दिशा-निर्देश के प्रति शिक्षकों के दृष्टिकोण का अध्ययन किया जा रहा है।

अध्ययन का उद्देश्य : प्रस्तुत अध्ययन में निम्नलिखित उद्देश्य निर्धारित किए गए हैं -

1. वित्तपोषित एवं स्ववित्तपोषित विद्यालय के शिक्षकों का प्रज्ञाता दिशा-निर्देश के प्रति दृष्टिकोण का अध्ययन करना।
2. ग्रामीण एवं शहरी विद्यालय के शिक्षकों का प्रज्ञाता दिशा-निर्देश के प्रति दृष्टिकोण का अध्ययन करना।

सहायक उद्देश्य –

1. वित्तपोषित एवं स्ववित्तपोषित विद्यालय के शिक्षकों का प्रज्ञाता दिशा–निर्देश के प्रति दृष्टिकोण की तुलना करना।
2. ग्रामीण एवं शहरी विद्यालय के शिक्षकों का प्रज्ञाता दिशा–निर्देश के प्रति दृष्टिकोण की तुलना करना।

परिकल्पना : सहायक उद्देश्य की प्राप्ति हेतु निम्नलिखित परिकल्पना बनाई गयी है–

1. वित्तपोषित एवं स्ववित्तपोषित विद्यालय के शिक्षकों का प्रज्ञाता दिशा–निर्देश के प्रति दृष्टिकोण में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
2. ग्रामीण एवं शहरी विद्यालय के शिक्षकों का प्रज्ञाता दिशा–निर्देश के प्रति दृष्टिकोण में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

शोध प्रविधि :

शोध विधि – प्रस्तुत अध्ययन में वर्णनात्मक अनुसंधान की सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है।

समष्टि एवं न्यादर्श – वर्तमान अध्ययन हेतु प्रयागराज जनपद के 100 माध्यमिक स्तर (सीनियर सेकेण्ड्री) के शिक्षकों को समष्टि में शामिल किया गया है। न्यादर्श के रूप में प्रयागराज शहरी क्षेत्र के तीन वित्तपोषित विद्यालयों, यथा–कर्नलगंज इण्टरमीडिएट कॉलेज, के0पी0 इण्टरमीडिएट कॉलेज एवं आर्य कन्या इण्टरमीडिएट कॉलेज से 23 शिक्षकों एवं तीन स्ववित्तपोषित विद्यालयों यथा–रानी रेवती देवी इण्टरमीडिएट कॉलेज, माधव ज्ञान केन्द्र इण्टरमीडिएट कॉलेज एवं बाल विद्या मन्दिर इण्टरमीडिएट कॉलेज, प्रयागराज से 27 शिक्षकों तथा प्रयागराज ग्रामीण क्षेत्र के तीन वित्तपोषित विद्यालयों यथा–गोपाल विद्यालय इण्टरमीडिएट कॉलेज, सरदार पटेल इण्टरमीडिएट कॉलेज एवं गोस्वामी तुलसीदास कृषक इण्टरमीडिएट कॉलेज, कोराँव, प्रयागराज से 28 शिक्षकों और तीन स्ववित्तपोषित विद्यालयों यथा–रमा निवास इण्टरमीडिएट कॉलेज, कोराँव, मनबोध बालिका इण्टरमीडिएट कॉलेज, कोराँव तथा आद्या प्रसाद इण्टरमीडिएट कॉलेज, कोराँव, प्रयागराज से 22 शिक्षकों का चयन यादृच्छिक न्यादर्श विधि से किया गया है।

उपकरण – अध्ययन हेतु आँकड़ों के संग्रहण के लिए स्वनिर्मित प्रज्ञाता दिशा–निर्देश के प्रति शिक्षक दृष्टिकोण मापनी का प्रयोग किया गया है।

प्रयुक्त सांख्यिकी – प्रज्ञाता दिशा–निर्देश के प्रति शिक्षकों के दृष्टिकोण के अध्ययन करने के लिए प्रतिशत विश्लेषण एवं शिक्षकों का प्रज्ञाता दिशा–निर्देशन के प्रति दृष्टिकोण की तुलना हेतु टी–परीक्षण का प्रयोग किया गया है।

आँकड़ों का विश्लेषण एवं व्याख्या :

सारणी सं.–1

प्रज्ञाता दिशा–निर्देश के प्रति वित्तपोषित एवं स्ववित्तपोषित शिक्षकों के दृष्टिकोण का प्रतिशत विश्लेषण

क्र. सं.	कथन	वित्तपोषित/ स्ववित्तपोषित	N=100		
			सहमत	अनिर्णय	असहमत
1.	प्रज्ञाता दिशा–निर्देश ऑनलाइन/डिजिटल शिक्षा के तरीके सुनिश्चित करता है।	वित्तपोषित	96	2	2
		स्ववित्तपोषित	88	2	10
2.	प्रज्ञाता दिशा–निर्देश विद्यार्थियों के दृष्टिकोण से विकसित किया गया है।	वित्तपोषित	84	6	10
		स्ववित्तपोषित	74	16	10
3.	प्रज्ञाता दिशा–निर्देश में बच्चों के सम्पूर्ण विकास को ध्यान में रखते हुए डिजिटल शिक्षा का क्रियान्वयन किया गया है।	वित्तपोषित	82	12	6
		स्ववित्तपोषित	60	28	12
4.	प्रज्ञाता दिशा–निर्देश शाला प्रमुखों, शिक्षकों, विद्यार्थियों एवं अभिभावकों के लिए दिशा–निर्देश सुनिश्चित करता है।	वित्तपोषित	80	10	10
		स्ववित्तपोषित	54	40	6

5.	प्रज्ञाता दिशा-निर्देश शिक्षण में साइबर सुरक्षा एवं निजता की नीतियों को ध्यान में रखा गया है।	वित्तपोषित	66	28	6
		स्ववित्तपोषित	60	22	18
6.	प्रज्ञाता दिशा-निर्देश शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में सहायक है।	वित्तपोषित	82	14	4
		स्ववित्तपोषित	88	8	4
7.	प्रज्ञाता दिशा-निर्देश विद्यार्थियों के लिए ऑनलाइन अधिगम योजना प्रारूप तैयार करती है।	वित्तपोषित	86	10	4
		स्ववित्तपोषित	74	24	2
8.	प्रज्ञाता दिशा-निर्देश शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को प्रभावित करता है।	वित्तपोषित	72	18	10
		स्ववित्तपोषित	42	42	16
9.	प्रज्ञाता दिशा-निर्देश छात्रों के अधिगम को प्रभावित करता है।	वित्तपोषित	76	16	8
		स्ववित्तपोषित	46	34	20
10.	अध्यापक प्रज्ञाता दिशा-निर्देश के पालन में समर्थ है।	वित्तपोषित	64	24	12
		स्ववित्तपोषित	66	20	14
11.	प्रज्ञाता दिशा-निर्देश विद्यार्थियों में सामंजस्य स्थापित करने में सहायक है।	वित्तपोषित	64	28	8
		स्ववित्तपोषित	48	36	16
12.	प्रज्ञाता दिशा-निर्देश अध्यापक योजना और शिक्षण-प्रक्रिया में सामंजस्य स्थापित कर पाता है।	वित्तपोषित	62	26	12
		स्ववित्तपोषित	56	22	22
13.	प्रज्ञाता दिशा-निर्देश के आने से ऑनलाइन शिक्षा व्यवस्था की गुणवत्ता में सुधार हो रहा है।	वित्तपोषित	82	16	02
		स्ववित्तपोषित	58	26	16
14.	प्रज्ञाता दिशा-निर्देश से विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के ऑनलाइन अधिगम में सहयोग को बढ़ावा मिलेगा।	वित्तपोषित	68	24	08
		स्ववित्तपोषित	64	20	16
15.	प्रज्ञाता दिशा-निर्देश में रोजगार पहलुओं पर ध्यान दिया गया है।	वित्तपोषित	50	36	14
		स्ववित्तपोषित	32	54	14
16.	ऑनलाइन शिक्षा के लिए राज्यों को अपने अनुसार दिशा-निर्देश निर्धारित करने की पूर्ण स्वतंत्रता है।	वित्तपोषित	66	24	10
		स्ववित्तपोषित	72	22	06
17.	प्रज्ञाता दिशा-निर्देश शिक्षा के लिए डिजिटल संसाधन सुनिश्चित करता है।	वित्तपोषित	80	18	02
		स्ववित्तपोषित	72	12	16
18.	पीएम ई-विद्या योजना के अन्तर्गत डिजिटल/ ऑनलाइन शिक्षा के बहु-अधिगम विकसित किये गये हैं।	वित्तपोषित	88	06	06
		स्ववित्तपोषित	78	20	02
19.	प्रज्ञाता दिशा-निर्देश डिजिटल शिक्षा और शिक्षक प्रशिक्षण के लिए राष्ट्रीय पहल को बढ़ाना है।	वित्तपोषित	82	14	04
		स्ववित्तपोषित	82	08	10
20.	आप प्रज्ञाता दिशा-निर्देश में शारीरिक, मानसिक और कल्याण आदि विषयों में सतर्कता बरतने के पक्ष में है।	वित्तपोषित	76	18	06
		स्ववित्तपोषित	68	22	10

सारणी-1 के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि 96% वित्तपोषित एवं 88% स्ववित्तपोषित शिक्षक इस कथन से सहमत हैं कि प्रज्ञाता दिशा-निर्देश ऑनलाइन/डिजिटल शिक्षा के तरीके सुनिश्चित करता है; 84% वित्तपोषित एवं 74% स्ववित्तपोषित शिक्षक इस कथन से सहमत हैं कि प्रज्ञाता दिशा-निर्देश विद्यार्थियों के दृष्टिकोण से विकसित किया गया है; 82% वित्तपोषित एवं 60: स्ववित्तपोषित शिक्षक इस बात से सहमत हैं कि प्रज्ञाता दिशा-निर्देश में बच्चों के सम्पूर्ण विकास को ध्यान में रखते हुए डिजिटल शिक्षा का क्रियान्वयन किया गया है; 80% वित्तपोषित एवं 54% स्ववित्तपोषित शिक्षक इस कथन से सहमत हैं कि प्रज्ञाता दिशा-निर्देश शाला प्रमुखों, शिक्षकों, विद्यार्थियों एवं अभिभावकों के लिए दिशा-निर्देश सुनिश्चित करता है; 66% वित्तपोषित एवं 60% स्ववित्तपोषित शिक्षक इस कथन से सहमत हैं कि प्रज्ञाता दिशा-निर्देश शिक्षक में साइबर सुरक्षा एवं निजता की नीतियों को ध्यान में रखा गया है; 82% वित्तपोषित एवं 88% स्ववित्तपोषित शिक्षक इस कथन से सहमत हैं कि प्रज्ञाता दिशा-निर्देश शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में सहायक है; 86% वित्तपोषित एवं 74% स्ववित्तपोषित शिक्षक इस कथन से सहमत हैं कि प्रज्ञाता दिशा-निर्देश विद्यार्थियों के लिए ऑनलाइन अधिगम योजना प्रारूप तैयार करती है; 72% वित्तपोषित एवं 42% स्ववित्तपोषित शिक्षक इस कथन से सहमत हैं कि प्रज्ञाता दिशा-निर्देश शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया को प्रभावित करता है; 76% वित्तपोषित एवं 46% स्ववित्तपोषित शिक्षक इस कथन से सहमत हैं कि प्रज्ञाता दिशा-निर्देश छात्रों के अधिगम को प्रभावित करता है; 64% वित्तपोषित एवं 66% स्ववित्तपोषित शिक्षक इस कथन से सहमत हैं कि अध्यापक प्रज्ञाता दिशा-निर्देश के पालन में समर्थ हैं; 64% वित्तपोषित एवं 48% स्ववित्तपोषित शिक्षक इस कथन से सहमत हैं कि प्रज्ञाता दिशा-निर्देश विद्यार्थियों में सामंजस्य स्थापित करने में सहायक है; 62% वित्तपोषित एवं 56% स्ववित्तपोषित शिक्षक इस कथन से सहमत हैं कि प्रज्ञाता दिशा-निर्देश अध्यापक योजना और शिक्षण प्रक्रिया में सामंजस्य स्थापित कर पाता है; 82% वित्तपोषित एवं 58% स्ववित्तपोषित शिक्षक इस कथन से सहमत हैं कि प्रज्ञाता दिशा-निर्देशन के आने से ऑनलाइन शिक्षा व्यवस्था की गुणवत्ता में सुधार हो रहा है; 68% वित्तपोषित एवं 64% स्ववित्तपोषित शिक्षक इस कथन से सहमत हैं कि प्रज्ञाता दिशा-निर्देश से विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के ऑनलाइन अधिगम में सहयोग को बढ़ावा मिलेगा; 50% वित्तपोषित एवं 32% स्ववित्तपोषित शिक्षक इस कथन से सहमत हैं कि प्रज्ञाता दिशा-निर्देशन में रोजगार पहलुओं पर ध्यान दिया गया है; 66% वित्तपोषित एवं 72% स्ववित्तपोषित शिक्षक इस कथन से सहमत हैं कि ऑनलाइन शिक्षा के लिए राज्यों को अपने अनुसार दिशा-निर्देश निर्धारित करने की पूर्ण स्वतंत्रता है; 80% वित्तपोषित एवं 72% स्ववित्तपोषित शिक्षक इस कथन से सहमत हैं कि प्रज्ञाता दिशा-निर्देश शिक्षा के लिए डिजिटल संसाधन सुनिश्चित करता है; 88% वित्तपोषित एवं 78% स्ववित्तपोषित शिक्षक इस कथन से सहमत हैं कि पीएम ई-विद्या योजना के अन्तर्गत डिजिटल ऑनलाइन शिक्षा के बहु-अधिगम विकसित किये गये हैं; 82% वित्तपोषित एवं स्ववित्तपोषित, दोनों शिक्षक इस कथन से सहमत हैं कि प्रज्ञाता दिशा-निर्देश डिजिटल शिक्षा और शिक्षक-प्रशिक्षण के लिए राष्ट्रीय पहल को बढ़ाना है; तथा 76% वित्तपोषित एवं 68% स्ववित्तपोषित शिक्षक इस कथन से सहमत हैं कि आप प्रज्ञाता दिशा-निर्देश में शारीरिक, मानसिक एवं कल्याण आदि विषयों में सतर्कता बरतने के पक्ष में हैं।

सारणी सं.-2

प्रज्ञाता दिशा-निर्देश के प्रति ग्रामीण एवं शहरी शिक्षकों के दृष्टिकोण का प्रतिशत विश्लेषण

क्र. सं.	कथन	वित्तपोषित/ स्ववित्तपोषित	N=100		
			सहमत	अनिर्णय	असहमत
1.	प्रज्ञाता दिशा-निर्देश ऑनलाइन/डिजिटल शिक्षा के तरीके सुनिश्चित करता है।	ग्रामीण	90	02	08
		शहरी	92	02	06
2.	प्रज्ञाता दिशा-निर्देश विद्यार्थियों के दृष्टिकोण से विकसित किया गया है।	ग्रामीण	72	16	12
		शहरी	86	06	08
3.	प्रज्ञाता दिशा-निर्देश में बच्चों के सम्पूर्ण विकास को ध्यान में रखते हुए डिजिटल शिक्षा का क्रियान्वयन किया गया है।	ग्रामीण	68	16	16
		शहरी	74	24	02
4.	प्रज्ञाता दिशा-निर्देश शाला प्रमुखों, शिक्षकों, विद्यार्थियों एवं अभिभावकों के लिए दिशा-निर्देश सुनिश्चित करता है।	ग्रामीण	70	20	10
		शहरी	64	28	08
5.	प्रज्ञाता दिशा-निर्देश शिक्षण में साइबर सुरक्षा एवं निजता की नीतियों को ध्यान में रखा गया है।	ग्रामीण	52	32	16
		शहरी	74	18	08
6.	प्रज्ञाता दिशा-निर्देश शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में सहायक है।	ग्रामीण	82	14	04
		शहरी	88	08	04
7.	प्रज्ञाता दिशा-निर्देश विद्यार्थियों के लिए ऑनलाइन अधिगम योजना प्रारूप तैयार करती है।	ग्रामीण	76	18	06
		शहरी	84	14	02
8.	प्रज्ञाता दिशा-निर्देश शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को प्रभावित करता है।	ग्रामीण	62	24	14
		शहरी	52	36	12
9.	प्रज्ञाता दिशा-निर्देश छात्रों के अधिगम को प्रभावित करता है।	ग्रामीण	66	18	16
		शहरी	56	32	12
10.	अध्यापक प्रज्ञाता दिशा-निर्देश के पालन में समर्थ है।	ग्रामीण	52	28	20
		शहरी	78	16	06
11.	प्रज्ञाता दिशा-निर्देश विद्यार्थियों में सामंजस्य स्थापित करने में सहायक है।	ग्रामीण	60	20	20
		शहरी	46	50	04
12.	प्रज्ञाता दिशा-निर्देश अध्यापक योजना और शिक्षण-प्रक्रिया में सामंजस्य स्थापित कर पाता है।	ग्रामीण	48	30	22
		शहरी	70	18	12
13.	प्रज्ञाता दिशा-निर्देश के आने से ऑनलाइन शिक्षा व्यवस्था की गुणवत्ता में सुधार हो रहा है।	ग्रामीण	72	16	12
		शहरी	68	26	06

14. प्रज्ञाता दिशा-निर्देश से विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के ऑनलाइन अधिगम में सहयोग को बढ़ावा मिलेगा।	ग्रामीण	58	26	16
	शहरी	74	18	08
15. प्रज्ञाता दिशा-निर्देश में रोजगार पहलुओं पर ध्यान दिया गया है।	ग्रामीण	48	36	16
	शहरी	40	54	06
16. ऑनलाइन शिक्षा के लिए राज्यों को अपने अनुसार दिशा-निर्देश निर्धारित करने की पूर्ण स्वतंत्रता है।	ग्रामीण	72	18	10
	शहरी	66	28	06
17. प्रज्ञाता दिशा-निर्देश शिक्षा के लिए डिजिटल संसाधन सुनिश्चित करता है।	ग्रामीण	78	22	10
	शहरी	84	08	08
18. पीएम ई-विद्या योजना के अन्तर्गत डिजिटल/ऑनलाइन शिक्षा के बहु-अधिगम विकसित किये गये हैं।	ग्रामीण	82	12	06
	शहरी	84	14	02
19. प्रज्ञाता दिशा-निर्देश डिजिटल शिक्षा और शिक्षक प्रशिक्षण के लिए राष्ट्रीय पहल को बढ़ाना है।	ग्रामीण	74	18	08
	शहरी	90	04	06
20. आप प्रज्ञाता दिशा-निर्देश में शारीरिक, मानसिक और कल्याण आदि विषयों में सतर्कता बरतने के पक्ष में है।	ग्रामीण	64	18	18
	शहरी	80	16	04

सारणी-2 के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि 90% ग्रामीण एवं 92% शहरी शिक्षक इस कथन से सहमत हैं कि प्रज्ञाता दिशा-निर्देश ऑनलाइन/डिजिटल शिक्षा के तरीके सुनिश्चित करता है; 72% ग्रामीण एवं 86% शहरी शिक्षक इस कथन से सहमत हैं कि प्रज्ञाता दिशा-निर्देश विद्यार्थियों के दृष्टिकोण से विकसित किया गया है; 68% ग्रामीण एवं 74% शहरी शिक्षक इस बात से सहमत हैं कि प्रज्ञाता दिशा-निर्देश में बच्चों के सम्पूर्ण विकास को ध्यान में रखते हुए डिजिटल शिक्षा का क्रियान्वयन किया गया है; 70% ग्रामीण एवं 64% शहरी शिक्षक इस कथन से सहमत हैं कि प्रज्ञाता दिशा-निर्देश शाला प्रमुखों, शिक्षकों, विद्यार्थियों एवं अभिभावकों के लिए दिशा-निर्देश सुनिश्चित करता है; 52% ग्रामीण एवं 74% शहरी शिक्षक इस कथन से सहमत हैं कि प्रज्ञाता दिशा-निर्देश शिक्षक में साइबर सुरक्षा एवं निजता की नीतियों को ध्यान में रखा गया है; 82% ग्रामीण एवं 88% शहरी शिक्षक इस कथन से सहमत हैं कि प्रज्ञाता दिशा-निर्देश शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में सहायक है; 76% ग्रामीण एवं 84% शहरी शिक्षक इस कथन से सहमत हैं कि प्रज्ञाता दिशा-निर्देश विद्यार्थियों के लिए ऑनलाइन अधिगम योजना प्रारूप तैयार करती है; 62% ग्रामीण एवं 52% शहरी शिक्षक इस कथन से सहमत हैं कि प्रज्ञाता दिशा-निर्देश शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया को प्रभावित करता है; 66% ग्रामीण एवं 56% शहरी शिक्षक इस कथन से सहमत हैं कि प्रज्ञाता दिशा-निर्देश छात्रों के अधिगम को प्रभावित करता है; 52% ग्रामीण एवं 78% शहरी शिक्षक इस कथन से सहमत हैं कि अध्यापक प्रज्ञाता दिशा-निर्देश के पालन में समर्थ हैं; 60% ग्रामीण एवं 46% शहरी शिक्षक इस कथन से सहमत हैं कि प्रज्ञाता दिशा-निर्देश विद्यार्थियों में सामंजस्य स्थापित करने में सहायक है; 48% ग्रामीण एवं 70% शहरी शिक्षक इस कथन से सहमत हैं कि प्रज्ञाता दिशा-निर्देश अध्यापक योजना और शिक्षण प्रक्रिया में सामंजस्य स्थापित कर पाता है; 72% ग्रामीण एवं 68% शहरी शिक्षक इस कथन से सहमत हैं कि प्रज्ञाता दिशा-निर्देशन के आने से ऑनलाइन शिक्षा व्यवस्था

की गुणवत्ता में सुधार हो रहा है; 58% ग्रामीण एवं 74% शहरी शिक्षक इस कथन से सहमत हैं कि प्रज्ञाता दिशा-निर्देश से विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के ऑनलाइन अधिगम में सहयोग को बढ़ावा मिलेगा; 48% ग्रामीण एवं 40% शहरी शिक्षक इस कथन से सहमत हैं कि प्रज्ञाता दिशा-निर्देशन में रोजगार पहलुओं पर ध्यान दिया गया है; 72% ग्रामीण एवं 66% शहरी शिक्षक इस कथन से सहमत हैं कि ऑनलाइन शिक्षा के लिए राज्यों को अपने अनुसार दिशा-निर्देश निर्धारित करने की पूर्ण स्वतंत्रता है; 78% ग्रामीण एवं 84% शहरी शिक्षक इस कथन से सहमत हैं कि प्रज्ञाता दिशा-निर्देश शिक्षा के लिए डिजिटल संसाधन सुनिश्चित करता है; 82% ग्रामीण एवं 84% शहरी शिक्षक इस कथन से सहमत हैं कि पीएम ई-विद्या योजना के अन्तर्गत डिजिटल ऑनलाइन शिक्षा के बहु-अधिगम विकसित किये गये हैं; 74% ग्रामीण एवं 90: शहरी शिक्षक इस कथन से सहमत हैं कि प्रज्ञाता दिशा-निर्देश डिजिटल शिक्षा और शिक्षक-प्रशिक्षण के लिए राष्ट्रीय पहल को बढ़ाना है; तथा 64% ग्रामीण एवं 80% शहरी शिक्षक इस कथन से सहमत हैं कि आप प्रज्ञाता दिशा-निर्देश में शारीरिक, मानसिक एवं कल्याण आदि विषयों में सतर्कता बरतने के पक्ष में हैं।

सारणी संख्या-3

वित्तपोषित एवं स्ववित्तपोषित विद्यालय के शिक्षकों का प्रज्ञाता दिशा-निर्देश के प्रति दृष्टिकोण का मध्यमान, मानक विचलन एवं टी-अनुपात

समूह	**न्यादर्श (N)**	मध्यमान **(M)**	मानक विचलन **(SD)**	**t** = अनुपात
वित्तपोषित विद्यालय	51	38.46	6.32	2.90*
स्ववित्तपोषित विद्यालय	49	35.30	3.12	

* .01 स्तर पर सार्थक है।

सारणी-3 से स्पष्ट है कि वित्तपोषित एवं स्ववित्तपोषित विद्यालय के शिक्षकों का प्रज्ञाता दिशा-निर्देश के प्रति दृष्टिकोण में अन्तर की सार्थकता के लिए टी-अनुपात (=2.90) है, जो कि .01 सार्थकता स्तर पर सार्थक है। अत: शून्य परिकल्पना ''वित्तपोषित एवं स्ववित्तपोषित विद्यालय के शिक्षकों का प्रज्ञाता दिशा-निर्देश के प्रति दृष्टिकोण में कोई सार्थक अन्तर नहीं है'' अस्वीकृत की जाती है। अत: निष्कर्ष के रूप में यह कहा जा सकता है कि वित्तपोषित एवं स्ववित्तपोषित विद्यालय के शिक्षकों का प्रज्ञाता दिशा-निर्देश के प्रति दृष्टिकोण में सार्थक अन्तर है। इसका कारण यह हो सकता है कि वित्तपोषित एवं स्ववित्तपोषित शिक्षकों में डिजिटल शिक्षा एवं ऑनलाइन निर्देशन के प्रति एक समान जागरूकता नहीं है अर्थात् स्ववित्तपोषित विद्यालय के शिक्षकों की तुलना में वित्तपोषित विद्यालय के शिक्षकों में प्रज्ञाता दिशा-निर्देश के प्रति जागरूकता अधिक है।

सारणी संख्या-4

ग्रामीण एवं शहरी विद्यालय के शिक्षकों का प्रज्ञाता दिशा-निर्देश के प्रति दृष्टिकोण का मध्यमान, मानक विचलन एवं टी-अनुपात

समूह	**न्यादर्श (N)**	मध्यमान **(M)**	मानक विचलन **(SD)**	**t** = अनुपात
ग्रामीण विद्यालय	50	34.30	3.36	2.02**
शहरी विद्यालय	50	37.42	7.32	

* .05 स्तर पर सार्थक है।

सारणी-4 से स्पष्ट है कि ग्रामीण एवं शहरी विद्यालय के शिक्षकों का प्रज्ञाता दिशा-निर्देश के प्रति दृष्टिकोण में अन्तर की सार्थकता के लिए टी-अनुपात (=2.02) है जो कि .05 सार्थकता स्तर पर सार्थक है। अत: शून्य परिकल्पना ''ग्रामीण एवं शहरी विद्यालय के शिक्षकों का प्रज्ञाता दिशा-निर्देश के प्रति दृष्टिकोण में कोई सार्थक अन्तर नहीं है'' अस्वीकृत की जाती है। अत: निष्कर्ष के रूप में यह कहा जा सकता है कि ग्रामीण एवं शहरी विद्यालय के शिक्षकों का प्रज्ञाता दिशा-निर्देश के प्रति दृष्टिकोण में सार्थक अन्तर है। इसका कारण यह हो सकता है कि ग्रामीण एवं शहरी परिक्षेत्र के विद्यालयों में कार्यरत् शिक्षकों में आई.सी.टी. आधारित दिशा-निर्देशन देने में समानता नहीं होगी अर्थात् ग्रामीण विद्यालय के शिक्षकों की तुलना में शहरी विद्यालय के शिक्षकों में प्रज्ञाता दिशा-निर्देश के प्रति जागरूकता अधिक है।

निष्कर्ष :

प्रस्तुत अध्ययन में उपरोक्त व्याख्या से इस निष्कर्ष पर पहुँचा जा सकता है कि-

1. शहरी विद्यालय के शिक्षक ग्रामीण विद्यालय के शिक्षकों की अपेक्षा प्रज्ञाता दिशा-निर्देश के प्रति अधिक जागरूक हैं।
2. वित्तपोषित विद्यालय के शिक्षक, स्ववित्तपोषित विद्यालय के शिक्षकों की अपेक्षा अधिक प्रज्ञाता दिशा-निर्देश से संतुष्ट हैं।
3. वित्तपोषित विद्यालय के शिक्षक, स्ववित्तपोषित विद्यालय के शिक्षकों की अपेक्षा अच्छी तरह प्रज्ञाता गाइडलाइन का पालन करते हैं।
4. ज्यादातर शिक्षकों का मानना है कि प्रज्ञाता दिशा-निर्देश ऑनलाइन शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को प्रभावित करता है।
5. ज्यादातर शिक्षकों का मत है कि प्रज्ञाता दिशा-निर्देश डिजिटल शिक्षा और शिक्षक प्रशिक्षण के लिए राष्ट्रीय पहल है।
6. वित्तपोषित एवं स्ववित्तपोषित विद्यालय के शिक्षकों का प्रज्ञाता दिशा-निर्देश के प्रति दृष्टिकोण में सार्थक अन्तर है।
7. ग्रामीण एवं शहरी विद्यालय के शिक्षकों का प्रज्ञाता दिशा-निर्देश के प्रति दृष्टिकोण में सार्थक अन्तर है।

शैक्षिक निहितार्थ :

प्रस्तुत अध्ययन से प्राप्त परिणाम यह बताते हैं कि शिक्षकों को प्रज्ञाता दिशा-निर्देश के प्रति जानकारी रखना एवं उसका पालन करना अति आवश्यक है। इसके अभाव में शैक्षिक प्रक्रिया में बाधा उत्पन्न होगी एवं शिक्षण अधिगम प्रक्रिया प्रभावशाली नहीं होगी। प्रज्ञाता दिशा-निर्देश के जारी होने से ऑनलाइन कक्षा शिक्षण में जो शिक्षक व छात्र शिक्षण प्रक्रिया में रूचि लेते हैं, उसके परिणामस्वरूप शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार होना प्रतीत होता है। प्रज्ञाता दिशा-निर्देश के द्वारा शिक्षक छात्रों को तकनीकी रूप से मजबूत बनाने का प्रयास करते हैं, जिससे विद्यार्थियों का उच्च शैक्षिक उन्नयन हो सकेगा। विद्यार्थियों एवं अभिभावकों के साथ शिक्षक ई-विषय वस्तु साझा करके, उनका मार्गदर्शन कर सकते हैं कि घर में उपलब्ध उपकरणों के माध्यम से विषयवस्तु का प्रयोग करके विद्यार्थी सीख सकें। ❑

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. www.education.gov.in
2. www.patrika.com
3. https://ncert.nic.in
4. www.sansar lochan.in
5. www.readly.com
6. https://shodhganga.inflibnet.ac.in
7. कुमार, के.आर.- इन सन्दीप कुमार (2022). ऑनलाइन डिजिटल शिक्षा प्रोग्राम प्रज्ञाता दिशा-निर्देश के प्रति शिक्षकों के दृष्टिकोण का अध्ययन। लघु शोध प्रबंध, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद, (2011)

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

आलेख

'ढिबरी टाइट' कहानी संग्रह में अभिव्यक्त समाज के विभिन्न स्वरूप

पूर्णिमा सिंह

सहायक अध्यापिका
हिंदी विभाग
के.सी. दास कॉमर्स कॉलेज
गुवाहाटी
8638611129
purnimaraisingh@gmail.com

शोध सार :

प्रवासी साहित्य आज भी चर्चा का विषय बना हुआ। तेजेन्द्र शर्मा प्रवासी साहित्य के एक प्रमुख हस्ताक्षर हैं। उन्होंने साहित्य की अन्य विधाओं में भी अपनी कलम चलाई है, लेकिन मूलत: वे एक कहानीकार हैं। 'स्मृतियों के घेरे में' तेजेन्द्र शर्मा की प्रमुख पुस्तक है। इसके अतंर्गत तीन संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। इन्हीं में से एक संग्रह है 'ढिबरी टाइट'। इसका प्रकाशन 1994 में हुआ। इस संग्रह में तेजेन्द्र शर्मा की दस कहानियाँ हैं। इन सभी कहानियों में मानवनीय संवेदना, शोषण, अकेलापन इत्यादि विषयों का वर्णन है। इस संग्रह का प्रकाशन उनके विदेश जाने से पूर्व हो गया था। सभी कहानियाँ स्वदेश में लिखी गई हैं, परंतु अधिकतर कहानियों में विदेश की बातें और वहाँ बसे भारतीयों के दर्द को दर्शाया गया है। उनकी इन कहानियों में भारतीय संस्कृति की तस्वीर झलकती है। साथ ही एयर इंडिया में कार्य करते विदेश में रह रहे भारतीयों के दर्द को लेखक काफी करीब से देखते हैं और कुछ विषय उन्हें काफी प्रभावित करते हैं।

बीज शब्द :

दर्द, भाव, संस्कृति, मानवीय संवेदना, अकेलापन, विदेश, शोषण, लालच।

प्रस्तावना :

मानव जीवन का साहित्य से गहरा संबंध है। साहित्य के द्वारा मनुष्य के जीवन में जो कुछ घटित हो रहा है, वह सहजता से पता चल जाता है। साहित्य अनुभव के आधार पर रचित किया जाता है, जिनका आदान-प्रदान सहजता से हो जाता है। तेजेन्द्र जी का साहित्य उनके निजी अनुभव द्वारा रचित है। जो कुछ समाज में देखा उसे ही उन्होंने पाठक के साथ साझा करने का प्रयास किया है। विषय में यथार्थता है। इस संग्रह की कहानियों के नाम इस प्रकार हैं- ढिबरी टाइट, एक ही रंग, भँवर, नई दहलीज, नवयुग, सिलवटें, प्रश्न अनुतरित, धुंधली सुबह, दूसरे श्रवण का शिकार मुट्ठी भर रोशनी। तेजेन्द्र जी ने जो भी दृश्य देखा, उसे अपनी लेखनी द्वारा पाठकों तक पहुँचाया। जीवन में नित नए परिवर्तन आते रहे, उसके

साथ नए अनुभव भी जुड़ते गए। इसका मूल कारण उनकी नौकरी है, जो सदैव एक स्थान से दूसरे स्थान पर विचरण करने की थी। इस कारण उनके अनुभव कोश में नित नए अनुभव जुड़ते गए और वह कहानी बन कर पाठकों के सम्मुख पहुँचते रहे।

कथानक के आधार पर मानवीय संवेदनाओं का विश्लेषण :

इस संग्रह की प्रथम कहानी 'ढिबरी टाइट' है, जिसमें तेजेन्द्र जी ने एक संपन्न परिवार के नायक गुरमीत की मानसिक स्थिति एवं उसके साथ हुए हादसे का वर्णन किया है। आवश्यकता की सभी वस्तुएँ होने के बावजूद उसके मन में विदेश जाने की प्रबल इच्छा है। घर वालों के मना करने के बावजूद वह अपनी इच्छा को पूर्ण करने में सफल हो जाता है और कुवैत चला जाता है। कुछ दिन परिवार से दूर रहने के कारण उसे अकेलापन महसूस होने लगता है। पत्नी गर्भवती थी, दूसरी संतान की खुशी घर पर दस्तक दे रही थी। पत्नी गुरमीत से काम पर न जाने को कहती है। परंतु गुरमीत कुलवंत की बात को अनसुना कर चला जाता है। जिस बात का डर था, वही हो जाता है। विदेश में जाकर रहने वाले युवाओं की सबसे बड़ी समस्या भाषा की होती है। गुरमीत को भी इस भाषाई समस्या का सामना करना पड़ता है। कुवैत की अरबी भाषा गुरमीत को नहीं आती थी। भाषा न समझ आने के कारण कहानी के नायक गुरमीत को जिस त्रासदी का सामना करना पड़ता है, उसका लेखक ने बड़ा ही मार्मिक चित्र प्रस्तुत किया है। विदेश में रहने वाले अधिकतर युवाओं को इस दर्द से गुजरना पड़ता है। भाषा की अज्ञानता के कारण कितने ही परिवार तहस-नहस हो जाते हैं, उसकी पीड़ा को समझने में लोग असमर्थ रहते है। जीविकोपार्जन के लिए अधिकतर युवा विदेश जाने का निर्णय लेते हैं। ''हरामजादो! वह दहाड़ा, मैं तुम्हें जिंदा नहीं छोड़ूँगा। एक-एक को मार डालूँगा ...सबको चुन-चुनकर मर डालूँगा।[1] इसका असर जीवन पर ही नहीं पड़ता, बल्कि परिवार का हरेक व्यक्ति इससे प्रभावित होता है। इसका वर्णन तेजेन्द्र जी ने 'ढिबरी टाइट' कहानी में किया है। अपने दोस्त दिनेश की सहायता लेकर तेजेन्द्र जी ने गुरमीत की विदेश जाने की इच्छा को पूर्ण किया। गुरमीत की नौकरी कुवैत में लग गई। भाषा न समझने के कारण जो सजा मिलती है, उसका दर्दनाक दृश्य प्रस्तुत किया गया है। कुछ दिनों बाद दिनेश ने मुझे कुवैत बुलाया, पर नौकरी की विवशता के कारण पहुँचने में देरी हुई। पहुँचने के बाद जो देखा-उस जिंदादिल गुरमीत को एक जिंदा लाश बना देने के लिए किसे कसूरवार ठहराया जाए नियति को या ....। और मैं कुछ भी नहीं सोच पा रहा था; केवल गुरमीत की एक ही बात हथौड़े की तरह, बार-बार मेरे दिमाग में बजे जा रही थी....यहाँ की पुलिस बड़ी खराब है जी। इस घटना ने तेजेन्द्र जी को झकझोर डाला। अपनी आँखों के सामने हँसते-खेलते परिवार को भाषा की अज्ञानता के कारण तहस-नहस होते देखा। 'एक ही रंग' कहानी का नायक सुदर्शन नाई स्कूल के सामने फुटपाथ पर अपनी दुकान लगाकर जीविकोपार्जन चलाता है। इस कारण उसे कई प्रकार के कष्टों का सामना करना पड़ता है। इसी बीच सरकार द्वारा स्कूल की दीवार को उठाने का निर्णय लिया गया। अधिकतर लोग इस निर्णय से नाखुश थे, परंतु सुदर्शन नाई इस निर्णय से खुश था। उसकी समस्या का समाधान होने वाला था, परंतु मन में अनगिनत शंकाओं ने घर कर लिया था। एक नई समस्या सुदर्शन नाई के दिल पर दस्तक दे रही थी। उसे लगता था परिस्थितियाँ कभी भी विपरीत हो सकती हैं। इसलिए हर आने-जाने वाले लोगों से कहता है, आपके भरोसे दिन काट रहा हूँ, लालाजी जरा दया दृष्टि रखिएगा। राजनेताओं के किए हुए वादे उसकी दुकान को न बचा सके। नगर निगम वाले आकर उसके सपने को चकनाचूर कर देते हैं। उसने महसूस किया कि दीवार पर किया रंग, ढलते सूरज का रंग और उसके आँसुओं का रंग एक ही है। फुटपाथ पर जीविकोपार्जन चलाने वालों की त्रासदी का वर्णन किया गया है। आशा की किरण अति शीघ्र त्रासदी में बदल जाती है। सुदर्शन जैसे कितने ही ऐसे लोग हैं, जिन्हें इस प्रकार की त्रासदी का सामना करना पड़ता है। 'भँवर' कहानी का नायक भरत अपनी पत्नी और बच्चों के साथ खुशहाल जीवन व्यतीत करता है। बैंक में

प्रोबेशनरी ऑफिसर था, परंतु काम के प्रति कोई लगाव न था, विदेश जाने की इच्छा थी। अपनी नौकरी को कभी गंभीरता से नहीं लिया। मन में दादाजी की यह बात घर कर गई थी। भरत बेटा, मै एक ही बात कहता हूँ - अगर अमरीका नहीं देखा तो कुछ भी नहीं देखा। वहाँ की जिंदगी को शब्दों में नहीं बता सकते। स्वर्ग है स्वर्ग। भरत को एयर लाइन में फ्लाइट परसन की नौकरी मिल गई, परंतु पत्नी नहीं चाहती थी कि भरत इस नौकरी को करे। भरत के तर्क के आगे वह निरुतर हो जाती है। उसी दौरान भरत की मुलाकात रमा और इंदर से होती है। भरत रमा के प्रति आकर्षित होने लगता है। रमा का खिंचाव भी भरत के प्रति होता है, परंतु केवल अपनी जरूरत को पूरा करने के लिए। उस समय भरत रमा की इच्छा को नहीं समझ पाता, बस खींचा चला जाता है। रमा एक दिन भरत के सम्मुख यह प्रस्ताव रखती है, ''भरत मैंने तुमसे आज तक कभी कुछ नहीं माँगा, नहीं माँगा ना ....भरत मुझे एक चीज दे दो... बस एक ही चीज ... मुझे एक बच्चा दे दो ...अपना बच्चा ...अपनी निशानी ...मैं उसे अपनी जान से भी ज्यादा प्यार देकर पालूँगी।''[2] जो वस्तु पति देने में असमर्थ था, उसकी अपेक्षा वह अपने पति के दोस्त से करती है। इस भँवर में भरत फँस जाता है। सही और गलत का फैसला करने में समय गुजर जाता है। वह रमा के साथ एक रात गुजार लेता है। यह निर्णय उसे अंदर ही अंदर कोसते रहता है। इसके पश्चात रमा द्वारा कहा यह शब्द, ''एक बात याद रखना भरत, इसके बाद मुझे अपनी रखैल नहीं समझने लगना, न ही मुझे दोबारा होटल के कमरे में अकेले आने के लिए कहना। तुम चाहो भी तो इसे नहीं पाओगे। हमारे शरीर मिलेंगे तो केवल इसलिए कि मुझे तुम्हारा बच्चा चाहिए.... इसके बाद आपे संबंधों की प्रतिष्ठा बनाए रखना।... और हाँ, यह सब इस होटल में नहीं होगा ... यह होगा मेरे घर में। मैं इसे एक पाप की तरह नहीं करना चाहती। मैं अपने बच्चे के सामने अपराधी महसूस नहीं करना चाहती ... और मेरे घर में भी इंदर के बिस्तर पर नहीं ... एक अलग कमरे में ... एक अलग सजावट के साथ... एक विशेष काम... बोलो तुम्हें मंजूर हैं !''[3] यहाँ शहरी जीवन की समस्याओं का जीता जागता स्वरूप वर्णित हुआ है। रमा की इच्छा को समझने में भरत को काफी देर लग गई और वह गहरे भँवर में फँस गया, जिसके बारे में वह अपनी पत्नी को बताने में असमर्थ था। 'नई दहलीज' कहानी में लेखक ने बुजुर्गों की समस्या को समाज के सामने रखा है, साथ ही सांप्रदायिकता और आतंकवादी गतिविधियों का चित्रण किया है। बच्चे बड़े हो जाते हैं, तब माता-पिता के विचारों से उनके विचार मेल नहीं खाते और वे एक नई दहलीज की ओर कदम बढ़ाते है। परंतु बुजुर्गों को आए दिन किसी न किसी समस्या का सामना करना पड़ता है। कुछ समस्याओं का समाधान वह अकेले नहीं कर पाते। उनका स्वाभिमान मार्ग में बाधक बनता है। हरदीप अपने पिता के विचारों से परिचित था। हरदीप पिता के मना करने के बावजूद अर्चना से प्रेम विवाह कर लेता है। कुछ महीनों बाद हरदीप के पुत्र होने की खबर आती है। हरदीप की माँ की खुशी की सीमा नहीं रहती। परंतु डॉ. सोढ़ी अपने सिद्धांत के पक्के थे। हरदीप की माँ अपने को रोक नहीं पाई। वह बेटे-बहू से मिलने चली जाती हैं। परंतु हरदीप के पिता बेटे की दहलीज को बहुत पीछे छोड़ आए थे। वह अपने फैसले पर अटल रहे, पत्नी अपने पति की इस व्यथा को भलीभाँति समझ रही थी। जब रहा नहीं गया तब सोढ़ी जी की पत्नी ने अपने बेटे हरदीप को तार देकर बुलवाया। अचानक बेटे को अपने पास बैठा देखकर आश्चर्यचकित हो जाते हैं, ''दारजी मुझे सब पता लग गया है। बीबी ने मुझे तार देकर बुलवाया है। अर्चना ने खास तौर पर कहा है कि बिल्कुल फिक्र ना करें। कल ही हम सब दिल्ली जा रहे हैं। आपने मेरी दहलीज पर कदम नहीं रखना तो कोई बात नहीं। हम एक नया घर ले लेंगे। वह तो आपकी दहलीज होगी न। एक नई दहलीज। एक ऐसा संसार जहाँ नफरत, हिंसा और आतंकवाद के लिए कोई स्थान नहीं होगा।

वहाँ होगा सिर्फ प्यार, प्यार और प्यार!''[14] दारजी की समस्या का समाधान बेटा जिस सहजता से कर देता है, उसे सुनकर उनकी आँखों से आँसू निकल पड़ते हैं और बेटे को गले से लगा लेते हैं। जिस समस्या को लेकर वह इतने दिनों से जूझ रहे थे, उसका समाधान इतनी सहजता से हो जाएगा इस पर उन्हें विश्वास नहीं होता। परिवार सदैव एक-दूसरे की इच्छा की मान रखता है, आपसी मतभेद के कारण विवाह के बाद बेटा अपने पिता से दूर चला जाता है, परंतु उसके मन में पिता की जो तस्वीर रहती है, वह धूमिल नहीं होती, बल्कि उसी तरह संरक्षित रहती है जिस प्रकार रहनी चाहिए। यह लेखक नई दहलीज कहानी द्वारा दिखाना चाहते हैं। आधुनिकता से अधिक संस्कार को महत्व दिया गया है।'नवयुग' कहानी वर्तमान पीढ़ी की ज्वलंत समस्या को उजागर करती है। एक नए लेखक को अपनी लेखनी प्रकाशित करवाने के लिए जिन चुनौतियों क सामना करना पड़ता है, उस ओर लेखक ने पाठकों का ध्यान खींचा है। यह कहानी साहित्यिक समाज की विडंबनाओं को उजागर करती है, जिससे अधिकतर साहित्यकार पीड़ित होते हैं। जिन समस्याओं से वह जूझ रहा था, उसे दूर करने के लिए अपने परम मित्र का सहारा मिल गया, परंतु संपादक का कार्यभार संभालते ही कैलाशनाथ के विचार में जो परिवर्तन आया, उसको देखकर देवेश दंग रह गया और कैलाशनाथ को आईना दिखा देता है। ''कैलाशनाथ, तुम एक नए लेखक की व्यथा को समझने की कोशिश करो। वह बेचारा किन-किन पत्रिकाओं में कहानियाँ भेजता है और कहीं भी उसकी रचना छप नहीं पाती। वह बेचारा करे भी तो क्या? तुम्हें तो उसका ख्याल रखना चाहिए।''[15] अपनी परेशानी नई पीढ़ी को भयानक समस्या लगती है, परंतु उन्हीं समस्याओं से जब कोई अन्य व्यक्ति गुजरता है, तब उसका रवैया उपेक्षा से परिपूर्ण रहता हैं। इन्हीं समस्याओं की ओर ध्यान खींचने का प्रयास किया गया है। 'सिलवटें' कहानी में लेखक ने बलात्कार पीड़ित महिला को वर्णित किया है। पीड़िता की भावना और उसकी मानसिक अवस्था को समझना तो दूर, बल्कि उसको राय देने वाले अधिक निकल आते हैं। एक पढ़ी-लिखी प्रिंसिपल जोकि स्वयं एक स्त्री है, वह सारी बातें सुनने के बाद कहती है, ''सुलक्षणा, भूल जाओ तुम्हारे साथ कुछ भी हुआ है। हमारे समाज में जो भी लड़की विवाह से पहले कौमार्य खो बैठती है, उसकी ओर आँख भी उठाकर नहीं देखा जाता। अपनी प्रतिष्ठा के बारे में सोचो, अपने माँ-बाप के बारे में सोचो और फिर होस्टल और कॉलेज की भी तो बदनामी होगी ना!''[16] सुलक्षणा की सच्चाई जानने के बावजूद विजय विवाह के लिए सहमत हो जाता है। विवाह होने के बावजूद सुलक्षणा अपने जख्म को नहीं भूल पाती, एक पुत्र को जन्म देती है, जिसके प्रति उसके मन में वात्सलयता की जगह घृणा उत्पन्न होती है। सब कुछ जानते हुए भी मौन रहती है। यही बात विजय को अच्छी नहीं लगती। परंतु विजय नहीं जानता था कि सुलक्षणा अपने दोषी को जानती है। जब विजय को उसकी सच्चाई से अवगत कराती है, तब विजय के पैरों तले कि जमीन खिसक जाती है। जिस बैचेनी को वह इतने दिनों तक अपने अंदर रखती है, उसका एकाएक विजय के सम्मुख लाना लेखक की कला को दर्शाता है।'प्रश्न अनुत्तरित' कहानी में नायक दुष्यंत पत्नी की मृत्यु के बाद जिन कठिनाइयों से गुजरता है, उसके बाद बिन माँ के बच्चे को जिन कठिन परिस्थितियों से गुजरना पड़ता है-उसका वर्णन किया गया है। घर का एक स्तंभ जब कमजोर पड़ जाता है, तब अन्य स्तंभों पर भी गहरा प्रभाव पड़ता है। दुष्यंत और उसके पुत्र सोनू को काफी परेशानियों का सामना करना पड़ता है। दुष्यंत की पत्नी की मृत्यु के समय सोनू की उम्र छह साल की थी। सोनू को संभालने के लिए शोभा आ गई थी। सोनू की देखभाल का दायित्व घर वालों ने ले लिया। परंतु दुष्यंत के आँसू को पोंछने वाला कोई नहीं था। दुष्यंत मन ही मन सोचने लगा, ''नारी होने का भी कितना सुख है। जब जी चाहे रो लो, मन का उबाल ठंडा कर लो। पुरुष तो हर बात सहे फिर भी कुछ ना कह पाये।''[17] लेखक ने पुरुष की मनोदशा एवं व्यथा को प्रस्तुत किया है। 'धुंधली सुबह' कहानी की नायिका 'दिव्या' ऐसे व्यक्ति को अपना साथी बनाने का निर्णय लेती है, जिसको वह उसकी कविता के माध्यम से जानती है और अपना दिल उसे दे बैठती है। जब हकीकत से सामना होता है तो सारे सपने चकनाचूर हो जाते है।

आज की युवा पीढ़ी अपने जीवन के महत्वपूर्ण निर्णय लेने में इतनी शीघ्रता करती है, जिससे उन्हें अनगिनत कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। दिव्या अपने आलीशान घर को प्रभात के लिए छोड़ कर आ जाती है। जब हकीकत का सामना होता है, तब कुछ भी वह ठीक नहीं कर पाती। ''देखो दिव्या, सांत्वना मेरी मित्र है, मेरी प्रेरणा है, मुझसे बड़ी है, मेरी गाइड है। देखो, पत्नी, पत्नी होती है और प्रेरणा, प्रेरणा। दोनों को गडमड नहीं किया जाता।''[8] एक लेखक के जीवन की असलियत को लेखक ने समाज के सामने प्रस्तुत किया है, जिन सच्चाइयों से आम आदमी वंचित रहता है। वर्तमान परिस्थितियों में जिन कठिनाइयों का सामना एक बच्चा करता है, यही दिखाने का प्रयास 'दूसरे श्रवण' का शिकार कहानी में किया गया है। कहानी में नाजायज संतान होने के दर्द से लेखक रूबरू कराते हैं। नाजायज बच्चा जब इंसाफ की कामना करता है तो उसका क्या अंजाम होता है। उसने धमकी दी थी कि आपको अदालत में घसीट लेगा; आपका भंडा फोड़ देगा। आपका ... खून कर देगा ... उसने तो एक घटिया सी कहानी भी सुनाई थी। कह रहा था आपसे बदला जरूर लेगा। मुझे उसकी यह बात अच्छी नहीं लगी। तब दीवान साहब कहने लगे वह अपना अधिकार माँग रहा था। अपनी गलती को सुधारने के लिए मैं उसे घर ले आया, परंतु तुम्हारी माँ ने उसे नौकर बना कर रख दिया। मेरी गलती की सजा वह भुगत रहा है।'' ''अरे वह केवल अपना अधिकार ही तो माँग रहा था। उसने जो कुछ भी कहा, सब का सब सच था। वह तुम्हारा छोटा भाई था। ... घटिया उसकी कहानी नहीं... घटिया मैं खुद हूँ... मैं तो उसे बचपन में अपने घर पर भी ले आया था ... अपने पाप का प्रायश्चित करने ...पर तुम्हारी माँ ने उसे मेरे ही घर में ही मुंडु बनाकर रख दिया था। वह तो श्रवण की तरह मेरी सेवा कर गया ... तुमने दूसरे श्रवण का शिकार किया।''[9] इस तरह समाज में कितने ही श्रवण हैं, जो आए दिन अपने अधिकारों के लिए लड़ रहे हैं। लेखक ने इस समस्या की आर पाठकों का ध्यान खींचा हैं । 'मुट्ठी भर रोशनी' की नायिका सीमा। तेजेन्द्र जी द्वारा लिखित कहानी ने नारी के उस पहलू को प्रस्तुत किया है, जिसका अधिकतर वह सामना करती है, परंतु समाज के सामने व्यक्त करने में डरती है। और जब कोई उस पीड़िता के सामने आशा की किरण बनकर आता है, तब उस एक मुट्ठी भर रोशनी की तरफ उपेक्षा का भाव देखने को मिलता है।

निष्कर्ष :

अत: कह सकते हैं कि तेजेन्द्र जी के 'ढिबरी टाइट' संग्रह की दस कहानियाँ आधुनिक परिवेश के परिवर्तन से पाठकों को परिचित करवाती है। युवा पीढ़ी अच्छे रोजगार की तलाश में विदेश की ओर पलायन करती है, वहाँ जिस सत्य से उसका सामना होता है, वह बड़ा ही हृदय विदारक होता है। विदेश में होने वाली परेशानियों की ओर पाठकों का ध्यान खींचा है। उन कटु सत्यों से समाज का परिचय इस संग्रह की कहानियाँ करवाती हैं। विषयों की विविधता है, साथ ही कुछ ऐसे पहलू भी हैं, जिनके प्रति समाज की उदासीनता वर्तमान में भी देखने को मिलती है। ❑

संदर्भ सूची :

1. शर्मा तेजेंद्र, ढिबरी टाइट पृ -149
2. शर्मा तेजेंद्र, भँवर पृ -166
3. शर्मा तेजेन्द्र, भँवर पृ -166
4. शर्मा तेजेन्द्र, नई दहलीज 175
5. शर्मा तेजेन्द्र, नवयुग पृ -182
6. शर्मा तेजेन्द्र, सिलवटें पृ -185
7. शर्मा तेजेन्द्र, प्रश्न अनुत्तरित पृ -201
8. शर्मा तेजेन्द्र, धुंधली सुबह पृ -214
9. शर्मा तेजेन्द्र, दूसरे श्रवण का शिकार 224

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

आलेख

मतांतरण का बोध-विचार एवं व्यवहार

डॉ. कँवर चंद्रदीप सिंह
अध्यक्ष, इतिहास विभाग,
हिमाचल प्रदेश केंद्रीय
विश्वविद्यालय
हिमाचल प्रदेश

लकी शर्मा
असिस्टेंट प्रोफेसर
स्कूल ऑफ लॉ
आईएमएस यूनिसन यूनिवर्सिटी
देहरादून-248001, उत्तराखंड
91-8340284861
luckysharma02@gmail.com

शोध सार :

भारत में मतांतरण की घटना इसके दार्शनिक परिदृश्य की जटिलता में गहरा निहितार्थ रखती है। भारतीय दर्शन के क्षेत्र में, हिंदू धर्म, बौद्ध धर्म, जैन धर्म और सिख धर्म जैसी विभिन्न विचारधाराएँ विकसित हुई हैं, जिनमें से प्रत्येक अस्तित्व, नैतिकता और अंतिम वास्तविकता पर अलग-अलग दृष्टिकोण पेश करती हैं। मतांतरण की धारणा में अक्सर इन दार्शनिक प्रणालियों में से एक के पालन में बदलाव शामिल होता है, जो विश्वासों और सांस्कृतिक प्रभावों की एक गतिशील परस्पर क्रिया को दर्शाता है। इसके मूल में भारतीय दार्शनिक प्रवचन आध्यात्मिक विकास और सत्य की खोज पर जोर देता है। मतांतरण चाहे स्वैच्छिक हो या प्रेरित, अर्थ और सामाजिक गतिशीलता के लिए व्यक्तिगत खोजों से आकार लेने वाली एक परिवर्तनकारी यात्रा के रूप में देखा जा सकता है। कर्म, धर्म और मोक्ष के दार्शनिक आधार भारत में धार्मिक परिवर्तनों की सूक्ष्म समझ में योगदान करते हैं, जो उपमहाद्वीप के दार्शनिक आख्यानों में आध्यात्मिक अवधारणाओं और सांस्कृतिक विविधता की जटिल अंतर्संबंध को उजागर करते हैं। यह लेख इन विषयों का गहन परीक्षण करता है।

बीज शब्द :

ईश्वर, भारत, मतांतरण, सनातन, सभ्यता, हिंदू।

प्रस्तावना :

'...कथित मतांतरण के संबंध में संदर्भित विषय अगर तथ्यात्मक और सत्य पाया जाता है, तो यह एक बहुत ही गंभीर मुद्दा है, जो अंतत: राष्ट्र की सुरक्षा के साथ-साथ नागरिकों के मत और विवेक की स्वतंत्रता को प्रभावित कर सकता है...।' यह शब्द न्यायमूर्ति एम.आर. शाह और हिमा कोहली की एक खंडपीठ ने कहे, जब मतांतरण के संबंध में उनकी बेंच एडवोकेट अश्विनी उपाध्याय द्वारा दायर याचिका पर सुनवाई कर रही थी, जिसमें केंद्र और राज्यों को इस तरह के मतांतरण की जाँच के लिए कड़े कदम उठाने के निर्देश देने की माँग की गई थी।

मतांतरण अथवा मत परिवर्तन क्या है ? साधारण शब्दों में कहें तो मतांतरण दूसरों के बहिष्करण के लिए एक विशेष संप्रदाय के साथ पहचाने जाने वाले विश्वासों के एक समूह को अपनाना है। इस प्रकार 'मतीय या पंथिक रूपांतरण' एक संप्रदाय के पालन को छोड़ने और दूसरे के साथ संबद्धता के स्थापन का वर्णन करता है। मतांतरण आज सभी बहुल समाजों, विशेषकर भारत में एक विकट समस्या है। भारत में औपनिवेशिक काल से चली आ रही बौद्धिक बहसें मतांतरण से उत्पन्न समस्याओं को लेकर उलझी हुई हैं।

मत परिवर्तन विवादास्पद मुद्दा क्यों ? भारत में मत परिवर्तन की समस्या अत्यंत विवादास्पद और विघटनकारी हो गई है, क्योंकि इसने उन समस्याओं को जन्म दिया है, जो अस्तित्वगत प्रकृति की हैं। भारतीय समाज में अलग-अलग प्रकृति के सह-अस्तित्व के दो समूह मौजूद हैं : एक ओर हिंदू, बौद्ध, सिख और जैन परंपराएँ हैं (जो एक विशाल पेड़ की शाखाएँ हैं, जिन्हें व्यापक रूप से सनातन धर्म कहा जाता है); और दूसरी ओर इस्लाम, ईसाई और यहूदी जैसे सेमिटिक मत अथवा मजहब हैं। सनातन धर्म में उन सभी विशेषताओं का अभाव है, जो इसे ईसाई, इस्लाम और यहूदी मत को कट्टर और मतांतरण करने वाला बनाती हैं और इसे सनातन संस्कृति से पृथक करती हैं। जैसे की इन मतों में सिद्धांत का एक निश्चित निकाय होता है, एक गिरिजाघर संबंधी संगठन या केंद्रीय प्राधिकरण होता है तथा एक सर्वमान्य ग्रंथ होता है। दो विपरीत धाराओं में यह मौलिक अंतर ही द्वंद्व का विषय बन जाता है। भारत में मत परिवर्तन न ही कोई आधुनिक परिस्थितियों की देन है या कोई आधुनिक घटनाचक्र है। मत परिवर्तन करवाने की प्रवृत्ति सभ्यताई दृष्टिकोण से भारत से जुड़ी हुई नहीं है, बल्कि इसका उद्भव ऐसे क्षेत्रों में हुआ है, जो यह मान कर चलते हैं कि प्रत्येक संस्कृति का एक एकीकृत मत अथवा मजहब होता है। सेमिटिक मतावलंबी यह बात समझने में असमर्थ थे कि भारत जैसे देश में मजहब के स्थान पर परंपराएँ हैं और इसी असमर्थता ने उन्हें भारत को ठीक से समझने नहीं दिया। मत सुधार आंदोलन (जो यूरोप में हो चूका था) ने 19वीं शताब्दी के ब्रिटिश मिशनरियों और औपनिवेशिक अधिकारियों द्वारा भारतीय परंपराओं का वर्णन करने के तरीके को निर्धारित किया। इसने मत और मूर्ति पूजा की उनकी धारणाओं और भारत के लोगों को सच्चे मत में परिवर्तित करने की आवश्यकता के लिए सुस्पष्ट रूपरेखा प्रदान की। 'मूर्ति पूजा' उनके अनुसार ऐसी कोई भी प्रथा थी, जिसे एक मानव छल रचना के रूप में पहचाना जाता था और जो स्वयं को ईश्वर में विश्वास रखने के लिए आवश्यक रूप से प्रस्तुत करती थी। ब्रिटिश मिशनरियों और अधिकारियों ने स्पष्ट रूप से 'हिंदुओं' की परंपराओं को अंधविश्वास से भरे 'झूठे धर्म' के रूप में और दुष्ट ब्राह्मण पुजारियों के झूठे समारोहों में लिप्त होने और एक अत्याचारी 'जाति-व्यवस्था' की स्थापना के रूप में प्रतिपादित किया। इस प्रकार सामान्य रूप में, कैथोलिक चर्च और समाज की सुधार की ईसाई अवधारणा ने भारतीय संस्कृति और समाज को समझने के लिए एक नमूने के रूप में कार्य किया। सच्चे ईश्वर और मत में परिवर्तन की आवश्यकता उन्हें भारत में स्पष्ट रूप से अनुभव होने लगी।[1]

1813 के अपने चार्टर अधिनियम के बाद ईसाई मिशनरियों, औपनिवेशिक अधिकारियों और प्राच्यविद विद्वानों ने प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष साधनों का उपयोग करके मतांतरण के उद्देश्य से अभूतपूर्व स्तर पर काम किया। उस काल में भी (19वीं सदी) में भारतीयों ने मतांतरण के विरुद्ध तीव्र प्रतिक्रिया देना आरंभ किया। यूरोपीय लोगों ने ईसाई मत में सन्निहित स्व-स्पष्ट मजहबी शब्दों का उपयोग करते हुए भारतीय परंपराओं को घेरना आरंभ किय। यह शब्द थे- मूर्तिपूजा, अंधविश्वास, त्रुटि, बुतपरस्त, देवता, पुजारी, मत, पूजा, आदि। मिशनरी 'मूर्तिपूजा और अंधविश्वास' की भूमि को ईसाइयत के सच्चे विश्वास में परिवर्तित करना चाहते थे। प्राच्यविदों और उपनिवेशवादियों ने सावधानी बरतते हुए यह दिखाने का प्रयास किया कि भारतीय ग्रंथ (प्रमुख रूप से वेद, उपनिषद, महाकाव्य और पुराण) मानव मूल के हैं। चूँकि यह अनैतिक देवताओं के साथ संबंधित हैं इसलिए

वे असंगत, गलत, और एक प्रकार से झूठे हैं। सभी प्रमुख भारतीय ग्रंथों और विशेष रूप से वेदों की दिव्य उत्पत्ति के 'वैज्ञानिक', 'तथ्यात्मक' या 'अनुभवजन्य' प्रमाण की माँग कर इन ग्रंथों पर भारतीयों के विश्वास को भंग करने के प्रयास आरंभ कर दिए गए। यह ईसाई विश्वासों की सच्चाई को देखने और स्वीकार करने के लिए एक उपजाऊ मिट्टी तैयार करने की प्रक्रिया का हिस्सा था। हिंदुओं को या तो अपनी प्रथाओं, विश्वासों और परंपराओं में सुधार करने की आवश्यकता है, ऐसा विश्वास दिलवाने का प्रयास किया जाने लगा या उन्हें अपना धर्म को त्याग कर ईसाई मत में परिवर्तित होने के लिए प्रेरित किया गया।[2]

उपनिवेशिक शासन, जिस पर मिशनरियों का व्यापक प्रभाव था, ने भारतीय संस्कृति एवं समाज में सुधार करने के लिए 'पंथनिरपेक्ष' शिक्षा के प्रसार के अपने कर्तव्य को उचित ठहराया। यहाँ तक कि वे अंग्रेज भी जो प्रोटेस्टेंट मत या ईसाइयत के प्रति अधिक आस्थावान नहीं थे, उन्होंने भी एक ऐसे ढाँचे को अपनाया, जिसने भारतीयों को अभावग्रस्त, अनैतिक और भ्रष्ट लोगों के रूप में बदल दिया, जिन्हें सुधार, शिक्षा और सभ्यता की आवश्यकता थी। इस प्रेरणा में योजनाबद्ध रूप से चालाकी, धूर्तता और राजनीतिक शक्ति का सम्मिश्रण किया गया थ। हिंदू धर्म से जुड़ी हुई इसकी संस्कृति की बुराइयों पर केंद्रित करने वाली एक शक्तिशाली शिक्षा नीति के बावजूद ईसाई मत में मतांतरण किसी महत्वपूर्ण पैमाने पर नहीं हुआ। यह भारत की सांस्कृतिक दृढ़ता का प्रमाण था। हालाँकि, क्रमिक पैमाने पर अन्य तरीके भी अपनाए जा रहे थे, जो भारतीय परंपराओं तक पहुँचने का अनिवार्य रूप से एक और विकल्प था। यह विकल्प ग्रंथों की आलोचना और व्याख्या; उन ग्रंथों में ऐतिहासिक साक्ष्यों की खोज; अंधविश्वाास को प्रतिस्थापित करने वाले वैज्ञानिक दृष्टिकोण की आवश्यकता पर बल इत्यादि से भारतीयों (हिंदुओं) के सांस्कृतिक मनोबल को तोड़ने का प्रयास था। औपनिवेशिक काल में समाज सुधारकों के अतिरिक्त भारतीय स्वतंत्रता सेनानियों नें भी ईसाई मिशनरियों की मतांतरण की गतिविधियों की आलोचना की। ब्रिटिश सरकार द्वारा उन्हें जो संरक्षण दिया जा रहा था, वह उसके भी विरोधी थे। स्वामी विवेकानंद मतांतरण को पाप और दुष्टता भरा प्रयास समझते थे। घर-वापसी का पूर्ण समर्थन करते हुए उन्होंने प्रबुद्ध भारत के संपादक को साक्षात्कार देते हुए कहा था कि ईसाई और इस्लाम

मत में परिवर्तित किए गए लोगों को हिंदू धर्म में वापस लाने की व्यवस्था की जानी चाहिए। अमेरिका की अपनी यात्राओं के दौरान भी उन्होंने वहाँ के जनमानस को संबोधित करते हुए भारत में ईसाई मिशनरियों द्वारा हिंदू संस्कृति और धर्म के विरुद्ध दुष्प्रचार करने की बात बताई और उनकी गतिविधियों की तीखी आलोचना की। मतांतरण के विषय पर श्री नारायण गुरु के शब्द भी ध्यान देने योग्य हैं। वैकोम में ऐतिहासिक मंदिर प्रवेश सत्याग्रह के बाद जब वर्कला में एक सम्मेलन में कुछ वक्ताओं ने इस बात पर जोर दिया कि मतांतरण ही जाति समस्या का एकमात्र समाधान है तो श्री नारायण गुरु ने कहा, ''आध्यात्मिक उत्थान के लिए स्वधर्म का त्याग करना आवश्यक नहीं है। मतांतरण के विचार का मूल ईर्ष्या में है। एक बार जब यह समझ में आ गया कि ईर्ष्या अहंकार है या अहंकार का परिणाम है तो मतांतरण का उत्साह समाप्त हो जाएगा। सनातन धर्म सर्वोच्च है।''[3]

मोहनदास करमचंद गांधी का नाम भी मतांतरण की प्रवृत्ति का विरोध करने वालों में उल्लेखनीय है। गांधी, हालाँकि मानवतावादी मिशनरी कार्यों की सराहना करते थे, परंतु मतांतरण के विरुद्ध वह बड़े स्तर पर और दृढ़ता से बोलते थे। गांधी ने मत परिवर्तन पर बहुत कड़े विचार रखे हैं, जिन्हें स्मरण करने की आवश्यकता है और विशेष रूप पंथनिरपेक्षता के उन पुरोधाओं को जो गांधी की आड़ में सनातन को लाँछित करते हैं। हरिजन, 30 जनवरी, 1937 के अपने लेख में वह कहते हैं कि, ''मतांतरण शांति में बाधा है।'' हरिजन 3 जून, 1937 में इसी प्रकार वह कहते हैं कि– ''मुझे आपको ईसाई मत से दूर करने और आपको हिंदू बनाने में कोई रुचि नहीं है, और मुझे ईसाई मत में परिवर्तित करने के लिए, यदि आपके पास कोई योजना है, तो में आपकी उन योजनाओं से खुश नहीं हूँ।'' वह मत परिवर्तन की आवश्यकता को नासमझी भरा मानते थे और उसमें घोर अविश्वास व्यक्त करते थे। गांधी नें सभी विश्वासों को समान रूप से सत्य माना, लेकिन उन्होंने ईसा मसीह को ईश्वर के इकलौते पुत्र के रूप में स्वीकार नहीं किया। गांधी ने सुझाव दिया और उनका यह दृढ़ विशवास था कि एक पूर्ण जीवन जीने के लिए व्यक्ति को अपने पूर्वजों के धर्म और तत्काल धार्मिक परिवेश को ही अपने आकर्षण का केंद्र रखना चाहिए। गांधी आगे कहते हैं कि दूसरे मतों से अच्छी बातों को ग्रहण किया जा सकता है, लेकिन दूसरे मत में परिवर्तन अनैतिकता है और अपने पूर्वजों के मत पर अनावश्यक शर्मिंदगी के बराबर है। कोई भी मत पूर्ण नहीं है और उसमें भीतर से सुधार लाना महत्वपूर्ण है।[4] ईसाई मत अथवा यह कहें कि सभी अब्राहमिक मतों के विषय में यह कहा जा सकता है की उनकी विश्वदृष्टि में हिंदू संस्कृति मत या रिलीजन की श्रेणी में नहीं आती है और इसलिए उनका परिवर्तन किया जा सकता है। विशेष रूप से ईसाइयत की बात करें तो ईसाई मत स्वयं को दो तरीकों से फैलाता है या वह स्वयं का 'सार्वभौमिकरण' करता है, पहला मतांतरण (या प्रत्यक्ष परिवर्तन) से; और दूसरा पंथनिरपेक्षता (सेकुलरिज्म) द्वारा जहाँ ईसाई मत अपने मजहबी विचारों को स्पष्ट रूप से 'गैर-मजहबी' रूपों में सामान्य करता है और सामाजिक दुनिया में 'पंथनिरपेक्ष' संस्थाओं के उद्भव की ओर ले जाता है। इस प्रकार आज की पश्चिमी संस्कृति ईसाइयत द्वारा पोषित की गई है।

'मतांतरण' एक मतीय तत्वविषयक शब्द है, जो किसी व्यक्ति या समूह के एक मतीय स्वीकारोक्ति या संप्रदाय से दूसरे में संक्रमण को दर्शाता है। अगले कदम के रूप में यह परिवर्तन की आंतरिक प्रक्रिया को संदर्भित करता है, जिससे आस्तिक एक सच्चा ईसाई बन जाता है। सच्चा ईसाई बनाने की यही तीव्र इच्छा ईसाई मिशनरियों को गैर-ईसाइयों को मतांतरित करने के लिए अनिवार्य प्रेरणा देती है। तो चाहे ईश्वर की इच्छा के रहस्योद्घाटन के रूप में या बाइबिल संपूर्ण मानवता के लिए प्रकट होनी चाहिए या फिर यीशु मसीह के द्वारा उद्धार का सुसमाचार सब लोगों तक पहुँचना चाहिए, यह सब मत परिवर्तन को तथा उसके लिए उठाए गए सभी धूर्ततापूर्ण कदमों को वैध ठहराते हैं। भारत के सांस्कृतिक बोध के संदर्भ में मूर्खतापूर्ण अनभिज्ञता ही सभी मत परिवर्तन करने वाली शक्तियों को मत परिवर्तन

के लिए दुष्टतापूर्ण साधनों के प्रयोग के लिए उकसाती है। भारत का बोध और उस बोध से युक्त यहाँ की सभ्यता अपनी संस्कृति में अनगिनत छोटे बड़े पंथ, मत, संप्रदाय इत्यादि लिए हुए है कि इसका किसी अन्य प्रकृति में परिवर्तित होना असंभव है। भारतीय संस्कृति, इतिहास और सभ्यता ब्रह्मांड की आकाशगंगा के सामान है, जिसमें असंख्य तारामंडल, ग्रह, नक्षत्र इत्यादि हैं। इस तारामंडल में से कोई एक दो ग्रह अथवा नक्षत्र परिवर्तित हो सकते हैं, लेकिन आकाशगंगा सदैव निर्बाध बहती रहती है। मत परिवर्तन पर होने वाली हर बहस जो ईसाई अथवा इस्लामिक दृष्टिकोण से की जाती है, वह भारत के परिप्रेक्ष्य में पूर्णतया असंगत है। भारतीय संदर्भ में हिंदू, जैन, सिख और बौद्ध परंपराओं के लिए प्रतिद्वंद्विता की धारणा बिल्कुल अलग है। इसलिए परस्पर अनन्य दृष्टिकोण (अब्राहमिक और सेक्युलर दृष्टिकोण) एक भारतीय समाज की विविधता को समुदायों की प्रतिद्वंद्विता के रूप में देखता है और जबकि दूसरा इसे परंपराओं के सह-अस्तित्व के रूप में देखता है। इस प्रकार मतांतरण विविधता की एक महत्वपूर्ण समस्या तभी बन जाता है, जब कोई विश्व को ईसाई और इस्लाम की विश्वदृष्टि से देखता है। इसलिए भारतीय संविधान के अनुच्छेद 25(1) में दिए गए मत अपनाने और उसके प्रचार के अधिकार को ईसाई मिशनरी, इस्लामिक प्रचारक और तथाकथित सेक्युलरवादी एक अलग दृष्टिकोण से देखते हैं। हालाँकि, भारतीय अदालतों ने अनुच्छेद 25 (1) की जो व्याख्या की है, उसमें इस बात से इनकार किया है कि यह अनुच्छेद लोगों को एक मत से दूसरे मत में परिवर्तित करने का कोई मौलिक अधिकार देता है। इसलिए एक पक्ष (ईसाई, मुस्लिम, और छद्म पंथनिरपेक्ष) का तर्क है कि मतांतरण पर प्रतिबंध लगाने वाला कोई भी राजकीय कानून असंवैधानिक है और ईसाई और मुस्लिम अल्पसंख्यकों के खिलाफ भेदभाव करता है। भारत बोध में विश्वास रखने वाले राष्ट्रवादी इस बात पर जोर देते हैं कि मतांतरण अपने आप में एक उल्लंघन है, क्योंकि इसमें बल, धोखाधड़ी या प्रलोभन के माध्यम से एक समुदाय और इसकी परंपराओं में आक्रामक घुसपैठ शामिल है। यह संस्कृति के साथ-साथ राष्ट्रीय सुरक्षा से जुड़ा हुआ भी है।[5]

भारतीय परंपराओं की मौलिक विशेषता मतभेदों के प्रति स्वीकार्यता है। भारतीय अथवा सनातन सांस्कृतिक परंपराओं को सेमिटिक मतों के साथ जोड़कर नहीं देखा जा सकता है, क्योंकि दोनों ही विपरीत धुरियाँ है। सेमिटिक मत अलगाव अथवा मतभिन्नता के प्रति पूर्ण रूप से असहिष्णु है और अलग दृष्टिकोण का इनमें कोई स्थान नहीं है। परंपराओं के विषय में सब से अच्छी बात यह होती है कि इनमें 'सत्य' की मान्यताओं जैसा कोई मूल अथवा बुनयादी विश्वास नहीं होता है। वे कुछ रूढ़िवादी भी हो सकते हैं, क्योंकि प्रथाएँ आम तौर पर समय के साथ अक्षुण्ण रहती हैं। हालाँकि इनमें यह सुंदरता होती है कि वे तर्क के बाद सुधारी या अस्वीकृत की जा सकती हैं, जो इनके लचीलेपन को दर्शाती है। देश, काल, परिस्थिति और व्यावहारिकता इनके अस्तित्व को निर्धारित करने का कार्य करते हैं। परंपराओं के बीच विचारों का प्रसार और वाद परंपराएँ भारतीय समाज का हिस्सा रहे हैं, लेकिन विचारों को मनवाने के लिए अथवा इनका खंडन करने के लिए सामूहिक मतांतरण या शारीरिक हिंसा की आवश्यकता हमारी संस्कृति का कभी भाग नहीं रहा। यह प्रवृत्ति सेमिटिक मतों ने भारत में पैदा की है, ऐसा ऐतिहासिक साक्ष्यों और परंपराओं के सामान्य अध्ययन से स्पष्ट हो जाता है। भारत, दुनिया के किसी भी अन्य हिस्से की तुलना में अधिक बहु-उप संस्कृतियों वाला देश है। ऐसा होने के बावजूद किसी भी अन्य संस्कृति की तुलना में यहाँ अधिक सद्भाव और शांति का वास रहा है। जब विदेशी मत भारत में आए तो वे यहाँ पहले से मौजूद एक अच्छी तरह से स्थापित हुई संस्कृति से मिले। उन विदेशी मतों को आत्मसात कर सकने की क्षमता भारत में थी। लेकिन यह मजहब 'मेरे एक सच्चे भगवान और आपके बहुत सारे झूठे भगवान' की विचारधारा के साथ आए थे। भारत में मतीय भेद और द्वेष का व्यावहारिक समाधान मतों को यहाँ की सनातन संस्कृति के साथ जोड़ कर पारंपरिक बनाना था ताकि वे मतांतरण जैसे दुष्टतापूर्ण कुप्रयासों को त्याग कर सांस्कृतिक समन्वयवाद के कुछ वास्तविक प्रयास करें।

भारत के समाज ने विदेशी संस्कृतियों को अपनाने और भारतीय संस्कृति के अनुकूल करने की विभिन्न मतों को यहाँ की सांस्कृतिक धारा में उनकी विश्वास प्रणाली को बरकरार रखते हुए विलय होने की अनुमति दी। लेकिन सदैव इसी अनुकूलन के विरुद्ध इस्लामी उलेमा वर्ग और ईसाई मिशनरी लड़ते आए हैं। यही सारे मतीय संघर्ष का मूल बनता रहा है।[6]

वर्तमान में मतांतरण के ऊपर जो अकादमिक बहस है और उस बहस में जो मत परिवर्तन के पक्ष में खड़े दिखते हैं, वह भारत को समझने की औपनिवेशिक विचारधारा से अभी तक बाहर नहीं आ पाए हैं। ऐसे ही मिलते-जुलते विचार मार्क्सवादी विचारकों द्वारा भी प्रतिपादित किए जाते हैं। भारतीय धर्म, संस्कृति और परंपराओं को समझने का उनके पास जो दृष्टिकोण है, वह दोषपूर्ण है, क्योंकि वह संस्कृति और परंपराओं की विरासत को मतीय और सांप्रादियक ढाँचे में ढाल कर देखते हैं। सनातन परंपराओं का यह मानना है कि 'मैं भी सही हूँ और आप भी सही हो या गलत नहीं हो', जबकि सेमिटिक परंपराएँ, यदि उन्हें परंपराएँ कहा भी जाए, कहती हैं कि 'केवल मैं ही सही हूँ और बाकी सब झूठ' है। इसी द्वंद्व को सुलझाने के लिए पंथनिरपेक्षता अथवा सेक्युलरिज्म जैसे छद्म विचार का सहारा लिया गया, जिसने भारतीयों की समझ को और भ्रम में डालने का कार्य किया। सेक्युलरिज्म नामक इसी राजनीतिक अव्यवस्था नें वर्तमान समय में मतांतरण करने वालों के लिए ढाल का कार्य किया है और सनातन मूल्यों का सर्वाधिक अहित किया है। कालांतर में इसके द्वारा हिंदुओं में लगातार अपनी संस्कृति और संस्थानों के प्रति अविश्वास और अपराधबोध का जन्म हुआ है। औपनिवेशिक काल में मतांतरण इतना विकट विषय नहीं बना था, जितना आज बन गया है। इसका सबसे बड़ा कारण यह है कि मतांतरण अब धर्मांतरण की श्रेणी में पहुँच गया है। मतांतरित जब तक मतांतरित रहते हैं, उनका जुड़ाव उनकी पूजा पद्धति, रीतियों और संस्कारों से टूटता है। परंतु जब मतांतरित व्यक्ति या समुदाय राष्ट्रधारा और सांस्कृतिक धारा से न केवल टूट जाए, बल्कि उनका और उनके प्रतिक चिन्हों का उपहास भी उड़ाए और उन्हें नष्ट करने का कार्य करे तो समझ लेना चाहिए उसका धर्मांतरण भी हो गया है। धर्मांतरण उन सभी अच्छाइओं से संबंध विछेद कर लेना है, जो किसी भी सांस्कृतिक और सभ्यताई व्यवस्था को गतिमान और सशक्त रखती हैं। आज की परिस्थितियों के संदर्भ में स्वामी विवेकानंद के शब्द स्मरण आते हैं, जिसमें उन्होंने कहा था कि, 'हिंदू पाले से बाहर जाने वाला हर व्यक्ति न केवल एक व्यक्ति कम है, बल्कि शत्रु अधिक है।'[7]❑

संदर्भ ग्रंथ :

1. ग्रीन, नील (2008). इस्लामिक कन्वर्जन्स इन द एरा ऑफ मॉडर्निटी. प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रेस।
2. कुरैशी, एम. एन. (1995). मुस्लिम्स एंड मिशनरीज इन प्री-म्युटिनी इंडिया. यूनिवर्सिटी प्रेस।
3. रॉबिंसन, आर. क्लार्क, एस. (एडिटेड) (2004). रिलीजियस कन्वर्जन्स इन इंडिया : मोड्स, मोटिवेशन, एंड मीनिंग्स. प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रेस।
4. गांधी, एम. के. (2000). माय एक्सपेरिमेंट विथ ट्रूथ : ऐन ऑटोबायोग्राफी (संपादन : एम. देसाई) बेकन प्रेस।
5. बुलिएट, आर. (1979). कन्वर्जन टू इस्लाम इन द मेडिएवल पीरियड : ऐन एस्से इन क्वांटिटेटिव हिस्ट्री. यूनिवर्सिटी प्रेस।
6. अयूब, एम. (2015). द मेनी फेसेज ऑफ पॉलिटिकल इस्लाम : रिलीजन एंड पॉलिटिक्स इन द मुस्लिम वर्ल्ड. द यूनिवर्सिटी ऑफ मिशिगन प्रेस।
7. जेंकिन्स, एल डी (2008). लीगल लिमिट्स ऑन रिलीजियस कन्वर्जन इन इंडिया. लॉ एंड कंटेम्परी प्रोब्लेम्स. वॉल्यूम. 71, नंबर. 2. स्कूल ऑफ लॉ, ड्यूक यूनिवर्सिटी।

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

आलेख

'बात यह नहीं है' कहानी संग्रह में अभिव्यक्त लोक जीवन का सामाजिक पक्ष

बर्णाली खाउंड

शोधार्थी, हिंदी विभाग
मिजोरम विश्वविद्यालय
आइजल-796004
6002718375
bornalikhound73@gmail.com

शोध सार :

चरण सिंह पथिक की कहानियों में लोक जीवन के विभिन्न पक्षों का सजीव चित्रण मिलता है। उनकी कहानियों में राजस्थान की आंचलिक जीवन शैली, रहन-सहन आदि अभिव्यक्त हुए हैं। उनकी कहानियों में गाँव की मिट्टी, पानी और हवा का सजीव चित्रण मिलता है, यही विशेषता उन्हें अन्य लेखकों से अलग करती है। पथिक के अन्य कहानी संग्रहों की तरह ही 'बात यह नहीं है' कहानी संग्रह में लोक जीवन के सामाजिक पक्ष का चित्रण मिलता है। इस संग्रह में समाज के विभिन्न पहलुओं का यथार्थ चित्रण हुआ है, जैसे- जाति व्यवस्था, पारिवारिक जीवन, नारी विषयक धारणा, सामाजिक लोक विश्वास एवं परंपराएँ।

बीज शब्द :

समाज, सामाजिक, लोक, यथार्थ, ग्राम्य जीवन।

मूल लेख :

'लोक' शब्द संस्कृत के 'लोक दर्शन' धातु से 'धञ' प्रत्यय करने पर निष्पन्न हुआ है। इस धातु का अर्थ 'देखना' होता है, जिसका लट् लकार में अन्य पुरुष एक वचन का रूप 'लोकते' है। अत: 'लोक' शब्द का अर्थ 'देखने वाला'। इस प्रकार वह समस्त जन समुदाय जो इस कार्य को करते हैं 'लोक' कहलाएगा।[1] 'लोक' शब्द से ही हिंदी के 'लोग' शब्द की व्युत्पत्ति मानी जाती है, जिसका अर्थ है सर्वसाधारण जनता। अत: 'लोक' शब्द का अभिप्राय उस समस्त जनसमूह से है, जो किसी देश में निवास करता है।[2]

विभिन्न भारतीय और पाश्वात्य विद्वानों ने 'लोक' शब्द की परिभाषा प्रदान की हैं-

डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय के मतानुसार- ''आधुनिक सभ्यता से दूर, अपने प्राकृतिक परिवेश में निवास करने वाली, तथाकथित अशिक्षित एवं असंस्कृत जनता को लोक कहते हैं, जिनका आचार-विचार एवं जीवन परंपरायुक्त नियमों

चरण सिंह पथिक ने अपनी कहानियों के माध्यम से समाज के प्राय: सभी पहलुओं को अभिव्यक्त किया है। उनकी कहानियों की प्रमुख विशेषता यह है कि उन्होंने अपनी कहानियों में वर्तमान समाज में घटित घटनाओं का यथार्थ चित्रण किया है। समकालीन कहानी लेखन परंपरा में चरण सिंह पथिक ने अपनी कहानी लेखन शैली से अपना विशिष्ट स्थान बनाया है।

से नियंत्रित होता है।''[3]

प्रो. एलेन डंडेस के अनुसार- ''लोक' शब्द से तात्पर्य मनुष्य के किसी भी ऐसे समूह या समाज से हो सकता है, जिसमें समानता का कोई एक आधार हो और यह समानता किसी व्यवसाय, भाषा, अर्थ अथवा परंपरा की हो सकती है। उन्होंने लिखा है- ''The term folk can refer to any group of people who share at least one common factor, it does not matter what the linking factor is could be a common occupation, language or religion but what is important is a group formed for whatever reason will have some traditions which it calls its own.''[4]

'बात यह नहीं है' कहानी संग्रह के कहानीकार है चरण सिंह पथिक। चरण सिंह पथिक एक ऐसे कहानीकार हैं, जिन्होंने अपनी कहानियों में लोक जीवन का यथार्थ चित्रण किया है। उनकी ज्यादातर कहानियाँ ग्रामीण जीवन पर आधारित हैं। चरण सिंह पथिक की पहली कहानी है 'बक्खड़' और इसका प्रकाशन वर्ष है 1998। उनके छह कहानी संग्रह प्रकाशित हैं-

1. बात यह नहीं है
2. पीपल के फूल
3. गौरु का लैपटाप और गोर्की की भैंस
4. मेरी प्रिय कथाएँ
5. मैं बीड़ी पीकर झूठ नहीं बोलता
6. दो बहनें

'बात यह नहीं है' कहानी संग्रह का प्रकाशन वर्ष है 2005। इस कहानी संग्रह में 10 कहानियाँ प्रकाशित हैं- 1. कलेक्टर आया! कलेक्टर आया!, 2.दुकान, 3.खिलौना, 4.बक्खड़, 5.लाल किले का जिन्न, 6.कसाई, 7.बांध टूट गया, 8.दंगल, 9.बात यह नहीं है, 10.बीमार।

लोक साहित्य में सामाजिक पक्ष का बहुत बड़ा महत्व है। लोक जीवन से जुड़े विभिन पहलुओं जैसे- रीति-रिवाज, मान्यताएँ, प्रथाएँ, जन्म से लेकर मृत्यु तक के संस्कार- सभी की उत्पत्ति समाज में ही होती है। समाज के विभिन्न प्रमुख पहलुओं का चित्रण चरण सिंह पथिक के 'बात यह नहीं है' कहानी संग्रह में वर्णित है। जैसे-

1. जाति व्यवस्था
2. पारिवारिक जीवन
3. नारी विषयक धारणा
4. सामाजिक लोक विश्वास एवं परम्पराएँ

जाति व्यवस्था : भारतीय सामाजिक जीवन में जाति व्यवस्था एक विशिष्ट व्यवस्था है। भारतीय समाज हजारों जातियों एवं उपजातियों में विभक्त है। 'बात यह नहीं है' कहानी संग्रह के अंतर्गत चार कहानियों में जाति व्यवस्था को चित्रित किया गया है। वे कहानियाँ हैं- 'कलेक्टर आया! कलेक्टर आया', 'बांध टूट गया', 'दंगल', 'बात यह नहीं है'।

'कलेक्टर आया! कलेक्टर आया' कहानी मोहरसिंह नामक शिक्षक की कहानी है। कहानीकार ने मोहरसिंह के जरिए गाँव में होने वाले भ्रष्टाचारों को दिखाया है। मोहरसिंह के गाँव में सरकार की तरफ से गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले लोगों के लिए एक योजना आई, जिसमें ऐसे लोगों का चयन करना था, जिनकी वार्षिक आय बीस हजार रुपए से कम है, जिनके पास

पक्का मकान, ट्रैक्टर या अन्य कोई वाहन नहीं हैं, जिनके पास दो हेक्टेयर से से ज्यादा जमीन नहीं है और जिनकी मासिक आय पंद्रह सौ रुपए से ज्यादा नहीं है। लोगों को चयनित करने का गुरु दायित्व मोहरसिंह को दिया गया। मोहरसिंह ने ईमानदारी से यह किया और एक लिस्ट निकाला। गाँव की कुछ उच्च जाति के लोगों को यह लिस्ट पसंद नहीं आई, क्योंकि वहाँ उच्च जाति के लोगों के नाम नहीं थे। कहानी के अन्य एक पात्र प्रधान जी को मोहरसिंह का फैसला पसंद नहीं आया, इसलिए मोहरसिंह को फँसाने के लिए उसने जाल बिछाया। वह किंतुलाल से कहता है- ''सब कोली, चमार, खटीक, धोबी भर दिए इसमें तो...! हमारा एक भी आदमी नहीं...! ऐसा कर किंतुलाल, सरपंच साब से पूछ-पूछकर सौ ऐसे आदमियों की लिस्ट बना दो, जिनके पास पक्का मकान हो या ट्रैक्टर हो या मोटर साइकिल हो या चालीस-पचास बीघा जमीन हो। उन सबके नाम दो। मैं खुद जाकर ग्रामसभा के दिन कलेक्टर साब को लिखित में शिकायत कर के आऊँगा। कलेक्टर साब बहुत सख्त हैं। तुरंत एक्शन लेंगे। यह लिस्ट भी खारिज कर देंगे। मास्टर भी सस्पेंड ही समझो। साक्षरता वाला किस्सा भी छेड़ दूँगा। फिर हम किसी और मास्टर से अपने मन-मुताबिक लिस्ट बनवा लेंगे।''[15] प्रधान ने जो सोचा वही हुआ। मोहरसिंह को कलेक्टर ने सस्पेंड कर दिया।

'बांध टूट गया' कहानी में जातिभेद के साथ-साथ किसान जीवन की समस्याओं का यथार्थ चित्रण किया गया है। उच्च जाति के धनजी पटेल निम्न जाति के किसानों का वर्षों से शोषण करता आ रहा है। धनजी पटेल गाँव के हर किसान की जमीन हड़प लेता है। अगर कोई प्रतिरोध करने की कोशिश करता है, उसको अधमरा बना देता है। धनजी पटेल सिर्फ किसानों का ही शोषण नहीं करता, बल्कि उनकी पत्नियों को भी नहीं छोड़ता।

'दंगल' कहानी में गाँवों में होने वाले संगीत के दंगल को दिखाया गया है। दंगल के जरिए कहानीकार ने जातिभेद का चित्रण भी किया है। जिस गाँव में हर जाति, हर संप्रदाय के लोग मिलकर दंगल करते थे, अब उनके बीच जातिभेद का भाव पनपने लगा। सब भाईचारा भूलकर अपना-अपना दल बनाने लगे। किस प्रकार जातिभेद लोगों के बीच अपनापन समाप्त कर देता है, इसी ओर कहानीकार ने इशारा किया है।

'बात यह नहीं है' कहानी ग्रामीण जीवन पर

आधारित कहानी है। गाँव के निम्न जाति हमेशा उच्च जाति से शोषित होता रहा। निम्न जाति का पुन्या उच्च जाति के छुट्टन सिंह द्वारा किए गए शोषण के बारे में कहानीकार के सामने बताता है- ''जब चुनावों में वोट लेने होते हैं तो ये तुम्हारी ऊँची जाति वाले हमारे बच्चों तक को हाथ जोड़ते फिरते हैं। हमारे घरों में आकर दारू-मीट खाते हैं। तब इनकी जाति कहाँ चली जाति है? तब इनका धर्म भ्रष्ट नहीं होता? लेकिन कोई बात नहीं। आजकल की राजनीति ही यही है। हम ऐसा सोच लेते हैं। मगर एक बाप अपने सामने अपनी जवान बेटी की इज्जत अपने ही घर में लूटते बर्दाश्त कर लेगा... ? जैसी हमारी बहू-बेटियाँ, ऐसी ही तुम्हारी बहू-बेटियाँ!''[16] इस कहानी में चरण सिंह पथिक ने जातिभेद का यथार्थ चित्रण किया है।

पारिवारिक जीवन : एक परिवार हमेशा उस परिवार के सदस्यों के प्रेम, त्याग, उदारता, आदर, सहिष्णुता से चलता है। जब परिवार के सदस्य अपने स्वार्थ के लिए अपनों को भूल जाता हैं, तभी परिवार बिखरने लगता है। 'बात यह नहीं है' कहानी संग्रह की दो कहानियों में पारिवारिक जीवन के विभिन्न पहलुओं का चित्रण हुआ है। जैसे- 'खिलौना' और 'बक्खड़'।

'खिलौना' कहानी में चरण सिंह पथिक ने दो परिवारों का चित्रण किया है। एक परिवार है भरोसी और विमली का परिवार, जिन्हें दो वक्त की रोटी के लिए सोचना पड़ता है। वहीं दूसरी तरफ है मि.सिन्हा और मिसेज सिन्हा का परिवार, जिन्हें कभी पैसों के बारे में सोचना नहीं पड़ता। मि.दीपक सिन्हा का एक्सपोर्ट-इंपोर्ट का कारोबार है और मिसेज सिन्हा कॉलेज में लेक्चरर है। भरोसी मि. सिन्हा और मिसेज सिन्हा के बच्चे सोनू की देखभाल करता है। एक तरफ भरोसी और विमली अपने बच्चों के लिए दिन-रात महनत करते हैं ताकि उन्हें घूँट-भर दूध नसीब हो जाए। अन्य तरफ हैं मि. सिन्हा, जिन्हें अपने बच्चे की कोई परवाह नहीं होती। बच्चे के सामने ही वह शराब के नशे में डूब जाते हैं। इस कहानी में कहानीकार ने वर्तमान समाज की स्थिति को उकेरा है।

'बक्खड़' कहानी का मुख्य पात्र है मूला। मूला का बाप और दादी उसकी माँ पर बहुत अत्याचार करते थे, जिस कारण मूला की माँ ने अपनी ससुराल छोड़ दी। उसने दूसरी शादी कर ली। उसके बाद मूला को एक पिता और अपनी नई पहचान तो मिली, लेकिन मूला का अतीत हमेशा मूला के साथ ही रहा। सब लोग उसे बक्खड़ कहकर बुलाने लगे। बक्खड़ का अर्थ है- जिसके पिता की कोई पहचान नहीं होती। इस नाम के कारण मूला हमेशा अकेला रह गया। मूला के परिवार के कारण ही उसके जीवन में कभी भी सुख-शांति नहीं आई।

नारी विषयक धारणा : भारतीय साहित्य में नारी को विशेष स्थान प्रदान किया गया है। समाज में नारी का जो स्थान एवं स्थिति है, वही स्थिति साहित्य में भी दिखाया जाता है। उसी प्रकार चरण सिंह पथिक ने अपनी कहानियों में नारी का यथार्थ चित्रण किया है। इस संग्रह की दो कहानियों में नारी विषयक धारणा का चित्रण मिलता है। जैसे- 'बक्खडड़' और 'कसाई'।

'बक्खड़' कहानी का मुख्य पात्र है मूला। मूला की माँ संतो उसकी दादी और पिता द्वारा शोषित होती है। उसे कई-कई दिनों तक भूखा-प्यासा और घायल अंधेरी कोठरी में रख दिया जाता था। घर का सारा काम उसे ही करना पड़ता था जैसे- सुबह जल्दी उठके आटा पीसना, झाड़ू लगाना, गोबर डालना, पानी लाना, दोपहर में रोटी बनाना। इन सबके बाद भी उसे एक भी रोटी नसीब नहीं होती थी। जब संतो सास से रोटी माँगती है, तब उसकी सास धमकी देती है- ''तेरा बाप कमा के रख गया है क्या? बापखाणी, मरी नहीं तू...।''[17] संतो बहुत दिनों तक ये सब सहन करती रही, लेकिन अंत में वह खुदके लिए खड़ी हुई और वह ससुराल से चली आई। ससुराल में कैसे बहुओं पर शोषण किया जाता है, उसी का वर्णन इस कहानी में किया गया है।

'कसाई' कहानी का मुख्य पात्र सुंदर राजनीतिक लोभ के कारण अपने पिता के हाथों ही मारा गया। इस बात को छुपाने के लिए सुंदर की मृत्यु को ऊपर की हवा बताया गया। अंधविश्वास में डूबे गाँव वाले इसे सत्य मानने लगे कि कसाई ने ही सुंदर की हत्या की है और उसे भगाने के लिए एक तांत्रिक को बुलाया गया। तांत्रिक

ने सुंदर की चाची के बारे में कहा- ''कृष्ण पक्ष के सात सनीचर दयाल की बहू आधी रात को नाले के ऊपर नंगी स्नान करे। मैं साथ दूँगा। सवामणी और बकरा अलग से चढ़ाना होगा। ताबीज भर दूँगा। फिर देखता हूँ उस कसाई को...''[8] सभी लोगों के साथ-साथ दयाल ने भी इस बात पर सहमति प्रदान की, लेकिन सुमेर की माँ को यह बात हजम नहीं हुई। वह सामने आकर बोली- ''दयाल की बहू.. आधी रात को नंगी नहाएगी। ना वह ताबीज बंधवाएगी। असली कसाई तो इसी बाड़े में बैठे हैं।''[9] इस कहानी में कहानीकार ने दिखाया है कि किस प्रकार नारी को किसी सामग्री की तरह व्यवहार किया जाता है।

लोक विश्वास एवं परंपराएँ : लोक विश्वास एवं परंपरा प्रत्येक समाज का एक अंग है। 'बात यह नहीं है' कहानी संग्रह की 'कसाई' कहानी के अंतर्गत लोक विश्वास एवं परंपरा का चित्रण हुआ है।

'कसाई' कहानी का मुख्य पात्र है सुंदर, जो राजनीतिक लोभ के कारण अपने पिता के हाथों ही मारा गया। इस बात को छुपाने के लिए उसके पिता ने सुंदर की मृत्यु को ऊपर की हवा बताई। पूरे गाँव में यह बात फैल गई कि किसी कसाई ने सुमेर की हत्या की है। लोगों को हर जगह सिर्फ कसाई दिखने लगा। उस कसाई को भगाने के लिए एक तांत्रिक को बुलाया गया। शराब, लौंग का जोड़ा, धूप, अगरबत्ती, इत्र, जायफल, उड़द के दाने, तिल, लाल कपड़ा के साथ सारा सामान मँगा लिया गया।

तांत्रिक विभिन्न प्रकार का ढोंग करता गया और झूठ बोलता गया। लोग तांत्रिक की सारी बातें मानते गए। तांत्रिक बोला- ''कृष्ण पक्ष के सात सनीचर दयाल की बहू आधी रात को नाले के ऊपर नंगी स्नान करे। मैं साथ दूँगा। सवामणी और बकरा अलग से चढ़ाना होगा। ताबीज भर दूँगा। फिर देखता हूँ उस कसाई को...''[10] यह सुनने के बाद दयाल तांत्रिक के पैरों पर गिर गया और बोला- ''तुम जैसा कहोगे- वैसा ही करेंगे! महाराज! हमारा तो दुख कटना चाहिए बस...!'' कहानी के जरिए कहानीकार ने यही दिखाया है कि किस प्रकार लोग अंधविश्वास में आकर सब कुछ भूल जाते हैं, यहाँ तक अपनी पत्नी का सम्मान भी भूल जाते हैं।

निष्कर्ष :

चरण सिंह पथिक ने अपनी कहानियों के माध्यम से समाज के प्राय: सभी पहलुओं को अभिव्यक्त किया है। उनकी कहानियों की प्रमुख विशेषता यह है कि उन्होंने अपनी कहानियों में वर्तमान समाज में घटित घटनाओं का यथार्थ चित्रण किया है। समकालीन कहानी लेखन परंपरा में चरण सिंह पथिक ने अपनी कहानी लेखन शैली से अपना विशिष्ट स्थान बनाया है। ❑

संदर्भ :

1. जनपद वर्ष-1, डॉ. द्विवेदी, अंक 1, पृ.65
2. लोक-संस्कृति की रूपरेखा, कृष्णदेव उपाध्याय, पृ.8
3. लोक-साहित्य की भूमिका, कृष्णदेव उपाध्याय, पृ.11
4. लोक-साहित्य, जैन विश्व भारती संस्थान, पृ.6
5. बात यह नहीं है, चरण सिंह पथिक, पृ.17
6. वही, पृ.74
7. वही, पृ.29
8. वही, पृ.55
9. वही, पृ.55
10. वही, पृ.55

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

आलेख

स्त्री वेदना को प्रकट करता भोजपुरी लोकगीत

सौरभ कुमार

शोधार्थी, हिंदी विभाग
हैदराबाद केंद्रीय विश्वविद्यालय
तेलंगाना 500046
8483846174
SS76966@gmail.com

शोध सार :

भारत में स्त्रियों को हमेशा से ही गौरवपूर्ण स्थान दिया गया है। आज भी लोग शक्ति, धन एवं विद्या की देवी के रूप में क्रमश: दुर्गा, लक्ष्मी तथा सरस्वती की पूजा करते हैं। किंतु ये सब सिर्फ धार्मिक ग्रंथों तक ही सीमित है। वास्तविकता ठीक इसके विपरीत है। भारतीय पितृ सत्तात्मक समाज में सदियों से स्त्रियों का शोषण होता आया है। पर्दा प्रथा, सती प्रथा, देवदासी प्रथा जैसी न जाने कितनी कुत्सित सामाजित तथा धार्मिक प्रथाओं के कारण स्त्रियाँ नारकीय जीवन जीने को मजबूर थीं। आज भले ही स्वतंत्र भारत में उन्हें संवैधानिक अधिकार प्राप्त हुए हैं, बावजूद इसके सामजिक नियम-कायदों के कारण इनका जीवन अत्यंत कष्टमय है। बचपन से लेकर बुढ़ापे तक उसे कदम-कदम पर अग्निपरीक्षा से होकर गुजरना पड़ता है। परिवार तथा समाज हर जगह उसे अपने अस्तिव की लड़ाई लड़नी पड़ती है। ग्रामीण महिलाओं की स्थिति तो और अधिक दयनीय है। अशिक्षा, समाज तथा परिवार की रूढ़िवादी मानसिकता तथा आर्थिक विपन्नता आदि के कारण ग्रामीण स्त्रियों का कई प्रकार से शारीरिक तथा मानसिक शोषण होता है। वे इतनी मजबूर होती हैं कि अपनी वेदना को किसी के सामने प्रकट भी नहीं कर सकती हैं। ऐसी स्थिति में स्त्रियाँ अपनी मनोवेदना को अभिव्यक्त करने का माध्यम गीतों को बनाती हैं। अपने मनोभावों को व्यक्त करने का सबसे आसान माध्यम गीत ही है। लोक गीतों की सबसे बड़ी विशेषता है कि इसमें जीवन की प्रत्येक घटनाओं तथा क्रियाओं से संबंधित भावमय चित्र उपस्थित हैं। श्रृंगार, हास्य, करुणा, उत्साह आदि सभी रसों की रसानुभूति बड़ी सरलता और सहजता से लोक गीतों के माध्यम से हो जाती है। भोजपुरी लोक गीत इस दृष्टि से अत्यंत समृद्ध हैं।

बीज शब्द :

लोक गीत, स्त्री वेदना, भोजपुरी, बालिका भ्रूण हत्या, भेदभाव, बाल विवाह, अनमेल विवाह, सती प्रथा।

मूल आलेख :

जिस प्रकार साहित्य समाज का दर्पण कहलाता है, उसी प्रकार लोक साहित्य

ग्रामीण समाज का दर्पण कहलाता है। लोक गीत को यदि हम संस्कारों की आत्मा कहें तो यह अतिशयोक्ति नहीं होगा। लोक गीतों की सबसे बड़ी विशेषता है कि अपनी सरलता एवं रस से ओत-प्रोत होने के कारण यह सहज ही लोगों को मंत्रमुग्ध कर देती हैं। इसका कारण यह है कि यह बिल्कुल भी कृत्रिम नहीं होते। यह लोगों के हृदय से सहज ही प्रस्फुटित होता है। पाश्चात्य विद्वान ग्रिम ने लोक गीत के विषय में कहा है- ''लोक गीत अपने आप बनते हैं (Folk song composes itself)।'' लोक गीत के संबंध में महादेवी वर्मा ने कहा है - ''सुख-दु:ख की भावावेशमयी अवस्था विशेष को गिने-चुने शब्दों में स्वर साधना के उपयुक्त चित्रण कर देना ही गीत है और इस गीत में जब सहज चेतना जुड़ जाती है तो वह लोक गीत बन जाता है।'' बिहार में लोक गीतों की एक समृद्ध परंपरा रही है। यहाँ जन्म से लेकर मृत्यु तक, जीवन के हरेक अवसर से संबंधित गीत हैं। विभिन्न पर्व-त्योहार, अनुष्ठान, मांगलिक तथा अमांगलिक अवसरों आदि पर स्त्री-पुरुष द्वारा लोक गीत गाए जाते हैं।

ग्रामीण महिलाएँ, विशेषकर गीतों के माध्यम से अपने जीवन के सुख-दु:ख को प्रकट करती हैं। बिहार में प्रसिद्ध जट-जटिन, बिदेसिया, डोमकच, जंतसार आदि लोक विधाओं में स्त्री-वेदना के स्वर स्पष्ट सुनाई पड़ते हैं। भोजपुरी समाज में एक कहावत प्रचलित है कि बेटी के जन्म लेने पर धरती तीन बित्ता नीचे दब जाती है मानो पृथ्वी उस पुत्री का भार सहन नहीं कर पा रही हो। वहीं पुत्र के जन्म की उपमा उजली रात से की गई है तथा पुत्री के जन्म की उपमा अंधेरी रात से की गई है। इस बात से पुत्री के अपमान का अनुमान लगाया जा सकता है, जब एक गीत में पुत्री के जन्म लेने पर माता कहती है-

''जाहु हम जनिती धियवा कोखी रे जनमिहे,
पिहितों में मरीच थराई रे।
मरीच के झाके झुके धियवा मरि रे जाईति,
छुटी जाईते गरुवा संताप रे।''

चाहे बालिका जन्म हो, उसकी शिक्षा प्राप्ति में आने वाली समस्या हो, बाल-विवाह, अनमेल विवाह या प्रवासन के कारण उत्पन्न समस्या हो, इन सभी समस्याओं का चित्रण लोक गीतों में यथार्थ रूप से देखा जा सकता है। बिहार शैक्षिक एवं आर्थिक रूप से पिछड़ा राज्य रहा है, अत: यहाँ पर परिवार में लड़का-लड़की के बीच भेदभाव को स्पष्ट देखा जा सकता है। लोग बेटे के लिए अपना सर्वस्य न्योछावर करने को तैयार रहते हैं, लेकिन जब बेटी की बात आती है तो उसे पराया धन समझ कर उसे घर के चूल्हे-चौके तक सीमित कर दिया जाता है। पिता बेटे को पढ़ाने के लिए खेत-मकान तक बेच देते हैं, लेकिन बेटी को घर के ही काम-काज सीखने को कहते हैं। लड़की अपनी इस वेदना को गीतों के माध्यम से व्यक्त करते हुए कहती है-

काहे कईला हो बाबूजी दू रंग नीतिया
बेटा के पढ़ावे खातिर महला दू महला
हमर बेरिया, काहे चूल्हा फूँकवईले हमर बेरिया
एके कोखी बेटा जन्मे एके कोखी बेटिया हमर बेरिया
काहे कईला हो बाबूजी दो रंग नीतिया ।

अनमेल विवाह बिहार में एक घृणित प्रथा रही है। हालाँकि यह प्रथा अब धीरे-धीरे समाप्त हो रही है, किंतु अभी भी कई जगह पैसे के अभाव के कारण पिता अपनी अल्पवयस पुत्री का विवाह बूढ़े व्यक्ति से करा देते हैं। भिखारी ठाकुर ने समाज की इस विसंगति को केंद्र में रखकर बेटी-बेचवा नाटक की रचना की। भोजपुरी लोक गीत में अनमेल विवाह से संबंधित अनेक मार्मिक गीत हैं। उदाहरणार्थ -

''पइसा के लालच पड़ी के बुढ़ऊ से सादी रे
सादी ना कललेई त मोर बरबादी रे
कोठा ऊपर कोठरी बुढ़ऊ बोलाउसु रे
जात सरमवा लागे राम बुढ़ऊ के जोरू रे''

बूढ़े पति की मृत्यु हो जाने पर बाल-विधवा पुत्री अपने पिता से रो-रो कर कहती है-

''बाबा सिर मोरा रोवेला सेनुर बिनु
नयना कजरवा बिनु ये राम
बाबा गोद मोरा रोवेला बालक बिनु
सेजिया कन्हैया बिनु ये राम''

प्रवासन की समस्या बिहार की एक बहुत पुरानी तथा गंभीर समस्या रही है। लोग रोजगार की तलाश में दूसरे प्रदेश चले जाते हैं और इधर परिवार के सदस्यों को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। प्रवासन के कारण उत्पन्न समस्या को लोक गीत में स्पष्ट देखा जा सकता है। भिखारी ठाकुर ने इस विषय पर 'बिदेसिया' नामक नाटक की रचना की, जिसमें प्रवासन के कारण नई-नवेली दुल्हन 'प्यारी सुंदरी' की मार्मिक दशा का चित्रण किया है। बिदेसी (पति) के परदेश चले जाने के बाद वो ना तो प्यारी सुंदरी की सुध लेता है, ना कोई चिट्ठी लिखता है। कलकत्ता जाने के बाद वह दूसरी शादी कर लेता है। इधर प्यारी सुंदरी कलकत्ता जाने वाले हरेक बटोही से रो-रो कर अपना हाल सुनती है। इसी प्रसंग में एक गीत है-

''पिया मोरा गइलन परदेस ए बटोही भैया
रात नाहीं नींद दिन तनी न चयनवा
एको न भेजवलन संदेस ए बटोही भैया
रात नहीं नींद दिन तनी न चयनवा''

बिहार में जंतसार गीत बहुत प्रसिद्ध है। चक्की पीसते समय जो गीत गाए जाते हैं, उसे जंतसार या जांत के गीत कहते हैं। जंतसार के गीतों में करुण रस की प्रधानता होती है। इन गीतों में दुखिनी स्त्री अपनी मनोवेदना को प्रकट करती है। चक्की पीसते समय वे गीत गाते हुए अपने दु:ख को व्यक्त करती है। एक प्रसंग है, जिसमें पति के परदेश चले पर सास और ननद घर में विरह विधुरा वधू को ताना मारते हुए कहती हैं कि तुम्हारा पति तो परदेश चला गया है, अब तुम्हें कौन कमा के खिलाएगा। सास बहू को घर से निकाल देती है, जिससे बहू की स्थिति बहुत खराब हो जाती है। वह अपनी व्यथा को अभिव्यक्त करते हुए गाती है -

''ए राम हरी मोरे गइले बिदेसवा,
सकल दुखवा देई गइले हो राम।
ए सासु, ननदिया बिरही बोलेली,
केकर कमइया खइबू हो राम।''

भोजपुरी क्षेत्र में संयुक्त परिवार की प्रणाली प्रचलित है। ऐसे में एक ही घर में बहुत सारे सदस्य एक साथ रहते हैं। दादा-दादी, चाचा-चाची, भाई-बहन, पुत्र-पौत्र, सास-बहू आदि। एक साथ रहने के कारण कुछ संबंध ऐसे भी होते हैं, जिनमें प्रेम की जगह आपसी वैमनस्यता अधिक होती है। जैसे सास-बहू का संबंध, ननद-भौजाई का संबंध आदि। कुछ परिवारों में सास नई नवेली बहू को अनेक प्रकार का कष्ट देती है। बहू से दिन-रात घर का काम करवाती है। रात में भी कच्ची नींद से जगा कर काम करने को कहती है। अपनी इस व्यथा को व्यक्त करते हुए बेटी अपने पिता से कहती है-

''पूरब के लोगवा निरमोहिया ए बाबा,
उलटी-पुलटी दु:ख देई।
रतिया पिसावे जब, गेहूंआ ए बाबा,
दिनवा कतावे झीन सूत।
सूतली सेजिया उठावे ए बाबा, अंगना धरेले सब छूछ ।।''

भोजपुरी समाज में संतानहीन स्त्रियों की स्थिति अत्यंत दयनीय है। उनके साथ पशुओं से भी अधिक बुरा व्यवहार किया जाता है। भोजपुरी समाज में जिस स्त्री को जितनी अधिक पुत्र संतान की प्राप्ति होती है, उसे परिवार में उतना ही अधिक सम्मान मिलता है। इसलिए स्त्रियाँ पुत्र प्राप्ति हेतु विभिन्न देवी-देवताओं की पूजा-अर्चना, व्रत आदि किया करती हैं। यदि पुत्र की प्राप्ति नहीं होती है तो वे अपना जीवन ही निरर्थक मानने लगती हैं। भोजपुरी लोक गीत में इसका उल्लेख भी किया गया है-

''लाल पियर ना पहिरली, चउका ना बैठली हो
ललना गोदिया ना खेलवनी बालकवा,
मोरे जनम अकारथ हो''

भोजपुरी लोक गीत में एक ऐसा प्रसंग आया है, जहाँ स्त्री को संतान प्राप्ति न होने पर न केवल उसके मायका तथा ससुराल वाले उसे त्याग देते हैं, बल्कि जंगल की बाघिन तथा नागिन भी उसे खाने एवं डँसने से मना कर देते हैं। बाघिन यह कह कर खाने से मना कर देती है कि यदि मैं तुम्हे खाऊँगी तो मैं भी बाँझिन हो जाऊँगी। नागिन भी कहती है यदि मैं तुम्हें डँसूंगी तो मैं भी बाँझिन हो जाउँगी। अंत में वह स्त्री धरती माता से विनती करती है कि अब तू ही मुझे शरण दे। तब धरती माता कहती है- तू जहाँ से आई है, वहीं पलट कर चली जा। मैं तुझको अपने में स्थान नहीं दे सकती। अगर मैं तुझ बाँझ को अपने मैं ग्रहण कर लेती हूँ तो मैं भी उसर बन जाऊँगी। गीत इस प्रकार है-

''बाघिन, हम का जो तू खाइ लेतिउ,
विपतिया से छूटित हो
बाझिन, तुमका जो हम खाई लेबि,
हमहू बाझिन होईब हो
नागिन, हमका जो तुम डसि लेतिउ,
विपति से हम छूटित हो
बाझिन, तुमका जो हम डसि लेबि,
हमहू बाझिन होइब हो
धरती. तुम्ही सरन अब देहु,
बाझिनि नाम छुटई हो
बाझिनि तोहका जो हम राखि लेबि,
हमहू होइबि ऊसर हो''

निष्कर्ष :

इन गीतों को देखने से स्पष्टत: कह सकते हैं कि भोजपुरी लोक गीत की परंपरा अत्यंत समृद्ध है, जो कि मानव के हृदय का सहज उद्‌गार है। यह हमारे साहित्य की अमूल्य निधि है। हमारे जीवन का इतिहास इन लोक गीतों में स्पष्ट दिखाई देता है। जीवन की प्रत्येक घटनाओं से संबंधित तथा रस से ओत-प्रोत ये लोक गीत लोगों को सहज ही अपनी ओर आकृष्ट कर लेते हैं। हमारे पितृ सत्तात्मक समाज में स्त्रियों की विशेषकर ग्रामीण स्त्रियों की दशा अच्छी नहीं रही है। अपनी मनोवेदना को प्रकट करने का माध्यम इन स्त्रियों ने लोक गीत को ही बनाया। समाज ने प्रथा एवं धार्मिक विश्वास के नाम पर जितना शोषण इन स्त्रियों का किया है, उन सभी की अभिव्यक्ति स्त्रियों ने लोक गीतों के माध्यम से की है। बालिका भ्रूण हत्या, भेदभाव, बाल विवाह के दुष्परिणाम, अनमेल विवाह, विवाह के उपरांत उत्पन्न समस्या, सती प्रथा आदि सभी सामाजिक कुरीति एवं कुप्रथाओं की झाँकी लोक गीतों में स्पष्ट दिखलाई पड़ती है। स्त्रियों के जीवन के सुख-दु:ख, मिलन-विरह सभी भावनाएँ भोजपुरी लोक गीत में अभिव्यक्त हुई हैं। इस प्रकार हम कह सकते हैं भोजपुरी लोक गीत स्त्रियों के जीवन की विकास गाथा है। लोक गीत हमारे ग्रामीण जीवन की सपष्ट झाँकी है, जिससे हम तत्कालीन समाज में व्याप्त रीति-रिवाज, प्रथा, कुप्रथा, विभिन्न विश्वासों आदि को जान व समझ सकते हैं। ❑

संदर्भ ग्रंथ :

1. लोक गीतों के संदर्भ और आयाम, डॉ. शांति जैन, विश्वविद्यालय प्रकाशन, पृष्ठ सं. 2, 1964
2. लोक गीतों के संदर्भ और आयाम, डॉ. शांति जैन, विश्वविद्यालय प्रकाशन, पृष्ठ सं. 3, 1964
3. भोजपुरी लोक साहित्य का अध्ययन, डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय, पृष्ठ सं. 236, 1960
4. https ://www.maina.co.in
5. भोजपुरी लोक साहित्य का अध्ययन, डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय, पृष्ठ सं. 283, 1960
6. भोजपुरी लोक साहित्य का अध्ययन, डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय, पृष्ठ सं. 245, 1960
7. बिदेसिया, भिखारी ठाकुर, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. सं. 14
8. भोजपुरी लोक साहित्य का अध्ययन, डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय, पृष्ठ सं. 217, 1960
9. भोजपुरी लोक-संस्कृति, डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय, हिंदी साहित्य सम्मलेन, पृष्ठ सं. 62
10. भोजपुरी लोक साहित्य का अध्ययन, डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय, पृष्ठ सं. 245, 1960
11. भोजपुरी लोक साहित्य का अध्ययन, डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय, पृष्ठ सं. 244, 1960
12. भोजपुरी लोक गीत भाग 1, डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय, हिंदी साहित्य सम्मलेन, प्रयाग
13. लोक साहित्य के प्रतिमान, डॉ. कुंदनलाल उप्रेती, भारत प्रकाशन मंदिर, अलीगढ़

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

विमर्श

व्यंग्यात्मकता की दृष्टि से 'अंधेर नगरी' नाटक : एक अध्ययन

जीनामणि बड़ो

अतिथि अध्यापिका, हिंदी विभाग
कोकराझार गवर्नमेंट कॉलेज
कोकराझार-783370
बी.टी.आर. (असम)
9707964442
jinamaniboro11@gmail.com

शोध- सार :

भारतेंदु हरिश्चंद्र हिंदी साहित्य जगत के अग्रिम हस्ताक्षर हैं। अपने साहित्य के माध्यम से उन्होंने तत्कालीन सामाजिक, राजनैतिक तथा अर्थनैतिक शासन-व्यवस्था पर करारा व्यंग्य किया है। 'अंधेर नगरी' भारतेंदु हरिश्चंद्र का एक बहुत ही लोकप्रिय नाटक है। इस नाटक के जरिए उन्होंने अपने समय की शासन व्यवस्था को चित्रित किया है ।'अंधेर नगरी' भ्रष्ट शासन व्यवस्था, मूर्ख राजा, अंधे राज्य का प्रतीक है। अंग्रेजी शासन व्यवस्था को केंद्र में रखकर इस नाटक को लिखा गया है। पराधीन भारत की आर्थिक स्थिति को बयाँ करने के लिए भारतेंदु ने व्यंग्य शैली अपनाई थी। अंग्रेज सरकार को नीचा दिखाने के लिए व्यंग्य की शैली ही एकमात्र उपाय था। व्यंग्य एक ऐसी कला है, जिसके जरिए हम कटु से कटु बातों को हँसी-मजाक के साथ अभिव्यक्त कर सकते हैं। इससे सामने वाले को उतनी गहराई से आभास नहीं होता है।

बीज शब्द :

भारतेंदु, नाटक, व्यंग्य, अंधेर नगरी, अंध विश्वास।

1. प्रस्तावना :

स्वतंत्रता के पूर्व के जिस गद्य साहित्य ने हिंदी के पाठकों की दृष्टि को आकर्षित किया था, उसमें भारतेंदु हरिश्चंद्र का 'अंधेर नगरी' का नाम उल्लेखनीय है। भारतेंदु से हिंदी साहित्य में एक नया जागरण का आरंभ हुआ था। अंग्रेज द्वारा शासित भारत की सामयिक दुरावस्था तथा विकट परिस्थितियों का संपूर्ण ज्ञान भारतेंदु को हो गया था। भारत दुर्दशा, अंधेर नगरी, विषस्य-विषमौषधम्, प्रेम-योगिनी आदि उनके नाटक हैं।

2. अध्ययन का महत्व :

सन 1881 में लिखा गया 'अंधेर नगरी' एक कालजयी नाटक है। भारतेंदु जागरण काल के साहित्यकार थे। जागरण का स्वर उनके नाटक में तीव्रता से

व्यक्त हुआ है। तत्कालीन शासन सत्ता का अंधापन और अंधेर इस नाटक का मूल विषय है। भारतेंदु ने बिहार प्रांत के किसी जमींदार के अन्याय के विरुद्ध यह नाटक लिखा है, जिसमें अंग्रेजी राज्य में जनता पर किए गए अन्याय, अत्याचार और जुर्म पर भी छिपे तौर पर प्रकाश डाला गया है। मूर्ख शासक की शासन व्यवस्था को जनता के समक्ष उजागर किया है। इसीलिए प्रस्तुत अध्ययन का महत्व है।

3. अध्ययन का शीर्षक :

प्रस्तुत अध्ययन का शीर्षक है 'व्यंग्यात्मकता की दृष्टि से अंधेर नगरी नाटक : एक अध्ययन।

4. अध्ययन का उद्देश्य :

अध्ययन का उद्येश्य है- भारतेंदु हरिश्चंद्र का सर्वाधिक लोकप्रिय नाटक अंधेर नगरी में चित्रित अंग्रेजी शासन व्यवस्था को उजागर करना। जनता पर राज सत्ता के असर को दिखाना, वस्तु तथा सामाजिक मूल्यहीनता को चित्रित करना, भारतेंदु के लेखन कौशल को प्रस्तुत करना और व्यंग्यात्मकता को दिखाना।

5. अध्ययन का सीमांकन :

'अंधेर नगरी' नाटक की व्यंग्यात्मकता पर ही यह अध्ययन सीमित रहेगा।

6. अध्ययन में व्यवहृत पद्धति एवं उपाय :

अध्ययन की पद्धति विश्लेषणात्मक है। शोध पत्र MLA (MODàßRN LANGUAGàß ASSOCIATION) पद्धति पर आधारित है। लोक भारती प्रकाशन द्वारा प्रकाशित डॉ. परमानंद श्रीवास्तव द्वारा संपादित भारतेंदु हरिश्चंद्र कृत 'अंधेर नगरी' को मूल ग्रंथ के रूप में लिया गया है। साथ ही भारतेंदु से संबंधित अन्य ग्रंथों और इंटरनेट आदि का सहारा भी लिया गया है ।

7. विश्लेषण एवं निर्वचन :

व्यंग्यात्मकता भारतेंदु हरिश्चंद्र के साहित्य की एक अलग ही पहचान है। भारतेंदु बचपन से ही बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। उनके साहित्य में राष्ट्रीय प्रेम की भावना विद्यमान है। उन्होंने अपनी लेखनी से देश के मूक विषयों को वाणीबद्ध किया है। परतंत्र भारत की जनता की जीवन शैली को व्यंग्यात्मकता के साथ प्रस्तुत किया है। प्रस्तुत अध्ययन को मिम्नलिखित बिंदुओं के माध्यम से विश्लेषण करने की कोशिश की गई है-

7.1. व्यंग्यात्मकता की अवधारणा तथा परिभाषा :

व्यंग्यात्मकता का अर्थ है - उपहास करना या ताना मारना। व्यंग्य से तात्पर्य उस अनुभव या भाव से है, जो मन को प्रसन्नचित करता है। जब किसी प्रकार की कोई घटना या गद्य की विविध विधाओं के रूप जैसे कहानी, एकांकी आदि, जिसमें हास्य रस का पुट हो वही व्यंग्य कहलाता है। व्यंग्य एक ऐसी साहित्यिक अभिव्यक्ति है, जिसके द्वारा किसी व्यक्ति, समाज की विसंगतियों और विडंबनाओं या उसके किसी एक पहलू को रोचक तथा हास्यास्पद ढंग से प्रस्तुत किया जाता है। हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार- ''व्यंग्य वह है, जहाँ कहने वाला अधरोष्ठ में हँस रहा हो और सुनने वाला तिलमिला उठा हो और फिर कहने वाले को जवाब देना अपने को और भी उपहासास्पद बनाना हो जाता है।''

हरिशंकर परसाई ने व्यक्ति व समाज में उपस्थित विसंगतियों को लोगों के सामने लाने में व्यंग्य को सहायक माना है। उनके अनुसार-''व्यंग्य जीवन से साक्षात्कार कराता है, विसंगतियों, मिथ्याचारों और पाखंडों का पर्दाफाश करता है।''

व्यंग्य समाज में एक प्रकार का अच्छापन लाने की कोशिश करता है। भारतेंदु ने भी अंधेर नगरी नाटक के द्वारा समाज में सुधार लाने का प्रयास किया था ।

7.2. अंधेर नगरी नाम की सार्थकता :

भारतेंदु ने इस नाटक को बिहार प्रांत के किसी अन्यायी जमींदार को सुधारने या राह पर लाने के लिए लिखा था। जब शासक अज्ञानी या मूर्ख होता है, तब शासन व्यवस्था भी उसी प्रकार का होता है। अंधेर नगरी अंधे शासन व्यवस्था का प्रतीक है अर्थात जिस राज्य या नगर की शासन व्यवस्था अंधे जैसा है, उसे ही अंधेर

नगरी कहा जाता है । जैसे-

अंधेर नगरी अनबूझ राजा ।
टका सेर भाजी टका सेर खाजा ।।
नीच ऊँच सब एकहिं ऐसे ।
जैसे भडुए पंडित तैसे ।।

(श्रीवास्तव 2017 : 58)

जिस देश में सभी सामान एक दाम में बिकते हैं, चीजों को उचित मूल्य नहीं दिया जाता है। उसे अंधेर नगरी कहना ही उचित लगता है । जैसे-

सेत सेत सब एक से, जहाँ कपूर कपास ।
ऐसे देस कुदेस में, कबहुँ न कीजै बास।।

(श्रीवास्तव 2017: 51)

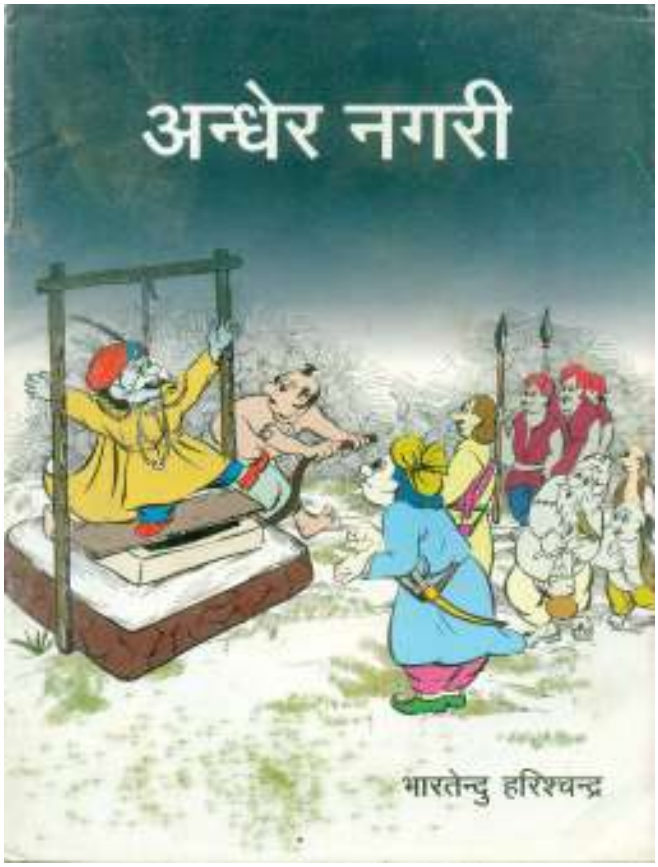

जिस देश में कपूर और कपास में कोई भेद नहीं देखा जाता, एक दाम में सभी सामग्री बेची जाती है, उस देश के लिए अंधेर नगरी नाम ही सार्थक लगता है। आलोच्य नाटक में निहित व्यंग्यार्थ को हम निम्नलिखित प्रकार से विश्लेषण करने की कोशिश करते हैं -

7.2.1. जातिवाद पर व्यंग्य :

भारतेंदु के व्यंग्य साधारण लोगों के हृदय पर गहरा प्रभाव डालने में कामयाब रहे हैं। वस्तुत: व्यंग्य एक बाण जैसा अस्त्र है, जिसका सरकार के सामने ही जनसाधारण के बीच प्रयोग किया जा सकता है। भारतेंदु ने अंधेर नगरी नाटक के माध्यम से जातिवाद पर तीक्ष्ण व्यंग्य किया है । टके के वास्ते लोग कुछ भी करने के लिए तैयार रहते हैं। अपनी जात, धर्म-प्रतिष्ठा, कुल-मर्यादा आदि को भी बेचने वाली चीज बना दिया है।

''जात लें जात, टके सेर जात। एक टका दो, हम अभी अपना जात बेचते हैं। टके के वास्ते ब्राह्मण से धोबी हो जायँ और धोबी को ब्राह्मण कर दें, टके के वास्ते जैसी कहो वैसी व्यवस्था दें। टके के वास्ते झूठ को सच करें। टके के वास्ते ब्राह्मण से मुसलमान, टके के वास्ते हिन्दू से क्रिस्तान। टके के वास्ते धर्म और प्रतिष्ठा दोनों बेचें, टके के वास्ते झूठी गवाही दें। टके के वास्ते पाप को पुण्य मानें, टके के वास्ते नीच को भी पीतामह बनावें। वेद धर्म कुल-मरजादा, सचाई-बड़ाई सब टके सेर। लुटाय दिया अनमोल माल। ले टके सेर।''
(श्रीवास्तव 2017: 47,48)

लोग अपने कुल-मर्यादा की भी परवाह नहीं करते हैं। अपने धर्म, मान-सम्मान, सच्चाई सभी को टके के आगे नतमस्तक करते हैं। जो कहीं-न-कहीं आज के समाज नें भी देखा जाता है। इसीलिए अंधेर नगरी नाटक आज भी प्रासंगिकता रखता है और हमारे समाज व्यवस्था तथा लोगों की सोच पर भारतेंदु ने तीव्र व्यंग्य किया है ।

7.2.2. अंग्रेज राज तथा शासन-व्यवस्था पर व्यंग्य :

भारतेंदु ने तत्कालीन शासन व्यवस्था पर भी कटु व्यंग्य किया है। डॉ. राम विलास शर्मा ने कहा है- ''अंधेर नगरी अंग्रेजी राज्य का दूसरा नाम है।'' (यादव 2011:181) उस समय समाज में धर्म और अधर्म के बीच कोई भेद नहीं था। सरकार उचित न्याय देने में असमर्थ थी। इसीलिए कहा है -

धर्म अधर्म एक दरसाई ।
राजा करे सो न्याव सदाई।।
भीतर स्वाहा बाहर सादे ।
राज करही अमले और प्यादे ।।
अंधाधुन्ध मच्यौ सब देसा ।
मानहुँ राजा रहत विदेसा ।।

(श्रीवास्तव 2017:59)

उस वक्त भारत में औपनिवेशिक शासन-व्यवस्था चल रही थी। ऐसे में शासक धर्म-अधर्म पर विचार नहीं करते थे । शासक अपनी इच्छानुसार न्याय देते थे। शासन व्यवस्था बाहर से सीधे-साधे निर्मल लगती थी, परंतु भीतर से काली थी। दोषी बच जाता था और निर्दोषी फँस जाता था। दीवार गिरने से बकरी मारे जाने के कारण ही किसी व्यक्ति को फाँसी देना राजा का न्याय था। राजा कटवाल को फाँसी की सजा सुनाता है, पर कटवाल दुबला-पतला था और फाँसी का फंदा बड़ा था, फाँसी देने के लिए मोटे आदमी का जरूरत थी। फलस्वरूप सजा गोबरधनदास को मिलती है। कारण राजा के न्याय के डर से लोग ज्यादा खाकर मोटाते नहीं थे। दूसरी तरफ गोबरधनदास टके सेर में खा- खा कर मोटा हो गया था। ऐसे ही अंधी और कु-शासन व्यवस्था में न्याय देने की प्रक्रिया पर भी व्यंग्य किया गया है ।

7.2.3. रिश्वत पर व्यंग्य :

हमारे काम-काजों में प्रचलित एक कटु सत्य है रिश्वत लेने और देने की परंपरा, जो तत्कालीन अंग्रेज शासन व्यवस्था में प्रबल रूप से प्रचलित थी और आज भी चल रही है। इसीलिए यह समस्या आज भी प्रासंगिक है। रिश्वत देने पर भी कोई काम बनता नहीं है, बल्कि वे लोग और ज्यादा शोषण करने के लिए अग्रसर होते हैं। इसीलिए भारतेंदु ने रिश्वत पर बहुत ही सुंदर व्यंग्य किया है। पाचकवाला कहता है-

चूरन अमले सब जो खातैं ।दूना रिश्वत पचावैं ।।
चूरन साहेब लोग जो खाता ।सारा हिन्द हजम कर जाता।।
चूरन पूलिस वाले खाते ।सब कानून हजम कर जाते ।।

(श्रीवास्तव 2017:46,47)

इस प्रकार महाजनों, अधिकारियों तथा पुलिसवालों के रिश्वत लेने की बात को उकेरा गया है। साथ ही वे लोग अपने कर्तव्य को कैसे भूल जाते हैं, उसको लेकर भी करारा व्यंग्य किया गया है ।

7.2.4. लोभवृत्ति पर व्यंग्य :

लोभ हर मनुष्य की एक स्वाभाविक प्रवृत्ति है। लोभ जैसे बुरी प्रवृत्ति को अगर हम नियंत्रण नहीं कर पाते हैं, तब कितनी भयंकर परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है, इसका बहुत ही सुंदर उदाहरण भारतेंदु ने गोबरधनदास के जरिए प्रस्तुत किया है। लोभ को पाप का मूल कारण बताया है। गुरु महंत अपने शिष्य गोबरधनदास को समझाते हैं-

लोभ पाप का मुल है, लोभ मिटावन मान ।
लोभ कभी नहीं कीजिए , या मैं नरक निदान ।।

(श्रीवास्तव 2017:42)

परंतु गोबरधनदास लोभ के कारण अंधेर-नगरी में रहना पसंद करता है, क्योंकि वहाँ सभी वस्तु टके सेर में मिलती थी। इसीलिए वह आराम से खाकर अंधेर नगरी में जीवन व्यतीत करना चाहता था। लोभ के कारण अंधेर नगरी उसे मृत्यु की अवस्था तक ले जाती है। नाटक के अंत में महंत अपने शिष्य गोबरधनदास को बचाने के लिए लोभ की ही बुद्धि लगाते हुए कहते हैं कि ''इस समय जो मरेगा वह सीधा बैकुंठ जाएगा।'' इस बात को सुनकर राजा खुद को बैकुंठ जाने के लोभ में

फाँसी चढ़ाने के लिए हुकुम देते हैं। इस प्रकार से आलोच्य नाटक में लोभ, मूर्खता और अंधविश्वास को लेकर चौपट राजा पर बहुत ही तीव्र व्यंग्य किया गया है ।

8. उपलब्धियाँ :

8.1. अंधेर नगरी नाटक को हम व्यंग्य का भंडार कह सकते हैं ।

8.2. औपनिवेशिक शासन-व्यवस्था की पतनशील अवस्था का आभास कराने में यह नाटक समर्थ हुआ है।

8.3. भारतेंदु की भाषा, संवाद-योजना भी घटना के अनुसार रोचक और विनोदपूर्ण है ।

8.4. नाटक की हर एक समस्या कहीं-न-कहीं आज भी प्रासंगिकता रखती है।

8.5. नाटक में तत्कालीन सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक आदि सभी समस्याओं के ऊपर तीखा व्यंग्य किया गया है ।

8.6. अंधेर नगरी में लोभ, अंधविश्वास, अन्याय और अनाचार की अवस्था का हास्यास्पद वर्णन हुआ है।

निष्कर्ष :

अंधेर नगरी को एक प्रहसन भी कहा गया है । यह छह अंकों का एक बहुत ही छोटा-सा नाटक है। हम यह कह सकते हैं कि जिस तरह से बिहारी के दोहे देखने में छोटे लगते हैं, परंतु उसका घाव गंभीर होता है, ठीक उसी तरह भारतेंदु हरिश्चंद्र का अंधेर नगरी नाटक भी देखने में छोटा-सा है, पर उसका असर बहुत गंभीर है। 'टके सेर' को नाट्यकार ने व्यंग्य के बीज शब्द के रूप में प्रयोग किया है।

पूरा नाटक व्यंग्य से भरा हुआ है और इसे मंच पर भी खेला जाता है। इससे भारतेंदु एक प्रसिद्ध व्यंग्यकार सिद्ध होते हैं और आलोच्य नाटक की लोकप्रियता बनी रही है। शोषक और शोषित वर्गों की समस्या, जातिवाद की समस्या , लोभ की समस्या आदि सभी पहलुओं पर गहराई से व्यंग्य किया गया है। अत: पाठकों को हास्य रस का स्वाद प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होता है। ❑

ग्रंथ सूची :

1. ओझा, दशरथ. हिंदी नाटक उद्‌भव और विकास. दिल्ली : राजपाल प्रकाशन, 2013
2. सिंह, बच्चन. हिंदी नाटक. नई दिल्ली : राधाकृष्ण प्रकाशन, 2011
3. सिंह यादव, वीरेन्द्र. सम्पा. भारतेंदु हरिश्चंद्र के साहित्य में भाव बोध:स्थापनाएँ और प्रस्थापनाएँ, नई दिल्ली : ओमेगा पब्लिकेशन, 2011
4. श्रीवास्तव, परमानंद. सम्पा. भारतेंदु हरिश्चंद्र अंधेर नगरी. इलाहाबाद : लोकभारती प्रकाशन, 2017

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

आलेख

भारत को आत्मनिर्भर बनाने में हिंदी भाषा का योगदान

गायत्री
शोधार्थी, हिंदी विभाग
हरियाणा केंद्रीय विश्वविद्यालय
महेंद्रगढ़, हरियाणा-123029
9588199223
gayatridixit113@gmail.com

रोबिन
शोधार्थी, हिंदी विभाग
हरियाणा केंद्रीय विश्वविद्यालय
महेंद्रगढ़, हरियाणा-123029
9996321346
rbnvalley@gmail.com

शोध सार :

भारत एक विकासशील देश है। भारत की अर्थव्यवस्था दुनिया की 5वीं सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था बन गई है। भारत निरंतर प्रगति के पथ पर अग्रसर हो रहा है, इस अद्भुत प्रगति के कारण भारत वैश्विक अर्थव्यवस्था में 'ब्राइट स्पॉट' के नाम से उभर कर सामने आ रहा है। भारत स्वयं को पूर्ण रूप से आत्मनिर्भर बनाने की ओर सक्रिय है। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु 'वोकल फॉर लोकल' कैंपेन की शुरुआत की गई है। इस अभियान के तहत भारत की स्थानीय कला, शिल्प और कारीगरी को ही बढ़ावा नहीं दिया जा रहा है, अपितु स्थानीय भाषाओं, स्थानीय संस्कृति,स्थानीय सभ्यता को भी बढ़ावा दिया जा रहा है। आज जब हम विश्व की अन्य अर्थव्यवस्थाओं को देखते हैं तो पाते हैं कि जो देश आज विकसित हैं, आत्मनिर्भर हैं, वो सदैव अपनी भाषा को बढ़ावा देते हैं। भाषा संवाद का माध्यम है, आदान-प्रदान का माध्यम है, बिना भाषिक रूप से आत्मनिर्भर हुए कोई देश आत्मनिर्भर होने की कल्पना भी नहीं कर सकता। भारत की भाषिक परंपरा काफी समृद्ध है और भाषा की यही संपन्नता आज भारत को आत्मनिर्भर बनाने में महत्वपूर्ण स्तंभ का काम कर रही है।

बीज शब्द :

आत्मनिर्भर, आत्मनिर्भर भारत, हिन्दी भाषा, स्थानीयता।

मूल आलेख :

आत्मनिर्भरता से अभिप्राय है-अपनी आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक एवं वैचारिक आवश्यकताओं हेतु स्वयं पर निर्भर होना। भारत प्राचीन काल से ही आत्मनिर्भर रहा है। भारतीय सभ्यता प्राचीनतम सभ्यताओं में से एक है। सिंधु घाटी सभ्यता मिस्र, मेसापोटामिया, चीन आदि तत्कालीन सभ्यताओं में सबसे उन्नत और आत्मनिर्भर सभ्यता थी। सिंधु घाटी सभ्यता के लोग व्यापार के महत्व से भी परिचित थे। कृषि, उद्योग, नगरीय व्यवस्था, शिल्प एवं कला सभी दृष्टियों से सिंधु घाटी सभ्यता सर्वोन्नत और पूर्ण रूप से आत्मनिर्भर सभ्यता थी। भारत आज भी

प्राकृतिक संसाधनों की दृष्टि विश्व में सबसे समृद्ध देश है। भारत सदा से ही अपनी आवश्यकताओं को आत्मनिर्भरता से पूरी करता आया है। भारत को सोने की चिड़िया कहा जाता था, इसलिए नहीं कि भारत की मिट्टी सोना उगलती थी, अपितु इसलिए क्योंकि भारत अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के अतिरिक्त यूरोपीय देशों के साथ व्यापार करता था। उस समय वस्तु-विनिमय का प्रचलन था और भारत को वस्तुओं के व्यापार के बदले स्वर्ण की प्राप्ति होती थी। इस संदर्भ में मैथिलीशरण गुप्त जी की निम्न पंक्तियाँ सार्थक सिद्ध होती हैं-

होता प्रयोजन से प्रचूर पुरित जहां धन धान्य था,
जो स्वर्ण भारत नाम से संसार में सम्मान्य था ।

भारत सदा से समृद्ध रहा है। यही कारण है कि कुषाण, हूण, अरब, तुर्क, खिलजी, लोधी, मुगल या फिर अंग्रेजों द्वारा भारत को उपनिवेश बनाया गया। औपनिवेशिक काल में भारत की समृद्ध विरासत क्षीण होती गई। किंतु भारतीय प्रवृत्ति हार मानने की नहीं है, इसलिए स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान भी स्वदेशी अपनाने और आत्मनिर्भर होने के नारे लगाए जा रहे थे। वर्तमान समय में 'आत्मनिर्भर भारत' भारत को विश्व अर्थव्यवस्था में अधिक कुशल, प्रतिस्पर्धी और लचीला बनाने हेतु एक अभियान के रूप में आया। कोरोना वायरस के दौरान घरेलू अर्थव्यवस्था में निरंतर आ रही मंदी को देखते हुए भारत सरकार इस विकल्प के साथ सामने आई। इस अभियान के तहत सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्योगों को बढ़ावा दिया गया, 'मेक इन इंडिया' को बढ़ावा दिया गया, गरीबों, श्रमिकों और किसानों के लिए कई तरह की घोषणाएँ एवं योजनाएँ प्रस्तुत की गईं। इसी आत्मनिर्भर अभियान के दौरान एक नारा जो बहुत प्रचलित हुआ वह था - 'वोकल फॉर लोकल'। इसके तहत स्थानीयता को बढ़ावा दिया गया। ये बात मान्य है कि स्थानीयता के बिना हम विकास की ऊँचाइयों को नहीं छू पाएँगे। एक पेड़ जब तक अपनी जड़ों से लगा रहता है, वह तभी तक हरा भरा रह सकता। स्थानीयता को महत्व देने के साथ-साथ स्थानीय भाषाओं को महत्व दिया गया। भाषा हमारी अस्मिता के साथ जुड़ी है। भाषिक अस्मिता पर संकट हमारे अस्तित्व के लिए भी संकट पैदा कर सकता है। जब-जब भारत पर विदेशी शासन हुआ, उन्होंने सबसे पहले भाषा पर अपना आधिपत्य स्थापित करने की कोशिश की। कुषाण, हूण, अरब, तुर्क, खिलजी, लोधी, मुगल या फिर अंग्रेज- सभी ने सबसे पहले परिवर्तन भाषा के स्तर पर किए, जिनके प्रभाव हम आज तक भुगत रहे हैं। देश को चलाने के लिए भाषा की आवश्यकता होती है। बिना भाषा के देश की व्यवस्था चरमरा जाएगी। महावीर प्रसाद द्विवेदी जी भी यह स्वीकार करते हुए कहते हैं-

''देश को देशत्व प्राप्त होने के लिए विशेष करके दो बातें जरूरी होती हैं। एक भाषा, दूसरा धर्म। अर्थात जिस देश में सर्वत्र एक ही भाषा और एक ही धर्म प्रचलित है, वही देश देशत्वयुक्त है। अर्थात देश को सजीव रखने के लिए एक भाषा और एक धर्म की प्रधान आवश्यकता होती है।''[1]

इस प्रकार हम देखते हैं कि भाषा एक देश को एकता के सूत्र में पिरोए रखती है। किसी भी देश को विकास की राह पर बढ़ने के लिए एक भाषा की आवश्यकता होती है। मनुष्य का समस्त कार्य-कलाप भाषा द्वारा ही प्रचालित होता है। व्यक्ति-व्यक्ति का अंतर्संबंध या व्यक्ति और समाज का अंतर्संबंध भाषा के बिना अकल्पनीय है। संस्कृत के महान भाषाविज्ञानी भर्तृहरी जी ने इस विषय में कहा है -''संसार में कोई ऐसा प्रत्यय नहीं है, जो भाषा के बिना संभव हो।''

इसी संदर्भ में महावीर प्रसाद द्विवेदी जी भी कहते हैं - ''देश के काम काज भाषा के ही द्वारा होते हैं। यदि भाषा न हो तो सहसा सब व्यापार बंद हो जाए। इंजिन चलाने के लिए जैसे भाप की आवश्यकता है, देश के काम काज चलाने के लिए वैसे ही भाषा की आवश्यकता है। भाषा ही देश के कार्य कलाप चलाने की प्रधान शक्ति है।''[2]

देश के विकास और उन्नति के लिए भाषा की महत्ता स्वीकार करते हुए आगे द्विवेदी जी कहते हैं- ''देश की उन्नति, उसकी भाषा की उन्नति पर अवलंबित

रहती है। जिस देश की भाषा अच्छी दशा में है, वह देश उन्नत हुए बिना नहीं रहता। विचारों को प्रकट करने का मार्ग भाषा ही है। जिस देश में सुविचारों का अभाव है, उस देश की अवस्था कभी नहीं सुधरती और सुविचारों का, कला कौशल संबंधी ज्ञान का और व्यापार विषयक तारतम्य आदि का, देश में भाषा ही के द्वारा प्रचार होता है। इसी से देश को उन्नत करने के लिए भाषा की उन्नति ही मुख्य साधन है।''[3]

भाषा वह माध्यम है, जिसके द्वारा हम अपने विचारों का आदान-प्रदान करते हैं। इस सृष्टि के मूल में विचार ही है। विचार ही मौलिक है। विचार ही सृजनात्मक है। भाषा विचारों की संवाहिका होती है। वैचारिक दृष्टि से हिंदी भाषा खूब समृद्ध है। भाषा किसी भी देश की वाणी होती है। किसी भी देश की संस्कृति को समझने के लिए उस देश की भाषा का ज्ञान होना आवश्यक है। भाषा के अभाव में किसी भी देश और समाज की कल्पना करना भी असंभव है। भारत विविधताओं का देश है। भारत में लगभग 1000 से भी अधिक भाषाएँ ओर बोलियाँ प्रचलित हैं, इसी कारण भारत सांस्कृतिक रूप से समृद्ध देश है। भारतीय संविधान में 22 भाषाओं को संवैधानिक दर्जा प्राप्त है। भारत में प्रयुक्त प्रत्येक भाषा का अपना गौरवशाली इतिहास रहा है। हिंदी भाषा देव भाषा संस्कृत की परंपरा से निकल कर पालि, प्राकृत और अपभ्रंश की विशाल यात्रा तय करके अपने स्वतंत्र रूप में विकसित हुई है। कोई भी भाषा किसी देश की उन्नति और आत्मनिर्भरता में तभी योगदान दे सकती है, जब वह स्वयं में उन्नत और आत्मनिर्भर हो। इस विषय में डॉ. जितेंद्र वत्स जी लिखते हैं- ''हिंदी भाषा की अपनी संरचना है, स्वतंत्र ढाँचा है, उसकी निजी प्रकृति है और इसीलिए इसकी प्रथक सत्ता और पहचान है। इसका अपना व्याकरण है, जो किसी अन्य भाषा के व्याकरण से नियंत्रित नहीं होता।''[4]

हिंदी भाषा अपने आप में उन्नत और आत्मनिर्भर भाषा है। हिंदी भाषा का स्वयं का व्याकरण है, स्वयं की लिपि है। हिंदी एक वैज्ञानिक भाषा है। इसकी सबसे बड़ी विशेषता है कि यह वाचन ओर लेखन की दृष्टि से क्रमबद्ध है, अर्थात इसे जैसे बोला जाता है, वैसे ही लिखा भी जाता है। हिंदी वर्णमाला दुनिया की सबसे व्यवस्थित वर्णमालाओं में से एक है। हिंदी वर्णमाला का उच्चारण मनुष्य की शरीर रचना पर आधारित है। इसकी वर्णमाला की विशेषताओं को उद्घाटित करते हुए जॉन गिलक्रिस्ट कहते हैं- ''मानव मस्तिष्क से निकली हुई वर्णमालाओं में नागरी सबसे अधिक पूर्ण वर्णमाला है।''

इस प्रकार हिंदी अपने आप में व्यवस्थित और उन्नत भाषा है। भारत को आत्मनिर्भरता की ओर अग्रसर करने में भी हिंदी भाषा ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

आज संपूर्ण विश्व एक विश्व ग्राम के रूप में उभर रहा है। आज का युग वैश्वीकरण और बाजारीकरण का युग है। बाजार के निर्माण में भाषा का बहुत महत्व है। बाजार में भाषा चीजों को परिभाषित करती है। वैश्वीकरण के कारण उदारीकरण की प्रक्रिया को बढ़ावा मिल रहा है। बाजारों में अंतर्राष्ट्रीय आवागमन और निवेशों को बढ़ावा दिया जा रहा है। भारत एक विकासशील देश है।

विदेशी निवेश को भविष्य में आर्थिक विकास के उत्प्रेरक के रूप में देखा जाता है। साल 2022 में भारत में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश 10 फीसदी बढ़ा है। विदेशी निवेश भारत में रोजगार के नए अवसर उपलब्ध करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। बहुराष्ट्रीय निगम बड़े पैमाने पर भारत में पूँजी निवेश कर रहे हैं। भारत आज जनसंख्या की दृष्टि से विश्व में पहले स्थान पर है। भारत का बाजार विश्व का सबसे बड़ा बाजार है। भारत दुनिया का छठा सबसे बड़ा उपभोक्ता बाजार बना हुआ है। कोई भी बहुराष्ट्रीय कंपनी यदि अपने उत्पाद को भारतीय बाजार में प्रतिष्ठित कर देती है तो उसका मुनाफा दोगुना हो जाता है। भारत की लगभग 50 फीसदी जनसंख्या हिंदी भाषी है। आज हम देखते हैं कि हमारे भारतीय बाजार में अधिकतर उत्पाद विदेशी हैं, लेकिन भारतीय समाज और भारतीय घरों में वो अपनी पैठ बना चुके हैं, केवल भाषा के कारण। उत्पादों के नाम उनसे संबंधित विज्ञापन आदि सभी हिंदी भाषा में हैं। प्रत्येक मनुष्य का अपनी भाषा के प्रति लगाव होता है। भाषा हमें व्यक्तियों से जोड़ने के साथ-साथ वस्तुओं से जोड़ने का काम भी करती है। जब विदेशी उत्पादों का भारतीय भाषा में प्रचार किया जाता है तो वह उत्पाद विदेशी नहीं प्रतीत होता और भारतीय खुले दिल से उस उत्पाद का उपयोग शुरू कर देते हैं। इस प्रकार विदेशी निवेश को भारत में आकर्षित करने में भाषा की बहुत अहम भूमिका है। आत्मनिर्भर होने के लिए भारत को केवल विदेशी निवेश पर आधारित होने की आवश्यकता नहीं है। भारत में हमें निजी उद्योगों को भी बढ़ावा देने की आवश्यकता है। 'भारत-भारती' में 1912 में ही मैथिलीशरण गुप्त इस ओर हमारा ध्यान आकृष्ट करते हैं-

तुम सभ्य हो, मार्केट जिनका सात सागर पार है,
पर ग्राम की वह हाट ही उनका बड़ा बाजार है।

हम अपनी भाषा के जरिए अपने लोगों को आगे आने के लिए प्रोत्साहित कर सकते हैं। आँकड़ों के अनुसार हिंदी आज विश्व भाषा है। लगभग 130 करोड़ लोग विश्व के 160 देशों में हिंदी बोल रहे हैं। इस तरह हिंदी भाषा के जरिए आज हम विश्व के 160 देशों तक पहुँच सकते हैं। आज हिंदी इंटरनेट पर भी अपनी उपस्थिति दर्ज करा चुकी है। हिंदी में इंटरनेट यूजर्स की संख्या निरंतर बढ़ती जा रही है। कंप्यूटर्स की दुनिया में भी हिंदी अब अपना स्थान बनाने लगी है। ईसीआईएल हैदराबाद की एक कंपनी ने 1977 हिंदी में 'फोट्रॉन' नामक कंप्यूटर प्रोग्राम चलाया। आईआईटी कानपुर द्वारा सभी भारतीय भाषाओं के प्रयोग के लिए आसान कुंजीपटल की प्रणाली तैयार की गई है। कंप्यूटर पर हिंदी भाषा में अनुप्रयोगों को बढ़ावा देने के लिए कई तरह के आईटी टूल्स एवं सॉफ्टवेयर आदि का विकास किया जा रहा है। इस प्रकार कंप्यूटर पर हिंदी के प्रयोग को लेकर जो प्रोत्साहन दिख रहा है, यह भारत को तकनीक और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में आत्मनिर्भर बनाने की ओर ही प्रयास है। वर्तमान समय को 'इंटरनेट की दुनिया' के रूप में देखा जा रहा है। भारत दुनिया में इंटरनेट का इस्तेमाल करने में दूसरे स्थान पर है। अमर उजाला में प्रकाशित सिस्को की एक रिपोर्ट के अनुसार भारत में सन 2025 तक इंटरनेट यूजर्स की संख्या 90.7 करोड़ होने की संभावना बताई जा रही है। इंटरनेट के जरिए आज हम पूरी दुनिया तक अपनी बात पहुँचा सकते हैं। हिंदी के उपयोगकर्ताओं की बढ़ती संख्या को देखते हुए बहुत से एप्प हिंदी में भी आ रहे हैं, साथ ही इंटरनेट की दुनिया में धाक जमा चुके एप्प अपने हिंदी के विकल्प के साथ सामने आ रहे हैं। आज सोशल मीडिया के माध्यम से हम आसानी से पूरी दुनिया से जुड़ पा रहे हैं। सोशल मीडिया पर हिंदी के बढ़ते प्रयोग से हम पूरे विश्व के समक्ष अपनी नई पहचान के साथ उभर रहे हैं। इंटरनेट पर बढ़ते हिंदी के अनुप्रयोग के माध्यम से हम आज भारतीय दर्शन, संस्कृति, साहित्य एवं चिंतन के साथ-साथ भारतीय बाजार, भारतीय कौशल एवं शिल्प, भारतीय उत्पादों को पूरे विश्व तक पहुँचा सकते हैं। भारतीय अर्थव्यवस्था मूलत: कृषि प्रधान अर्थव्यस्था है। शिक्षा का स्तर भारत में निश्चित रूप से बढ़ा है, लेकिन भारत के अधिकांश जन आज भी इंटरनेट पर हिंदी के प्रयोग से पहले इंटरनेट और इंटरनेट की भाषा से अपरिचित थे। जब से इंटरनेट हिंदी के विकल्प के साथ सामने आया है, तब से भारत में इंटरनेट यूजर्स

की संख्या में वृद्धि हुई है। हिंदी भाषा ने भारत को न केवल आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होने की ओर अग्रेसित किया है, अपितु अपनी गौरवशाली इतिहास और संस्कृति को साहित्य के माध्यम से जन-जन तक पहुँचा कर वैचारिक रूप से भी आत्मनिर्भर होने के लिए तत्पर किया है। भारतीय दर्शन विश्व के प्राचीनतम दर्शनों में से है। हिंदी साहित्य ने संपूर्ण विश्व को भारतीय दर्शन की ओर पुन: उन्मुख किया है। सामाजिक व्यवस्था से लेकर राजनीतिक व्यवस्था का आदर्श रूप कैसा होना चाहिए, हिंदी साहित्य में अभिव्यक्त हुआ। जब भारत पराधीन था और अपनी स्वतंत्रता के लिए संघर्ष कर रहा था, उस समय भी हिंदी भाषा के माध्यम से ही जानता को उनके अधिकारों के प्रति सचेत किया जा रहा था, उनके हृदय में राष्ट्रवादी उद्‌गार प्रस्फुटित करने का प्रयास किया जा रहा था। उन्हें आत्माधीन और आत्मनिर्भर होने के लिए प्रेरित किया जा रहा था।

बालमुकुंद गुप्त जी की निम्न काव्य पंक्तियाँ –

अपना बोया आप ही खावें,
अपना कपड़ा आप बनावें बढ़े सदा अपना व्यापार,
चारों दिस हो मौज बहार।

माल विदेशी दूर भगावें
अपना चरखा आप चलावें
कभी ना भारत हो मुंहताज
सदा रहे टेसू का राज।

ये काव्य पंक्तियाँ दर्शाती हैं कि हिंदी भाषा ने साहित्य के माध्यम से भी भारत को आत्मनिर्भर होने के लिए प्रेरित किया है। हिंदी के अन्य साहित्यकार एवं साहित्यिक कृतियों ने चाहे वह आदिकालीन वीरकाव्य हो या भक्ति आंदोलन, रीतिकालीन काव्यशास्त्रियों के काव्य लक्षण हों या आधुनिक गद्य साहित्य, तुलसीदास जी का रामचरितमानस, सूरदास का कृष्णकाव्य, कबीर के पदों, बिहारी की सतसई से लेकर प्रेमचंद के गोदान, भीष्म साहनी के तमस, श्रीलाल शुक्ल के रागदारबारी आदि तक ने भारतीय समाज को नवीन चिंतन दृष्टि प्रदान की है।

अध्ययन के आधार पर हम कह सकते हैं कि देश की अस्मिता भाषा से जुड़ी होती है, उसकी उन्नति उसकी भाषा पर निर्भर करती है और हिंदी भाषा भारत को आर्थिक, सामाजिक, दार्शनिक एवं वैचारिक रूप से आत्मनिर्भर बनाने में प्रयासरत है। ❑

संदर्भ :

1. द्विवेदी, महावीर प्रसाद, हिंदी भाषा, पृष्ठ-59
2. वही; 60
3. वही; 68
4. वत्स, डॉ. जितेंद्र, हिंदी भाषा : विविध आयाम, पृष्ठ -160
5. http://vicharakmanch.com/indian-literature-and-its-global-importance/
6. https://hindumahasagar.wordpress.com
7. https://aatmanirbharbharat.mygov

समिति समाचार

असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति का 22वाँ दीक्षांत समारोह

असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति का 22वाँ दीक्षांत समारोह गत 17 दिसंबर, 2023 को आयोजित किया गया। रूपनगर स्थित समिति परिसर में आयोजित इस कार्यक्रम में मुख्य अतिथि के रूप में असम के महामहिम राज्यपाल **श्री गुलाब चंद कटारिया जी** उपस्थित रहें। कार्यक्रम के दौरान अपने भाषण में उन्होंने कहा कि हिंदी अन्य भाषाओं को साथ लेकर चलने वाली भाषा है। हिंदी सभी भाषाओं की भावनाओं में समन्वय बनाए रखते हुए एकता के सूत्र में बांधने का काम करती है। दीक्षांत समारोह में राज्यपाल ने नई शिक्षानीति पर प्रकाश डालते हुए कहा कि देशभर के युवा समन्वय के साथ शिक्षा के क्षेत्र में अग्रसर होंगे। इसके साथ ही सभी को 2045 में भारत दुनिया का नं 1 देश बनाने के लिए भी संकल्प लेने की अपील की। साथ ही उन्होंने कहा कि हिंदी भाषा देश के सभी लोगों को एक सूत्र में बाँधने का काम करती है। संस्कृत सभी भाषाओं की जननी है। संस्कृत से ही हिंदी, असमीया और अन्यभाषाएँ निकली है। देश के किसी भी प्रान्त में चले जाएँ, लेकिन आज भी पूजा-पाठ संस्कृत में ही होता है। आदि शंकराचार्य ने चार मठों की स्थापना कर देश को एक सूत्र में बांधने का काम किया। उन्होंने इस अवसर पर असम के महापुरुष श्री मंत शंकरदेव, महाराष्ट्र के ज्ञानेश्वर व नामदेव। गुजरात के नरसी मेहता, बंगाल के चैतन्य महाप्रभु, दक्षिण भारत के वल्लभाचार्य, रामानन्द आदि संतों को भी स्मरण किया।

उन्होंने अपने भाषण क्रम में आगे कहा कि हिंदी आज दुनिया में बोली जाती है और यह वैश्विक भाषा बन चुकी है। हमारे देश में हिंदी बोलने तथा समझने वाले लोगों की संख्या दिन-ब-दिन बढ़ रही है, जो कि हर्ष का विषय है। हिंदी दुनिया में सबसे अधिक बोली जाने वाली तीसरी बड़ी भाषा है। आज हिंदी को पूरे विश्व में बेहद सम्मान दिया जाता है। हिंदी भाषा विदेशों में भी भारत को एक अलग पहचान देती है और देश में विभिन्न भाषा बोलने वाले हम भारतीयों को एकरूपता के धागे में पिरोती हैं। पूर्व प्रधानमंत्री अटल बिहारी बाजपेयी जी ने संयुक्त राष्ट्रसंघ में हिंदी में संबोधन कर इस भाषा को वैश्विक स्तर पर पहुँचाने का काम किया, जिसे प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने नया आयाम दिया। मोदी जी के नेतृत्व में हिंदी का मान-सम्मान और अधिक बढ़ा है। वे अन्तर्राष्ट्रीय मंच से अक्सर हिंदी में संबोधन करते हैं। विश्व के लगभग एक सौ पचास विश्वविद्यालयों में हिंदी का पठन-पाठन हो रहा है। स्वाधीनता संग्राम का जिक्र करते हुए उन्होंने कहा कि आजादी के आंदोलन में हिंदी ने देश को जोड़ने का काम किया। महात्मा गांधी ने भारत रत्न लोकप्रिय गोपीनाथ बरदलै को हिंदी के पूर्वोत्तर में प्रचार-प्रसार के लिए चुना और बरदलै ने स्वतंत्रता आंदोलन को असम में नेतृत्व दिया। दरअसल लोकप्रिय गोपीनाथ बरदलै एक युगद्रष्टा नेता थे। उन्होंने गांधीजी की विचारधारा को, गांधीजी के अहिंसा आंदोलन को असम के कोने-कोने तक पहुँचाया था। ऐसी महान विभूतियों के जीवन और योगदान को यादगार बनाए रखने के लिए संस्था को ठोस कदम उठाने के लिए उन्होंने आग्रह किया। श्रीमंत शंकरदेव के साहित्य को देशभर में पहुँचाने के लिए हिंदी में उनके कार्यों को अनुवाद करने पर राज्यपाल महोदय ने जोर दिया। उन्होंने कहा कि श्रीमंत शंकरदेव के बारें में समूचे देश को पता होना चाहिए और यह काम हिंदी के माध्यम से ही संभव है। इसके अलावा राज्यपाल ने हिंदी साहित्य को भी असमीया भाषा में अनुवाद कर लोगों तक पहुँचाने की अपील की।

इस अवसर पर विशिष्ट अतिथि के रूप में केंद्रीय हिंदी निदेशालय, शिक्षा विभाग, भारत सरकार तथा केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा के निदेशक **प्रो. सुनील बाबुराव कुलकर्णी जी** उपस्थित रहें। उन्होंने अपने भाषण में कहा कि आजादी के आंदोलन में हिंदी ने अहम भूमिका निभाई। देशवासियों को हिंदी ने जोड़ने का काम किया, जिसके

कारण आजादी के आंदोलन को गति मिली। यह हम जानते हैं कि भाषा का कोई रूप, रंग, जाति या आकार नहीं होता है। उसे तो सिर्फ महसूस किया जाता है। हमारी हिंदी का तो कुछ कहना ही नहीं है, इसकी शब्दों में इतनी मिठास है कि विश्व का हर व्यक्ति इसे सीखना और बोलना चाहता हैं। उन्होंने आगे कहा कि भाषा से लोगों के संस्कार एवं संस्कृति भी जुड़ी होती है। हिंदी भारतीय संस्कृति की अस्मिता की पहचान है। वर्तमान के परिदृश्य में यह जरूरी है कि हम मातृभाषा के संरक्षण व संवर्धन में अपनी अहम भूमिका निभाएँ तथा राजभाषा के रूप में हिंदी को भी बढ़ावा दें। उन्होंने राष्ट्रभाषा गौरव प्राप्त विशिष्ट हिंदी सेवियों को धन्यवाद दिया तथा प्रवीण उपाधिप्राप्त स्नातक-स्नातिकाओं से समाज व देश के कल्याण के लिए काम करने का आग्रह किया।

दिल्ली विश्वविद्यालय से पधारे हिंदी विभाग के पूर्व अध्यक्ष और कला संकाय के पूर्व डीन **प्रो. मोहन जी** ने भी विशिष्ट अतिथि के रूप में उपस्थित होकर सभा का मान बढ़ाया। उन्होंने अपने भाषण में कहा कि हमारी क्षेत्रीय भाषाओं के साहित्य का हिंदी में और हिंदी साहित्य का अन्य क्षेत्रीय भाषाओं में अनुवाद होना चाहिए। वैचारिक, सांस्कृतिक और भावनात्मक आदान-प्रदान से ही भारतीय साहित्य समृद्ध बनाया जा सकेगा। उन्होंने कहा कि हिंदी का उपयोग ज्ञान-विज्ञान, सूचना-प्रौद्योगिकी समेत ज्ञान के हर क्षेत्र में अधिकाधिक प्रयोग होना चाहिए। हिंदी के प्रचार-प्रसार के क्षेत्र में सराहनीय कार्य करने के लिए समिति ने जिन व्यक्तियों को राष्ट्रभाषा गौरव सम्मान से अलंकृत किया है, उन सभी को उन्होंने बधाई दी। प्रवीण उपाधि पत्र ग्रहण करने वाले स्नातक-स्नातिकाओं को उन्होंने देशसेवा के लिए तत्पर रहने के लिए आग्रह किया।

इस अवसर पर समिति के मंत्री **डॉ. क्षीरदा कुमार शइकीया** ने अपने स्वागत भाषण में समिति की उपलब्धियाँ गिनाई। उन्होंने कहा कि देश की हिंदी प्रचार समितियों में असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति अपना विशेष स्थान बनाने में सक्षम हुई है। इसके पदाधिकारी राष्ट्रपति महोदय से सम्मानित होने के अलावा उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा दिये गये 'राजर्षि पुरुषोत्तम दास टण्डन सम्मान', ऑस्ट्रेलिया के नान्दी (फिजि) में 17 फरवरी, 2023 में आयोजित द्वादश विश्व हिंदी सम्मेलन द्वारा 'विश्व हिंदी सम्मान' प्राप्त करने में सक्षम हुए है। इसके अलावा बिहार सरकार के सचिवालय (राजभाषा विभाग) द्वारा गत 31 जुलाई, 2023 को समिति को 2021-2022 के लिए हिंदी प्रचार-प्रसार के क्षेत्र में विशेष योगदान हेतु 'विद्याकर कवि सम्मान' से भी सम्मानित किया गया। वास्तव में समिति के माननीय अध्यक्ष महोदय, प्रचारक-प्रचारिकाएँ, हिंदी प्रेमी, समिति के कर्मचारी, छात्र-छात्राएँ ही इन सम्मानों के प्रकृत हकदार हैं। उन्होंने इस अवसर पर सभी को बधाई दी।

इस समारोह में असम तथा पूर्वांचल में हिंदी के प्रचार-प्रसार में महत्वपूर्ण योगदान देने वाले 5 विशिष्ट व्यक्तियों को समिति का सर्वोच्च सम्मान 'राष्ट्रभाषा गौरव' प्रदान किया गया। वर्ष 2019 के लिए बको (असम) के श्री सर्वेश्वर महन्त, वर्ष 2020 के लिए मेघालय के श्री सकलदीप राय, वर्ष 2021 के लिए कोकराझार (बी.टी.आर) के श्री मेघनाथ मुसाहारी और विश्वनाथ (असम) के श्री शंकर प्रसाद साहु को संयुक्त रूप से और वर्ष 2022 के लिए शिवसागर (असम) के श्री हरिकांत नाथ (अनुपस्थित) को राज्यपाल महोदय के कर-कमलों से राष्ट्रभाषा गौरव प्रदान किया गया। 'राष्ट्रभाषा गौरव' से सम्मानित व्यक्तियों को बधाई देते हुए राज्यपाल महोदय ने कहा कि आप लोग हमारी नई पीढ़ी के लोगों के लिए प्रेरणा बनेंगे। उन सभी का दीर्घायु कामना कर भविष्य में भी निरंतर हिंदी के प्रचार-प्रसार में सहयोग देने की अपील की। समिति प्रांगण में आयोजित इस 22वें दीक्षांत समारोह में वर्ष 2019 के 3193, वर्ष 2020 के 1400, वर्ष 2021 के 1580 और वर्ष 2022 के 1810 कुल 7983 प्रवीण उत्तीर्ण स्नातक-स्नातिकाओं को प्रमाण-पत्र वितरित किये गये। राज्यपाल महोदय ने प्रमाण-पत्र वितरित कर सभी स्नातकों से अपने समाज व राष्ट्र के विकास में अपनी सहभागिता सुनिश्चित करने की अपील की।

इस अवसर पर गुवाहाटी विश्वविद्यालय, कॉटन विश्वविद्यालय, तेजपुर केंद्रीय विश्वविद्यालय सहित विभिन्न शैक्षिक संस्थानों के गणमान्य व्यक्ति तथा समिति के प्रचारक-प्रचारिकाएँ उपस्थित थे। ❑

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

মিচিং ভাষা ঃ সংকট আৰু সম্ভাৱনা

ত্রিনয়ন দলে
গৱেষক ছাত্র, অসমীয়া বিভাগ
অসম বিশ্ববিদ্যালয়, ডিফু চৌহদ
৯৯৫৭৭২৭৩৬৯

ড° হীৰা মান্না দাস
সহকাৰী অধ্যাপক
অসমীয়া বিভাগ
অসম বিশ্ববিদ্যালয়, ডিফু চৌহদ
কাৰ্বি আংলাং, অসম - ৭৮২৪৬০
৮৬৩৮৭৮৫৪৩১
hiramanna82@gmail.com

সাৰাংশ ঃ

উত্তৰ-পূব ভাৰতৰ জনগোষ্ঠীয় ভাষাবোৰৰ ভিতৰত মিচিং ভাষাও অন্যতম। বিশেষকৈ অসম আৰু অৰুণাচল প্ৰদেশৰ বিভিন্ন অঞ্চলত মিচিং ভাষী লোকসকলে বসবাস কৰি আছে। অসমৰ উজনি অংশৰ তিনিচুকীয়া, ডিব্ৰুগড়, যোৰহাট, গোলাঘাট, ধেমাজী, লখিমপুৰ, শোণিতপুৰ জিলাৰ লগতে নামনি অসমৰ কামৰূপ জিলাত প্ৰধানকৈ এই জনগোষ্ঠীৰ লোক দেখা যায়। মিচিং জনগোষ্ঠীৰ লোকে ব্যৱহাৰ কৰা ভাষাটোৱে 'মিচিং ভাষা'।

মিচিং জনগোষ্ঠীৰ এক ঐশ্বৰ্যশালী সাংস্কৃতিক ঐতিহ্য আছে। তদুপৰি ধ্বনিগত, ৰূপগত, শব্দগত, বাক্যগত আদি আটাইকেইটা দিশতে এক পূৰ্ণ বিকশিত ভাষাৰ সকলোখিনি বৈশিষ্ট্যই মিচিং ভাষাত পৰিলক্ষিত হয়। কিন্তু ৰাজনৈতিক, সামাজিক, শৈক্ষিক আদি বিভিন্ন কাৰকৰ প্ৰভাৱত আজি পৰ্যন্ত মিচিং ভাষাটোৰ উপযুক্ত বিস্তাৰ হোৱা দেখা নাযায়। মিচিং ভাষাৰ উপযুক্তভাৱে প্ৰসাৰ নোহোৱাৰ অন্তৰালতথকা প্ৰধান কাৰণ হ'ল— বহুদিনলৈ মিচিং ভাষাৰ এক সুনিৰ্দিষ্ট লিপি নিৰ্ধাৰণ নোহোৱাটো আৰু আনুষ্ঠানিক শিক্ষাৰ মাধ্যম হিচাপে মিচিং ভাষা অন্তৰ্ভুক্ত নকৰাটো। এনেবোৰ কাৰণত সৃষ্টি হোৱা ভাষাগত উচ্চমন্যতা আৰু হীনমন্যতাও ভাষাটোৰ বিকাশ-বিস্তাৰৰ ক্ষেত্ৰত অন্তৰায় হৈ পৰা দেখা যায়। বৰ্তমান মিচিং ভাষাৰ প্ৰসাৰৰ বাবে যিবোৰ ব্যক্তিগত আৰু সমূহীয়া উদ্যোগ লোৱা হৈছে, তাৰ পিছতো ভাষাটোৰ প্ৰসাৰ আশানুৰূপ হোৱা বুলি ক'ব নোৱাৰি। শেহতীয়াকৈ হোৱা বিভিন্ন সমীক্ষাত বিপন্ন ভাষাৰ তালিকাত মিচিং ভাষাটো অন্তৰ্ভুক্ত হোৱা দেখা গৈছে। আমাৰ এই গৱেষণা পত্ৰখনত মিচিং ভাষালৈ নামি অহা সংকট আৰু এই ভাষাৰ সম্ভাৱনাৰ বিষয়ে গৱেষণামূলক দৃষ্টিৰে বিশ্লেষণ কৰাৰ প্ৰয়াস কৰা হৈছে।

বীজ শব্দ ঃ মিচিং, ভাষা, সাহিত্য, সংকট, সম্ভাৱনা আদি।

০.০ আৰম্ভণি ঃ

উত্তৰ-পূৰ্বাঞ্চল হ'ল বিভিন্ন জাতি-জনজাতিৰ বাসভূমি। উত্তৰ-পূৰ্বাঞ্চলৰ অন্তৰ্গত অসম, মেঘালয়, মণিপুৰ, নাগালেণ্ড, মিজোৰাম, অৰুণাচল প্ৰদেশ, ত্ৰিপুৰা, ছিকিম ৰাজ্যৰ জনগাঁথনি বৈচিত্ৰপূৰ্ণ হোৱা বাবে ইয়াত বহুভাষিক পৰিস্থিতি দেখা যায়। উত্তৰ-পূৰ্বাঞ্চলৰ এক অন্যতম জনগোষ্ঠী হ'ল মিচিংসকল। উত্তৰ-পশ্চিম চীনৰ হোৱাংহো

আৰু ইয়াংচিকিয়াং নদীৰ ফালৰ পৰা প্ৰব্ৰজিত মিচিং জনজাতিৰ লোকসকল বৰ্তমান অৰুণাচল প্ৰদেশৰ উজনি সোৱণশিৰি, পূব চিয়াং, নামনি দিবাং আৰু লোহিত জিলা আৰু উজনি অসমৰ তিনিচুকীয়া, ধেমাজী, লখিমপুৰ, ডিব্ৰুগড়, শিৱসাগৰ, মাজুলী, শোণিতপুৰ, গোলাঘাট আদি জিলাৰ লগতে নামনি অসমৰ কামৰূপ (নগৰ) জিলাতো বসবাস কৰি আছে। ঐশ্বৰ্যশালী সাংস্কৃতিক ঐতিহ্যৰ অধিকাৰী মিচিং জনগোষ্ঠীৰ আছে এক স্বকীয় বৈশিষ্ট্যপূৰ্ণ ভাষাও। তেওঁলোকে ব্যৱহাৰ কৰা ভাষাটো চীন-তিব্বতীয় ভাষা পৰিয়ালৰ তিব্বত-বর্মী শাখাৰ উত্তৰ-অসম প্ৰশাখাৰ অন্তৰ্গত। মৌখিক সাহিত্যত মিচিং জনজাতি অত্যন্ত চহকী যদিও লিখিত সাহিত্যৰ ক্ষেত্ৰত বৰ্তমানেও ভাষাটোৰ উপযুক্ত ধৰণে প্ৰসাৰ হোৱা দেখা নাযায়। আমাৰ এই গৱেষণা পত্ৰত মিচিং ভাষালৈ নামি অহা সংকট আৰু এই ভাষাৰ সম্ভাৱনাৰ বিষয়ে উপযুক্ত তথ্যৰ আধাৰত পুংখানুপুংখভাৱে বিশ্লেষণ কৰাৰ প্ৰয়াস কৰা হ'ব।

০.১ অধ্যয়নৰ পদ্ধতি ঃ

প্ৰধানকৈ বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতিৰে বিষয়বস্তু আগবঢ়োৱা হ'ব। প্ৰয়োজন সাপেক্ষে বৰ্ণনামূলক পদ্ধতিও গ্ৰহণ কৰা হ'ব।

১.০ বিষয়ৰ আলোচনা ঃ

মিচিং ভাষাৰ ইতিহাসলৈ লক্ষ্য কৰিলে দেখা যায় এই ভাষাটো কথিত ৰূপত অতীজৰে পৰা চলি আহিলেও এই ভাষাত লিখিত সাহিত্যৰ এক দীঘলীয়া ইতিহাস পোৱা নাযায়। লিখিত ৰূপত ভাষাটোৰ পৰ্যাপ্ত প্ৰয়োগ নেদেখাৰ ভালেমান কাৰণ উনুকিয়াব পাৰি। ইয়াৰ ভিতৰত প্ৰথম কাৰণ হিচাপে দেখুৱাব পাৰি বহুদিনলৈ এক সুনির্দিষ্ট লিপি নির্ধাৰণ নোহোৱাটো। ইয়াৰ উপৰিও আনুষ্ঠানিক শিক্ষাৰ মাধ্যম হিচাপে মিচিং ভাষাক স্বীকৃতি নিদিয়াটো অন্য এক প্ৰধান কাৰণ। তদুপৰি বিভিন্ন ৰাজনৈতিক, সামাজিক কাৰকৰ প্ৰভাৱত সৃষ্টি হোৱা ভাষাগত হীনমন্যতা, উচ্চমন্যতাও মিচিং ভাষাৰ প্ৰসাৰৰ ক্ষেত্ৰত প্ৰধান অন্তৰায় বুলি চিহ্নিত কৰিব পাৰি।

১.১ মিচিং ভাষাৰ নিজা লিপি নাছিল বাবে প্ৰাচীন লিখিত সাহিত্যৰ পৰম্পৰাও নাই। ঊনবিংশ শতিকাৰ মাজভাগৰ পৰা এই ভাষাৰ লিখিত পৰম্পৰা আৰম্ভ হৈছিল যদিও নিজা লিপিৰ অভাৱৰ বাবে প্ৰধানকৈ ৰোমান আৰু অসমীয়া লিপিৰ দ্বাৰা লিখা হৈছিল। সেই সময়লৈকে সুনির্দিষ্ট মিচিং লিপি এটা নির্ধাৰণ হোৱা নাছিল বাবে ব্যক্তিবিশেষে নিজা নিজা ধৰণে ভিন্ন লিপি ব্যৱহাৰ কৰি আছিল। সুনির্দিষ্ট লিপি এটাৰ সন্ধান কৰিবলৈ গুৱাহাটী নিবাসী মিচিং লোকৰ লগতে তাত কর্মৰত আৰু অধ্যয়নৰত লোকৰ উদ্যোগত ১৯৬৮ চনত 'গুৱাহাটী মিচিং কৌবাং' গঠন কৰিছিল। এই সভাৰ নেতৃত্ব লৈছিল টাবু টাইদ আৰু

নাহেন্দ্র পাদুনে। প্রথমছোৱাত অসমীয়া লিপিক পৰীক্ষামূলকভাৱে প্রয়োগ কৰি এই ক্ষেত্রত আগবাঢ়িছিল আৰু এই সম্পৰীক্ষাৰ প্রতি সাধাৰণ ৰাইজৰ পৰাও অভূতপূর্ব সঁহাৰি লাভ কৰিবলৈ সক্ষম হৈছিল। এই প্রসংগত 'মিচিং ভাষাৰ আভাস' গ্রন্থত নাহেন্দ্র পাদুনে লিখিছে — *১৯৬৯ চনত প্রকাশিত 'মিচিং ভাষাৰ লিপি ঃ এটি পৰীক্ষামূলক আঁচনি' নামৰ লিপিৰ প্রয়োগৰ পদ্ধতিৰ বাবে অভূতপূর্ব সঁহাৰি লাভ কৰে। ১৯৭০ চনত এই লিপিৰ প্রয়োগ পদ্ধতিৰ বাবে "মিচিং আগম্ লুয়িৰ্" নামৰ পুস্তিকাখন নাহেন্দ্র পাদুনৰ দ্বাৰাই প্রকাশ হৈ ওলায়। ইতিমধ্যে মিচিং ৰাইজৰ মাজত এই লিপি আঁচনি খোপনি পুতিলে।* (২২)

'গুৱাহাটী মিচিং কৌৰাঙ'ৰ দ্বিতীয় লানি আঁচনিত ৰোমান লিপিক লৈ সম্পৰীক্ষা কৰা হৈছিল। এই আঁচনিৰ পৰিণামস্বৰূপে টাবু টাইদ আৰু নাহেন্দ্র পাদুনৰ সম্পাদনাত ৰোমান লিপিৰে 'Mising Agom Ayyir' নামৰ পুথিখন ১৯৭১ চনত প্রকাশ হৈছিল। এই লিপিৰ আৰ্হিয়ে বিশেষভাৱে শিক্ষিতচামক আকর্ষিত কৰিবলৈ সক্ষম হৈছিল। সেয়ে ৰোমান লিপিক লৈ কৌৰাঙে আৰু বহুতো পৰীক্ষা-নিৰীক্ষা চলাই গৈছিল। এইখিনিতে উল্লেখযোগ্য যে *অসমীয়া লিপিৰ লগত দেৱনাগৰী লিপিৰ বিশেষ পার্থক্য নথকাৰ বাবে সেই আঁচনি গুৱাহাটী মিচিং কৌৰাঙে পিছুৱাই ৰাখিলে।* (পাদুন ২২) এইখিনিতে লিপি নির্ধাৰণৰ ক্ষেত্রত কৌৰাঙে বিশেষ সমস্যাৰ সন্মুখীন হ'বলগীয়া হ'ল। ৰাইজৰ মাজত লিপিক কেন্দ্র কৰি দুটা পক্ষৰ সৃষ্টি হ'ল। এচামে অসমীয়া লিপিৰ প্রতি সমর্থন জনালে আৰু আন এচামে ৰোমান লিপিৰ প্রতি সমর্থন জনাই নিজা নিজা ধৰণে কাম হাতত লৈ আগবাঢ়িবলৈ ধৰে। এনেদৰে লিপিক লৈ মানুহবোৰ দুই মেৰুত বিভাজিত হোৱাৰ বাবে সুনির্দিষ্ট লিপি গ্রহণ কৰাৰ ক্ষেত্রত কৌৰাঙে আৰু পিছুৱাই যাবলগীয়া হৈছিল। ১৯৭১ চনত অসম-অৰুণাচল সন্মিলিত মিচিং ছাত্র সন্থাৰ জোনাই অধিবেশনত টাবু টাইদ আৰু নাহেন্দ্র পাদুনৰ নেতৃত্বত ১১জনীয়া তদর্থ সমিতিৰ গঠন কৰি দিয়ে। এই সমিতিৰ উদ্যোগত ১৯৭২ চনত শিক্ষাবিদ্, বুদ্ধিজীৱী, ৰাজনৈতিক নেতা আৰু ছাত্র-ছাত্রীক লৈ অভিৰর্তন পাতিছিল যদিও লিপিকেন্দ্রিক আহুকালৰ সমাধান হোৱা নাছিল। কিন্তু যোগাত্মকভাৱে 'মিচিং আগম কৌবাং' (মিচিং সাহিত্য সভা)ৰ জন্ম হৈছিল। পৰৱর্তী সময়ত এই সভাৰ উদ্যোগত লিপিকেন্দ্রিক বিবাদৰ অৱসান ঘটাই সুনির্দিষ্ট লিপি এটা নির্ধাৰণ কৰিবলৈ কাম-কাজত আগবাঢ়িছিল। সেইদৰে বিভিন্ন পৰীক্ষা-নিৰীক্ষাৰ লগতে বিভিন্ন লোকৰ মতামত গ্রহণ কৰাৰ অন্তত ১৯৭৮ চনত ধেমাজীত বহা 'মিচিং আগম কৌবাঙ'ৰ অধিবেশনত সংশোধিত ৰোমান লিপিক মিচিং লিপি হিচাপে গ্রহণ কৰা হৈছিল।

খ্রীষ্টান মিছনেৰীসকলে ঊনবিংশ শতিকাৰ মাজভাগতেই মিচিং ভাষাৰ লিখিত পৰম্পৰা আৰম্ভ কৰিছিল যদিও পৰৱর্তী বহু কাললৈকে সুনির্দিষ্ট লিপি এটা নির্ধাৰণ কৰিব পৰা নাছিল। লিপিৰ ক্ষেত্রত থকা এই সমস্যা ইমানদিনে ভাষাটোৰ উত্তৰণৰ ক্ষেত্রত অন্তৰায় হৈ আছিল।

১.২ আনুষ্ঠানিক শিক্ষাৰ মাধ্যম হিচাপে চৰকাৰে স্বীকৃতি নিদিয়াটোও মিচিং ভাষাৰ প্রসাৰৰ ক্ষেত্রত অন্য এক অন্তৰায় বুলি উল্লেখ কৰিব পাৰি। বিভিন্ন শিক্ষাবিদে মত পোষণ কৰে যে শিশুসকলক প্রাথমিক পর্যায়ত মাতৃভাষাত শিক্ষাদান কৰিব পাৰিলেহে শিক্ষা গ্রহণ প্রক্রিয়া অধিক ফলপ্রসু হোৱাৰ সম্ভাৱনা থাকে, কিন্তু মিচিং ভাষাত এই সুবিধা আজি পর্যন্ত হৈ উঠা নাই। ১৯৭২ চনত জন্ম হোৱা 'মিচিং আগম কৌবাং' আৰু আন আন দল সংগঠনৰ নেতৃত্বত চৰকাৰক দাবী জনোৱাৰ ফলত ১৯৮৫ চনত মিচিং ভাষাই চৰকাৰী স্বীকৃতি লাভ কৰিছিল যদিও শিক্ষাৰ মাধ্যম হিচাপে বাস্তৱ ক্ষেত্রত আজিও কার্যকৰী হোৱা নাই। ১৯৮৫ চনৰ ৩০ অক্টোবৰত মিচিং ভাষাক প্রাথমিক পর্যায়ত এটা বিষয় হিচাপে স্বীকৃতি দিছিল আৰু সেইসূত্রে ২৩০ জন মিচিং ভাষা শিক্ষকো নিযুক্তি দিয়া হৈছিল। কিন্তু মিচিং গাঁওৰ সংখ্যা অনুসৰি আৰু মিচিং অধ্যুষিত অঞ্চলৰ বিদ্যালয় অনুসৰি শিক্ষকৰ সংখ্যা পর্যাপ্ত নাছিল। সেয়ে বিভিন্ন দল-সংগঠনে মিচিং গাঁওসমূহৰ জৰীপ কৰি প্রায় ১২৩০ খন গাঁওৰ বাবে পর্যাপ্ত পৰিমাণৰ শিক্ষক নিযুক্তিৰ বাবে দাবী জনাই আহিছে যদিও আজি পর্যন্ত চৰকাৰীভাৱে কোনোধৰণৰ গুৰুত্ব দিয়া দেখা নাযায়। বর্তমানে প্রাথমিক পর্যায়ত অন্তর্ভুক্ত কৰা মিচিং ভাষাৰ বিষয়টোও গুৰুত্বহীন হৈ পৰিল আৰু সেই বিষয়ৰ বাবে নিযুক্তি দিয়া শিক্ষকবোৰ বেছিভাগেই বিষয় শিক্ষকৰ পৰা সাধাৰণ শিক্ষক হিচাপে ইতিমধ্যে অৱসৰ গ্রহণ কৰিলে।

বর্তমানে পঞ্চম শ্রেণীলৈকে মিচিং ভাষাক বিষয় হিচাপে অন্তর্ভুক্ত কৰাৰ কথা ঘোষণা কৰিছে যদিও ই কার্যকৰী হোৱা নাই। অৱশ্যে 'মিচিং আগম কৌবাঙ'ৰ

উদ্যোগত ছমহীয়া মিচিং ভাষা শিক্ষাৰ পাঠ্যক্ৰম চলাই থকা হৈছে। সেইদৰে অসমৰ কেইবাখনো বিশ্ববিদ্যালয় যেনে— গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়, ডিব্ৰুগড় বিশ্ববিদ্যালয় আৰু মাজুলীৰ সাংস্কৃতিক বিশ্ববিদ্যালয়ে ছমহীয়া মিচিং ভাষা শিক্ষাৰ পাঠ্যক্ৰম চলাই আছে যদিও এনে পাঠ্যক্ৰমত মিচিং ভাষী ছাত্ৰৰ তুলনাত অনামিচিং ছাত্ৰৰ সংখ্যা তেনেই নগণ্য। এই পাঠ্যক্ৰমবোৰৰ প্ৰতি মিচিং লোকৰ লগতে অনামিচিং মানুহৰ আকৰ্ষণ বৃদ্ধি পালেহে ভাষাটোৰ উত্তৰণ হোৱাত সহায়ক হ'ব বুলি আশা কৰিব পাৰি।

মিচিং ভাষাৰ প্ৰসাৰৰ ক্ষেত্ৰত চৰকাৰৰ যি ভূমিকা থাকিব লাগিছিল সেয়া বাস্তৱ ক্ষেত্ৰত দেখা নাযায়। এই ক্ষেত্ৰত সময়ে সময়ে বিভিন্ন ধৰণৰ আঁচনি ঘোষণা কৰিছে যদিও আজিলৈ ঘোষণাৰ মাজতে আবদ্ধ হৈ আছে।

১.৩ সাধাৰণতে শিক্ষাদান আৰু শিক্ষাগ্ৰহণ প্ৰক্ৰিয়া অসমীয়া বা ইংৰাজী ভাষাৰ মাধ্যমেৰে হোৱাৰ ফলত সৃষ্টি হোৱা ভাষাগত উচ্চমন্যতা আৰু হীনমন্যতাও মিচিং ভাষাৰ প্ৰসাৰৰ ক্ষেত্ৰত অন্য এক অন্তৰায় বুলিব পাৰি। মিচিং জনগোষ্ঠীৰ লোকসকলে অসমীয়া বা ইংৰাজী ভাষাকহে শিক্ষাৰ মাধ্যম হিচাপে গ্ৰহণ কৰিবলগীয়া হয়, যাৰ ফলত লিখিত ৰূপত মিচিং ভাষাৰ চৰ্চা স্বাভাৱিকতে কমি গৈছে। উল্লেখ্য যে বিবাহ, শ্ৰাদ্ধ অনুষ্ঠানৰ নিমন্ত্ৰণী পত্ৰ বা কোনো খা-খবৰৰ বাবে লিখা চিঠি-পত্ৰতো মিচিং ভাষাৰ সলনি অসমীয়া আৰু ইংৰাজী ভাষাকহে প্ৰাধান্য দিয়া দেখা যায়। সেইদৰে কথিত ৰূপতো উচ্চমন্যতা আৰু হীনমন্যতাই বিশেষভাৱে ক্ৰিয়া কৰা পৰিলক্ষিত হৈছে। বিশেষভাৱে চহৰাঞ্চলত থকা মিচিং লোকসকলৰ মাজত ভাষাটো অৱহেলিত হৈ পৰা দেখা গৈছে। এনে লোকসকলৰ পুৰুষৰ পিছত পুৰুষে চহৰত বসতি কৰাৰ পাছত এসময়ত ভাষাটো ব্যৱহাৰ নহৈ নিচিহ্নপ্ৰায় হৈ পৰে। আন এক বাস্তৱ সত্য এইটোও যে চহৰাঞ্চলৰ উপৰিও গ্ৰাম্যাঞ্চলৰ বহু মানুহে মিচিং ভাষা পঢ়িব বা লিখিব নাজানোঁ বুলি বিনাদ্বিধাই স্বীকাৰ কৰা দেখা যায়। লেখক খগেন পেগুৱে এই দিশটোৰ প্ৰতি লক্ষ্য ৰাখি 'মিচিং ভাষা আৰু সাহিত্য' গ্ৰন্থৰ পাতনিত উল্লেখ কৰিছে— *জাতীয় আবেগ-অনুভূতি আৰু জাতীয়তাবোধৰ অভাৱত বহুবোৰ মিচিং মানুহে এতিয়াও মিচিং ভাষাৰ প্ৰতি অনীহা প্ৰকাশ কৰে। অৰ্থাৎ তেওঁলোকে মিচিং বৰ্ণমালা চিনি নাপাওঁ বুলি অতি সহজেই কৈ দিয়ে। ফলত কিতাপৰ কথাটো দূৰৰে কথা, আনকি বিভিন্ন সময়ত প্ৰকাশ হোৱা বাতৰি কাকত আৰু আলোচনীবোৰো এতিয়ালৈকে ভালকৈ মূৰ দাঙি উঠি ধাৰাবাহিকভাৱে আগলৈ চলি যাব পৰা নাই।* (পেগু) গতিকে মিচিং ভাষী মানুহৰ মাজত দেখা এনে অনীহাই ভাষাটোৰ উত্তৰণত বাধা প্ৰদান কৰা বুলি ধাৰণা কৰিব পাৰি। বহু লেখকে অসমীয়া বা ইংৰাজী মাধ্যমত শিক্ষাগ্ৰহণ কৰা বাবে স্বাভাৱিকতে অসমীয়া বা ইংৰাজী ভাষাত সাহিত্যচৰ্চা কৰে। আকৌ মিচিং ভাষা পঢ়িব পৰা মানুহৰ সংখ্যা নগণ্য হোৱাৰ বাবেও যিহেতু অসমীয়া বা ইংৰাজী ভাষাত লিখিলে এখন বহল পাঠক সমাজ পোৱা যায়, মিচিং জনগোষ্ঠীৰ বহু লিখকে সেয়ে অসমীয়া বা ইংৰাজী ভাষাত সাহিত্যচৰ্চা কৰা দেখা যায়।

উল্লেখ্য যে লিখিত ৰূপৰ দৰে কথিত ৰূপতো ভাষাটো অৱহেলিত হৈ অহাৰ বাবে বহু সমীক্ষাত মৃত্যুমুখী ভাষাৰ তালিকাত মিচিং ভাষাকো স্থান দিয়া দেখা যায়।

লোকসাহিত্যৰ ক্ষেত্ৰত মিচিংসকল অত্যন্ত চহকী। লোকগীত, ফকৰা-যোজনা, সাঁথৰ, সাধুকথা আদি লোসাহিত্যৰ বিভিন্ন উপাদানে মিচিং ভাষাক সমৃদ্ধ কৰিছে। মিচিংসকলৰ প্ৰব্ৰজনৰ ইতিহাস, ৰীতি-নীতি, জীৱন চৰ্যা, হৰ্ষ-বিষাদ, আশা-আকাংক্ষা আদিৰ সামগ্ৰিক চিত্ৰ তেওঁলোকৰ লোকসাহিত্যৰ মাজত পোৱা যায়। লোকগীতৰ ভিতৰত 'মিবু আঃবাং', 'অইনিঃতম', 'কাবান' আদি উল্লেখযোগ্য। মিচিংসকলৰ দেওধাই 'মিবু'ৱে 'আঃবাং' গীত গায়। 'অইনিঃতম' সাধাৰণতে প্ৰণয়াত্মক গীত। যৌৱনৰ উন্মুক্ত বাসনা প্ৰকাশক এই গীতবোৰত মিচিংসকলৰ সহজ-সৰল জীৱনৰ ছবিও প্ৰতিফলিত হয়।

মিচিং ভাষাৰ লিখিত পৰম্পৰা বৰ বেছি দীঘলীয়া নহয়। ঊনবিংশ শতিকাৰ মাজভাগৰ পৰা খ্ৰীষ্টান মিছনেৰীসকলে এই পৰম্পৰা আৰম্ভ কৰিছিল। *১৮৪৯ চনৰ 'জাৰ্ণেল অৱ দি এছিয়াটিক অৱ বেংগল'ৰ অষ্টাদশ সংখ্যাত প্ৰকাশিত (সেই সময়ৰ বংগদেশৰ ব্ৰিটিশ চৰকাৰৰ শাসনাধীন হৈ থকা প্ৰথমজন বিদ্যালয় পৰিদৰ্শক) উইলিয়াম ৰবিনচনৰ এটি দীঘলীয়া টোকা আৰু দ্বিতীয় ভাগত প্ৰকাশিত হাড়চনৰ প্ৰবন্ধৰ পৰা জনা যায় যে— মিচিং ভাষাৰ শব্দ সংগ্ৰহৰ কাম পোন-প্ৰথমে ৰেভাৰেণ্ড নাথান ব্ৰাউন, উইলিয়াম ৰবিনচন আৰু বেংগল নেটিভ ইনফেনট্ৰিত চাকৰি কৰা কেপ্তেন ই-এফ স্মিথ নামৰ ব্যক্তিয়ে আৰম্ভ কৰিছিল।* (টাইদ ১৩৬) ১৮৪৫ চনত ডেল্টনৰ 'On the Miris and Abor' প্ৰবন্ধটো 'Journal of the

Asiatic Society of Bengal'ত প্রকাশ পাইছিল। মিচিং ভাষাৰ প্রথমখন মৌলিক ব্যাকৰণ প্রকাশ পাইছিল ১৮৮৫ চনত। জে. এফ নীডহামৰ 'আউটলাইন গ্রামাৰ অফ দি চাঃয়াং মিৰি লেংগুৱেজ' (Outline Grammer of Sh:yang Miri Language) খনেই মিচিং ভাষাৰ প্রথমখন মৌলিক ব্যাকৰণ। এইখন ইংৰাজী ভাষাৰ ব্যাকৰণৰ আৰ্হিত ৰচিত। দেখা যায় যে মিচিং ভাষাৰ লিখিত ৰূপৰ বিকাশৰ আৰম্ভণি ভাষা সম্বন্ধীয় অধ্যয়ন বা চর্চাৰ ফলশ্রুতিত হৈছে। এই দিশলৈ লক্ষ্য ৰাখি নাহেন্দ্র পাদুনে মিচিং ভাষা-সাহিত্যৰ জন্ম প্রসংগত এযাৰ অর্থপূর্ণ মন্তব্য আগবঢ়াইছে— *পৃথিৱীৰ সৰহভাগ ভাষাৰ বিকাশৰ আৰম্ভণিত দেখা যায়— সাধাৰণতে প্রথম অৱস্থাত মৌখিক সাহিত্যই অর্থাৎ গীত, পদ, সাধুকথা ইত্যাদিয়ে লিখিত ৰূপ লয়। কিন্তু মিচিং ভাষাৰ ক্ষেত্রত এই বোৰৰ পৰিৱর্তে ভাষাটোৰ গাঁথনি, শব্দভাণ্ডাৰ, ব্যাকৰণ আৰু অভিধান প্রথমে সৃষ্টি হৈছে।*(১৮) সেই তেতিয়াৰ পৰা বর্তমানলৈকে এই ধাৰা অব্যাহত হৈ আছে। আৰম্ভণিৰ পৰা এতিয়ালৈকে কবিতা, নাটক, গল্প, উপন্যাস, প্রবন্ধ আদি বিভিন্ন ধাৰাত সাহিত্য ৰচিত হৈছে। মিচিং সমাজ-সংস্কৃতিক প্রথমে গ্রন্থত তুলি ধৰা সোণাৰাম পাএাং কটকীয়ে দেখুওৱা বাটেৰে বহুকেইজন মিচিং জনগোষ্ঠীৰ লোকে মিচিং ভাষাত সাহিত্য ৰচনা কৰিবলৈ আগবাঢ়ি আহিছিল।

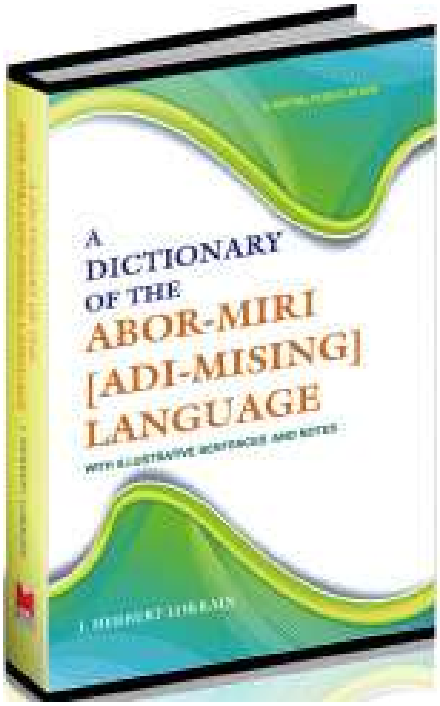

সুনির্দিষ্ট লিপি নির্ধাৰণৰ আগৰ পৰাই মিচিং ভাষাৰ লিখিত পৰম্পৰাৰ এটা ক্ষীণ সুতি চলি আছিল। ১৯৭৮ চনত ৰোমান লিপিক আনুষ্ঠানিকভাৱে গ্রহণ কৰাৰ পাছত মিচিং ভাষাত ভিন্ন বিধাত সাহিত্য চর্চা হ'বলৈ আৰম্ভ কৰিছে। এই ভাষাত ৰচিত সাহিত্যবোৰ অধ্যয়ন কৰাৰ পাছত অনুভৱ কৰিব পাৰি যে উচ্চমানৰ ভাব প্রকাশৰ ক্ষেত্রত এই ভাষাত শব্দৰ অভাৱত কোনো সমস্যাৰ সন্মুখীন হ'বলগীয়া হোৱা নাই। অৱশ্যে মিচিং পৰম্পৰা বা এই সমাজত নথকা কোনো বস্তুৰ নাম বুজাবলৈ সাধাৰণতে কিছু সমস্যাত পৰিবলগীয়া হয়। শব্দ মুদ্রিত কৰি বা আন ভাষাৰ পৰা ঋণ লোৱা শব্দৰে এনে বস্তুবোৰক নির্দেশ কৰি এনে সমস্যাৰ পৰাও হাত সাৰিব পাৰি। সম্প্রতি বিভিন্ন ব্যক্তি বা দল-সংগঠনৰ প্রযত্নত এনে বহু শব্দৰ পৰিভাষা সৃষ্টি কৰি মিচিং শব্দসম্ভাৰক অধিক শক্তিশালী কৰাৰ প্রয়াস চলি আছে।

মিছনেৰী আৰু বৃটিছ বিষয়াসকলৰ পৰৱর্তী সময়ৰ পৰা বহুকেইজন মিচিং মানুহে সাহিত্য ৰচনাৰ ক্ষেত্রত মনোনিবেশ কৰিছিল। এই সময়ছোৱাত ৰচিত সাহিত্যৰ ভিতৰত — সোণাৰাম পাএাং কটকীৰ 'মিৰি জাতিৰ বুৰঞ্জী' (১৯৩৫), 'মিৰি দুয়ান' (১৯১৫), নুমল পেগুৰ 'কাংজী মলাংজী' (১৯৪৫), ডিম্বেশ্বৰ পায়েংগামৰ 'আঅুন মুৰকং' (১৯৪৮) আদি উল্লেখযোগ্য।

দেশ স্বাধীন হোৱাৰ পিছত মিচিং সমাজতো শিক্ষাৰ প্রসাৰ ঘটিছিল। স্বাধীনতাৰ পৰৱর্তী সময়ছোৱাত বিদ্যায়তনিক পাঠৰ অভাৱ পূৰণৰ বাবে গ্রন্থ কিছুমান ৰচনা কৰিছিল। এনে গ্রন্থৰ ভিতৰত — কমল চন্দ্র পাদুনৰ 'মিচিং পাঠ' (১৯৫৮), নুমল চন্দ্র পেগুৰ 'মিচিং আবৃগ্' (১৯৫৬), বিভীষণ পেগুৰ 'মিৰি দোৱান' (১৯৬৩), সুৰেণ দলেৰ 'লেকে নিঃতম' (১৯৬৫) আদি অন্যতম। প্রকাশিত মিচিং কবিতা পুথিৰ ভিতৰত— ভৱ দলেৰ 'ঙক মৌঃতম' (১৯৯১), খগেন পেগুৰ 'মৌঃতম' (১৯৯২), বুধেশ্বৰ দলেৰ 'আদী দঃঞিদী আদী পঃলঃদী' (১৯৯২), দীনকান্ত দলেৰ 'মিমাগ' (১৯৯৪), গজেন মিলিৰ 'মৌঃতম-নিঃতম' (১৯৯৪), কালিনাথ পাংগিঙৰ 'নিঃতম কৌলৃং' (১৯৯৬), দীপক কুমাৰ দলেৰ 'আচিন মুক্কাং' (১৯৯৯) আদি উল্লেখযোগ্য। গল্পৰ পুথিৰ ভিতৰত— লক্ষীকান্ত পেগুৰ 'মিন্নী তাজৃগ্' (১৯৯৬), ৰূপনাথ পেগুৰ 'তৃব্চদনাম্ আপ্পুন্' (২০০৯), মুক্তিনাথ পেগুৰ 'খেৰকটা বিল্লাম্'

(২০০৯), 'গুনী মৌদবু' (২০০৯), দীপক কুমাৰ দলেৰ 'চৌম্পাই ইকাংন তুৰনাম্চী' (২০০৯) আদি উল্লেখযোগ্য। মিচিং উপন্যাসৰ ভিতৰত — সুৰেণ দলেৰ 'বগুম চুংলুং আৰাংদক য়ুমী ললাদ' (১৯৯৯), গজেন চন্দ্ৰ নৰহৰ 'আলুগ' (১৯৯৯), হিৰণ্য টাইদৰ 'অৱনৰি ৰুংয়িদক নক্ আয়াংদী' (২০০৫), আকচিন্নাং টায়ুঙৰ 'আপ্পুন্কলংপী দংজুগ্ক' (২০০৫) আদি উল্লেখযোগ্য। নাটকৰ ভিতৰত খগেন পেগুৰ 'মৌনাম' (১৯৯৫), গোবিন নৰহৰ 'লেংনী মিক্চি' (১৯৯৬), হৰেণ টায়ুঙৰ 'মিচিং অমী' (১৯৯৭), ভৰ দলেৰ 'দংলু চুম্এং' (২০০১) আদি উল্লেখযোগ্য। কবিতা, উপন্যাস, গল্প আদি সৃষ্টিশীল সাহিত্যৰ উপৰিও অভিধান, ব্যাকৰণ, সাধুকথাৰ পুথি, জীৱনী, গীত-মাত বিষয়ক গ্ৰন্থ কিছুমানো প্ৰকাশ পাইছে।

মিচিং জনগোষ্ঠীৰ বহু সাহিত্যিকে অসমীয়া ভাষাত সাহিত্য ৰচনা কৰি অসমীয়া সাহিত্যৰ ভঁৰাল চহকী কৰিছে। এই ধাৰা সোণাৰাম পাএাং কটকীৰ পৰা আৰম্ভ হৈছে। সৃষ্টিশীল ৰচনাৰ ক্ষেত্ৰত পোনতেই তৰুণচন্দ্ৰ পামেগামৰ নাম ল'ব পাৰি। তেওঁ নাটক, উপন্যাস, গল্প, কবিতা, প্ৰবন্ধ, জীৱনী আদি সাহিত্যৰ অনেক শাখাত বৰঙণি আগবঢ়াই থৈ গৈছে। সেইদৰে ভৱেন পেগু, যতীন মিপুন, গণেশ পেগু, অনিল পাংগিং, জীৱন নৰহ আদি বহু স্বনামধন্য সাহিত্যিকে অসমীয়া ভাষাত উপন্যাস, গল্প, কবিতা আদি ৰচনা কৰি অসমীয়া সাহিত্যৰ ভঁৰাল চহকী কৰিছে। অসমীয়া কবিতাৰ ক্ষেত্ৰখনলৈ মিচিং লেখকৰ সৰ্বাধিক অৱদান আছে বুলি ধাৰণা কৰিব পাৰি। তৰুণ চন্দ্ৰ পামেগাম, নাহেন্দ্ৰ পাদুন, টাবু টাইদ, জীৱন নৰহ, অনিল পাংগিং, গংগামোহন মিলি, যোগেন টাইদ, বিমান কুমাৰ দলে, উজ্জ্বল পাওগাম, পলাশ লয়িং আদিয়ে অসমীয়া কবিতাৰ ক্ষেত্ৰখনত নিৰলসভাবে সাধনা কৰিছে। মিচিং জনজীৱনৰ ছবি তেওঁলোকৰ ৰচনাৰ মাধ্যমেৰে বৰ্হিবিশ্বলৈ ওলাই অহাত সহায় হৈছে। তদুপৰি তেওঁলোকৰ সৃষ্টিৰাজিৰ জৰিয়তে মিচিং সমাজ-সংস্কৃতিৰ লগত জড়িত বিভিন্ন শব্দৰ লগতো অন্য ভাষা- ভাষীৰ মানুহ পৰিচিত হৈছে।

মিচিং ভাষা এক স্বকীয় বৈশিষ্ট্যসম্পন্ন ভাষা। এই ভাষাৰ বৈশিষ্ট্যলৈ লক্ষ্য কৰিলে দেখা যায় ধ্বনিগত, ৰূপগত, শব্দগত, বাক্যগত আদি আটাইকেইটা দিশতে ভাব প্ৰকাশৰ ক্ষেত্ৰত কোনো সীমাবদ্ধতা দেখা নাযায়। এটা বিকশিত ভাষাত যিবোৰ বৈশিষ্ট্য দেখা যায় সেই প্ৰায়বোৰ বৈশিষ্ট্য মিচিং ভাষাতো বিদ্যমান। ধ্বনি, ৰূপ, শব্দ, বাক্য আদি সকলো দিশতে মিচিং ভাষা স্বকীয় বৈশিষ্ট্যসম্পন্ন। হ্ৰস্ব-দীৰ্ঘ মিলাই ১৪ টা স্বৰ, ১৬ টা ব্যঞ্জন মিচিং ভাষাৰ ধ্বনি তালিকাত পোৱা যায়। মিচিং ভাষাৰ স্বৰধ্বনিৰ তালিকাত মানস্বৰত নথকা দুটা স্বৰ পোৱা যায়। সেই দুটা হ'ল — উচ্চ/কেন্দ্ৰীয় 'অ' আৰু মধ্য/কেন্দ্ৰীয় 'আ'। এই দুটা স্বৰৰ দীৰ্ঘ ৰূপো পোৱা যায় আৰু এইবোৰে সদৃশ বা অভিন্ন পৰিবেশত ব্যৱহাৰ হৈ অৰ্থৰ পৰিৱৰ্তন ঘটাব পাৰে। মিচিং ভাষাৰ ব্যঞ্জন ধ্বনিৰ তালিকাত মহাপ্ৰাণ ধ্বনি পোৱা নাযায়। কিছুমান ব্যঞ্জন ধ্বনিৰ ব্যৱহাৰ সীমিত। 'হ' ধ্বনি এই ভাষাৰ মৌলিক ধ্বনি নহয় যদিও বৰ্তমানে লিখিত ৰূপত ইয়াৰ ব্যৱহাৰ পোৱা যায়। ৰূপগত বৈশিষ্ট্য কিছুমানেও মিচিং ভাষাৰ স্বকীয়তা বহন কৰা দেখা যায়। এই ভাষা সাধাৰণতে যোগাত্মক। বচন, লিংগ, কাৰক আদিৰ অৰ্থ প্ৰকাশ কৰিবলৈ এই ভাষাত নিৰ্দিষ্ট প্ৰক্ৰিয়া কিছুমান আছে। নামপদ, ক্ৰিয়াপদ আদিৰ গঠন প্ৰক্ৰিয়াত্মে কিছুমান সুকীয়া বৈশিষ্ট্য পৰিলক্ষিত হয়। শব্দসাধন প্ৰক্ৰিয়াৰ ক্ষেত্ৰতো মিচিং ভাষাৰ কেতবোৰ সুকীয়া বৈশিষ্ট্য দেখা যায়। সেইদৰে গ্ৰহণ-বৰ্জনৰ মাজেৰে মিচিং ভাষাৰ শব্দভাণ্ডাৰ অতি চহকী। মিচিং ভাষাৰ ভাষাগত বৈশিষ্ট্যসমূহলৈ লক্ষ্য কৰিলে দেখা যায় যে কোনোধৰণৰ আড়ষ্টতা নথকাকৈ এই ভাষাৰ জৰিয়তে জগতৰ সকলো ভাব প্ৰকাশ কৰিব পাৰি। আকৌ বৰ্তমানে সকলো বিধাতে সাহিত্য সৃষ্টি হৈ থকা কথাটোৱে সূচায় যে ভাব প্ৰকাশৰ ক্ষেত্ৰত মিচিং ভাষাও আন বিকশিত ভাষাৰ সমপৰ্যায়ৰ। গতিকে উল্লেখ কৰিব পাৰি যে মিচিং ভাষাৰ বহু সম্ভাৱনা আছে। সাহিত্যৰ এটা সবল ধাৰা প্ৰতিষ্ঠা কৰি এই ভাষাকো জগতৰ শ্ৰেষ্ঠ ভাষাবোৰৰ দৰে গঢ়ি তুলিব পৰাৰ থল নিশ্চিতভাৱে আছে।

২.০ উপসংহাৰ

মিচিং ভাষাত বিভিন্ন বিধাত সাহিত্য চৰ্চা কৰিবলৈ লৈছে যদিও বৰ্তমানেও ভাষাটোৰ পূৰ্ণ প্ৰসাৰ হোৱা বুলি একেষাৰে কৈ দিব নোৱাৰি, বৰং ই চালুকীয়া অৱস্থাতেই আছে। বহুদিনলৈ এই ভাষাৰ সুনিৰ্দিষ্ট লিপি নিৰ্ধাৰণ নোহোৱা, আনুষ্ঠানিক শিক্ষাৰ মাধ্যম হিচাপে এই ভাষাক স্বীকৃতি নিদিয়া, ভাষাটোৰ প্ৰতি মাতৃ ভাষা-ভাষীৰ অৱহেলা আদি বিভিন্ন কাৰণত ভাষাটোৰ উপযুক্তভাৱে বিকাশ-বিস্তাৰ নোহোৱা বুলি ক'ব পাৰি। মিচিং ভাষাৰ উত্তৰণ বা প্ৰসাৰৰ

বাবে কিছুমান সবল পদক্ষেপ লোৱাৰ প্ৰয়োজনীয়তা আছে।

প্ৰথমতে, মিচিংসকলৰ মাজত ভাষাগত আবেগ বা জাতীয়তাবোধ জাগিব লাগিব। ভাষাটোৰ উপযুক্ত উত্তৰণৰ বাবে মিচিং ভাষী লোকসকলে দায়িত্ব বুজি উঠিব লাগিব। বিভিন্ন জাতীয় সংগঠনে ইয়াৰ বাবে বিভিন্ন পদক্ষেপ লৈ জনসজাগতা আনিব লাগিব। সেইদৰে বহুকালৰ পৰা চৰকাৰীভাৱে ঘোষণা কৰা আঁচনিবোৰ বাস্তৱ ক্ষেত্ৰত ৰূপায়ন কৰিবৰ বাবে ঐক্যবদ্ধ হৈ দাবী উত্থাপন কৰিব লাগিব।

দ্বিতীয়তে, চৰকাৰেও কৰণীয় কামখিনি সুচাৰুৰূপে কৰিব লাগিব। আঁচনিবোৰ ঘোষণাৰ মাজতে আবদ্ধ নাৰাখি বাস্তৱ ক্ষেত্ৰত কাৰ্যকৰী কৰিব লাগিব। ভাষাটোৰ সংৰক্ষণ, সংবৰ্ধন আৰু সম্প্ৰচাৰৰ বাবে বিভিন্ন সুদুৰপ্ৰসাৰী আঁচনি গ্ৰহণ কৰিব লাগিব। বিশেষভাৱে ভাষাটো শিক্ষাৰ মাধ্যমৰূপে প্ৰতিষ্ঠা কৰাত গুৰুত্ব দিব লাগিব। মিচিং ভাষাটো সৰ্বস্তৰৰ লোকে লিখিব আৰু পঢ়িব জানিলেহে বহল এখন পাঠক সমাজো গঢ় লৈ উঠিব।

তৃতীয়তে, মিচিং ভাষাটোৰ প্ৰসাৰৰ বাবে অনুবাদ সাহিত্যত গুৰুত্ব দিব লাগিব। বিশ্বমানৰ সাহিত্যবোৰ মিচিং ভাষালৈ অনুবাদ কৰিব লাগিব আৰু মিচিং ভাষাৰ সাহিত্যবোৰো ভিন্ন ভাষালৈ অনুবাদ কৰিব লাগিব।

চতুৰ্থতে, পূৰ্ণাংগ অভিধান, ব্যাকৰণ ৰচনাত গুৰুত্ব প্ৰদান কৰিব লাগিব। বৰ্তমানলৈকে বহুকেইখন মিচিং ভাষাৰ অভিধান আৰু ব্যাকৰণ প্ৰকাশ হৈছে যদিও ভাষাটোৰ সকলো দিশ প্ৰকাশ কৰা পূৰ্ণাংগ অভিধান আৰু ব্যাকৰণৰ আৰু প্ৰয়োজন। গৱেষকসকলে ভাষাটোৰ গঠনাত্মক দিশবোৰ সৰ্বস্তৰৰ লোকে বুজিব পৰাকৈ বিশ্লেষণ কৰিব লাগিব। মিচিং ভাষাৰ ব্যাকৰণিক দিশবোৰ তুলি ধৰাৰ লগতে এই ভাষাৰ উপভাষাবোৰৰ পৰিচয় আৰু উপভাষাসমূহৰ সৃষ্টিৰ অন্তৰালত থকা কাৰকসমূহ চিহ্নিত কৰিব লাগিব। উপভাষাভেদে ব্যৱহাৰ হৈ থকা শব্দবোৰ সংগ্ৰহ কৰি পোহৰলৈ আনিব পাৰিলে মিচিং ভাষাৰ শব্দসম্ভাৰ আৰু অধিক টনকিয়াল হৈ উঠিব।

পঞ্চমতে, মিচিং সাহিত্য চৰ্চা অধিক শক্তিশালী হ'ব লাগিব। সাহিত্যৰ ধাৰা সবল হ'লেহে ভাষা এটাৰ প্ৰসাৰ বা পূৰ্ণ বিকাশ সম্ভৱ হয়। মিচিং ভাষাৰ প্ৰসাৰৰ বাবেও ৰুচিবোধ সম্পন্ন আৰু ভিন্ন স্বাদৰ সাহিত্য সৃষ্টিত বিশেষভাৱে মনোনিবেশ কৰিব লাগিব। ❑

প্ৰসংগ সূত্ৰ

টাইদ, টাবু। *একুকি নিবন্ধ*। গোগামুখ ঃ মিচিং আগম কৌবাং, ২০০৭। মুদ্ৰিত।

পাদুন, নাহেন্দ্ৰ। *মিচিং ভাষাৰ আভাস*। ডিব্ৰুগড় ঃ কৌস্তুভ প্ৰকাশ, ২০০৫। মুদ্ৰিত।

পেগু, খগেন। *মিচিং ভাষা আৰু সাহিত্য*। চিলাপথাৰ ঃ মিচিং আদ্‌নী অপেঃ, ২০১৭। মুদ্ৰিত।

সহায়ক গ্ৰন্থপঞ্জী

কাগ্‌য়ুং, ভৃগুমুনি। *মিচিং সংস্কৃতিৰ আলেখ্য*। গুৱাহাটী ঃ লয়ার্ছ বুক ষ্টল, ১৯৮৯। মুদ্ৰিত।

টাইদ, টাবু। *একুকি নিবন্ধ*। গোগামুখ ঃ মিচিং আগম কৌবাং, ২০০৭। মুদ্ৰিত।

——। *মিচিং ভাষাৰ বানান পদ্ধতি*। গোগামুখ ঃ মিচিং আগম কৌবাং, ২০১৯। মুদ্ৰিত।

দলে, বসন্ত কুমাৰ। *মিচিং সমাজ-সংস্কৃতিৰ সমীক্ষা*। গুৱাহাটী ঃ চন্দ্ৰ প্ৰকাশ, ২০০৯। মুদ্ৰিত।

পাদুন, নাহেন্দ্ৰ। *মিচিং ভাষাৰ আভাস*। ডিব্ৰুগড় ঃ কৌস্তুভ প্ৰকাশ, ২০০৫। মুদ্ৰিত।

——। *মিচিং ভাষা শিক্ষা*। চিলাপথাৰ ঃ মিচিং আদ্‌নী অপেঃ, ২০১৬। মুদ্ৰিত।

পেগু, খগেন। *মিচিং ভাষা সাহিত্য*। চিলাপথাৰ ঃ মিচিং আদ্‌নী অপেঃ, ২০১৭। মুদ্ৰিত।

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

চর্যাগীতৰ সাংগীতিক বিচাৰ

ড° নন্দিতা গোস্বামী

সহকাৰী অধ্যাপিকা
অসমীয়া বিভাগ,
ৰহা মহাবিদ্যালয়, নগাঁও
৯৯৫৭৯৯৫৪৫৫
nanditanita@gmail.com

চর্যাগীতৰ সাংগীতিক অধ্যয়নৰ প্ৰসঙ্গত ইয়াৰ পৰিচয়, গীতিকাৰ, গীতিতত্ত্ব তথা ৰাগ-ৰাগিনীৰ কথাৰ লগতে ছান্দসিক বিচাৰ আদিৰ বিষয়ে আলোচনা কৰিবলগীয়া হয়। বৌদ্ধ সহজীয়া তথা মহাযানী সম্প্ৰদায়ৰ সিদ্ধাচার্যসকলে সংযত জীৱন প্ৰণালীৰে নিৰ্বাণ লাভৰ বাবে খৃঃ ৮ম-১২শ শতিকামানত ৰচনা কৰা চর্যাগীতবোৰ প্ৰাচীন অসমৰ ঐতিহ্যবাহক অমূল্য সঙ্গীত সম্পদ। এই গীতৰ ভাষা সন্ধ্যাভাষা [১], আধা বুজা আৰু আধা নুবুজা ভাষা। [২]

চর্যাগীতৰ কথা ঃ 'চর্যা' শব্দৰ অর্থ হ'ল আচাৰ-বিচাৰ কৰা। বৌদ্ধ সহজযান পন্থাৰ ধর্মসাধনৰ উদ্দেশ্যে ৰচনা কৰা চর্যাগীতবোৰ একোটা সাঁথৰৰ দৰে, ইয়াৰ গূঢ়ার্থ বা মর্মার্থ বুজা টান। সেয়েহে গুৰুৰ সহায়ত চর্যাগীতৰ মর্ম কথা আৰু সাধন মার্গৰ তত্ত্ব বুজি ল'ব লাগে। গীতবোৰত বৌদ্ধতত্ত্বৰ নৈতিক আৰু আধ্যাত্মিক কথাবোৰ বর্ণনা আছে। মুঠতে চর্যাগীতবোৰত বৌদ্ধ সহজীয়া লোকসকলৰ ধর্মাচৰণৰ আচৰণীয় আৰু অনাচৰীয়া বিধি-বিধান বা সংযত জীৱন পদ্ধতি বর্ণিত আছে। প্ৰাচীন কালৰ এই বিশেষ শ্ৰেণীৰ গীতৰ নামেই হ'ল—'চর্যাগীত' [৩]। এই গীতবোৰক গীতি কবিতাৰ লগত তুলনা কৰিব পাৰি। উত্তৰ পূব-ভাৰতৰ উপৰিও তিব্বত, নেপাল, ভূটান আদি ঠাইবোৰত প্ৰাচীন কালত এই চর্যাগীতবোৰৰ প্ৰাদুর্ভাৰ আছিল। বর্তমান কালতো নেপাল আদি ঠাইত চর্যাগীতবোৰক 'চচাগীত' বুলি কয়। [৪] চর্যাগীতৰ মূল পুথিখন আজিও উদ্ধাৰ হোৱা নাই, কেৱল 'চর্যাচর্যটীকা' নামৰ পুথিখনৰ কথা উদ্ধৃত পোৱা যায়। লগতে "চর্যাগীতি কোষবৃত্তি" নামৰ গ্ৰন্থখনৰ কথাও আছে। এই 'টীকা' আৰু 'বৃত্তি' নামৰ পৰা জনা যায় যে চর্যাগীত বিষয়ৰ মূল পুথিখনৰ নাম —"চর্যাচর্য" বা "চর্যাগীতিকোষ" আছিল। [৫]

চর্যাগীত ৰচনাৰ পটভূমি ঃ প্ৰাচীন অসম বা কামৰূপত ৰচিত এই গীতৰ প্ৰসঙ্গত বৌদ্ধ ধর্মৰ কথা থকা উল্লেখযোগ্য পুথিখন হ'ল—"ৰাজ-তৰঙ্গিনী"। প্ৰাচীন কাশ্মিৰী সংস্কৃত পণ্ডিত কল্‌হনৰ (অনুঃ খৃঃ ৫ম শতিকাৰ) দ্বাৰা ৰচিত উক্ত পুথিখনৰ পৰা জানিবলৈ পাৰি যে সেই সময়ত কামৰূপত বৌদ্ধধর্ম চলিছিল। কামৰূপৰ ৰজা কুমাৰ ভাস্কৰবর্মাৰো (খৃঃ ৭ম শতিকা) বৌদ্ধৰ প্ৰতি দুর্বলতা আছিল, তেঁৱেই হয়তো এটা সময়ত বৌদ্ধ ধর্মগুৰু— স্তোনপা বৌদ্ধ ভীক্ষুৰ পৰা উক্ত ধর্ম গ্ৰহণ কৰিছিল। হীনযান আৰু মহাযান পন্থৰ বৌদ্ধ ধর্মই সেই সময়ত প্ৰাচীন কামৰূপত শৈৱধর্মৰ প্ৰভাৱ কমাইছিল। সম্ভৱতঃ খৃঃ ৭ম আৰু ৮ম শতিকামানত মহাযান বৌদ্ধ সম্প্ৰদায়ৰ নানান

ভাগত বিভক্ত হৈছিল। খৃঃ ৮ম শতিকামানত নালন্দা, বিক্রমশীলা আদি প্রাচীন বিশ্ববিদ্যালয়সমূহত বৌদ্ধ আচার্যসকলে যথেষ্ট সমাদৰ লাভ কৰিছিল। এই শতিকামানতে বৌদ্ধমতক 'তন্ত্রযান' নামেৰে প্রতিষ্ঠা লাভ কৰি ইয়াৰ তিনিটা শাখাত পৰিণত হৈছিল। সেই কেইটা হ'ল—কালচক্রতন্ত্র, ব্রজবাদীতন্ত্র আৰু মহাসুখ তন্ত্র। প্রতিটো শাখাৰ আকৌ কেইটামান উপশাখা আছে—কালচক্রতন্ত্রযানৰ বৌদ্ধভীক্ষুসকলে ত্রিকালত (অতীত, বর্তমান আৰু ভৱিষ্যৎ) বিশ্বাস কৰিছিল। ব্রজবাদীতন্ত্রযানৰ আকৌ মন্ত্র আৰু তন্ত্র নামে দুটা উপশাখাত বিভক্ত হৈছিল। মহাসুখতন্ত্রযানসকলৰ তিনিটা উপশাখাৰ নাম শূন্য, বিজ্ঞান আৰু মহাসুখ।[৭] ব্রজবাদীতন্ত্রযানৰ ধর্মমতৰ প্রাৱল্য ৰূপ ধাৰণ কৰিছিল। ইয়াত শূন্যতত্ত্ব, আনন্দতত্ত্বৰ লগতে নির্বাণ আৰু অনির্বাণতত্ত্বৰ কথাও আছে। এই বৌদ্ধতত্ত্ববোৰক সহজীয়াতত্ত্ব বা চর্যাগীতিতত্ত্ব বুলিব পাৰি। বৌদ্ধ সিদ্ধাচার্যসকলে অতি সংযমেৰে জীৱন-চর্যা অতিবাহিত কৰিছিল। ক্ষণভঙ্গুৰ মানৱ জীৱনত সংযমেই একমাত্র নির্বাণ বা পৰিত্রাণৰ উপায় বুলি বিবেচিত হৈছিল। এই উপায়সমূহ জনসমাজত প্রচাৰ আৰু প্রসাৰ কৰিবলৈ সিদ্ধাচার্যসকলে বিভিন্ন ৰাগত কিছুমান গীত ৰচনা কৰি গূঢ়ার্থবোৰ সুমুৱাই দিছিল। এই গীতৰ গূঢ়ার্থ সৎসংগ বা গুৰুৰ সহায়তহে বুজিব পাৰি। লোক-চিত্ত আকর্ষণ কৰিবলৈ নদী, নাও, সাঁকো, পুখুৰী, কুম্ভীৰ, তাঁতী, চণ্ডালী, হাতী, হৰিণ, গঙ্গা-যমুনা আদি উপমা আৰু ৰূপক তথা প্রতীক হিচাপে লৈ চর্যাগীত ৰচনা কৰিছিল।[৮]

চর্যাগীতিকাৰৰ কথা ঃ অনুমানিক খৃঃ ৮ম-১২শ শতিকাত ৰচিত চর্যাগীতবোৰ চৌৰাশী জন (৮৪) বৌদ্ধসিদ্ধাচার্যৰ ভিতৰত মাত্র বর্তমান তেইশ জন (২৩) সিদ্ধাচার্যৰ গীতবোৰ টীকাসহ উদ্ধাৰ হৈছে। এই তেইশ (২৩) জন চর্যাগীতিকাৰৰ ষোল্ল (১৬) টি মান ৰাগৰ গীত পোৱা যায়। বর্ণানুক্রমিকভাবে চর্যাগীতিকাৰসকলৰ নাম, গীতৰ তিব্বতীয় টীকাৰ ক্রম আৰু মুঠ চর্যাগীতৰ সংখ্যা দিয়া হ'ল [৯]—

চর্যাগীতিকাৰৰ নাম	**চর্যাগীতৰ ক্রম**	**মুঠ গীতৰ সংখ্যা**
১দ আজপাদ (আর্যদেৱ)	৩১	০১
২। কঙ্কন পাদ	৪৪	০১
৩। কামলিপাদ	৮	০১
৪। কাহ্নপাদ	৭,৯,১০,১১,১২,১৩,১৮,১৯,(২৪), ৩৬,৪০,৪৫	১২(+১)
৫। কুক্কুৰী পাদ	২, (২০) ৪৮	০২ (+১)
৬। গুণ্ডৰী (গুডৰী) পাদ	৪	০১
৭। চাটিলপাদ	৫	০১
৮। জয়নন্দীপাদ	৪৬	০১
৯। ডোম্বীপাদ	১৭	০১
১০। ঢেণ্ঢনপাদ	৩৩	০১
১১। তান্তিপাদ (তান্ত্রী)	(২৫)	(+১)
১২। তাড়কপাদ	৩৭	(০১)
১৩। দাৰিকাপাদ	৩৪	০১
১৪। ধামপাদ	৪৭	০১
১৫। বিৰুআ (বিৰুৱা) পাদ	৩	০১
১৬। বীণাপাদ	১৭	০১
১৭। ভাদপাদ	৩৫	০১
১৮। ভুসুকুপাদ	৬,২১, (২৩), ২৭, ৩০, ৪১, ৪৩, ৪৯	০৭(+১)
১৯। মহীয়াপাদ (মহিণ্তা মহেন্দ্র)	১৬	০১
২০। লুইপাদ	১,২৯	০২
২১। শৱৰপাদ	২৮, ৫০	০২
২২। শান্তিপাদ	১৫, ২৬	০২
২৩। সৰহপাদ	১২,৩২,৩৮,৩৯	০৪

উক্ত চর্যাগীতিকাৰসকলৰ ভিতৰত লুইপাদ জন প্রথম। কুক্কুৰীপাদ সিদ্ধাচার্য গৰাকী ব্রাহ্মণ আছিল, পাছত তেওঁ বৌদ্ধধর্মী হয় বুলি টীকাকাৰে উল্লেখ কৰিছে। গুণ্ডৰীপাদ নামটোও যেন জাতি বা বৃত্তিবাচক। সংগুণ্ডৰিক—গুণ্ডৰিঅগুণ্ডৰীঅর্থ মচলা। মচলাগুৰি কৰা বৃত্তি লোৱা লোক। কঙ্কন, তাড়ক আদি চর্যাগীতিকাৰৰ আচল

নাম নহয়, ছদ্ম নাম হ'ব পাৰে। তাঁতি বা তান্তি বা তন্ত্রী ব্যক্তি বিশেষৰ নাম নহয় যেন লাগে, ইও এটা জাতিবাচক বা বৃত্তিবাচক ৰূপ হ'ব পাৰে। ডোম্ব বা ডোম্বীও জাতিবাচক ৰূপ মাত্র। ধামপাদৰ অন্য নাম গুণ্ডৰীপাদ, কাহ্নুপাদৰ অন্য নাম বিৰুআ পাদ, শান্তিপাদৰ অন্য নাম ভুসুকুপাদ হ'ব পাৰে বুলি টীকাকাৰে সন্দেহ কৰিছে। এই দিশবোৰ ফঁহিয়াই চালে বর্তমান উদ্ধাৰ হোৱা চর্যাগীতিকাৰৰ সংখ্যা কুৰিজনমানহে হ'বগৈ।

চর্যাগীতৰ সাংগীতিক কথা ঃ সংগীত-শাস্ত্র মতে সকলো গীতৰ প্রধান অংগ দুটা—ধাতু আৰু মাতু। "ধাতু মাতুসহ গীত প্রসিদ্ধ প্রচাৰ" (সংগীত ৰত্নাকাৰ)। এই ধাতু হ'ল—ৰাগযুক্ত গীতৰ অবয়ব আৰু মাতু হ'ল তাল-মান আদি যুক্ত গীত। সেয়েহে কোৱা হয় ৰাগ আৰু তালেৰেই সংগীতৰ মাত্রা নির্দ্ধাৰণ হয়। চর্যাগীতবোৰো ইয়াৰ ব্যতিক্রম নহয়। খৃঃ ৮ম-১২শ শতিকামানত সহজীয়া তথা মহাযানী বৌদ্ধ পন্থৰ সিদ্ধাচার্যসকলে নির্বাণ লাভৰ বাবে ৰচনা কৰা চর্যাগীতবোৰ প্রথমে মৌখিক ৰূপত আৰু পাছত সেইবোৰ লিখিত ৰূপ দিছিল। গীতবোৰৰ ধ্রুং আৰু পদ অংশৰ লগতে কবিৰ ভণিতা আছে। এনে লক্ষণ ৰৰগীততো আছে।[১০] এই গীতবোৰ সমবেত সংগীত বা এককভাবে পৰিবেশন কৰিবলৈ ৰচনা কৰিছিল।

সিদ্ধাচার্যসকলৰ ভাষাত--

(ক) অইসন চর্যা কুক্কুৰীপাত্র গাইউ। (চর্যা-২)। (খ) কাহ্নে গাইউ কাম চণ্ডালী। (চর্যা-১৮)।

(গ) ঢেণ্ঢনপাত্র গীত বিৰহে বুঝই। (চর্যা-৩৩)। ইত্যাদি।

এই চর্যাগীতবোৰ সঙ্গীত শাস্ত্রৰ দ্বাৰা স্বীকৃত আছিল বুলি প্রমাণ পোৱা যায়। ত্রয়োদশ শতিকামানত ৰচিত "সঙ্গীত ৰত্নাকৰ" (শাৰঙ্গদেৱ) পুথিত থকা চর্যাগীতৰ সুন্দৰ সংজ্ঞাটো এই প্রসঙ্গত উল্লেখ কৰিব পাৰি।[১১] উক্ত পুথিত আছে—

"পদ্ধড়ী প্রভৃতি চ্ছন্দাঃ পাদান্ত প্রাসশোভিতাঃ।
অধ্যাত্মগোচৰা চর্যা শ্যাদ, দ্বিতীয়াদি তালতঃ।।
সা দ্বিধা ছন্দসঃ পূর্ত্যা পূর্ণাপূর্ণাত্ব পূর্তিতঃ।
সমধ্রুৱা চ বিষম ধ্রুৱেত্যেষা পুনদ্বির্ধাঃ।"

অর্থাৎ চর্যাগীত পদ্ধড়ী প্রভৃতি ছন্দেৰে গঠিত, পদান্তত অনুপ্রাসযুক্ত, আধ্যাত্মবাচক পদেৰে নিৰন্ধ আৰু দ্বিতীয়াদি তালত ৰচিত। পূর্ণ আৰু অপূর্ণযুক্ত দুবিধ ছন্দেৰে ৰচিত চর্যাগীত বিলাকৰ প্রকাৰ দুটা — সমধ্রুৱ আৰু বিষমধ্রুৱ। দ্বাদশ শতিকাৰ (খৃঃ ১১২৯) সংস্কৃত কোশ-গ্রন্থ "মানসোল্লস"তো চর্যাগীতৰ লক্ষণবোৰ উল্লেখ কৰিছে[১২] —

"অর্থশ্চাধ্যাত্মিকঃ প্রাসঃ পাদদ্বিতয় শোভনঃ।
উত্তৰার্ধে ভৱেদেৱং চর্যা সা তু নিগদ্যতে।।"

ইয়াৰ অর্থ হ'ল—"অর্থ আধ্যাত্মিকযুক্ত পদৰ শেষত মিল থকা আৰু দ্বিতীয় অংশও তেনেকুৱা, তাকে 'চর্যা' বোলা হয়। চর্যাগীতৰ গীতিকাৰসকল যদিও একো একোজন বৌদ্ধ ধর্মৰ সিদ্ধাচার্য, লগতে তেওঁলোক ৰাগ-ৰাগিনী তথা তালমানৰ ভাল জ্ঞান থকা একোজন পণ্ডিত কলাবিদ। তেওঁলোকে কোনটো চর্যা কি ৰাগত গাব, কেতিয়া গাব, সেই ৰাগ, গীত পৰিবেশনৰ প্রৰাম্ভতে দি লৈছিল, তাৰ পাছতহে সেই চর্যাগীতটো পৰিবেশন কৰিছিল। তেওঁলোকে ভৈৰৱাদি ছয় (৬) বিধ পুৰুষ ৰাগ আৰু ছয়ত্রিশ (৩৬) বিধ স্ত্রী ৰাগত গীতবোৰ গাইছিল। পৰিবেশনৰ সময়ত ঘনবাদ্য, ডম্বৰু, মাদল আৰু বীণা আদি বাদ্য যন্ত্রেৰে এই গীতবোৰ বৌদ্ধ সিদ্ধাচার্যসকলে পৰিবেশন কৰিছিল। এই গীতবোৰৰ নির্ভুল সংগীত পদ্ধতি আছিল কাৰণে ইয়াক ধ্রুৱপদী গীত বোলা হৈছিল। শাৰঙ্গদেৱে চর্যাগীতত তথা সমধ্রুৱা আৰু বিষমধ্রুৱা পদ্ধতি দুটা লক্ষ্য কৰিছিল। সমধ্রুৱত গীত পৰিৱেশন কৰিলে ধ্রুং অংশটি সম্পূর্ণকৈ আবৃত্তি কৰা হয়, বিষমধ্রুৱত গীত পৰিৱেশন কৰিলে ধ্রুং অংশটিৰ প্রথমাংশহে আবৃত্তি কৰে। চর্যাগীতসমূহ এই দুয়োটা পদ্ধতি প্রয়োগ কৰি গাইছিল।

চর্যাগীতৰ ৰাগ ঃ চর্যাগীতৰ ৰাগসমূহ হিন্দুস্থানী মার্গ ৰাগ সংগীতৰ লগত বিশেষ সাদৃশ্য আছে। সম্ভৱতঃ মার্গ-ৰাগ-সংগীতত থকা গৌৰী ৰাগৰ পৰা অপভ্রংশ হৈ উদ্দিষ্ট ৰূপত গউড়া/গবড়া/গবুড়া ৰাগ হৈছে। চর্যাগীত ৰচনাত পাছৰ কালত ৰচিত বুলি প্রমাণিত হোৱা "শ্রীকৃষ্ণ-কীর্তন"ত গৌৰী ৰাগৰ কথা পোৱা যায়। চর্যাগীতত 'অৰু' নামৰ ৰাগবিধ মার্গ-ৰাগ-সংগীতৰ ভিতৰৰ নহয়।[১৩] এই ৰাগ হয়তো লোক-সংগীতৰ পৰা অহা। ৰাগৰ লগত তালৰ কথাও আহে। সংগীতত তালৰ দ্বাৰা মাত্রা নির্দ্ধাৰণ কৰা হয়। দ্রুত উচ্চাৰণ আৰু লেহেমীয়া উচ্চাৰণ নির্ণয় কৰিবলৈ

তালৰ একান্ত প্ৰয়োজন। চৰ্যাগীতবোৰত এনে তাল পদ্ধতিও আছে। এই গীতবোৰ ভাৰ প্ৰধান হোৱাৰ কাৰণে বৌদ্ধ সিদ্ধাচাৰ্যসকলে হৃদয়াবেগেৰে পৰিবেশন কৰে। ইয়াৰ গীতিকাৰসকলে নৈসৰ্গিক বা প্ৰাকৃতিক জগতৰ লগত স্বাধীনভাৱে লোক গীতিতত্ত্ব আৰু সাধনতত্ত্ব মিহলাই জন-জীৱনৰ প্ৰতিচ্ছবিও দাঙি ধৰিছিল। সেয়েহে এই গীতবোৰৰ সাৰ্বজনীনতা আজিও কমি যোৱা নাই। পৰিবেশৰ অভাৱৰ কাৰণে চৰ্যাগীতবোৰ হয়তো পৰিবেশন নোহোৱা হৈছে। নগাঁও জিলাৰ অন্তৰ্গত বেৰেজীয়া অঞ্চলৰ নাথ সম্প্ৰদায়ৰ দুই এজন গায়কে চৰ্যাগীতৰ ৰাগ দিব পাৰে বুলি ইং ২০১৫ চনত শ্ৰীৰামেশ্বৰ নাথ (৬৫) নামৰ ব্যক্তি গৰাকীয়ে এই নিবন্ধকাৰৰ আগত ব্যক্ত কৰিছিল।[১৪] গউড়া-গবডা, গুঞ্জৰী-গুৰ্জৰী, বৰাড়ী-বল্লাড়ী, শৰৰী-শীৱৰী, মালশী-মালসী গবুৰা, মল্লাৰ-মল্লাৰী আদি ৰাগ-ৰাগিনীয়ে চৰ্যাগীতৰ মাধুৰ্য বঢ়াইছে। চৰ্যাগীতৰ ৰাগসমূহ বৰ্ণানুক্ৰমিকভাৱে আৰু লগতে গীতৰ সংখ্যাবোৰ দি এখন তালিকা কৰা হ'ল—

বৰ্ণানুক্ৰমিক চৰ্যাৰ ৰাগৰ নাম	**চৰ্যাৰ সংখ্যাবোৰৰ উল্লেখ**
১। অৰু ৰাগ	৪
২। কামোদৰ ৰাগ	১৩, ২৭, ৩৭, ৪২
৩। কহ্ন গুঞ্জৰী ৰাগ	৪১
৪। গউড়া ৰাগ	১৮
বৰ্ণানুক্ৰমিক চৰ্যাৰ ৰাগৰ নাম	**চৰ্যাৰ সংখ্যাবোৰৰ উল্লেখ**
৫। গৰড়া ৰাগ	২,৩
৬। গুঞ্জৰী/গুৰ্জৰী ৰাগ	৪,২২,৪৭
৭। দেৱক্ৰী ৰাগ	৮
৮। দেশাখ ৰাগ	১০,৩২
৯। ধনশ্ৰী/সীৰাগ	১৪
১০। পটমঞ্জৰী ৰাগ	১,৬,৭,৯,১১,১৭, ২০,২৯,৩১,৩৩,৩৬
১১। বৰাড়ী/বড়াড়ী ৰাগ	২১,২৩,৩৪
১২। বল্লাড়ী ৰাগ	২৮
১৩। বঙলা/বঙ্গাল ৰাগ	৪৩
১৪। ভেৰবী ৰাগ	১২,১৬,১৯,৩৮
১৫। মল্লাৰীৰ ৰাগ	৩০,৩৫,৪৪,৪৫,৪৯
১৬। মালশী ৰাগ	৩৯
১৭। মালশী গৱৰা	৪০
১৮। ৰামক্ৰী ৰাগ	১৫,৫০
১৯। শৰৰী	৪৬
২০। শীৱৰী	২৬ আদি।

চৰ্যাগীতৰ ২৪, ২৫ আৰু ৪৮ নং ক্ৰম কেইটাৰ গীত উদ্ধাৰ হোৱা নাই। চৰ্যাগীতত থকা ৰাগ-ৰাগিনীসমূহৰ [১৫] কেইটামান পৰবৰ্তী কালৰ "শ্ৰীকৃষ্ণ-কীৰ্ত্তন", "গীত গোবিন্দ", বৰগীত [১৬] আৰু ওজাপালি গীততো অনুৰণিত হোৱা দেখা যায়। ইয়াৰো এখন তালিকা দিয়া হ'ল—

ৰাগৰ তালিকা

চৰ্যাগীত	**শ্ৰীকৃষ্ণ-কীৰ্ত্তন**	**গীত-গোবিন্দ**	**বৰগীত**	**ওজা পালি**
১। কামোদ	------	------	কামোদ	------
২। গউড়	গৌৰী	গৌৰী	গৌৰী	গৌৰী
৩। গুঞ্জৰী	গুৰ্জৰী	------	------	গুঞ্জৰী
৪। দেশাখ	দেশাখ	দেশাখ	------	-----
৫। ধনশ্ৰী	ধানুশ্ৰী	------	ধনশ্ৰী	ধনশ্ৰী
৬। পটমঞ্জৰী	পটমঞ্জৰী	------	------	পটমঞ্জৰী
৭। বৰাড়ী	বৰাড়ী	বৰাড়ী	বৰাড়ী	বৰাড়ী
৮। বঙ্গাল	বঙ্গাল	------	------	------
৯। ভৈৰবী	------	ভৈৰৱী	------	ভৈৰবী
১০। মল্লাৰী	মল্লাৰ	------	মল্লাৰ	মল্লাৰ
১১। মালসী	মালৱশ্ৰী	মালৱ	------	------
১২। ৰামশ্ৰী	ৰামগৰী	ৰামকিৰী	ৰামগিৰী	------

চৰ্যাগীতৰ ছান্দনিক বিচাৰ ঃ চৰ্যাগীতৰ ছান্দনিক বিচাৰ কৰিলে দুই ধৰণৰ আদৰ্শ ছন্দ পোৱা যায়। এবিধত আছে — সংস্কৃতৰ অক্ষৰ সংখ্যা আৰু স্বৰৰ লঘু-গুৰুত্ব নিয়ম শৃঙ্খলতাৰ কঠোৰ বন্দন, আনফালে আকৌ লৌকিক অপভ্ৰংশ কাব্য-সাহিত্যৰ ছন্দৰ সমাবেশ। ইয়াৰ ছন্দত অন্ত্যানুপ্ৰাস প্ৰভৃতি ছান্দনিক উপকৰণ থকা কথা চৰ্যাগীতৰ সংজ্ঞা ব্যাখ্যাৰ প্ৰসঙ্গত উপস্থাপন কৰি অহা হৈছে।[১৭] তথাপি চৰ্যাগীতত মাত্ৰা-সংখ্যাৰ হ্ৰাস বৃদ্ধি আৰু লঘু-গুৰু ধ্বনি বিন্যাসৰ বাবে সাধাৰণ নিয়ম দেখা যায়। পূৰ্ণ আৰু অপূৰ্ণযুক্ত দুবিধ ছন্দৰ কথা সাৰঙ্গদেৱে "সঙ্গীত ৰত্নাকৰ" ত উল্লেখ কৰিছে। মুঠতে চৰ্যাগীতত সংস্কৃত অপভ্ৰংশৰ শিথিল

আদর্শেৰে গঢ়ি উঠা ছন্দৰীতি গৃহীত হৈছে। সেয়েহে ইয়াৰ গীতত কলাবিধিসন্মত ছন্দ আছে বুলি ক'ব পাৰি।

উপযুক্ত অধ্যয়নত দেখা যায় চর্যাগীতৰ গায়ন-পদ্ধতি এটি নিৰ্ভুল ৰূপ আছে। ধ্রুৱপদযুক্ত বা শাস্ত্রীয় সঙ্গীতত থকা লক্ষণেৰে পৰিপূর্ণ চর্যাগীতবোৰ বৌদ্ধ সহজীয়া পন্থৰ ধর্ম সাধনৰ গীত হ'লেও সেইবোৰ সঙ্গীত-শাস্ত্রৰ বিধানত ৰচিত। প্রাচীন ভাৰতৰ সঙ্গীতৰ ঐতিহ্য বিচাৰ কৰাৰ প্রসঙ্গত চর্যাগীতৰ সঙ্গীতৰ ধাৰাই অসম তথা ভাৰতৰ সঙ্গীত জগতত খ্যাতি লাভ কৰিব পাৰে। গতিকে আমি চর্যাগীতৰ গায়ন-পদ্ধতি ৰক্ষা কৰিব পাৰিলেহে অসমৰ সকলো সঙ্গীতৰ ঐতিহ্য ৰক্ষা কৰাটো বুজাব। তেতিয়াহে বিশ্ব দৰবাৰত অসমীয়া তথা ভাৰতীয় সঙ্গীতৰ ঐতিহ্য প্রচাৰ আৰু প্রসাৰ ঘটিব। ❑

পাদ টীকাঃ

১। চর্যাগীতি পদাৱলী ঃ সেন, সুকুমাৰ, পৃষ্ঠা ৩১, ইং- ১৯৭৩ চন।
২। অসমীয়া সাহিত্যৰ সমীক্ষাত্মক ইতিবৃত্ত ঃ শর্মা, সত্যেন্দ্র নাথ, পৃষ্ঠা ৪৪, ইং ১৯৮১ চন।
৩। চর্যাগীতি পৰিক্রমা ঃ দাশ, নির্মল ঃ পৃষ্ঠা ৭, ইং- ১৯৮১ চন।
৪। চর্যাগীতি ঃ দে, সত্যব্রত, পৃষ্ঠা ৮, ইং- ১৯৭৭ চন।
৫। চর্যাগীতি পৰিচয় ঃ দে, সত্যব্রত, পৃষ্ঠা ৪, ইং- ১৯৭৭ চন।
৬। চর্যাগীতিৰ ভূমিকা ঃ চক্রৱর্তী, জাহ্নৱী কুমাৰ, পৃষ্ঠা ৩১, ১৩৯০।
৭। চর্যাপদ ঃ মজুমদাৰ, অতীন্দ্র, পৃষ্ঠা ৪৩, ইং- ১৯৬৪ চন।
৮। চর্যাগীতি পৰিক্রমা ঃ দাশ, নির্মল, পৃষ্ঠা ৯, ইং- ১৯৮১ চন।
৯। বৰগীতৰ সমীক্ষা, গোস্বামী, গিৰিকান্ত, পৃষ্ঠা ২৭, ইং- ২০০৯ চন।
১০। চর্যাগীতি পৰিক্রমা, দাশ, নির্মল, পৃষ্ঠা ৬৩, ইং- ১৯৮১ চন।
১১। চর্যাগীতি পৰিক্রমা, দাশ, নির্মল, পৃষ্ঠা ৬৩, ইং- ১৯৮১ চন।
১২। চর্যাগীতি ঃ দে সত্যব্রত, পৃষ্ঠা ৪১, ইং- ১৯৭৭ চন।
১৩। নাথ সম্প্রদায়ৰ মাজত এই ৰাগৰ গীত চলি আছে। তেওঁ চজ্জাগীত বুলি উল্লেখ কৰিছিল, ইং- ২০০৫ চন।
১৪। চর্যাগীতি পৰিক্রমা ঃ দাশ, নির্মল, পৃষ্ঠা ৬৮, ইং- ১৯৮১ চন।
১৫। বৰগীতৰ ভাষা বৈজ্ঞানিক গৱেষণা, গোস্বামী, গিৰিকান্ত, পৃষ্ঠা ২৫, ইং- ১৯৮৮ চন। (অপ্রকাশিত)
১৬। চর্যাগীতি ঃ দে সত্যব্রত, পৃষ্ঠা ৪২, ইং- ১৯৭৭ চন।

প্রসঙ্গগ্রন্থ ঃ

১। গোস্বামী, মায়াশ্রী, ঃ চর্য্যাগীতিকোষ, ১৯৯৫।
২। গোস্বামী, গিৰিকান্ত, ঃ বৰগীত সমীক্ষা, ২০০৯।
৩। চক্রৱর্তী, জাহ্নবী কুমাৰ ঃ চর্যাগীতিৰ ভূমিকা, ১৩৯০।
৪। চৰকাৰ, সৌম্যেন্দ্র নাথ ঃ চর্যাগীতিকোষ, ১৯৭৮।
৫। দাশ, নির্মল ঃ চর্যাগীতি পৰিক্রমা, ১৯৮১।
৬। দাশগুপ্ত, শশীভূষণ ঃ চর্যাগীতি ও বৌদ্ধধর্ম, ১৯৬৬।
৭। দে, সত্যব্রত ঃ চর্যাগীতি পৰিচয়, ১৯৭৭।
৮। বসু, মুনীন্দ্রমোহন ঃ চর্য্যাপদ, ১৯৫৯।
৯। মজুমদাৰ, অতীন্দ্র ঃ চর্যাপদ, ১৯৬৪।
১০। মুখোপাধ্যায়, তাৰাপদ ঃ চর্যাগীতি, ১৯৬৫।
১১। সেন, নীলৰতন ঃ চর্যাগীতিকোষ, ১৯৭৮।
১২। সেন, সুকুমাৰ ঃ চর্যাগীতি পদাৱলী, ১৯৭৩।
১৩। হাজৰিকা, পৰীক্ষিত ঃ চর্য্যাপদ, ২০০৫। ইত্যাদি।

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

অসমীয়া ভাষাত হিন্দী ভাষাৰ প্ৰয়োগ ঃ এটি সমাজভাষাবৈজ্ঞানিক বিশ্লেষণ

ড° পুষ্পাঞ্জলি হাজৰিকা

সহকাৰী অধ্যাপক
অসমীয়া বিভাগ
জগন্নাথ বৰুৱা মহাবিদ্যালয়
যোৰহাট (স্বায়ত্তশাসিত),
অসম-৭৮৫০০১
৮৬৩৮৮৬৯২৪০
puspanjali.hazarika30@gmail.com

সংক্ষিপ্তসাৰ ঃ

অসমীয়া ভাষাৰ ঐতিহাসিক পৰিক্ৰমালৈ লক্ষ্য কৰিলে দেখা যায় যে বিভিন্ন সময়ত অসমীয়া ভাষাত বেলেগ বেলেগ ভাষাৰ শব্দ ব্যৱহাৰ হৈ আহিছে। দেশী-বিদেশী ভাষাৰ বহু শব্দ অসমীয়া ভাষাত বহু পূৰ্বৰে পৰা ব্যৱহাৰ হৈ আহিছে। অসমৰ সামাজিক জীৱনলৈ লক্ষ্য কৰিলে দেখা যায় যে অসমত বাস কৰি থকা হিন্দীভাষী লোকসকলৰ লগত শৈক্ষিক, সামাজিক, সাংস্কৃতিক বা বাণিজ্যিক আদি কাৰণত অসমীয়াভাষী লোকসকলৰ প্ৰায়ে যোগাযোগ হৈ থাকে। এনে যোগাযোগৰ ফলত অসমীয়া ভাষাত বহুতো হিন্দী ভাষাৰ শব্দ সোমাই পৰিছে। সাম্প্ৰতিক সমাজ জীৱনলৈ লক্ষ্য কৰিলে অসমীয়াভাষী আৰু হিন্দীভাষী লোকৰ মাজত হোৱা কথোপকথনত হিন্দী ভাষাৰ শব্দ আৰু বাক্যৰ ব্যৱহাৰ প্ৰায়ে দেখা যায়। বৰ্তমান সময়ত গণমাধ্যমৰ জনপ্ৰিয়তা পৃথিৱীৰ বিভিন্ন স্থানৰ লগতে অসমতো দেখা যায়। দূৰদৰ্শনৰ ব্যৱহাৰ, নব্যমাধ্যমৰ জনপ্ৰিয়তা অসমৰ সমাজ জীৱনতো পৰিলক্ষিত হয়। হিন্দী ভাষাৰ বিভিন্ন ধাৰাবাহিক, চলচ্চিত্ৰ, গীত আদি অসমীয়াভাষীৰ মাজতো জনপ্ৰিয় হোৱাৰ ফলত অসমীয়া ভাষাত হিন্দী ভাষাৰ বহুতো বাক্য আৰু শব্দ ব্যৱহাৰ হ'বলৈ ধৰিছে। গতিকে দেখা যায় যে সামাজিক-সাংস্কৃতিক জীৱনৰ পৰিৱৰ্তনৰ লগে লগে ভাষালৈয়ো পৰিৱৰ্তন আহে। গতিকে কোনো এটা ভাষাৰ সমাজভাষাবৈজ্ঞানিক অধ্যয়ন এটা গুৰুত্বপূৰ্ণ বিষয়। "অসমীয়া ভাষাত হিন্দী ভাষাৰ প্ৰয়োগ ঃ এটি সমাজভাষাবৈজ্ঞানিক বিশ্লেষণ" শীৰ্ষক গৱেষণা পত্ৰত অসমীয়া ভাষাত ব্যৱহাৰ হোৱা হিন্দী ভাষাৰ বিষয়ে সমাজভাষাবৈজ্ঞানিক দৃষ্টিভংগীৰে অধ্যয়ন কৰা হৈছে লগতে বৰ্ণনাত্মক পদ্ধতিৰো সহায় লোৱা হৈছে।

বীজ শব্দ ঃ অসমীয়া, ভাষা, সমাজ, হিন্দী, পৰিৱৰ্তন, গণমাধ্যম ।

১.১ বিষয়ৰ পৰিচয় ঃ

ভাষা আৰু সমাজৰ সম্পৰ্ক এৰাব নোৱাৰা। সমাজৰ বিভিন্ন কাৰকে ব্যক্তিৰ ভাষা ব্যৱহাৰ নিৰ্ণয় কৰে। ব্যক্তিয়ে কেনে পৰিৱেশ-পৰিস্থিতিত বাস কৰে সেই অনুসৰি ব্যক্তিৰ ভাষা-মনোভংগী (Language attitude) আৰু ভাষা ব্যৱহাৰ (Language behaviour) গঢ় লয়। ভাষা ব্যৱহাৰৰ ক্ষেত্ৰত ব্যক্তিৰ দৈনন্দিন জীৱন নিৰ্বাহৰ চৌপাশৰ

পৰিৱেশ-পৰিস্থিতি, তেওঁলোকৰ অৰ্থনৈতিক পৰিৱেশ, সামাজিক সংযোগ আদিয়ে গুৰুত্বপূৰ্ণ ভূমিকা পালন কৰে আৰু ভাষা-মনোভংগী গঢ় লোৱাৰ ক্ষেত্ৰতো এই দিশসমূহৰ প্ৰভাৱ উল্লেখযোগ্য। সাধাৰণতে ভাষা-মনোভংগীৰ ধাৰণাৰ লগত এখন সমাজৰ সামাজিক-সাংস্কৃতিক ধাৰণা, বিশ্বাস আৰু ব্যক্তিগত তথা সামাজিক অনুভৱ দুয়োটা দিশ জড়িত হৈ থাকে। তেনেধৰণৰ ধাৰণা, বিশ্বাস আৰু অনুভৱে ব্যক্তি আৰু সমাজৰ ভাষা-মনোভংগীত প্ৰভাৱ বিস্তাৰ কৰিব পাৰে। ব্যক্তিৰ নিজৰ আৰু অন্য ভাষাৰ প্ৰতি থকা মনোভংগী আৰু ধাৰণাৰ আৰু ভাষাৰ ব্যৱহাৰ অধ্যয়নৰ জৰিয়তে ব্যক্তি তথা সমাজৰ মাজত নিহিত হৈ থকা ভাষা-মনোভংগী সম্পৰ্কে জানিব পাৰি। ভাষা-মনোভংগীৰ ক্ষেত্ৰত ব্যক্তিয়ে বাস কৰা সামাজিক-সাংস্কৃতিক জীৱন, ইতিহাস, তেওঁলোকৰ মনস্তাত্ত্বিক ব্যৱহাৰ আৰু পৰিস্থিতি এই সকলো দিশ গুৰুত্বপূৰ্ণ। লগতে ব্যক্তিয়ে কাক উদ্দেশ্য কৰি কৈছে অৰ্থাৎ শ্ৰোতা বা গ্ৰাহক কোন (reciver) কি উদ্দেশ্যৰে কোৱা হৈছে এই সকলো দিশ নিৰ্ভৰ কৰে। গতিকে ভাষা মনোভংগীৰ ক্ষেত্ৰত বক্তা আৰু তেওঁ যাৰ লগত কথা পাতিছে তেওঁৰ স'তে সম্পৰ্কৰ মৰ্যাদা, আত্মীয়তা, বয়স আদি সম্পৰ্কেও বক্তা সচেতন হ'ব লাগিব। অসমৰ দৰে বহুভাষিক ঠাই এখনত বক্তাই কোনটো ভাষা ব্যৱহাৰ কৰিব সেয়া গুৰুত্বপূৰ্ণ দিশ। সাম্প্ৰতিক অসমীয়া ভাষা ব্যৱহাৰলৈ লক্ষ্য কৰিলে গম পোৱা যায় যে, বহুতো অসমীয়া-ভাষীয়ে ইংৰাজী আৰু হিন্দী ভাষাৰ প্ৰতি উচ্চ মনোভাৱ পোষণ কৰে। ইংৰাজী, হিন্দী ভাষাৰ প্ৰতি উচ্চ মনোভাব আৰু নিজৰ ভাষাক গ্ৰাম্য (Low prestige form) বুলি ধাৰণা কৰা, ইংৰাজী, হিন্দী ভাষা প্ৰয়োগ কৰি নিজকে অধিক মৰ্যদাশালী বুলি প্ৰতিষ্ঠা কৰিব খোজা মনোভাব এই ক্ষেত্ৰত গুৰুত্বপূৰ্ণ। বহুভাষিক পৰিৱেশত ব্যক্তিয়ে কনোটো ভাষা ব্যৱহাৰ কৰিব সেই ক্ষেত্ৰত ব্যক্তিৰ ভাষা সম্পকে পোষণ কৰা মনোভাব উল্লেখযোগ্য। অসমীয়াভাষীসকলে বহু সময়ত অসমীয়া ভাষাতকৈ ইংৰাজী, হিন্দী ভাষাতহে মনৰ ভাব সঠিক ৰূপত প্ৰকাশ কৰিব পাৰে বুলি ধাৰণা কৰা দেখা যায়। গতিকে সাম্প্ৰতিক অসমীয়া ভাষাৰ প্ৰতি অসমীয়াভাষীৰ মনোভংগী সম্পৰ্কে আলোচনা কৰিবলৈ যাওঁতে সামাজিক-সাংস্কৃতিক পৰিৱেশ আৰু ইতিহাস, পৰিস্থিতি, অংশগ্ৰহণকাৰী আৰু বক্তাৰ মোড এই দিশসমূহ আলোচনা কৰাটো গুৰুত্বপূৰ্ণ। সামাজিক-সাংস্কৃতিক জীৱনৰ পৰিৱৰ্তনৰ লগে লগে এখন সমাজৰ ভাষাৰো পৰিৱৰ্তন হয়। সাম্প্ৰতিক সময়ত বিশ্বায়ন আৰু তথ্য-প্ৰযুক্তিৰ বিকাশৰ বাবে সমগ্ৰ পৃথিৱীৰ লগতে অসমৰ সমাজ জীৱনলৈ অহা পৰিৱৰ্তনৰ ফলত বিভিন্ন ইংৰাজী, হিন্দী শব্দ অসমীয়া ভাষাত সহজে প্ৰয়োগ হ'বলৈ ধৰিছে। অসমত বহু পূৰ্বৰে পৰা হিন্দীভাষী লোকসকল বসবাস কৰি থকাৰ বাবে তেওঁলোকৰ লগত প্ৰায়ে অসমীয়াভাষী লোকসকলৰ যোগাযোগ হৈ থাকে। ব্যৱসায়-বাণিজ্য, সাংস্কৃতিক অনুষ্ঠান আদিৰ প্ৰসংগতো হিন্দীভাষী লোকসকলৰ লগত অসমীয়াভাষী লোকসকলৰ যোগাযোগ হৈ থাকে। এনে কাৰণত হিন্দী ভাষাৰ বহু শব্দ অসমীয়া ভাষাত প্ৰৱেশ কৰিছে। বৰ্তমান সময়ত বিভিন্ন নতুন নতুন সা-সামগ্ৰীৰ আমদানিৰ লগে লগে তাৰ লগত জড়িত বহু শব্দও অসমীয়া ভাষাত সোমাই পৰিছে। যেতিয়া কোনো এবিধ সামগ্ৰী অন্য সমাজ সংস্কৃতিৰ পৰা আমাৰ সমাজ জীৱনলৈ আহে তেতিয়া সেই সামগ্ৰীবিধৰ লগতে তাৰ লগত জড়িত বিভিন্ন শব্দও আমাৰ ভাষাত প্ৰৱেশ কৰাটো স্বাভাৱিক। এনে কাৰণতে বহুতো ইংৰাজী ভাষাৰ শব্দ অসমীয়া ভাষাত মিশ্ৰণ হোৱা দেখা গৈছে। ইয়াৰ লগতে বৰ্তমান বিশ্বায়নৰ সময়ত শিক্ষা, অৰ্থনীতি, ৰাজনীতি, প্ৰশাসন আদি ক্ষেত্ৰত আন্তঃৰাষ্ট্ৰীয় যোগাযোগৰ বাবে ইংৰাজী ভাষা আৰু ৰাষ্ট্ৰীয় যোগাযোগৰ বাবে হিন্দী ভাষাৰ দক্ষতা থকাটো গুৰুত্বপূৰ্ণ হৈ পৰিছে। এনে কাৰণত ইংৰাজী, হিন্দী ভাষাৰ প্ৰতি অসমীয়া লোকসকলৰ উচ্চাত্মিকা মনোভাৱ গঢ় লোৱা দেখা গৈছে। ইয়াৰ লগতে গণমাধ্যমৰ জনপ্ৰিয়তাৰ ফলত অসমীয়াভাষীসকলে হিন্দী ভাষাৰ বহু শব্দ, বাক্য ব্যৱহাৰ কৰিবলৈ লৈছে। এই গৱেষণাপত্ৰত অসমীয়া ভাষাত হিন্দী ভাষাৰ এনে শব্দ বা বাক্যৰ মিশ্ৰণ সম্পৰ্কে সমাজভাষাবৈজ্ঞানিক দৃষ্টিভংগীৰে আলোচনা কৰা হৈছে।

১.২ অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য ঃ

'অসমীয়া ভাষাত হিন্দী ভাষাৰ প্ৰয়োগ ঃ এটি সমাজভাষাবৈজ্ঞানিক বিশ্লেষণ' শীৰ্ষক গৱেষণাপত্ৰখনৰ উদ্দেশ্য হৈছে অসমীয়া ভাষাত হিন্দী ভাষাৰ ব্যৱহাৰৰ সামাজিক কাৰণ সম্পৰ্কে আলোচনা কৰা।

১.৩ অধ্যয়নৰ পদ্ধতি ঃ

'অসমীয়া ভাষাত হিন্দী ভাষাৰ প্ৰয়োগ ঃ এটি সমাজভাষাবৈজ্ঞানিক বিশ্লেষণ' শীৰ্ষক গৱেষণাপত্ৰখন প্ৰস্তুত কৰিবলৈ সমাজভাষাবৈজ্ঞানিক আৰু বৰ্ণনাত্মক পদ্ধতি গ্ৰহণ কৰা হৈছে।

১.৪ মূল আলোচনা ঃ

দেশী ভাষাবোৰৰ ভিতৰত হিন্দী ভাষাৰ ব্যৱহাৰ অসমীয়া ভাষাত বহুল পৰিমাণে হোৱা দেখা যায়। অসমত বিভিন্ন ব্যৱসায়-বাণিজ্য বা অন্যান্য কৰ্ম সংক্ৰান্তত বিভিন্ন হিন্দীভাষী লোক বাস কৰি থকা দেখা যায়। তেওঁলোকৰ লগত অসমীয়াভাষীসকলৰ বিভিন্ন সময়ত যোগাযোগ হয়। ব্যৱসায়-বাণিজ্য, সামাজিক কাম-কাজ, শৈক্ষিক আদি বিভিন্ন কাৰণত হিন্দীভাষী আৰু অসমীয়াভাষীসকলৰ মাজত যোগাযোগ হোৱা দেখা যায়। গতিকে এনে যোগাযোগৰ ফলত হিন্দী ভাষাৰ কিছুমান শব্দ অসমীয়া ভাষাত সোমাই পৰে। ইয়াৰ লগতে ৰাষ্ট্ৰীয় পৰ্য্যায়ত হিন্দী ভাষাৰ গুৰুত্বৰ বাবে হিন্দী ভাষাৰ দক্ষতা আহৰণত অসমীয়াভাষীসকলে গুৰুত্ব দিয়া দেখা যায়। ৰাষ্ট্ৰীয় ক্ষেত্ৰত যোগাযোগৰ বাবে বা অন্যান্য আনুষ্ঠানিক কাম-কাজৰ ক্ষেত্ৰতো হিন্দী ভাষাৰ দক্ষতা প্ৰয়োজনীয় হৈ পৰে। শিক্ষানুষ্ঠানসমূহত হিন্দী ভাষাৰ শিক্ষা গ্ৰহণৰ ফলস্বৰূপেও হিন্দী ভাষাৰ দক্ষতা কম বেছি পৰিমাণে আহৰণ কৰা হয়। ইয়াৰ লগতে গণমাধ্যমত প্ৰচাৰিত হিন্দী ভাষাৰ বিভিন্ন অনুষ্ঠানৰ জনপ্ৰিয়তাৰ বাবে অসমীয়াভাষী লোকসকলে হিন্দী ভাষাত দক্ষতা আহৰণ কৰা দেখা যায়। গতিকে এনে সামাজিক ,সাংস্কৃতিক পটভূমিত অসমীয়া ভাষাত বহুতো হিন্দী ভাষাৰ শব্দ বা বাক্য ব্যৱহাৰ হোৱা দেখা গৈছে। তলত এই দিশসমূহৰ বিষয়ে সমাজভাষাবৈজ্ঞানিক দৃষ্টিৰে আলোচনা কৰা হ'ল।

১.৪.১ গণমাধ্যমৰ প্ৰভাৱ ঃ

অসমীয়া ভাষাত হিন্দী ভাষাৰ ব্যৱহাৰৰ এটা গুৰুত্বপূৰ্ণ কাৰণ হৈছে গণমাধ্যমৰ জনপ্ৰিয়তা। দূৰদৰ্শনৰ বিভিন্ন অনুষ্ঠান, এফ.এম. ৰেডিঅ', হিন্দী চলচ্চিত্ৰ, ইউটিউব, ফেচবুক, ইনষ্ট্ৰাগ্ৰাম, হোৱাট্চএপ, টুইটাৰ আদিৰ প্ৰচলন বৰ্তমান সময়ত বহুলভাৱে দেখা যায়। দূৰদৰ্শনৰ হিন্দী ধাৰাবাহিক, ৰিয়েলিটি শ্ব', হিন্দী চলচ্চিত্ৰ, ব্যক্তিগত দূৰদৰ্শনৰ চেনেলসমূহৰ বিভিন্ন হিন্দী অনুষ্ঠান অসমৰ প্ৰায় ঘৰে ঘৰে মানুহে উপভোগ কৰে। দূৰদৰ্শনত প্ৰচাৰিত হিন্দী ধাৰাবাহিকসমূহ যুৱপ্ৰজন্মৰ লগতে বয়োজ্যেষ্ঠ লোকসকলৰ মাজতো জনপ্ৰিয়। ইয়াৰ প্ৰভাৱতো হিন্দী ভাষাৰ দক্ষতা কম বেছি পৰিমাণে অসমীয়াভাষীলোকসকলে আয়ত্ত্ব কৰে আৰু দৈনন্দিন জীৱনত ভাষিক যোগাযোগৰ সময়ত এই প্ৰভাৱ পৰিলক্ষিত হয়। হিন্দী চলচ্চিত্ৰৰ জনপ্ৰিয়তা ভাৰতবৰ্ষৰ অন্যান্য ঠাইৰ লগতে অসমতো দেখা যায়। এই চলচ্চিত্ৰসমূহৰ জৰিয়তে অসমৰ জনসমাজত হিন্দী ভাষাৰ বিভিন্ন শব্দ, বাক্য ব্যৱহাৰ হোৱা দেখা যায়। হিন্দী চলচ্চিত্ৰৰ জনপ্ৰিয়তাৰ ফলত হিন্দী ভাষাৰ কিছুমান বাক্য বৰ্তমান নৱপ্ৰজন্মৰ মুখত প্ৰায়ে শুনা যায়, যেনে- সাত খুন মাফ, ঘৰকি মুৰ্গী দাল বৰাবৰ, দাল মে কুছ কালা হ্যে, জেইসী কৰ্ণী এইসী ভৰ্ণী, বস্ কা বাত নেহি ইত্যাদি। ইয়াৰ লগতে মজাক, মষ্টি, ধামাকা, চিপ্কো ইত্যাদি হিন্দী ভাষাৰ শব্দসমূহ অসমীয়া নৱপ্ৰজন্মৰ মুখত স্বাভাৱিকতে শুনা যায়। ইয়াৰ বাহিৰেও অসমীয়া ভাষীসকলে দৈনন্দিন জীৱনত ব্যৱহাৰ কৰা হিন্দী ভাষাৰ অন্যান্য কেইটামান উদাহৰণ তলত আগবঢ়োৱা হ'ল-

(ক) ইমান ভাল খবৰ এটা দিলা, **দিল খুছ্** হৈ গ'ল দেই।

(খ) **কুছটো ৰেহেম কৰ'**, ইমান কাম আছে।

(গ) বাহ ইমান ধুনীয়া হৈ গৈছা, **ইছ্ সুন্দৰতা কা ৰাজ বটাও**।

(ঘ) ইমান **মাচুম** চেহেৰা তোমাৰ।

(খ) **ফচ্ গয়া ৰে** বেচেৰা , ইমান সৰল সি।

(গ) ইমান সহজতে ভাগৰি গ'লে নহ'ব, **জৱানী জিন্দাবাদ** কৰি আগবাঢ়া।

(ঘ)**হম চাথ চাথ হে,** তোমাক কোৱা মানেই মোক কোৱা ।

(ঙ) আয়ৈ দেহি এই **ননহী জান কা ক্যা কৰু মে** ।

ওপৰৰ উদাহৰণসমূহত ব্যৱহাৰ হোৱা হিন্দী ভাষাৰ শব্দ আৰু বাক্যসমূহ দৈনন্দিন জীৱনত যুৱপ্ৰজন্মৰ কথোপকথনত প্ৰায়ে শুনিবলৈ পোৱা যায়। হিন্দী চলচ্চিত্ৰ, নব্যমাধ্যমৰ বিভিন্ন অনুষ্ঠান, ধাৰাবাহিক

আদিৰ জনপ্ৰিয়তাৰ প্ৰভাৱ আৰু দূৰদৰ্শনৰ বিজ্ঞাপনসমূহৰ প্ৰভাৱৰ বাবে অসমীয়া ভাষাত হিন্দী ভাষাৰ মিশ্ৰণ আৰু সংক্ৰমণ হোৱা দেখা যায়। যুৱপ্ৰজন্মৰ মাজত অনানুষ্ঠানিক পৰিৱেশত হোৱা কথোপকথনৰ চিত্ৰণত এনে সংক্ৰমণ আৰু মিশ্ৰণ ৰেছিকৈ হোৱা দেখা গৈছে। বৰ্তমান সময়ত শিশুৰ ভাষাতো এনে ধৰণৰ ভাষা ব্যৱহাৰ লক্ষ্য কৰা যায়। শিশুসকলে দূৰদৰ্শনত বা নব্য মাধ্যমত বিভিন্ন হিন্দী অনুষ্ঠান উপভোগ কৰাৰ ফলত হিন্দী ভাষাৰ দক্ষতা আহৰণ কৰিব পাৰে। এনে কাৰণত তেওঁলোকৰ ভাষাতো হিন্দী ভাষাৰ শব্দ বা বাক্য প্ৰায়ে শুনিবলৈ পোৱা যায়।

৪.২.২ হজ যোগাযোগ ঃ

অসমত বহু সংখ্যক হিন্দীভাষী লোক বসবাস কৰে। ব্যৱসায়-বাণিজ্য তথা অন্যান্য কৰ্ম সংক্ৰান্তীয় বিভিন্ন কাৰণত অসমলৈ আহি স্থায়ী বা অস্থায়ীভাৱে বসবাস কৰি থকা হিন্দী ভাষা-ভাষী লোকৰ সৈতে অসমীয়াভাষীসকলৰ সঘন যোগাযোগ হৈ থাকে। এই হিন্দীভাষী লোকসকলৰ লগত কথোপকথনৰ সময়ত অসমীয়াভাষী লোকসকলেও হিন্দী ভাষাৰ বহুতো শব্দ বা বাক্য প্ৰয়োগ কৰে। বহু সময়ত বজাৰ সমাৰৰ পৰিৱেশত হিন্দীভাষী ক্ষুদ্ৰ ব্যৱসায়ীসকলৰ লগত, ৰিক্‌সাচালক আদিৰ লগত কথোপকথনৰ সময়ত অসমীয়াভাষী লোকসকলেও হিন্দী ভাষাৰেই কথোপকথন কৰা দেখা যায়। উদাহৰণস্বৰূপে- ভায়া জী , ইয়ে দিজিয়ে, ইয়ে কিটনা কা হে, বাজাৰ চলিয়ে, ভায়া চ'ল'গি ক্যা, ভায়া, দু চায় দিজিয়ে ইত্যাদি। কিছুমান অসমীয়াভাষীয়ে হিন্দীভাষীৰ লগ হ'লেই হিন্দী ভাষাত কথা ক'বলৈ আৰম্ভ কৰা দেখা যায়। সহজ যোগাযোগৰ বাবেও আৰু কোনো ক্ষেত্ৰত অসমীয়া ভাষীসকলৰ ভাষিক সচেতনতাৰ অভাৱৰ বাবেও এনেধৰণৰ পৰিৱেশ সততে লক্ষ্য কৰা যায়।

৪.২.৩ হিন্দী ভাষাৰ প্ৰতি উচ্চাত্মিকা ভাৱ ঃ

বহুভাষিক পৰিৱেশত ভাষা ব্যৱহাৰৰ প্ৰসংগত ভাষা মনোভংগীয়ে গুৰুত্বপূৰ্ণ ভূমিকা পালন কৰে। ভাষা-মনোভংগীৰ ক্ষেত্ৰত ব্যক্তিয়ে বাস কৰা সামাজিক-সাংস্কৃতিক জীৱন, ইতিহাস, তেওঁলোকৰ মনস্তাত্ত্বিক ব্যৱহাৰ আৰু পৰিস্থিতি এই সকলো দিশ গুৰুত্বপূৰ্ণ। লগতে ব্যক্তিয়ে কাক উদ্দেশ্য কৰি কৈছে অৰ্থাৎ শ্ৰোতা বা গ্ৰাহক কোন (reciver), কি উদ্দেশ্যৰে কোৱা হৈছে এই সকলো দিশ নিৰ্ভৰ কৰে। গতিকে ভাষা মনোভংগীৰ ক্ষেত্ৰত বক্তা আৰু তেওঁ যাৰ লগত কথা পাতিছে তেওঁৰ স'তে সম্পৰ্কৰ মৰ্য্যাদা, আত্মীয়তা, বয়স আদি সম্পৰ্কেও বক্তা সচেতন হ'ব লাগিব। অসমৰ দৰে বহুভাষিক ঠাই এখনত বক্তাই কোনটো ভাষা ব্যৱহাৰ কৰিব সেয়া গুৰুত্বপূৰ্ণ দিশ। সাম্প্ৰতিক অসমীয়া ভাষা ব্যৱহাৰলৈ লক্ষ্য কৰিলে গম পোৱা যায় যে, বহু অসমীয়াভাষীয়ে ইংৰাজী আৰু হিন্দী ভাষাৰ প্ৰতি উচ্চ মনোভাৱ পোষণ কৰে। বিশেষকৈ নৱপ্ৰজন্মৰ মাজত লক্ষ্য কৰা যায়। ইংৰাজী, হিন্দী ভাষাৰ প্ৰতি উচ্চ মনোভাব আৰু নিজৰ ভাষাক গ্ৰাম্য (Low prestige form) বুলি ধাৰণা কৰা, ইংৰাজী, হিন্দী ভাষা প্ৰয়োগ কৰি নিজকে অধিক মৰ্যদাশালী বুলি প্ৰতিষ্ঠা কৰিব খোজা মনোভাব এই ক্ষেত্ৰত গুৰুত্বপূৰ্ণ। বহুভাষিক পৰিৱেশত ব্যক্তিয়ে কোনটো ভাষা ব্যৱহাৰ কৰিব সেই ক্ষেত্ৰত ব্যক্তিৰ ভাষা সম্পকে পোষণ কৰা মনোভাব উল্লেখযোগ্য। বহু অসমীয়াভাষীয়ে বহু সময়ত অসমীয়া ভাষাৰ মাজতে ইংৰাজী, হিন্দী ভাষাৰ শব্দ বা বাক্য ব্যৱহাৰ কৰি মনৰ ভাব প্ৰকাশ কৰা দেখা যায়। গতিকে সাম্প্ৰতিক অসমীয়া ভাষাৰ প্ৰতি অসমীয়াভাষীৰ মনোভংগী সম্পৰ্কে আলোচনা কৰিবলৈ যাওঁতে সামাজিক-সাংস্কৃতিক পৰিৱেশ আৰু ইতিহাস, পৰিস্থিতি, অংশগ্ৰহণকাৰী আৰু বক্তাৰ মোড এই দিশসমূহ আলোচনা কৰাটো গুৰুত্বপূৰ্ণ। অসমৰ পৰিৱেশলৈ লক্ষ্য কৰিলে দেখা যায় যে, যুৱপ্ৰজন্মৰ বহুতে হিন্দী ভাষাৰ প্ৰতি উচ্চাত্মিকা ভাৱ পোষণ কৰে। শিক্ষানুষ্ঠানসমূহতো হিন্দীভাষী বহু ছাত্ৰ-ছাত্ৰীৰ লগত অসমীয়াভাষীসকলে একেলগে অধ্যয়ন কৰে। ছাত্ৰ-ছাত্ৰীৰ নিবাসবোৰতো হিন্দীভাষীসকলৰ লগত একেলগে বাস কৰে। এনে পৰিৱেশত দেখা যায় যে অসমীয়াভাষীসকলে হিন্দীভাষীসকলৰ লগত কথোপকথনৰ সময়ত অসমীয়া ভাষাৰ সলনি বহু সময়ত হিন্দী ভাষা ব্যৱহাৰ কৰা দেখা যায়। যুৱপ্ৰজন্মৰ মাজত হিন্দী ভাষাৰ প্ৰতি থকা উচ্চাত্মিকা ভাৱৰ বাবে হিন্দী ভাষা ব্যৱহাৰৰ জৰিয়তে বন্ধু-বৰ্গৰ মাজত নিজকে বিশেষ বুজাবলৈ চেষ্টা কৰা দেখা যায়। ইয়াৰ লগতে গণমাধ্যমৰ জনপ্ৰিয়তাৰ বাবে যুৱপ্ৰজন্মৰ ভাষাত হিন্দী

ভাষাৰ বহু শব্দ মিশ্রণ হোৱা দেখা যায়। বন্ধু-বর্গৰ লগত কথোপকথনৰ সময়ত এনেধৰণৰ হিন্দী শব্দসমূহ ব্যৱহাৰ কৰি নিজকে বিশেষ ধৰণে উপস্থাপন কৰিব খোজা দেখা যায়। গল্প, উপন্যাসত এনেধৰণৰ পৰিৱেশ চিত্রণত হিন্দী ভাষাৰ সংক্রমণ আৰু মিশ্রণ প্রতিফলিত হয়। উদাহৰণস্বৰূপে-

(ক) মই এনেকোৱা হ'লে **চাৰা জিন্দেগী** তোমাৰ সমস্যা নাথাকিব আৰু।

(খ) মুৰ **খাৰাব** নকৰিবা দেই ।

(গ) কাইলৈ তোমালোকৰ ঘৰলৈ যাম, **পাক্কা** যামেই, চিন্তা নকৰিবা।

(ঘ) জিন্দেগী বৰবাদ হ' গয়া, লাইফ **খাৰাব হো গয়া**।

(ঙ) খাঅ' পিঅ' মজে কৰো বিন্দাচ ৰহ' ।

(চ) যি ক'ব লগা আছে **চামনা চামনি** ক'ব লাগে।

(ছ) দোস্তে দোস্তক তই তই ক'লেহে ভাল লাগে উত্যাদি।

উদাহৰণসমূহৰ পৰা দেখা গৈছে যে এনেধৰণ হিন্দী ভাষাৰ মিশ্রণ যুৱপ্রজন্মৰ মাজত কথোপকথনত প্রায়ে হয়। যুৱপ্রজন্মই বন্ধু-বর্গৰ লগত কথোপকথনৰ সময়ত দোস্ত, পক্কা, জিন্দেগী ইত্যাদি হিন্দী ভাষাৰ শব্দসমূহ প্রায়ে ব্যৱহাৰ কৰে। গণমাধ্যমৰ ব্যৱহাৰৰ বাবে যুৱপ্রজন্মৰ মাজত এই শব্দসমূহ জনপ্রিয় হৈ পৰা দেখা যায়। বর্তমান সময়ত যিহেতু যুৱপ্রজন্মৰ মাজত বিভিন্ন নব্য মাধ্যমসমূহৰো ব্যৱহাৰৰ জনপ্রিয়তা যথেষ্ট বেছি। গতিকে ফেচবুক, হোৱাট্চ্এপ, ইউটিউব, ইনষ্টাগ্রাম আদি নব্য মাধ্যমসমূহত হিন্দী ভাষাৰ বিভিন্ন অনুষ্ঠান উপভোগ কৰাৰ জৰিয়তে হিন্দী ভাষাৰ দক্ষতা আহৰণ কৰা দেখা যায়। যুৱপ্রজন্মৰ মাজত হিন্দী ভাষাৰ প্রতি উচ্চাত্মিকা মনোভাৱৰ বাবে এনে হিন্দী শব্দসমূহৰ ব্যৱহাৰৰ হোৱা দেখা যায়।

লিখিত সাহিত্যতো লক্ষ্য কৰিলে দেখা যায় যে অসমীয়া গল্প, উপন্যাস আদিত অসমীয়া ভাষাৰ মাজতে হিন্দী ভাষাৰ বহুতো শব্দ ব্যৱহাৰ হয়। বিশেষকৈ বিষয়বস্তু অনুসৰি অথবা গল্প বা উপন্যাসত চৰিত্রৰ কথোপকথনত অসমীয়া ভাষাৰ মাজতে হিন্দী ভাষাৰ শব্দৰ ব্যৱহাৰ দেখা যায়। বহুতো গল্প, উপন্যাস, ব্যংগ সাহিত্য আদিত বিষয়বস্তু অনুসৰি পৰিৱেশ চিত্রণৰ প্রসংগত হিন্দী ভাষা পৰিৱেশ-পৰিস্থিতি বিশেষে প্রয়োগ কৰা দেখা যায়। নৱপ্রজন্মৰ চৰিত্র চিত্রণ, অথবা ক্ষুদ্র ব্যৱসায়ীৰ চৰিত্র চিত্রণ, বাণিজ্যিক প্রতিষ্ঠানৰ পৰিৱেশ চিত্রণ আদিত অসমীয়া ভাষাৰ মাজতে হিন্দী ভাষাৰ ব্যৱহাৰ হোৱা দেখা যায়।

উপসংহাৰ আৰু সিদ্ধান্ত ঃ

'অসমীয়া ভাষাত হিন্দী ভাষাৰ প্রয়োগ ঃ এটি সমাজভাষাবৈজ্ঞানিক বিশ্লেষণ' শীর্ষক গৱেষণাপত্রৰ আলোচনাৰ পৰা দেখা যায় যে অসমীয়া ভাষাত হিন্দী ভাষাৰ বহু শব্দৰ প্রচলন হৈ আহিছে। অসমীয়াভাষীসকলে দৈনন্দিন বিভিন্ন কাম কাজত যোগাযোগৰ বাবে ভিন্ন কাৰণত অসমীয়া ভাষাৰ মাজতে হিন্দী ভাষাৰ শব্দ, বাক্য ব্যৱহাৰ কৰে। শিশু, যুৱপ্রজন্ম বা বয়োজ্যেষ্ঠ লোকসকলৰ বহুজনৰ মাজতে এনে ভাষা ব্যৱহাৰ লক্ষ্য কৰা যায়। এই আলোচনাৰ পৰা তলত দিয়া সিদ্ধান্তসমূহ পোৱা গ'ল-

(ক) অসমৰ সমাজ জীৱনত হিন্দী ভাষী বহু লোক বিভিন্ন কর্ম সংক্রান্তত বসবাস কৰি থকাৰ বাবে হিন্দী ভাষী লোকসকলৰ লগত হোৱা যোগাযোগৰ ফলত অসমীয়া ভাষাত বহুতো হিন্দী ভাষাৰ শব্দ ব্যৱহাৰ হোৱা দেখা যায়।

(গ) বিশ্বৰ অন্যান্য ঠাইৰ লগতে অসমতো গণমাধ্যমৰ বহুল প্রয়োগ আৰু জনপ্রিয়তাৰ বাবে হিন্দী ভাষাৰ বহু শব্দ অসমীয়া ভাষাত প্রবেশ কৰিছে।

(ঘ) অসমীয়াভাষী লোকসকলৰ মাজত ভাষিক সচেতনতাৰ অভাৱৰ বাবে, লগতে কোনো কোনো লোকৰ হিন্দী ভাষাৰ প্রতি থকা উচ্চাত্মিকা ভাৱৰ বাবে বহু সময়ত হিন্দী ভাষাৰ ব্যৱহাৰ হোৱা দেখা যায়। ❑

গ্রন্থপঞ্জীঃ

দাস, বিশ্বজিৎ. *সমাজ-ভাষাবিজ্ঞান.* নগাঁও ঃ অজন্তা প্রেছ , ২০১৫

শর্মা, অনুৰাধা. *সংহতি আৰু অসমীয়া ভাষা.* গুৱাহাটী ঃ ভৱানী প্রিণ্টার্চ এণ্ড পাব্লিকেশ্যনচ্, ২০১২

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

জাতিভেদৰ বিচাৰ আৰু ভূপেন হাজৰিকাৰ গীত

ড° লুইছ গগৈ

সহকাৰী অধ্যাপিকা
অসমীয়া বিভাগ
কলিয়াবৰ মহাবিদ্যালয়
কুঁৱৰীতল, নগাঁও, অসম-২
৯৮৬৪৬৩২৯৭০
luishgakul@gmail.com

প্ৰস্তাৱনা ঃ

ভূপেন হাজৰিকা এগৰাকী মানৱতাবাদী পুৰুষ। বিশ্বৰ প্ৰতি মানুহৰ প্ৰতি ভূপেন হাজৰিকা সংবেদনশীল, প্ৰতিটো জাতিৰ প্ৰতি সহৃদয়। তেওঁৰ গুণৰাজিয়ে তেওঁক গঢ়ি তুলিছে এগৰাকী বিশ্ব-মানৱৰূপে। তেওঁৰ প্ৰতিটো গীত যেন মাটি আৰু মানুহৰ বাবে সমৰ্পিত। ভূপেন হাজৰিকাৰ গীতৰ স্পন্দনত অসমত ফুল ফুলে, কুলিয়ে মাতে, গছ-বিৰিখে পাত সলায়, ঋতু আহে, ঋতু যায়। জীৱনৰ বহু ঘাত-প্ৰতিঘাত আৰু পৰিবৰ্তনৰ চিৰন্তন সাক্ষী হিচাপে তিনিপুৰুষ জুৰি থিয় হৈ আছে ভূপেন হাজৰিকাৰ গীত।

অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য ঃ

'জাতিভেদৰ বিচাৰ আৰু ভূপেন হাজৰিকাৰ গীত' বিষয়টি বাছি লোৱাৰ উদ্দেশ্য সম্পৰ্কে নিম্নলিখিত কথা কেইটা উল্লেখ কৰিব পাৰি—

(ক) বিষয়টো আলোচনা কৰোঁতে ভূপেন হাজৰিকাই সংশ্লিষ্ট গীতটি ৰচনা কৰিবৰ সময়ত সমাজখনত প্ৰচলিত জাত-পাতে কি বিৰূপ প্ৰভাৱ পেলাইছিল সেই সম্পৰ্কে আলোচনা কৰা হ'ব।

(খ) জাত-পাতৰ পৰিধি ভঙাৰ বাবে ভূপেন হাজৰিকাৰ দৃঢ় মানসিক অৱস্থিতিৰ আভাস লোৱা হ'ব।

অধ্যয়নৰ সমল আৰু পৰিসৰ ঃ

গৱেষণা পত্ৰখন প্ৰস্তুত কৰোঁতে 'ড° ভূপেন হাজৰিকাৰ গীত সমগ্ৰ' শীৰ্ষক গ্ৰন্থখনিক মুখ্য সমল হিচাপে গ্ৰহণ কৰা হৈছে। সংশ্লিষ্ট গ্ৰন্থখনৰ 'এ' বিজুলী নাচে' শীৰ্ষক গীতটিত প্ৰকাশিত জাত-পাতৰ বিচাৰৰ ফলত পদপিষ্ট হোৱা নিষ্পাপ প্ৰেমৰ আলৈ-আথানি আৰু তাৰ বিপৰীতে প্ৰকৃতিৰ সহযোগ - এই সম্পৰ্কে আলোচনা কৰা হ'ব। আনটি গীত 'যুৱতী অনামিকা গোস্বামী'ত হাজৰিকাই জাত-পাতৰ বাধা নেওচি বিবাহত আবদ্ধ হোৱা এহাল ডেকা-ডেকেৰীক আগবাঢ়ি যাবলৈ প্ৰদান কৰা আশীৰ্বাদ সম্পৰ্কতো আলোচনা কৰা হ'ব।

অধ্যয়নৰ পদ্ধতি ঃ

গৱেষণা পত্ৰখন প্ৰস্তুত কৰোঁতে বিশ্লেষণাত্মক আৰু সমীক্ষাত্মক পদ্ধতি অৱলম্বন কৰা হৈছে।

জাত-পাত -সমাজৰ এক বিভেদকামী শক্তি ঃ

ভাৰতীয় সভ্যতাত অতি প্ৰাচীনকালৰ পৰাই জাত-পাতৰ বিচাৰ এটা মুখ্য উপজীব্য হিচাপে থিয় হৈ থকা দেখা গৈছে। কৰ্মৰ ভিত্তিত ভাৰতীয় সমাজ ব্যৱস্থাত চাৰি জাতিৰ উল্লেখ পোৱা যায়। এই অনুযায়ী যুদ্ধাদি কৰ্মৰ বাবে ক্ষত্ৰিয়, বেদবিহিত কৰ্মৰ বাবে ব্ৰাহ্মণ, বেহা-বেপাৰৰ বাবে বৈশ্য আৰু অন্য কৰ্মৰ বাবে শূদ্ৰ জাতিৰ বিৱৰণ ভাৰতীয় শাস্ত্ৰসমূহে স্বীকাৰ কৰে। কুৰি শতিকা অতিক্ৰমি একবিংশ শতিকাতো ভাৰতীয় সমাজ ব্যৱস্থাৰ পৰা জাত-পাতৰ নৈখনত মথাউৰি বন্ধা নহ'ল। স্বাধীনোত্তৰ ভাৰতৰ অৰ্দ্ধ-শতিকাও কেতিয়াবাই অতিক্ৰম হ'ল; কিন্তু জাত-পাতৰ এই বিভেদে দেশখনক কোঙা কৰিয়েই ৰাখিছে, অসমো তাৰ ব্যতিক্ৰম নহয়।

'এ' বিজুলী নাচে' - পটভূমি ঃ

১৯৩৭ চনত 'কুসুম্বৰৰ পুত্ৰ শ্ৰীশঙ্কৰ গুৰুৱে' শীৰ্ষক গীত ৰচনাৰ জৰিয়তে গীতৰ পৃথিৱীত ভৰি দিয়া ভূপেন হাজৰিকাই সাতোটা দশকজুৰি তিনি শতাধিক গীত ৰচনা কৰিলে। কিন্তু গীতিকাৰ ভূপেন হাজৰিকাই নতুনকৈ স্বাধীন হোৱা গান্ধীজীৰ ভাৰতবৰ্ষত ৰামৰাজ্যৰ সন্ধান নাপালে। ৰামৰাজ্য দূৰতে থাওক, তাৰ সলনি নতুন ভাৰততো ঠাই ল'লেহি জাত-পাত নামৰ ৰাক্ষসটিয়ে। ইয়ে ভূপেন হাজৰিকাক মানসিকভাৱে ভাৰাক্ৰান্ত কৰি তুলিছিল। ১৯৫১ চনত ভূপেন হাজৰিকাই পি.এইচ.ডি. ডিগ্ৰী লাভ কৰে। কিন্তু স্বাধীন ভাৰততে তেওঁৰ ডিগ্ৰী সন্দৰ্ভত প্ৰশ্ন চিহ্ন তুলি ধৰা হয়— তেওঁৰ ডিগ্ৰী আচল নে নকল। আনকি পি.এইচ.ডি. ডিগ্ৰীৰ সত্যাসত্য নিৰূপণৰ বাবে এখন অনুসন্ধান কমিটিও গঠন কৰি দিয়া হৈছিল। এই আটাইবিলাকৰ কাৰণ এটাই - ভূপেন হাজৰিকা আছিল জাতত সৰু। আটাইবোৰ কৰ্মকাণ্ড সংঘটিত হৈছিল সমাজৰ এচাম তথাকথিত সভ্য আৰু উচ্চ (?) শ্ৰেণীৰ লোকৰ পৃষ্ঠপোষকতাত। এনেধৰণৰ কৰ্মকাণ্ডই ভূপেন হাজৰিকাক মনোকষ্ট দিছিল। এনে সময়তে তেওঁ লিখি উলিয়াইছিল 'এ' বিজুলী নাচে' শীৰ্ষক গীতটি। উদ্দেশ্য - জাত-পাতৰ প্ৰাচীৰ ভাঙি এখন নতুন নিকা সমাজ গঢ়া। সেয়া আছিল ১৯৫৪ চন। ১৯৭৬ চনত কলিকতাত ভূপেন হাজৰিকাই লিখি উলিয়ায় 'যুৱতী অনামিকা গোস্বামী' শীৰ্ষক গীতটি।

বিষয়বস্তু বিশ্লেষণ ঃ

ভূপেন হাজৰিকা তীব্ৰ মানৱতাবাদী গীতিকাৰ। মানুহ তেওঁৰ গীতৰ প্ৰধান সম্পদ। সমাজৰ প্ৰতিটো গতিবিধি তেওঁৰ নখদৰ্পণত। সমাজৰ শুদ্ধিকৰণত তেওঁ গুৰুত্ব প্ৰদান কৰে। তেওঁৰ গীতৰ উদ্দেশ্য গঠনমূলক; বিভেদক প্ৰতিহত কৰি নতুনক আঁকোৱালি লোৱাৰ বাবে তেওঁ সততে আগ্ৰহী। এক অৰ্থত তেওঁৰ আছে নতুন সাহ।

আলোচ্য গীত দুটিৰ এটিৰ আৰম্ভণিতে ভূপেন হাজৰিকাই তেওঁৰ তেনে সাহসৰ উমান দাঙি ধৰিছে। এয়া প্ৰকৃতাৰ্থত জাত-পাতৰ বিভেদ অতিক্ৰমি নতুন সংকল্প গ্ৰহণৰ সাহস। আজি আৰু জাতত নীচ বুলি মানুহে পিছ পৰি থকাৰ কোনো সকাম নাই। জাতত উচ্চ হ'লেও বিভেদকামী শক্তিক অতিক্ৰম কৰি তেওঁ আগবাঢ়িব খোজে। পিছুৱাই যোৱাৰ কোনো কাৰণ নাই। সেয়েহে বুকুত গুজি লৈছে অযুত সাহস। প্ৰতীকাত্মক ভাষাত গীতটিৰ আৰম্ভণিতে তেওঁ তাকেই ক'বলৈ বিচাৰিছে কথাৰে— "ব্ৰহ্মপুত্ৰৰ পাৰতে সৰু সৰু পুখুৰীও

থাকে। তাৰ সৰু পুঠি মাছবোৰো সাহসী হৈছে। সিহঁতে আজিকালি আকাশৰ বিজুলীকো গিলিব খোজে।"

গীতটিৰ কথাংশৰ জৰিয়তে ভূপেন হাজৰিকাই ডম্বৰু বজাই যেন এখন ৰণৰ আগজাননী দিছে। এই ৰণ জাত-পাতৰ বিৰুদ্ধে। এই ৰণ সৰু সৰু মানুহৰ ন্যায় প্ৰাপ্তিৰ বাবে।

সৰু সৰু মানুহৰ জীৱনবোৰ সদায় শংকাযুক্ত। তেওঁলোকৰ প্ৰাণৰ যেন এই অৰ্থসৰ্বস্ব সমাজত কোনো মূল্য নাই। তেওঁলোকৰ প্ৰতি যেন কোনোৱেই দয়াশীল নহয়। মেঘৰ গিৰগিৰনিয়ে কঁপাই তোলে তেওঁলোকৰ সৰু সৰু হৃদয়। শংকিত হয়, চিন্তিত হয় - কিন্তু অৰ্থসৰ্বস্ব এই সমাজ ব্যৱস্থাত পৰিত্ৰাণৰ উপায় তেওঁলোকৰ হাতত নাই। এফালে অৰ্থ— আনফালে জাত পাতৰ বিচাৰ; দুয়োটাই কেকোৱাচেপা দিছে এই সৰু মানুহবিলাকক। মেঘে বজোৱা ডম্বৰুই যেন এনে এক ভয়াৰ্ত্ত পৰিৱেশৰ আগজাননী দিছে—

"ডুগ্ ডুগ্ ডুগ্ ডুগ্ ডম্বৰু
মেঘে বজায় ডম্বৰু
চিকমিক্ বিজুলী নাচে
হে' চিকমিক্ বিজুলী
এ' চিকমিক বিজুলী।
সৰু সৰু গাঁৱৰে সৰুকণহঁতৰে
সৰু সৰু ঘৰবোৰ কঁপে,"

প্ৰেমত আতুৰ এহাল যুৱতী আৰু যুৱক— নাম সৰুদৈ-সৰুকণ। দুয়োৰে মনৰ বৰ মিল। পণ দুয়োটি একেলগে হোৱা। কিন্তু তাতেই যেন প্ৰাচীৰ। মন এক হ'লেও দুটি দেহ এক হ'বলৈ সমাজে অনুমতি নিদিয়ে। সৰুদৈ-সৰুকণহঁতৰ বিপদ; সমাজকো আওকাণ কৰিব নোৱাৰে। কিন্তু দুয়োৰে মিলনো যে হ'বই লাগিব। সেয়েহে পণ লয়— তেওঁলোকৰ মিলনৰ হেঙাৰ এই সংকীৰ্ণ সমাজখনক এৰি দিয়াৰ। জোনাক নাপালেও দুয়ো বিজুলীৰ পোহৰকে সাৰথি কৰে আৰু সৰু সৰু সমাজক ত্যাগ কৰে—

"সমাজেও অনুমতি নিদিলে
দুয়োৰে জাত-পাত নিমিলে
(সেয়ে) সৰুদৈ-সৰুকণে বিজুলীৰ পোহৰত
সৰু সৰু সমাজক এৰে।"

ভূপেন হাজৰিকাৰ গীতত বিজুলী যেন এক আশাৰ প্ৰতীক। সৰুদৈ-সৰুকণহঁতৰ মনবোৰ ক্ৰমশঃ ডাঠ হৈছে, পৰিস্থিতিৰ সৈতে সাহসেৰে মোকাবিলা কৰিবলৈ সক্ষম হৈছে, বুকুত গুজি লৈছে অযুত সাহ। সৰু সৰু মানুহৰ বিস্তৃত মানসিকতাৰ পৰিচয় দাঙি ধৰিবলৈ গৈ ভূপেন হাজৰিকাই যেন উৎসাহেৰে কৈছে—

"সৰু সৰু পুখুৰীৰ, সৰু পুঠি মাছবোৰে
বিজুলীক গিলিবহে খোজে
হে' চিকমিক বিজুলী
এ' চিকমিক বিজুলী।"

এতিয়া আৰু সৰুদৈ-সৰুকণঁহতৰ মনবোৰ বিজুলীয়ে নকঁপায়, সিহঁতে ভয় নাখায়। বৰঞ্চ বিজুলীৰ পোহৰত আগুৱাবলৈহে শিকে।

সমাজ ব্যতিৰেকেও সৰুদৈ-সৰুকণৰ বিবাহ সম্ভৱ। জাত-পাত সমাজতহে ডাঙৰ, প্ৰকৃতিত নহয়। প্ৰকৃতি যেন এই বিবাহত অতি আনন্দিত। প্ৰকৃতিৰ প্ৰতি উপসৰ্গই যেন সিহঁতক সাহস আৰু প্ৰেৰণা যোগাইছে— বিজুলীয়ে ৰভা দিছে, জিলীয়ে বিয়া নাম গাইছে, ধুমুহাই গগণা বজাইছে আৰু বনজুইয়ে দিছে হোম। ৰভা সাজিবৰ বাবে সমাজৰ মুষ্টিমেয় অন্ধ সংস্কাৰী লোকৰ প্ৰয়োজন নাই, প্ৰয়োজন নাই জাত-পাতক লৈ বু-বা কৰা আয়তীহঁতৰ, প্ৰয়োজন নাই ঢুলীয়াৰ ঢোল, পেঁপা আৰু গগণাৰ; আৰু প্ৰয়োজন নাই হোমৰ মন্ত্ৰোচ্চাৰণ কৰিবলৈ কোনো ব্ৰাহ্মণৰ—

বনজুইয়ে হোম দিলে
বিজুলীয়ে ৰভা দিলে
জিলীয়ে বিয়ানাম গায়
ধুমুহাই গগণা বায়
সাহসেৰে বাতৰি বিলায়।

মানৱ আৰু প্ৰকৃতি— দুখন ভিন্ন সমাজৰ পটভূমিত সৰুদৈ-সৰুকণ বা সিহঁতৰ নিচিনা অনেকৰ জীৱন অতিবাহিত হৈছে। এখন বিভেদকামী ক্ৰুড় সমাজ; আৰু আনখন নিকা সমাজ যিখনে মানুহক একীভূত কৰে। হৃদয়, মগজু আৰু আত্মাৰ দ্বাৰা পৰিচালিত জীৱশ্ৰেষ্ঠ মানুহৰ তুলনাত প্ৰকৃতিৰ সমাজখন যেন বহু ওপৰত। মানুহৰ বিচাৰে সৰুদৈ-সৰুকণক দিয়া আতিশয্যই

যেন প্ৰকৃতিৰ সমাজক ওপৰলৈ লৈ গ'ল। মানুহৰ এই বিচাৰ সঁচাকৈয়ে লজ্জাজনক।

জাত-পাতক কেন্দ্ৰীয় বিষয় হিচাপে লৈ ৰচিত ভূপেন হাজৰিকাৰ আন এটি গীতৰ শীৰ্ষক হ'ল— 'যুৱতী অনামিকা গোস্বামী'। এহাল প্ৰেমিক-প্ৰেমিকা। দুয়োৰে জাত বেলেগ বেলেগ। যুৱতীগৰাকী জাতত উচ্চ, নাম অনামিকা গোস্বামী। যুৱকজনৰ নাম প্ৰশান্ত দাস, সমাজে তেওঁক নিম্ন জাতৰ বুলি কয়। যুৱক-যুৱতীহালৰ মনৰ মিলনক তথাকথিত সমাজ ব্যৱস্থাই বাধা দিলে ঠিকেই, কিন্তু সেই সমাজ ব্যৱস্থাই সিহঁতহালক বান্ধি ৰাখিব নোৱাৰিলে—

"সেয়ে কাকো নজনাই কামাখ্যা ধামত
দুয়ো দুয়োকে আজি মালা পিন্ধালে
ৰাম মালা পিন্ধালে।"

ভূপেন হাজৰিকাও সমাজৰ জাত-পাতৰ বিচাৰ নেওচি সমাজত অসবৰ্ণ বিবাহৰ দৃঢ় সমৰ্থক। সেয়েও তেৰোঁ সমাজৰ কুটিল চাৱনিক স্পষ্টভাৱেই আওকাণ কৰি সেইহাল যুৱক-যুৱতী প্ৰশান্ত দাস আৰু অনামিকা গোস্বামীৰ বিবাহ সম্ভৱ কৰালে গীতটিত।

"এইয়া বুজাৰ যুগ

.....

এইয়া সীমাৰ পৰিধি ভঙাৰ যুগ।
মনৰ পথাৰ বহল কৰি
প্ৰেমৰ ৰসেৰে জীপাল কৰি
এইয়া মানৱতা কঠীয়া সিঁচাৰ যুগ।"

ভূপেন হাজৰিকা আশাবাদী। একবিংশ শতিকাই নতুন বতৰা আনিব— এই বতৰা হ'ব আশাৰ বতৰা। একবিংশ শতিকাত ঊনবিংশ শতিকাৰ ধ্যান-ধাৰণা শোভা নাপায়। একবিংশ শতিকালৈ প্ৰস্তুত কৰি দি যুৱতী অনামিকা গোস্বামী আৰু যুৱক প্ৰশান্ত দাসক ভূপেন হাজৰিকাই আশীৰ্বাদ দিছে—

"দুয়ো পাবা নৱ নৱ জ্যোতিৰ আভাস
আশিসে ভৰা হওক দুয়োৰে আকাশ"

এই আশীৰ্বাদ স্বাভাৱিকতে আশাব্যঞ্জক।

যুৱক-যুৱতীহাল সুখী। সিহঁতৰ মুখত অসবৰ্ণ বিবাহৰ বাবে কোনো দুখ নাই— সিহঁতৰ মুখত উজ্জ্বলতা বিৰাজমান। এনে যুৱক-যুৱতীসকলৰ প্ৰতি গায়ক ভূপেন হাজৰিকাৰ সদায় সদিচ্ছা আছে; আছে আশীৰ্বাদ। সেয়েহে ভূপেন হাজৰিকাই আশীৰ্বাদৰ সুৰত কয়— এতিয়া সময় উপগ্ৰহ সাজি মহাশূন্যত উপঙি ফুৰাৰ, এতিয়া সময় বিজ্ঞানক ধ্বংসৰ পৰিৱৰ্ত্তে মানৱৰ কল্যাণৰ হেতু লগোৱাৰ।

গীতটোৰ ৰচনা কৰাৰ সময় - ১৯৭৬। সেয়া বিংশ শতিকাৰ প্ৰায় অন্তিম ভাগ। এই সময় জাতিভেদ লৈ অৰিয়া-অৰি কৰি থকাৰ সময় নহয়— সময় মানৱতাৰ দুৱাৰ মুকলি কৰাৰ। এই সময়ক ভূপেন হাজৰিকাই 'জাতি কুল নেওচা সাহৰ যুগ' বুলিছে—

"এইয়া প্ৰশান্ত আৰু অনামিকাৰ
জাতিকুল নেওচা হোমাগ্নিৰ যুগ
এইয়া জনাৰ যুগ।
এইয়া বুজাৰ যুগ।"

জাত-পাতৰ নীচ ধ্যান-ধাৰণাৰ পৰিপন্থী ভূপেন হাজৰিকা— তেওঁ এইহাল যুৱক-যুৱতীৰ প্ৰেম আৰু মিলনত পাইছে আশাৰ সংবাদ। এই আশা সাম্য-মৈত্ৰীৰ; এই আশা জাত-পাতৰ প্ৰাচীৰ ভাঙি নতুন সমাজ গঢ়াৰ।

সিদ্ধান্ত ঃ

প্ৰস্তাৱিত আলোচনাৰ পৰা নিম্নলিখিত সিদ্ধান্তসমূহ গ্ৰহণ কৰিব পৰা যায়—

(ক) মানুহৰ সমাজখন কলুষ-কালিমাৰে ভৰা। জাত-পাতে মানুহৰ সম্পৰ্ক বিষময় কৰি তোলে।

(খ) মানুহৰ সমাজৰ তুলনাত প্ৰকৃতিৰ সমাজত কোনো কলুষ-কালিমা নাই।

(গ) ভূপেন হাজৰিকাৰ গীতত মানুহৰ সমাজতকৈ প্ৰকৃতি সমাজক উচ্চ স্থান দিয়া হৈছে।

(ঘ) জাত-পাতৰ বিচাৰ যে সৰ্বশেষ কথা নহয় সেয়া সংশ্লিষ্ট গীত দুটিৰ জৰিয়তে ভূপেন হাজৰিকাই দৃঢ়তাৰে ঘোষণা কৰিছে আৰু মানুহৰ কৰ্মকাণ্ডৰ বাবে তীব্ৰ তাচ্ছিল্য কৰিছে।

(ঙ) জাত-পাতৰ নীচ বিচাৰৰ কথা ভাবি থকাৰ সময় এয়া নহয়। এয়া একবিংশ শতিকা— আগবাঢ়ি যোৱাৰ সময়। ঊনবিংশ শতিকাৰ চিন্তা-চেতনা ত্যাগ কৰি

আগুৱাই যোৱাৰ সময়। গীতৰ জৰিয়তে ভূপেন হাজৰিকাই তাকেই স্পষ্ট কৰি দিছে।

উপসংহাৰ ঃ

জীৱনৰ আঠোটা দশক সংগীতৰ সৈতে নিবিড় ভাৱে জড়িত হৈ থকা জীৱনশিল্পী ভূপেন হাজৰিকাৰ গীত প্ৰকৃতাৰ্থত অসমীয়া সমাজৰ এখন স্বচ্ছ দাপোণ। জাতি, জনজাতিৰ সম্প্ৰীতিৰ পৰা ঋতুৰ বৰ্ণনালৈ, গাভৰুৰ দেহৰ বৰ্ণনাৰ পৰা ব্ৰহ্মপুত্ৰৰ সুষমালৈ— অসমীয়া সমাজ-জীৱনৰ বিস্তৃত আলোচনা ভূপেন হাজৰিকাৰ গীতত আছে। অসমীয়া সমাজখনক বিভিন্ন সময়ত বিভিন্ন ধুমুহাই কোবাই থৈ গৈছে, অনেক সময়ত অসমীয়া সমাজ ব্যৱস্থা সংকটত পৰিছে আৰু অনেক সময়ত বিভেদকামী শক্তিসমূহে সমাজখনক চূৰ্ণ-বিচূৰ্ণ কৰাৰ প্ৰয়াস কৰিছে। এনে সংকটকালত ভূপেন হাজৰিকা পৰ্বতৰ দৰে থিয় হৈছে আৰু গীতেৰে তেওঁ সংকট নিবাৰণৰ প্ৰচেষ্টা চলাইছে। সেই সময়ত ভূপেন হাজৰিকাৰ গীত হৈ পৰিছে অসমীয়া সমাজ জীৱনৰ বাবে একোপাট অমোঘ অস্ত্ৰ। পৰিশেষত ক'ব পাৰি— 'যি নাই ভূপেন হাজৰিকাৰ গীতত সেয়া নাই অসমীয়া সমাজত।' ❑

গ্ৰন্থপঞ্জী

মুখ্য সমল ঃ

১। হাজৰিকা, সূর্য্য ঃ ড° ভূপেন হাজৰিকাৰ গীতসমগ্ৰ, সূর্য্য হাজৰিকা, এছ. এইছ শৈক্ষিক ন্যাস, গুৱাহাটী, তৃতীয় সংস্কৰণ, ২০১০

গৌণ সমল ঃ

১। গোস্বামী, লোকনাথ ঃ নিন্দিত ভূপেনদা, বন্দিত ভূপেনদা, আঁক-বাঁক, ২০০৯
২। ———————— ঃ ড° ভূপেন হাজৰিকা অন্য কিছুকথা, আখৰ প্ৰকাশ, ২০১১
৩। দত্ত, দিলীপ কুমাৰ ঃ ভূপেন হাজৰিকাৰ গীত আৰু জীৱন ৰথ, বনলতা, চতুৰ্থ সংস্কৰণ, ২০১১
৪। দত্ত, নম্ৰতা ঃ ভূপেনদা, জ্যোতি প্ৰকাশন, ২০১১
৫। পূজাৰী, অৰ্চনা ঃ ড° ভূপেন হাজৰিকাৰ গীতৰ মূল্যায়ন, বাণী মন্দিৰ, প্ৰথম প্ৰকাশ, ২০০২
৬। বেজবৰুৱা, লক্ষ্মীনাথ ঃ বেজবৰুৱা গ্ৰন্থাৱলী, সাহিত্য প্ৰকাশ, দ্বিতীয় প্ৰকাশ, ফেব্ৰুৱাৰী, ১৯৮৮

আলোচনী

১। দাস, শোণিত বিজয় (সম্পা.) ঃ গুৱাহাটী, প্ৰথম বছৰ প্ৰথম সংখ্যা, এপ্ৰিল ৰ, ২০০৯
২। মাধৱ, বেণী (সম্পা.) ঃ শিল্পীৰ পৃথিৱী, দ্বিতীয় বছৰ প্ৰথম সংখ্যা, অক্টোবৰ, ১৯৮১

বাতৰি কাকত

১। ডেকা, কনকসেন (সম্পা.) ঃ দৈনিক অগ্ৰদূত, ৮ নৱেম্বৰ, ২০১১
২। বৰগোহাঞি, হোমেন (সম্পা.) ঃ আমাৰ অসম ১৫ নৱেম্বৰ, ২০১১
৩। বৰা, নিত্য (সম্পা.) ঃ অসমীয়া প্ৰতিদিন, ১৫ নৱেম্বৰ, ২০১১
৪। লস্কৰ, শংকৰ (সম্পা.) ঃ নিয়মীয়া বার্তা, ৮ নৱেম্বৰ, ২০১১
৫। ———————— ঃ নিয়মীয়া বার্তা, ১৫ নৱেম্বৰ, ২০১১

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

অদৃশ্যমান সুযোগেৰে আমাৰ সমাজৰ নিবনুৱাসকলক সংস্থাপন দিয়াৰ ক্ষেত্ৰত ই-নিয়োগৰ ভূমিকা ঃ এক অধ্যয়ন

ৰিমঝিম বৰুৱা বৰা
গৱেষক, কৃষ্ণকান্ত সন্দিকৈ
বাজ্যিক মুক্ত বিশ্ববিদ্যালয়
গুৱাহাটী, অসম
ম'বাইল ঃ ৮১৩৪৮৯৯৭৩০
rimjhim.adtu@gmail.com

ড° চয়নিকা সেনাপতি
সহকাৰী অধ্যাপক, কৃষ্ণকান্ত
সন্দিকৈ ৰাজ্যিক মুক্ত
বিশ্ববিদ্যালয়, গুৱাহাটী, অসম
chayanikasenapati@kkhsou.in

সংক্ষিপ্তসাৰ ঃ

বৰ্তমান সময়ত আমাৰ সমাজৰ সংস্থাপন প্ৰত্যাশী বা চাকৰি অনুসন্ধানকাৰীসকল নতুন সুযোগ লাভৰ বাবে ক্ৰমান্বয়ে ডিজিটেল (প্ৰযুক্তিকৰণ) মঞ্চৰ দিশে অধিক অগ্ৰসৰ হৈছে। এনে ক্ষেত্ৰত ই-নিয়োগে এই ক্ষেত্ৰখনত এক গুৰুত্বপূৰ্ণ আহিলা হিচাপে আত্মপ্ৰকাশ কৰিছে। আমাৰ এই গৱেষণা পত্ৰখনত অদৃশ্যমান সুযোগেৰে সংস্থাপন প্ৰত্যাশীসকলে লাভ কৰা সৱলীকৰণ আৰু সমাজ গতিশীলতাক পুৰ্নতাৰে গঢ় দিয়া সকলোবোৰ দিশ অধ্যয়নৰ মাজেদি ফুটাই তোলাৰ প্ৰয়াস কৰা হ'ব। সমান্তৰালকৈ ই-নিযুক্তিৰ দ্বাৰা সংস্থাপন প্ৰত্যাশীসকলক কিদৰে বহুমুখী সৱলীকৰণেৰে আগবঢ়াই নিয়ে তাৰ ধাৰণাও স্পষ্ট কৰা হ'ব। ই-নিয়োগেৰে বৰ্তমান সমাজৰ যিকোনো স্থান, কালৰ পাত্ৰই নিজৰ সকলো বাধা অতিক্ৰম কৰি বিভিন্ন পৰিসৰৰ সংস্থাপন তথ্যৰ সুযোগ লাভ কৰে। ইফালে ই-নিয়োগৰ সুশৃংখলিত আবেদন প্ৰক্ৰিয়াই সংস্থাপন বিচৰাটো সৱল কৰি তোলে। যাৰ ফলত পৰম্পৰাগতভাৱে সংস্থাপন অনুসন্ধানৰ বাধাসমূহো বৰ্তমান হ্ৰাস পাবলৈ ধৰিছে। এই ই-নিয়োগ বা নিযুক্তি মাধ্যমে সংস্থাপন প্ৰত্যাশীসকলক তেওঁলোকৰ দক্ষতা আৰু অৰ্হতা ফলপ্ৰসূভাৱে প্ৰদৰ্শন কৰিবলৈ সুযোগ প্ৰদান কৰে। ফলস্বৰূপে ডিজিটেল পৰিৱেশত তেওঁলোকৰ চাকৰিৰ ক্ষেত্ৰখনত নিজৰ যোগ্যতা আৰু উচ্চ প্ৰতিযোগিতামূলক ক্ষমতাও বৃদ্ধি পায়।

এই অধ্যয়ন কেৱল ব্যক্তিগত খণ্ডৰ সংস্থাপন প্ৰত্যাশীসকলৰ অধ্যয়নেই নহয়। ইয়াত বহুলভাৱে সমাজৰ ভিন্ন ই-নিয়োগৰ ক্ষেত্ৰসমূহৰো তথ্য উন্মোচিত হ'ব। অধ্যয়নৰ মাজত প্ৰতিভাক কিদৰে নিয়োগকৰ্তাৰ সৈতে প্ৰকৃত দক্ষতাৰে সংযোগ কৰি অৰ্থনৈতিক মান বৃদ্ধিৰ পোষকতা কৰে সেই দিশসমূহো ফুটি উঠিব। বৰ্তমান সমাজত এই ই-নিয়োগে সংস্থাপন প্ৰত্যাশীসকলক সৱলীকৰণ কৰি অধিক সামাজিক অন্তৰ্ভুক্তিৰে অৰ্থনৈতিক সমতাক লভাৱান্বিত কৰা দেখা গৈছে।

আমাৰ এই অধ্যয়নত নিয়োগ, ডিজিটেল (প্ৰযুক্তি) মাধ্যম আৰু কৰ্মশক্তি বিকাশৰ ক্ষেত্ৰত গুৰুত্বপূৰ্ণ কাৰ্যৰ উল্লেখেৰে গৱেষণাৰ তথ্য আৰু সিদ্ধান্তসমূহক যুক্তিতত্ত্বৰে পোহৰলৈ অনাৰ প্ৰয়াস কৰা আৰু সংস্থাপন প্ৰত্যাশীসকলক সৱলীকৰণেৰে আমাৰ সমাজৰ ভৱিষ্যৎ গঢ় দিয়াত এক পৰিবৰ্তনশীল শক্তি হিচাপে ই-নিয়োগৰ তাৎপৰ্যৰ ভিন্ন দিশ উন্মোচিত কৰা হ'ব।

সূচক শব্দ ঃ

ই-নিয়োগ বা নিযুক্তি, ইণ্টাৰনেট, সংস্থাপন প্ৰত্যাশী নাইবা অনুসন্ধানকাৰী, সৰলীকৰণ, সংস্থাপন, সুযোগ, ডিজিটেল (প্ৰযুক্তিকৰণ)

আৰম্ভণি ঃ

বিজ্ঞান আৰু প্ৰযুক্তিবিদ্যাৰ দ্ৰুত প্ৰসাৰৰ ফলত ই-নিয়োগ বা অনলাইন নিযুক্তি প্ৰক্ৰিয়া সংস্থাপন অনুসন্ধান প্ৰক্ৰিয়াৰ এক অবিচ্ছেদ্য অংগ হৈ পৰিছে। ই-নিয়োগৰ দ্বাৰা নিয়োগকৰ্তাসকলে সম্ভাব্য প্ৰাৰ্থী বিচাৰি পোৱাৰ ক্ষেত্ৰতো সমাজলৈ এক বৈপ্লৱিক পৰিবৰ্তন নমাই আনিছে। ইফালে আমাৰ সমাজৰ সংস্থাপন প্ৰত্যাশীসকলে কেনেকৈ প্ৰকৃত বা ভাল সংস্থাপনৰ সুযোগ লাভ কৰিব, সেই বিষয়েও সাধাৰণভাৱে গুৰুত্ব আৰোপ কৰে। সেয়েহে এক কথাত ক'বলৈ গলে ই-নিয়োগ হ'ল নিয়োগ বা নিযুক্তি প্ৰক্ৰিয়াত ব্যৱহৃত ডিজিটেল (প্ৰযুক্তিকৰণ) বা ইণ্টাৰনেটৰ বহুল ব্যৱহাৰ। এই প্ৰক্ৰিয়াত সংশ্লিষ্ট ৱেবছাইটত সংস্থাপনৰ ৰূপ বা চাকৰিৰ তথ্য সন্নিৱিষ্ট কৰা, ব্যক্তিৰ প্ৰকৃত জৈৱ তথ্য সংলগ্ন কৰা, অনলাইন মূল্যায়ন আদি দিশবোৰ অন্তৰ্ভুক্ত কৰিব পাৰি। এই গৱেষণা পত্ৰখনত সমসাময়িক সমাজত সংস্থাপন প্ৰত্যাশীসকলক সৰলীকৰণৰ ক্ষেত্ৰত ই-নিয়োগ বা নিযুক্তিৰ ভিন্ন তাৎপৰ্যৰ বিষয়ে গভীৰভাৱে আলোচনা কৰিবলৈ প্ৰয়াস কৰা হৈছে।

ই-নিয়োগ ঃ এক ঐতিহাসিক পৰিবৰ্তন ঃ

পূৰ্বতে সংস্থাপন প্ৰত্যাশীসকলে নিয়োগৰ সুযোগ গ্ৰহণৰ বাবে ছপা বিজ্ঞাপন মাধ্যম (বাতৰি কাকত, নিয়োগ বাৰ্তা), সামাজিক সংস্থাপন কেন্দ্ৰ আৰু চৰকাৰী জাননীৰ ওপৰত নিৰ্ভৰ কৰিছিল। এই প্ৰক্ৰিয়া যথেষ্ট ব্যয়বহুল, সময় খৰচী হোৱাৰ সমান্তৰালকৈ ভৌগোলিক ক্ষেত্ৰতো যথেষ্ট সমস্যাৰ সৃষ্টি কৰিছিল। কিন্তু শেহতীয়াকৈ গঢ় লোৱা ই-নিযুক্তি বা নিয়োগৰ উত্থানে সংস্থাপন বা চাকৰি অনুসন্ধানৰ ক্ষেত্ৰখনত এক অনন্য মাত্ৰা প্ৰদান কৰিছে। বৰ্তমান সংস্থাপন প্ৰত্যাশীসকলে তেওঁলোকৰ ঘৰুৱা স্থান যিয়েই নহওক কিয়, সংস্থাপনৰ বাবে এক বিশাল পৰিসৰত নিজৰ পছন্দ অনুসৰি সংস্থাপন বিচৰাৰ সুযোগ লাভ কৰিবলৈ সক্ষম হৈছে। তেওঁলোকে কেৱল স্থানীয় কৰ্মক্ষেত্ৰৰ সুযোগৰ ওপৰত নিৰ্ভৰ নকৰি নিজ দেশ আনকি বিশ্বজুৰিও ভিন্ন সংস্থাপন বা উচ্চ পদবী অন্বেষণৰ সুযোগ গ্ৰহণ কৰিব পাৰে। (Boscai, Beniamin (2017) page.161-170)

ই-নিয়োগৰ জৰিয়তে বাস্তৱ জীৱনৰ সৰলীকৰণ ঃ

সংস্থাপন প্ৰত্যাশী সৰলীকৰণত ই-নিয়োগ বা নিযুক্তিৰ প্ৰভাৱ দেখুৱাবলৈ বাস্তৱ জগতৰ কেইটামান উদাহৰণ বিষয়ে আলোচনা কৰাতো অতি প্ৰয়োজনীয়। (Galanaki E (2002), Vol. 7, No. 4, pp. 243-251)

লিংকডিন (Linkedin) ঃ

এই লিংকডিন এটা পেছাদাৰী নেটৱৰ্কিং মঞ্চ (প্লেটফৰ্ম)। এই মঞ্চই বিশ্বজুৰি লাখ লাখ সংস্থাপন বা চাকৰি প্ৰত্যাশীক শক্তিশালী ভূমিকা গ্ৰহণ কৰি আহিছে। ই ব্যক্তি বিশেষৰ ক্ষেত্ৰত অনলাইন পেছাদাৰী উপস্থিতি গঢ়ি তুলিবলৈ, সম্ভাব্য নিয়োগকৰ্তাৰ সৈতে সংযোগ স্থাপন কৰিবলৈ আৰু সংস্থাপনৰ তালিকাসমূহত প্ৰৱেশ কৰিবলৈ এক সুশৃংখলিত তথ্য পথ মুকলি কৰে। লিংকডিনৰ কলনবিধি বা এলগৰিঠম (Algorithm) ব্যৱহাৰকাৰীৰ পাৰ্শ্বচিত্ৰ (প্ৰফাইল) ওপৰত ভিত্তি কৰি সংস্থাপনৰ পৰামৰ্শ দিয়ে, যাৰ ফলত ব্যক্তিগত খণ্ডৰ সংস্থাপন বিচৰা প্ৰাৰ্থীৰ ভিন্ন নতুন অভিজ্ঞতাৰ সৃষ্টি হয়।

ইনডীড (Indeed) ঃ

ইনডীড বিশ্বৰ অন্যতম বৃহৎ চাকৰি সন্ধানৰ মঞ্চ (প্লেটফৰ্ম)। এই ছফ'টৱেৰ Search àßngine য়ে বিভিন্ন উৎসৰপৰা চাকৰিৰ তালিকা সংগ্ৰহ কৰি একত্ৰিত কৰে। সংস্থাপন প্ৰত্যাশীসকলে তেওঁলোকৰ পছন্দৰ ওপৰত ভিত্তি কৰি সংস্থাপন বা চাকৰিৰ তালিকাসমূহ সংশোধন কৰাৰ লগতে প্ৰয়োজনত নিজস্ব অনুসৰি সজাই তুলিব পাৰে। ইফালে সংস্থাপন প্ৰত্যাশীয়ে এই মাধ্যমৰ জৰিয়তে পোনপটীয়াকৈও আবেদন কৰাৰ সুযোগ লাভ কৰে। এই মঞ্চই সংশ্লিষ্ট চাকৰিৰ বাৰ্তা তথ্য (Notification) ও আবেদনকাৰীলৈ প্ৰেৰণ কৰে। বৰ্তমান সময়ত ইনডীডৰ ইউজাৰ-ফ্ৰেণ্ডলি ইণ্টাৰফেচ(user-friendly interface) ৰ বহল প্ৰসাৰে সংস্থাপন প্ৰত্যাশীসকলক বহুতো নতুন সুযোগ অন্বেষণৰ সুবিধা প্ৰদান কৰে।

গ্লাছডৰ (Glassdoor) ঃ

গ্লাছডৰে ভিন্ন কাৰ্যক্ষেত্ৰৰ সংস্থাপনৰ তালিকাসমূহক প্ৰতিষ্ঠান বা কৰ্মগোট(কোম্পানী) ৰ সৈতে পৰ্যালোচনা, মজুৰি বা দৰমহাৰ তথ্য আৰু সাক্ষাৎকাৰৰ অন্তৰ্দৃষ্টিৰ সৈতে সংযুক্ত কৰে। এই সামগ্ৰিক পদ্ধতিয়ে সংস্থাপন

প্রত্যাশীসকলক কেৱল সংস্থাপনৰ সুযোগৰ বিষয়ে নহয়, তেওঁলোকে যোগদান কৰিব পৰা নৱতম সংস্থাসমূহৰ বিষয়েও অনুসন্ধান কৰাত সহায় কৰে।

সংস্থাপন প্রত্যাশীৰ সৱলীকৰণ ঃ

সংস্থাপন বা নিয়োগ অনুসন্ধানৰ প্রেক্ষাপটত সংস্থাপন প্রত্যাশী সৱলীকৰণে বিভিন্ন দিশ সামৰি লয়। যিয়ে কোনো ব্যক্তিৰ অর্থপূর্ণ নিয়োগ নিশ্চিত কৰাৰ ক্ষেত্রত অৰিহণা যোগায়। ই-নিয়োগ বা নিযুক্তি কেইবাটাও জটিল কাৰকক সম্বোধন কৰি সংস্থাপন প্রত্যাশী সৱলীকৰণত এক গুৰুত্বপূর্ণ ভূমিকা পালন কৰে ।

সহজলভ্যতা আৰু ইয়াৰ ভিন্ন সুবিধা ঃ

ই-নিয়োগ মঞ্চ (প্লেটফর্ম) ই ভৌগোলিক বাধাসমূহ দূৰ কৰে। যাৰ ফলত সংস্থাপন প্রত্যাশীসকলে বিশ্বজুৰি ভিন্ন ক্ষেত্রৰ সুযোগসমূহ গ্রহণ কৰিবলৈ সক্ষম হয়। বেলেগ বেলেগ স্থান বা চহৰৰ সংস্থাপনৰ পদ হওক বা আন দেশৰ চাকৰি হওক, এই মাধ্যমসমূহে তথ্য প্রদানেৰে সময়ত কল্পনাতীত সহজলভ্যতাৰ লগতে সুবিধা প্রদান কৰে। সংস্থাপন বিচৰাসকলে কেৱল মাত্র কেইটামান ছেকেণ্ডতে (সময়) সংস্থাপন প্রকাশৰ তথ্য আৰু তালিকা, প্রতিষ্ঠান বা কোম্পানীৰ তথ্য আৰু আবেদন পদ্ধতিসমূহৰ প্রক্রিয়া অনুসৰণ কৰিব পাৰে।

ই-নিয়োগৰ বৈচিত্র্যময় সংস্থাপনৰ সুযোগ ঃ

ই-নিয়োগ বা নিযুক্তি মাধ্যমসমূহে উদ্যোগসমূহৰ মাজত বহুতো সংস্থাপন বা চাকৰি মেলাৰ আয়োজন কৰে। যাৰ ফলত সংস্থাপন প্রত্যাশীসকলৰ বাবে বিভিন্ন ধৰণৰ সুযোগৰ বাট প্রসস্ত হয়।

ইফালে প্রৱেশ পর্যায়ৰ পদৰপৰা বিশেষ পদৰ ভূমিকালৈকে এই মঞ্চসমূহে সংস্থাপনৰ ক্ষেত্রসমূহত (বজাৰ) এক বিস্তাৰিত দৃষ্টিভংগী প্রদান কৰে, যাৰ ফলত প্রত্যাশী ব্যক্তিসকলে তেওঁলোকৰ দক্ষতা আৰু আকাংক্ষাৰ সৈতে মিল থকা বিকল্প (ভিন্ন সংস্থাপন বা চাকৰি) প্রক্রিয়া গ্রহণৰো সুযোগ আদায় কৰে।

সুশৃংখলিত আবেদন প্রক্রিয়া ঃ

পূর্বতে পৰম্পৰাগত সংস্থাপন প্রক্রিয়াত সংস্থাপন প্রত্যাশীয়ে ছপা (কাগজী পত্র) মাধ্যমেৰে প্রয়োজনীয় আবেদন দাখিল কৰিছিল। এনে সময়ত প্রায়ে দীঘলীয়া তথ্য সম্বলিত প্র-পত্র হাতেৰে পূৰণ কৰিব লগা হৈছিল। ই-নিয়োগে কিন্তু ব্যৱহাৰকাৰীসকলক বন্ধুত্বপূর্ণ সম্পর্কৰে আন্তঃপৃষ্ঠ (user friendly interface) প্রদান কৰি এইপ্রক্রিয়াটো সুশৃংখলিত কৰি তুলিছে। য'ত আবেদনকাৰীয়ে ডিজিটেল (প্রযুক্তিকৰণ) ভাৱে ৰিজ্যুম বা জীৱন বৃত্তান্ত (resume), কভাৰ লেটাৰ (cover letter), ব্যক্তিৰ জৈৱ তথ্য আৰু অন্যান্য নথি-পত্র জমা দিব পাৰে। এইধৰণৰ স্বয়ংক্রিয় অনুসৰণ ব্যৱস্থাই সংস্থাপন প্রত্যাশী আৰু নিয়োগকর্তা উভয়কে আবেদনৰ অগ্রগতি অনুসৰণ কৰাত সহায় কৰাৰ উপৰি সময়ো ৰাহি কৰে। কেৱল এয়ে নহয় ই-নিয়োগে যথেষ্ট পৰিমাণে প্রশাসনিক বোজাও হ্রাস কৰে।

ফলপ্রসূতাৰে দক্ষতা আৰু অর্হতা প্রকাশ ঃ

ই-নিয়োগ বা নিযুক্তি মঞ্চসমূহে সংস্থাপন প্রত্যাশীসকলক বিশদভাৱে অনলাইন পার্শ্বচিত্র (প্রফাইল) তৈয়াৰ কৰিবলৈ অনুমতি দিয়ে। সমান্তৰালকৈ তেওঁলোকে নিজৰ (তেওঁলোকৰ) দক্ষতা, অর্হতা, আৰু কৃতিত্বসমূহ ফলপ্রসূভাৱে প্রদর্শন কৰাৰ সুযোগ লাভ কৰে। এই প্রফাইলসমূহে ডিজিটেল (প্রযুক্তিকৰণ) দলিল বা পর্টফলিঅ' হিচাপে কাম কৰাৰ লগতে সম্ভাব্য নিয়োগকর্তাসকলক এজন প্রার্থীৰ প্রকৃত সামর্থ্য (যোগ্যতা) ৰ বিষয়ে বিস্তাৰিত তথ্য (অন্তর্দৃষ্টি) প্রদান কৰে।

সমাজ আৰু কর্ম ক্ষেত্রৰ ওপৰত প্রভাৱ ঃ

ই-নিয়োগৰ উত্থানে সমাজ আৰু কর্ম ক্ষেত্রৰ ওপৰত সুদূৰপ্রসাৰী প্রভাৱ পেলায়। ই কর্মশক্তিক অধিক গতিশীলতা প্রদান কৰে। সংস্থাপন প্রত্যাশীসকলক ভৌগোলিক সান্নিধ্যৰ বাধা অবিহনে সুযোগ বিচাৰিবলৈ সক্ষম কৰে। ইয়াৰ উপৰি ই-নিযুক্তি প্রক্রিয়াৰ কার্যক্ষমতাই

দ্রুত চাকৰি নিয়োগ বা নিযুক্তিৰ দিশ উন্মোচিত কৰে, যাৰ ফলত চাকৰি প্ৰত্যাশী আৰু নিয়োগকৰ্তা উভয়েই এই মাধ্যমত উপকৃত হয়।

সাহিত্য পৰ্যালোচনা ঃ

ই-নিয়োগ বা নিযুক্তি প্ৰক্ৰিয়াৰ সুবিধাৰ বাবে ডিজিটেল (প্ৰযুক্তিকৰণ) আৰু ইণ্টাৰনেটৰ ব্যৱহাৰৰ অতি বৈশিষ্ট্যপূৰ্ণ। ই-নিয়োগৰ পৰিঘটনাই ব্যৱহাৰকাৰীসকলৰ পৰাও একেদৰেই উল্লেখযোগ্য মনোযোগ আকৰ্ষণ কৰে। কিয়নো ই গতানুগতিক সংস্থাপন বিচৰা পৰিৱেশটোক অন্য এক দিশলৈ ৰূপান্তৰিত কৰিছে। সমসাময়িক (বৰ্তমান) সমাজত সংস্থাপন প্ৰত্যাশীসকলৰ ওপৰত পেলোৱা ইয়াৰ গভীৰ প্ৰভাৱৰ বাবে ই গৱেষণাৰ কেন্দ্ৰবিন্দুলৈ পৰিণত (ধাৰিত) হৈছে।

ই-নিয়োগৰ ধাৰণা ঃ

গৱেষকসকলে ই-নিয়োগ বা নিযুক্তিক এক বহুমুখী প্ৰক্ৰিয়া হিচাপে আখ্যায়িত কৰিছে। য'ত উপযুক্ত প্ৰাৰ্থীক আকৰ্ষণ, নিৰ্বাচন আৰু নিযুক্তি দিবলৈ বিভিন্ন ডিজিটেল সঁজুলি আৰু মঞ্চৰ ব্যৱহাৰ জড়িত হৈ থাকে (Dineen et al., 2002, 87(4), 723-734, Parry & Tyson, 2008, 18(3), 257-274)। ই-নিয়োগে ৰেবছাইটত নিয়োগ তথ্য উপলব্ধ কৰা, অনলাইন আবেদন দাখিল কৰা, স্বয়ংক্ৰিয় আবেদনকাৰীৰ অনুসৰণৰ ব্যৱস্থা আৰু ভিডিঅ' সাক্ষাৎকাৰকে ধৰি বহুতো কাৰ্যকলাপ খন্তেকতে সামৰি লয় (Stone et al., 2015, 25(2), 216-231)। সেয়েহে এই ডিজিটেল (প্ৰযুক্তিকৰণ) পদ্ধতিৰে সংস্থাপন প্ৰত্যাশীসকলৰ গতিশীলতাক পুনৰ সজ্ঞায়িত কৰে।

ই-নিয়োগ পদ্ধতিৰ ঐতিহাসিক বিৱৰ্তন ঃ

নিয়োগ বা নিযুক্তি পদ্ধতিৰ ঐতিহাসিক দৃষ্টিভংগীয়ে ই-নিয়োগৰ বৈপ্লৱিক প্ৰভাৱৰ বিষয় ভিন্ন ধৰণে আলোকপাত কৰে। পূৰ্বে সাধাৰণ পৰম্পৰাগত পদ্ধতিৰ সহজলভ্যতা সীমিত আছিল।

সেয়েহে বাতৰি কাকতৰ বিজ্ঞাপন আৰু শাৰীৰিক সংস্থাপন মেলা আদিবোৰৰ প্ৰসাৰ, ইয়াৰ সহজলভ্যতা আৰু কাৰ্যক্ষমতা সহজাতভাৱেই সীমিত (Orlitzky et al., 2003, 403-441)। কিন্তু ই-নিয়োগে অৱশ্যে এই সীমাবদ্ধতাসমূহ অতিক্ৰম কৰি চাকৰি বা সংস্থাপন প্ৰত্যাশীসকলৰ বাবে বৈচিত্ৰ্যপূৰ্ণ সুযোগ আহৰণৰ এক বিশ্বব্যাপী মঞ্চ প্ৰদান কৰি আহিছে।

সংস্থাপন প্ৰত্যাশীৰ বাবে ই-নিয়োগৰ সুবিধা ঃ

ই-নিয়োগ প্ৰক্ৰিয়াই সংস্থাপন প্ৰত্যাশীসকলক বিভিন্ন ধৰণে যোগাত্মক সুবিধা প্ৰদান কৰে। ইয়াৰ ভিতৰত অভিগম্যতা (ওচৰ চাপিব পৰা) আৰু সন্মুখ পৃষ্ঠৰ সুবিধাক (আৰামদায়ক) প্ৰায়ে সৰ্বোচ্চ সুবিধা হিচাপে উল্লেখ কৰে (Marler & Boudreau, 2017, 3-26) । সংস্থাপন বা নিয়োগ বিচৰাসকলে যিকোনো ভৌগোলিক বাধা অতিক্ৰম কৰি যিকোনো সময়তে আৰু যিকোনো ঠাইৰপৰা চাকৰিৰ তালিকাত প্ৰৱেশ কৰিব পাৰে আৰু প্ৰয়োজনীয় আবেদন দাখিল কৰিব পাৰে (Galanaki, 2002, 243-251)। সেয়ে বিজ্ঞান প্ৰযুক্তিবিদ্যাৰ দ্ৰুত প্ৰসাৰৰ সময়ত সংস্থাপনৰ ক্ষেত্ৰসমূহত এই স্তৰৰ প্ৰৱেশ বিশেষ গুৰুত্বপূৰ্ণ।

ই-নিয়োগ বা নিযুক্তি মঞ্চত উপলব্ধ সংস্থাপনৰ বৈচিত্ৰ্যপূৰ্ণ ভিত্তিত আন কেতবোৰ সুবিধাও উপলব্ধ। ই দক্ষতা আৰু আকাংক্ষাক বহল পৰিসৰৰ বিকল্পৰ সৈতে তুলনা কৰি সংস্থাপন প্ৰত্যাশীসকলে ভিন্ন উদ্যোগসমূহৰ মাজত প্ৰকৃত পদসমূহ অন্বেষণ (বিচাৰ) কৰিব পাৰে (Parry et al., 2006, 209-231)। এই বৈচিত্ৰ্যই প্ৰত্যাশী ব্যক্তিসকলক অধিক তথ্যসম্বলিত কৰ্মসংস্থাপন (কেৰিয়াৰ) বাছনি কৰিবলৈ সক্ষম কৰে।

ইফালে ই-নিয়োগে আবেদন প্ৰক্ৰিয়াকো সুশৃংখলিত কৰে (Rüsch, 2010, 241-250)। আবেদন দাখিলৰ ডিজিটেলাইজেচন (প্ৰযুক্তিকৰণ) এ কাগজ-পত্ৰৰ ব্যৱহাৰ হ্ৰাস কৰে, প্ৰশাসনিক হেঁচা সীমিত কৰে আৰু আবেদনকাৰীক তেওঁলোকৰ অগ্ৰগতি নিৰীক্ষণৰ সুযোগ দিয়ে (Stroh meier et al., 2013, 95-100)। এইসমূহ সুবিধা পৰম্পৰাগত পদ্ধতিৰ সৈতে জড়িত প্ৰক্ৰিয়াৰ এক উল্লেখযোগ্য বিচ্যুতি।

তদুপৰি ই-নিয়োগ মঞ্চই সংস্থাপন প্ৰত্যাশীসকলক তেওঁলোকৰ দক্ষতা আৰু অৰ্হতা ফলপ্ৰসূভাৱে প্ৰদৰ্শন কৰাৰ উপায়ো প্ৰদান কৰে। ডিজিটেল পাৰ্শ্বচিত্ৰ বা সংক্ষিপ্ত জীৱন কথা (প্ৰফাইল) ৰ জৰিয়তে প্ৰাৰ্থীসকলে ৰিজ্যুম বা জীৱন বৃত্ত, কভাৰ লেটাৰ আৰু প্ৰাসংগিক প্ৰমাণপত্ৰকে ধৰি বিস্তৃত দলিল বা পৰ্টফলিঅ' উপস্থাপন কৰিব পাৰে (Brown et al., 2016, 517-519)। এই ডিজিটেল (প্ৰযুক্তিকৰণ) উপস্থাপন (প্ৰেজেণ্টেচন) নে সংস্থাপনৰ ক্ষেত্ৰখনত এজন প্ৰাৰ্থীৰ প্ৰতিযোগিতামূলক ক্ষমতা (দক্ষতা) ও বৃদ্ধি কৰে।

ই-নিয়োগৰ প্ৰত্যাহ্বান ঃ

ই- নিয়োগ বা নিযুক্তিকৰণে অসংখ্য সুবিধা প্ৰদান কৰিলেও বহল পৰিসৰত ইয়াৰ প্ৰয়োগে ভালেসংখ্যক প্ৰত্যাহ্বান নমাই আনে। তথ্যৰ গোপনীয়তা, এলগৰিদমিক (কলনবিধি বা পৰিগণনা) পক্ষপাতিত্ব আৰু নিয়োগ প্ৰক্ৰিয়াৰ সম্ভাব্য অমানৱীয়কৰণৰ বিষয়সমূহৰ সন্দৰ্ভত গৱেষকসকলে উদ্বেগ প্ৰকাশ কৰে (Van den Heuvel & Bondarouk, 2017, 902-927)। এই প্ৰত্যাহ্বানসমূহৰ বাবে ই-নিয়োগ বা নিযুক্তি প্ৰক্ৰিয়া সকলো সংস্থাপন প্ৰত্যাশীৰ বাবে এক ন্যায্য আৰু শক্তিশালী প্ৰক্ৰিয়া হৈ থকাটো নিশ্চিত কৰিবলৈ অধিক গৱেষণা আৰু নৈতিক (সদৰ্থক) বিবেচনাৰ প্ৰয়োজন আছে।

অধ্যয়নৰ পদ্ধতি ঃ

গৱেষণা পত্ৰখনৰ উদ্দেশ্য বৰ্ণনা কৰিবলৈ সাহিত্য অধ্যয়ন পদ্ধতি প্ৰয়োগ কৰা হৈছে। আমাৰ সমাজৰ সংস্থাপন প্ৰত্যাশীসকলক সৱলীকৰণৰ ক্ষেত্ৰত ই-নিয়োগৰ সমগ্ৰ বৰ্ণনা সামৰি ল'ব পৰা গৱেষণাপত্ৰ নিৰ্বাচন কৰাটোৱেই এই গৱেষণা কৰ্মৰ মূল প্ৰচেষ্টা। এই অধ্যয়নে গৱেষণা পত্ৰসমূহ ক্ৰমিক পৰ্যালোচনা পদ্ধতিত পৰ্যালোচনাৰ বাবেও নমনীয় প্ৰক্ৰিয়াৰ পৰামৰ্শ দিছিল, এইক্ষেত্ৰত সকলোবোৰ পূৰ্বনিৰ্বাচিত ৰূপ ব্যৱহাৰ বাবে প্ৰয়োজনীয় আছিল।

এই অধ্যয়নত প্ৰবন্ধ আৰু গৱেষণাপত্ৰ সংগ্ৰহৰ বাবে বৈদ্যুত্যিক মাধ্যম ব্যৱহাৰ কৰা হৈছে। অধ্যয়নত বৈদ্যুত্যিকভাৱে প্ৰবন্ধ বিচাৰি উলিওৱাৰ উদ্দেশ্যে গুগল স্ক'লাৰ (Google Scholar) ব্যৱহাৰ কৰা হৈছে। এই অধ্যয়নত ২০০৬ চনৰপৰা ২০২১ চনলৈকে ৰাজহুৱা কৰা ৩০ খন আলোচনীৰ গৱেষণা পত্ৰ বা প্ৰবন্ধ, সংক্ষিপ্তসাৰ আৰু গৱেষণা পত্ৰৰ শিৰোনাম আদিবোৰ প্ৰাৰম্ভিক পৰ্যায়ত গুগল স্কলাৰৰ জৰিয়তে অনুসন্ধান আৰু প্ৰাসংগিকতাক মূল্যায়ন কৰা হৈছে। অনুসন্ধানত পোৱা সকলো প্ৰয়োজনীয় তথ্য, পূৰ্বৰ তথ্যসমৃদ্ধ প্ৰকাশ আমাৰ অধ্যয়নৰ পৰিসৰৰ মাজত নিৰ্বাচিত কৰা হোৱা নাই। এইক্ষেত্ৰত ভৱিষ্যতে অধিক পৰ্যালোচনাৰ বাবে প্ৰাসংগিক আৰু উপযোগী প্ৰবন্ধ আৰু গৱেষণা পত্ৰ লাভ কৰিবলৈ নিৰ্বাচন পদ্ধতি গ্ৰহণ কৰিব লাগিব।

গৱেষণাপত্ৰ আৰু প্ৰবন্ধ পৰ্যালোচনাৰ বাবে নমুনা সংগ্ৰহ পদ্ধতি ঃ

অধ্যয়নত অন্তৰ্ভুক্ত কৰা গৱেষণা পত্ৰসমূহ হৈছে ই-নিয়োগ বা নিয়োগৰ ফলপ্ৰসূতা আৰু বিকশিত প্ৰক্ৰিয়াত জড়িত ভিন্ন ৰূপৰ। সেয়েহে ই-নিয়োগ সম্পৰ্কীয় সকলো প্ৰাসংগিক তথ্য গৱেষণা পত্ৰৰ বৃদ্ধি আৰু বিৱৰ্তনৰ সৈতে প্ৰতিনিধিত্বমূলক নমুনা (sample) ৰে আলোচিত। প্ৰথমাৱস্থাত ই-নিয়োগ গৱেষণাৰ বিপুল তথ্য সম্ভাৰ, অনুসন্ধান আৰু বাচনিকৰণৰ (filetring) পৰা প্ৰাসংগিক ই-নিয়োগ গৱেষণামূলক প্ৰবন্ধ অন্তৰ্ভুক্ত কৰাটো প্ৰত্যাহ্বানজনক আছিল। তেনেক্ষেত্ৰত প্ৰতিনিধিত্বমূলক নমুনাৰ সহায়ত আৰু সমালোচনাত্মক পৰ্যালোচনা কৌশলৰ ব্যৱহাৰেৰে বৰ্তমান অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য সাধন কৰা হৈছে।

অধ্যয়নৰ বাবে ১৬ টা পূৰ্ব প্ৰকাশৰ প্ৰবন্ধ আৰু গৱেষণা পত্ৰক নমুনা হিচাপে বাছনি কৰা হ'ল। ইয়াৰ বাবে নমুনাত অন্তৰ্ভুক্ত কৰা প্ৰবন্ধ আৰু গৱেষণা পত্ৰসমূহ সমালোচনাত্মক পৰ্যালোচনা পদ্ধতি ব্যৱহাৰ কৰি বাছি লোৱা হৈছিল। যেতিয়া গৱেষণা কৰ্ম সংপৃক্ততা আৰু সম্পূৰ্ণতাৰ দিশে আগবাঢ়িল তেনে সময়ত পৰ্যালোচনা কৌশলেৰে এটা সিদ্ধান্তত উপনীত হোৱা গ'ল। ইয়াৰ ফলত ই-নিয়োগৰ কাৰ্যকাৰিতা, বৃদ্ধি আৰু বিকাশৰ সকলো দিশ সামৰি লোৱাটো সম্ভৱ হৈ উঠিল। এনে সময়ত বা পৰ্যায়ত ই-নিযুক্তিৰ সফলতা চিনাক্ত কৰাত সহায় কৰা গৱেষণা পত্ৰ বা সংখ্যাক মূল কৃতিত্ব দিয়া হৈছিল। ইয়াৰ জৰিয়তে ই-নিয়োগৰ গুৰুত্ব, সংজ্ঞা আৰু ইয়াৰ ভিন্ন দিশ চিত্ৰিত কৰাৰ বাবে উপযুক্ত তথ্য লাভ হৈছিল।

উপসংহাৰ ঃ

ই-নিযুক্তি বা নিয়োগ (E-Recruitment) ৰ জৰিয়তে সংস্থাপন প্ৰত্যাশীসকলক সৱলীকৰণ কৰাটো আজিৰ তাৰিখত অনস্বীকাৰ্য। অভিগম্যতা(ওচৰ চাপিব পৰা), সুযোগৰ ভিন্ন বৈচিত্ৰ্য, সুশৃংখলিত আবেদন প্ৰক্ৰিয়া আৰু দক্ষতা প্ৰদৰ্শনে প্ৰত্যাশী ব্যক্তিসকলে সংস্থাপন অনুসন্ধানত কেনেদৰে আগবাঢ়িছে তাৰ তাৰ দিশো উন্মোচিত কৰে। এই ডিজিটেল (প্ৰযুক্তিকৰণ) নিয়োগ বা নিযুক্তি পদ্ধতিৰে কেৱল সংস্থাপন প্ৰত্যাশীসকলক উপকৃত কৰাই নহয়, নিয়োগকৰ্তাসকলৰ

বাবে নিযুক্তি প্রক্রিয়াৰ কার্যক্ষমতাও যথেষ্ট পৰিমাণে বৃদ্ধি কৰিছে।

কিন্তু ই-নিয়োগৰ প্রত্যাহ্বান আৰু সীমাবদ্ধতাক স্বীকাৰ কৰাটো অতি গুৰুত্বপূর্ণ। কিছুমান সংস্থাপন প্রত্যাশী, বিশেষকৈ সীমিত ডিজিটেল সাক্ষৰতা বা প্রযুক্তি ব্যৱহাৰৰ উপযুক্ততাৰ অভাৱত বাধাৰ সন্মুখীন হ'ব পাৰে। ইয়াৰ উপৰি অনলাইন সংস্থাপন তালিকাৰ বিশালতাইও ব্যক্তিক আপ্লুত কৰিব পাৰে। যাৰ বাবে চাকৰি প্রত্যাশীসকলৰ বাবে ফলপ্রসূ অনুসন্ধান কৌশল বিকশিত কৰাটো অতি প্রয়োজনীয় হৈ পৰা দেখা যায়। বর্তমান সময়ত ই-নিয়োগ বা নিয়োগ সমসাময়িক ক্ষেত্রৰ সংস্থাপন বিচৰাৰ এক মূল শিলাস্তম্ভ হৈ পৰিছে। ই ব্যক্তিসকলক বৈচিত্র্যময় সুযোগ লাভ কৰিবলৈও শক্তিশালী কৰি তোলে। আনহাতে সম্ভাব্য নিয়োগকর্তাৰ আগত নিজৰ অর্হতাসমূহ দক্ষতাৰে উপস্থাপন কৰিবলৈও প্রকৃত মঞ্চৰ সুযোগ লাভ কৰে। লিংকডিন, ইনডীড, আৰু গ্লাছডৰৰ দৰে মঞ্চ (প্লেটফর্ম) ৰ জৰিয়তে সংস্থাপন প্রত্যাশীসকলে জটিল সংস্থাপনৰ ক্ষেত্রখন সহজেই যোগাত্মক কৰিব আৰু প্রকৃত কেৰিয়াৰৰ পথ গঢ় দিব পাৰে। সমাজে ডিজিটেলাইজেশ্যনক (প্রযুক্তিকীকৰণ) আঁকোৱালি লোৱাৰ লগে লগে সংস্থাপন প্রত্যাশী সৱলীকৰণৰ ক্ষেত্রত ই-নিয়োগৰ গুৰুত্ব আৰু অধিক বৃদ্ধি হ'ব। ই কেৱল ব্যক্তিৰ বাবে সুযোগ মুকলি কৰাই নহয়, প্রতিভাক সঠিক পদ মাত্রাৰ সৈতে সংযোগ কৰি অর্থনৈতিক উন্নয়নতো অৰিহণা যোগাব। ই-নিয়োগৰ সম্পূর্ণ সম্ভাৱনাক ব্যৱহাৰ কৰিবলৈ আৰু ক্রমান্বয়ে ডিজিটেল হৈ অহা সমাজখনৰ সকলো সংস্থাপন প্রত্যাশীৰ বাবে সমতাপূর্ণ প্রৱেশ আৰু সমর্থন নিশ্চিত কৰাৰ বাবে বর্তমানেও অধিক যোগাত্মক প্রচেষ্টাৰ প্রয়োজন আছে। ❑

প্রসংগসূচী আৰু সহায়ক গ্রন্থপঞ্জী ঃ

1. Boºcai, B. G. (2017). *The evolution of e-recruitment: The introduction of online recruiter.* In: (pp. 161-170).
2. Brown, A., & Green, T. (2016). *Virtual reality: Low-cost tools and resources for the classroom.* TechTrends, 60, 517-519.
3. Dineen, B. R., Ash, S. R., & Noe, R. A. (2002). *A web of applicant attraction: Person-organization fit in the context of web-based recruitment.* Journal of Applied Psychology, 87(4), 723-734.
4. Galanaki, E. (2002). The decision to recruit online: A descriptive study. Career Development International, 7(4/5), 243-251.
5. Jatain, H. S. (2014). E-Recruitment: The Effective Management of Identifying and Attracting Potential Human Resources. Shikshan Anveshika, 4(2), 95-100.
6. Marler, J. H., & Boudreau, J. W. (2017). *An evidence-based review of HR Analytics.* The International Journal of Human Resource Management, 28(1), 3-26.
7. Orlitzky, M., Schmidt, F. L., & Rynes, S. L. (2003). *Corporate Social and Financial Performance: A Meta Analysis.* Organization Studies, 24, 403-441.
8. Parry, E., & Tyson, S. (2006). Desired goals and actual outcomes of e-HRM. Human Resource Management Journal, 16(3), 209-231.
9. Parry, E., & Tyson, S. (2008). An analysis of the use and success of online recruitment methods in the UK. Human Resource Management Journal, 18(3), 257-274.
10. Stone, D. L., Deadrick, D. L., Lukaszewski, K. M., & Johnson, R. (2015). *The influence of technology on the future of human resource management.* Human Resource Management Review, 25(2), 216-231.
11. Strohmeier, D. E. P. a. P. S. (2014). HRM in the digital age – digital changes and challenges of the HR profession. Employee Relations, 36(4). https://doi.org/10.1108/ER-03-2014-0032
12. Strohmeier, D. E. P. a. P. S. (2013). In Strohmeier, B., & Holzinger, A. (Eds.). (2010), HCI in work and learning, life and leisure (pp. 241-250). Springer.
13. Van den Heuvel, S., & Bondarouk, T. (2017). *The rise (and fall?) of online recruitment platforms: A business model perspective.* The International Journal of Human Resource Management, 28(6), 902-927.

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

মনোৰমা দাস মেধিৰ গল্পত অসম আন্দোলনৰ প্ৰতিফলন

('নাগৰিক' আৰু 'বিস্ফোৰণৰ পিছত' গল্প দুটাৰ প্ৰসঙ্গত)

জুনুমণি ডেকা

গৱেষক, অসমীয়া বিভাগ
গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়
ঠিকনা ঃ- গাঁও ঃ- ননৰা,
ডাকঘৰ ঃ কৰৰা,
বাইহাটা চাৰিআলি, কামৰূপ,
পিন ঃ- ৭৮১৩৮১
৯১০১১-৩৭৯২৪
junumonideka92@gmail.com

০.০০ অৱতৰণিকা ঃ

অসম আন্দোলন ঃ

স্বাধীনোত্তৰ ভাৰতবৰ্ষত সাধাৰণ জনগণৰ অগ্ৰাধিকাৰ আৰু আত্মনিয়ন্ত্ৰণ প্ৰতিষ্ঠাৰ স্বাৰ্থত কেইবাটাও আন্দোলন সংঘটিত হৈছিল। সেই আন্দোলনসমূহৰ ভিতৰত অন্যতম হ'ল ঐতিহাসিক অসম আন্দোলন (১৯৭৯-৮৫)। অসম আন্দোলনৰ মূল বিষয় আছিল অসমলৈ হোৱা বিদেশী প্ৰব্ৰজন বন্ধ কৰা আৰু ইতিমধ্যে অসমলৈ আহি খোপনি পুতি বাস কৰিবলৈ লোৱা বিদেশী বিতাড়ন কৰা। মঙ্গলদৈ লোকসভা সমষ্টিৰ নিৰ্বাচনক কেন্দ্ৰ কৰি ১৯৭৯ চনত অসম আন্দোলনৰ সূত্ৰপাত ঘটে যদিও এই আন্দোলনক প্ৰকৃততে প্ৰায় ডেৰশ বছৰীয়া ঐতিহাসিক পৰিক্ৰমাৰ ফল বুলি ক'ব পাৰি।

বিদেশী বহিষ্কাৰ আন্দোলন আনুষ্ঠানিকভাৱে আৰম্ভ হয়, ১৯৭৯ চনৰ ৮ জুন তাৰিখৰ পৰা। এই আন্দোলন একেৰাহে ছয় বছৰ ধৰি চলে আৰু ১৯৮৫ চনৰ ১৫ আগষ্টৰ দিনা হোৱা 'অসম চুক্তি' অনুসৰি ইয়াৰ অন্ত পৰে। ৮ জুন তাৰিখে সদৌ অসম ছাত্ৰ সন্থাই অসমত বিদেশী বহিষ্কৰণৰ দাবীত ১২ ঘণ্টীয়া অসম বন্ধ ঘোষণা কৰে। '৮ জুনত ১৯৭৯ চনত ১২ ঘণ্টীয়া অসম বন্ধৰে সদৌ অসম ছাত্ৰ সন্থাই ভোটাৰ তালিকাৰ পৰা বিদেশী নাম কৰ্তনৰ দাবী জনালে। এইটোৱেই বোধহয় অসমৰ ইতিহাসত প্ৰথমটো ৰাজ্যযোৰা অসম বন্ধ।"[১] অসমৰ জনসাধাৰণে সেইদিনাৰ বন্ধ সফল হোৱাত পূৰ্ণ সহযোগ কৰিছিল। জাতি-মাটি-ভেটি ৰক্ষাৰ বাবে উদ্ভৱ হোৱা অসম আন্দোলনক সফল কৰি তুলিবলৈ তাৰ নেতৃত্ব বহন কৰিছিল প্ৰধানতঃ সদৌ অসম ছাত্ৰ সন্থা আৰু সদৌ অসম গণ সংগ্ৰাম পৰিষদে। ১৯৭৯ চনৰ ২৫-২৬ আগষ্ট তাৰিখে ডিব্ৰুগড় আইন মহাবিদ্যালয়ত হোৱা সদৌ অসম ছাত্ৰ সন্থাৰ কাৰ্যনিৰ্বাহক সভাত কেইবাটাও দল-সংগঠনৰ 'সদৌ অসম গণ সংগ্ৰাম পৰিষদ' গঠন কৰা হয়। গণ সংগ্ৰাম পৰিষদত মুক্ত বিভিন্ন দল সংগঠনসমূহ হ'ল— সদৌ অসম ছাত্ৰ সন্থা, অসম সাহিত্য সভা, অসম যুৱ সমাজ, অসম জাতীয়তাবাদী দল, অসম জাতীয়তাবাদী যুৱ ছাত্ৰ পৰিষদ, সদৌ অসম জনজাতি সংঘ, কাৰ্বি পৰিষদ, পূৰ্বাঞ্চলীয় লোক পৰিষদ, প্লেইন ট্ৰাইবেল কাউন্সিল (ব্ৰহ্ম গোট) আদি। পৰৱৰ্তী সময়ত সদৌ অসম গণ সংগ্ৰাম পৰিষদত বিভিন্ন কলেজ শিক্ষক সংগঠনসমূহো সংযুক্ত হৈ পৰে। আকৌ সদৌ অসম কৰ্মচাৰী পৰিষদেও আন্দোলন সফল হোৱাত আগভাগ লয়। সদৌ অসম কৰ্মচাৰী পৰিষদৰ সৈতে যুক্ত সংগঠনসমূহ হ'ল— অসম চৰকাৰী নিগম আৰু প্ৰতিষ্ঠান কৰ্মী, ফেডাৰেচন আৰু

সদৌ অসম বেংক-কর্মচাৰী পৰিষদ, সদৌ অসম কেন্দ্ৰীয় অৰ্দ্ধকেন্দ্ৰীয় কর্মচাৰী পৰিষদ, অসম বিদ্যুতকর্মী পৰিষদ আদি। এনেদৰে সদৌ অসম ছাত্ৰ সন্থাৰ নেতৃত্বত বিভিন্ন দল-সংগঠনকে ধৰি অসমৰ জনসাধাৰণে মিলি অসম আন্দোলনৰ উদ্দেশ্য সফল কৰাত পূৰ্ণৰূপে সহযোগিতা আগবঢ়ায়। ফলত সমসাময়িক আন আন্দোলনসমূহতকৈ অসম আন্দোলনে অন্য এক পৃথক ৰূপ লয়। বিদেশৰ পৰা অসমলৈ হোৱা প্ৰব্ৰজনৰ গতিয়ে অসমৰ থলুৱা জনসাধাৰণৰ মন-প্ৰাণ অনবৰতে শংকিত কৰি ৰাখিছিল। স্বকীয় অস্তিত্ব হেৰুওৱাৰ শংকাই প্ৰতিজন নাগৰিককে আন্দোলনমুখী হ'বলৈ বাধ্য কৰি তুলিছিল। অসম আন্দোলন সফল কৰি তুলিবলৈ দল-সংগঠনসমূহে চৰকাৰক স্মাৰক পত্ৰ দিয়া, অনশন, ধৰ্মঘট, ধৰ্ণা, থানা ঘেৰাও, সভা-সমিতি, সমদল উলিওৱা, অসম বন্ধ ঘোষণা কৰা আদি বিভিন্ন কার্যসূচী গ্ৰহণ কৰিছিল।

অসম আন্দোলনৰ আন্দোলনকাৰীসকলৰ প্ৰধান দাবী আছিল অসমৰ স্থায়ী বাসিন্দা হিচাপে স্বীকৃতি লাভ কৰা প্ৰব্ৰজিত বিদেশীসকলৰ নাম ভোটাৰ তালিকাৰ পৰা কর্তন কৰা আৰু প্ৰব্ৰজনকাৰীসকলৰ নাম তালিকাৰ পৰা কর্তন নোহোৱা পর্যন্ত নির্বাচন স্থগিত ৰখা। কিন্তু তাৰ বিৰুদ্ধে গৈ ১৯৮০ চনৰ জানুৱাৰী মাহত নির্বাচনী আয়োগে সপ্তম লোকসভা নির্বাচন অনুষ্ঠিত কৰিবৰ বাবে ঘোষণা কৰাৰ লগে লগে প্ৰতিবাদত সদৌ অসম ছাত্ৰ সন্থা আৰু অসম গণ পৰিষদে অসমৰ বিভিন্ন ঠাইত বিভিন্ন সময়ত প্ৰতিবাদী কার্যসূচী গ্ৰহণ কৰে। এই সময়ছোৱাত আন্দোলনে ভয়ানক ৰূপ ধাৰণ কৰে। কেন্দ্ৰীয় সংৰক্ষিত আৰক্ষী বাহিনীয়ে আন্দোলনকাৰীৰ ওপৰত কৰা লাঠীচালনাৰ ফলত অসম আন্দোলনৰ প্ৰথমগৰাকী শ্বহীদ খর্গেশ্বৰ তালুকদাৰৰ মৃত্যু হয়। খর্গেশ্বৰ তালুকদাৰৰ মৃত্যুই আন্দোলনৰ গতি-প্ৰকৃতি সম্পূৰ্ণৰূপে সলাই পেলায়। পূৰ্বতকৈ ই আৰু অধিক ভয়াৱহ ৰূপ ধাৰণ কৰে।

এই ভয়াবহতাৰ মাজতে ভাৰতৰ নির্বাচনী আয়োগে ১৯৮০ চনৰ ৩ জানুৱাৰীত নির্বাচন অনুষ্ঠিত কৰাৰ সংকল্প ল'লে। আনফালে নির্বাচনৰ সময়ছোৱাত আন্দোলনকাৰীসকলে বিভিন্ন ধৰণে প্ৰতিবাদ চলাই গৈ থাকিল; স্কুল-কলেজ সম্পূৰ্ণৰূপে বন্ধ হৈ পৰিল। ৩ জানুৱাৰীত কৰিমগঞ্জ লোকসভা সমষ্টি আৰু ৬ জানুৱাৰীত শিলচৰ লোকসভা সমষ্টিত নির্বাচন অনুষ্ঠিত হ'ল যদিও ১২টা সমষ্টিৰ নির্বাচন স্থগিত হৈ ৰ'ল। এই সময়ছোৱাত অসমৰ বিভিন্ন ঠাইত হিংসাত্মক ঘটনাৰ সূত্ৰপাত হ'ল, যাৰ বাবে বহুলোকে প্ৰাণ হেৰুৱাবলগীয়াও হ'ল। মাৰপিট, অগ্নিসংযোগ আদিয়ে সাধাৰণ জনগণৰ জীৱন পঙ্গু কৰি তুলিলে। শিলচৰ, নলবাৰী, সর্থেবাৰী, বৰপেটা আদিকে ধৰি বিভিন্ন অঞ্চলত সান্ধ্য আইন বলবৎ কৰা হ'ল।

অসম আন্দোলনৰ ফলত অসমত বহুতো অপ্ৰীতিকৰ পৰিৱেশৰ উদ্ভৱ হ'ল। ১৯৮৩ চনৰ নির্বাচনত বিভিন্ন অঞ্চলত হিংসাত্মক ঘটনা ঘটিল। হিন্দু-মুছলমান তথা জনজাতি-অজনজাতিৰ মাজত ঐক্য-সংহতিৰ পৰিৱর্তে সাম্প্ৰদায়িক সংঘর্ষৰ সূচনা হ'ল। ডিগবৈ, আলিপুৰ, জাগীৰোড, গহপুৰ, গোৰেশ্বৰ, ধিং, কামপুৰ, মঙ্গলদৈ আদি ঠাইত হোৱা গোষ্ঠীগত সংঘর্ষত অসংখ্য লোক নিহত হ'ল। আকৌ বিভিন্ন ঠাইত হোৱা বোমা বিস্ফোৰণৰ ফলত সাধাৰণ মানুহৰ সা-সম্পত্তি, ঘৰ-দুৱাৰ, ভস্মীভূত হোৱাৰ লগতে অজস্ৰ লোকে প্ৰাণ হেৰুৱাবলগীয়া হ'ল আৰু বহুলোকে চিৰদিনৰ বাবে পঙ্গু হৈ জীৱন কটাবলগীয়াও হ'ল। নগাঁৱৰ নেলী অঞ্চলত ১৯৮৩ চনৰ ১৮ ফেব্ৰুৱাৰীৰ নিশা সংঘটিত হোৱা হত্যাকাণ্ডত প্ৰায় ১০০০ জন লোকে প্ৰাণ ত্যাগ কৰিবলগীয়া হয়। "এক জ্বালামুখী পৰিৱেশত অগ্নিসংযোগ, মাৰপিট, দলীয় কন্দল, নেলীৰ হত্যাকাণ্ড (১০০০ লোকৰ মৃত্যু), ২৭ খন গাঁৱত অগ্নিসংযোগ আদি মানৰ আক্ৰমণৰ সময়ৰ দৰে আতংকময় ধ্বংসালীলাৰ মাজত প্ৰথম পর্যায়ৰ নির্বাচন সমাপ্ত হয়।"[২] অসম আন্দোলনৰ নেলী হত্যাকাণ্ডৰ পিছতেই অন্য এক বৃহৎ হত্যাকাণ্ড সংঘটিত হয় দৰং জিলাৰ চাউলখোৱাৰ অপৰীয়াত। এই হত্যাকাণ্ডত প্ৰায় ৫০০ লোক নিহত হৈছিল।

প্ৰথম অৱস্থাত অসম আন্দোলন সাংবিধানিক, গণতান্ত্ৰিক তথা অহিংসা নীতিৰে চলি আছিল যদিও পিছলৈ এই আন্দোলনে সমাজত অতি বিশৃংখল পৰিস্থিতিৰ সৃষ্টি কৰি তোলে। এই বিশৃংখলতাই অসমৰ সমাজ ব্যৱস্থা, অর্থনৈতিক-ৰাজনৈতিক ব্যৱস্থাক বাৰুকৈয়ে প্ৰভাৱিত কৰি তোলে। সেই সময়ৰ অসমৰ পৰিস্থিতিৰ সম্পর্কে 'দি আসাম ট্ৰিবিউন' বাতৰি কাকতে বাতৰি প্ৰচাৰ কৰিছিল এইদৰে—

"যোৱা ডেৰ বছৰে ব্ৰহ্মপুত্ৰ উপত্যকাৰ অসমবাসীয়ে আর্থিক দিশত যে কষ্ট খাইছে এনে নহয়, বৰঞ্চ শিক্ষা; বেপাৰ-বাণিজ্য, উদ্যোগ, যাতায়ত, উৎসৱ-পার্বণ আদি সকলো ক্ষেত্ৰতে অশেষ কষ্ট স্বীকাৰ কৰিবলগীয়া হৈছে।

খাদ্য-সামগ্রীৰ দাম বঢ়াৰ লগতে অত্যাৱশ্যকীয় কেৰাচিন তেল প্ৰায় দুষ্প্ৰাপ্য হৈছে। গাঁও অঞ্চলত এক লিটাৰ কেৰাচিন তেল আন্দোলনৰ পূৰ্বৰ ৪ টকাৰ পৰা ৮ টকা হৈছেহি। তথাপিও ৰাইজ ভাগৰি পৰা নাই।" [৩]

গতিকে এই আন্দোলনে অসমৰ জনসাধাৰণৰ আৰ্থ-সামাজিক জীৱন, সাংস্কৃতিক জীৱন, শিক্ষা-দীক্ষা আদি প্ৰতিটো দিশকে বেয়াকৈ জোকাৰি থৈ গৈছিল।

১.০০ অসম আন্দোলন আৰু অসমীয়া চুটিগল্প ঃ

সাহিত্য সমাজৰ দাপোণ। সমাজত ঘটি থকা সৰু-বৰ ঘটনাবোৰক সাহিত্যই হুবহু ৰূপত চিত্ৰিত কৰি তুলিব পৰাকৈ সাহিত্য অধিক শক্তিশালী। অসম আন্দোলনৰ সময়ছোৱাত ৰচিত সাহিত্যৰাজিও তাৰ ব্যতিক্ৰম নহয়। কিয়নো সেই সময়ত অসমত সংঘটিত সৰু-বৰ প্ৰতিটো ঘটনাকে লেখকসকলে সাহিত্যৰ মাজত লিপিবদ্ধ কৰিবলৈ চেষ্টা কৰিছিল। এই আন্দোলনৰ প্ৰভাৱ ইমানেই গভীৰ যে বৰ্তমান সময়তো অসম আন্দোলনৰ পটভূমিত বিভিন্ন সাহিত্য সৃষ্টি হৈ থকা চকুত পৰে। অসম আন্দোলনক বিষয়বস্তু হিচাপে লৈ অসমীয়া সাহিত্যত বিভিন্ন উপন্যাস, চুটিগল্প, নাটক, কবিতা আদি ৰচিত হৈছে। ইয়াৰ ভিতৰত এই আন্দোলনক বিষয় হিচাপে লৈ লিখা গল্পসমূহে অসমীয়া সাহিত্যত এক সুকীয়া স্থান দখল কৰি আছে। আন্দোলন চলি থকা সময়ৰপৰা আৰম্ভ কৰি আন্দোলন শেষ হোৱাৰ সময়লৈকে 'অসমবাণী', 'প্ৰান্তিক', 'প্ৰকাশ', 'জনমভূমি' আদি কাকত আলোচনীৰ পাতত বিভিন্ন গৰাকী গল্পকাৰে বহুতো গল্প ৰচনা কৰি গৈছে। আন্দোলনৰ পৰৱৰ্তী সময়তো এই বিষয়ক গল্প লিখাৰ ধাৰাটো অক্ষুণ্ণ হৈ ৰয় আৰু বৰ্তমান সময়তো অসম আন্দোলনৰ পটভূমিত কেইবাগৰাকীও গল্পকাৰে গল্প লিখি আহিছে। গল্পকাৰসকলে অসম আন্দোলনৰ মূল দাবী বিদেশী বিতাড়ন তথা ভোটৰ তালিকাৰ পৰা সেইসকল লোকৰ নাম কৰ্তন কৰাকে ধৰি আন্দোলনৰ সময়ত সংঘটিত বিভিন্ন ঘটনা-পৰিঘটনাক নিজৰ নিজৰ গল্পত স্থান দিছে। আন্দোলনৰ সময়ছোৱাত হোৱা অসমীয়া সমাজখনৰ অস্থিৰতা, পৰিৱেশ-পৰিস্থিতি, ৰাজনৈতিক নেতাসকলৰ স্বৰূপ, সাধাৰণ জনগণৰ প্ৰতি পুলিচ-মিলিটাৰিসকলে কৰা অন্যায়-অত্যাচাৰ, গোষ্ঠী সংঘৰ্ষ, সাম্প্ৰদায়িক সংঘৰ্ষ, অসমৰ উৰুলি যোৱা শিক্ষা-ব্যৱস্থা, আন্দোলনৰ সময়ত সংবাদ মাধমৰ ভূমিকা আদি সকলোবোৰ বিষয় গল্পকাৰসমূহে তেওঁলোকৰ গল্পৰ মাজেৰে সুন্দৰকৈ ফুটাই তুলিছে।

আন্দোলন চলি থকা সময়ছোৱাত 'অসম বাণী' কাকতত সেই সময়ৰ অসমৰ পৰিৱেশ-পৰিস্থিতি, আন্দোলনে কোঙা কৰি পেলোৱা সাধাৰণ জনতাৰ মৰণাপন্ন অৱস্থা আদি বিষয় হিচাপে লৈ গল্প লিখা গল্পকাৰসকলৰ

ভিতৰত অন্যতম হ'ল— কামাখ্যা সভাপণ্ডিত, ভদ্রেশ্বৰ ৰাজখোৱা, কৃষ্ণ ভূঞা, ৰবীন্দ্র বৰা, ৰাজেন্দ্রনাথ হাজৰিকা, ছাকিনা খাতুন, কুসুম বৰা, নলিনী শর্মা, লক্ষ্মীনন্দন বৰা, ৰঞ্জিত হাজৰিকা; প্রবীণা শইকীয়া, ভবানী গোস্বামী আদি। আকৌ 'প্রান্তিক' আৰু 'প্রকাশ'ত গল্প লিখিছিল— সুৰেশ চক্রৱর্তী, কন্দর্প কুমাৰ গোসাঁই, অৰুণ গোস্বামী, মাণিক বৰা আদি গল্পকাৰে।

আন্দোলন শাম কটাৰ পিছতো 'অসম বাণী', 'প্রান্তিক', 'প্রকাশ' আদি কাকতত অসম আন্দোলন সম্পর্কীয় বিষয়বস্তু সম্বলিত গল্প প্রকাশ হৈ আছিল। এই খিনি সময়ৰ গল্পকাৰসকলৰ ভিতৰত নাম ল'ব পাৰি— মৃদুল বৰগোহাঞি, ৰিজু হাজৰিকা, ৰাধিকামোহন ভাগৱতী, কেশৰ শইকীয়া, দীপ কুমাৰ শর্মা, গুণমণি বৰা, লীনা পাঠক, অঞ্জন শর্মা আদি গল্পকাৰৰ

আকৌ, অসম আন্দোলন চলি থকা সময়ত আন্দোলনৰ পটভূমিত গল্প লিখাৰ লগতে বর্তমান অসমীয়া গল্প সাহিত্যৰ ক্ষেত্রখনত অধিক জনপ্রিয়তা অর্জন কাৰ কেইগৰাকীমান গল্পকাৰ হ'ল ক্রমে— জেহিৰুল হুছেইন, অপূর্ব শর্মা, অৰুণ গোস্বামী, দেৱব্রত দাস, পূৰবী বৰমুদৈ, মনোৰমা দাস মেধি, বিপুল খাটনিয়াৰ, দেৱীপ্রসাদ সিংহ, অৰূপা পটঙ্গীয়া কলিতা, মনোজ কুমাৰ গোস্বামী আদি।

অসম আন্দোলনে অসমীয়া গল্পকাৰসকলক ইমানেই প্রভাৱিত কৰিছিল যে আন্দোলন সম্পূর্ণৰূপে নিস্তব্ধ হৈ পৰাৰ পিছতো অসম আন্দোলনৰ পটভূমিত গল্প লিখা কেইবাগৰাকীও গল্পকাৰৰ উদ্ভৱ হ'ল। বর্তমান সময়তো কেইবাগৰাকী নবীন গল্পকাৰৰ দুই এটা গল্পত ঐতিহাসিক অসম আন্দোলনৰ ছবি লক্ষ্য কৰা যায়। তাৰ ভিতৰত নবীন গল্পকাৰৰ দুই এটা গল্পত ঐতিহাসিক অসম আন্দোলনৰ ছবি লক্ষ্য কৰা যায়। তাৰ ভিতৰত নবীন গল্পকাৰ অৰূপ কুমাৰ নাথৰ 'কলী-পুৰাণ', বিতোপন বৰাৰ 'পূর্বৰ পোহৰ ৰেখাত জীৱন', মণিকা দেৱীৰ 'আলোন্দোলন', গীতালি বৰাৰ 'দেচ-বিলাস', সঞ্জীৱ পল ডেকাৰ 'বৰমঝিলী', 'কাঁথিচেলেকা' আদি গল্পৰ নাম ল'ব পাৰি।

২.০০ অসম আন্দোলন আৰু মনোৰমা দাস মেধিৰ চুটিগল্প ঃ

অসমীয়া গল্প সাহিত্যৰ অন্যতম এগৰাকী মহিলা গল্পকাৰ হ'ল— মনোৰমা দাস মেধি। দাস মেধিৰ অল্পচর্চিত কিন্তু বহুপঠিত গল্পসমূহে অসমীয়া গল্প সাহিত্যত এখন সুকীয়া আসন দখল কৰি আছে। বর্তমালৈকে তেওঁ প্রকাশিত চাৰিখন গল্প সংকলন পোৱা যায়। তাৰোপৰি তেওঁৰ অন্যান্য কেতবোৰ গল্প বর্তমানেও অসংকলিত ৰূপত কাকত-আলোচনীৰ পাততে সিঁচৰতি হৈ আছে। গল্প সংকলন চাৰিটা হ'ল—

১। কাঠগড়াত ঈশ্বৰ (১৯৯৫)

২। প্রেমগাথা (২০০৩)

৩। সপোনৰ সোণাৰু (২০০৩)

৪। ৰাণীৰ গা ধোঁৱা ঘাট (২০১৬)

অসম আন্দোলনক পটভূমি হিচাপে লৈ মনোৰমা দাস মেধিয়ে ভালেকেইটা গল্প ৰচনা কৰিছে। তাৰ ভিতৰত উল্লেখ কৰিব পাৰি— 'নাগৰিক', 'বিস্ফোৰণৰ পিছত', 'সম্ভাব্য কাল', 'মাটিৰ মানুহ', 'কালভেৰি' আদি। অসম আন্দোলনে অসমৰ অন্যান্য প্রান্তৰ লগতে দৰং জিলাৰ বিভিন্ন অঞ্চলকো বৰ বেয়াকৈ চুই গৈছিল। এই অঞ্চলবোৰত প্রতি দিনে-নিশাই হোৱা অত্যাচাৰ-উৎপীড়ন, হত্যাকাণ্ড, বোমা বিস্ফোৰণ আদি বিভিন্ন ঘটনাই জনজীৱন স্তব্ধ কৰি পেলাইছিল। মনোৰমা দাস মেধিয়ে গৃহ জিলা দৰঙকে ধৰি সমগ্র অসমৰে এই নির্মম বাস্তৱ নিজ চকুৰে হয়তো দেখিবলৈ পাই ছিল। সেয়ে সেই ঘটনা-পৰিঘটনাবোৰক তেওঁ পৰৱর্তী সময়ত গল্পৰ মাজেৰে জীৱন্ত ৰূপ দিবলৈ চেষ্টা কৰিছিল।

'নাগৰিক' মনোৰমা দাস মেধিৰ অসম আন্দোলনৰ পটভূমিত ৰচিত এটা অন্যতম গল্প। গল্পটিৰ মূল বিষয়বস্তু হৈছে নাগৰিকত্ব। যিখন দেশৰ মানুহৰ দুবেলা-দুসাজ খোৱাৰ, পিন্ধাৰ বাবে এযোৰ কাপোৰৰ অভাৱ, সেই দেশৰ নাগৰিকত্বৰ পৰিচয়ো যে কেৱল মাত্র প্রহসন, তাৰ লগতে আন্দোলনে থলুৱা অসমীয়াৰ জীৱনলৈ নমাই অনা নাগৰিকত্বৰ সংশয় 'নাগৰিক' গল্পটিৰ মূল আলোচ্য বিষয়। অসম আন্দোলনৰ প্রধান দাবী আছিল অসমলৈ হোৱা বিদেশী প্রব্রজন বন্ধ কৰা আৰু ইতিমধ্যে অসমত নিগাজিকৈ বাস কৰিবলৈ লোৱা বিদেশী লোকসকলৰ অসমৰ নাগৰিকত্ব কর্তন কৰা। নাগৰিকত্ব বর্জন কার্যৰ বাবে একমাত্র আৰু মূল উপায় আছিল ভোটাৰ তালিকাৰ পৰা সেইসকল লোকৰ নাম একেবাৰে উঠাই দিয়া। এনেধৰণৰ বিষয়বস্তু লৈয়েই দাস মেধিয়ে ৰচনা কৰিছে 'নাগৰিক' গল্পটো।

গল্পটোত আন্দোলনকাৰীসকলে চৰকাৰৰ সহযোগত থলুৱা মানুহখিনিৰ নাগৰিকত্ব ৰক্ষাৰ স্বাৰ্থত পৰিচয় পত্ৰৰ বাবে ফটো তোলা কাৰ্যসূচী অনুষ্ঠিত কৰিছে। পুলিচ, মিলিটাৰি, থানাৰ দাৰোগা আদিৰে পৰিপূর্ণ এখন স্কুলত ফটো তুলিবলৈ মানুহৰ লাইন লাগিছে। ভিন্নৰঙী এডাল ফুলৰ মালাৰ দৰে মুগা, পাট, কপাহী, চিন্থেটিক, পেণ্ট, চুৰীয়া, আঠুমুৰীয়া গামোচা আদি ভিন্ন বস্ত্ৰ পৰিহিত গোট গোট মানুহৰ এটা দীঘল শাৰী। সকলোৱে খিলঞ্জীয়াৰ অধিকাৰ সাব্যস্ত কৰিবলৈ একো একোটা নির্দিষ্ট নম্বৰৰ সৈতে ফটো তুলিবলৈ যৰে কাম ততে এৰি দীঘল শাৰীটোত আহি থিয় দিছে। এই প্ৰক্ৰিয়া দিনজোৰা ভাৱে চলিছে। গল্পকাৰৰ ভাষাত—

"দুপৰীয়া হলহি। মানুহবোৰ এখন দুৱাৰেদি সোমাই আনখন দুৱাৰেদি ওলাই গৈয়েই আছে যদিও মালাধাৰৰ দৈর্ঘ্য সামান্যও কমা নাই। বাঢ়িছেহে। মানুহবোৰ হেলাই হেফাই আহিয়েই আছে। বাওঁকাত ভাৰ লৈ যিধৰণে খোজকাঢ়ে বা উধাই মুধাই সাত-আঠ কিলোমিটাৰ বাট যেনেকৈ চাইকেল চলাই যায়, নাইবা এশ এবুৰি বন-বাৰী সামৰি, উশাহ নগলোৱাকৈ ৰান্ধি-বাঢ়ি যিদৰে ল'ৰা-ছোৱালী আৰু গৃহস্থক ভাতৰ পাতত বহুৱাই দিয়ে, তেনেকৈ ঘামি-জামি অহা মানুহ। শাৰীত থিয় হৈহে তেওঁ যদি দীঘলকৈ উশাহ এটা ল'ব পাৰিছে।" [৪]

গল্পটিৰ এটি নাৰী চৰিত্ৰ ফুলেশ্বৰী। আৰ-তাৰ ঘৰত কাম কৰি দুটি সন্তানৰ সৈতে জীৱন-যাপন কৰা ফুলেশ্বৰীয়ে দেশত কি চলি আছে তাৰ কোনো উমান নাপায়। সেয়ে তাইৰ ফটো তোলা অনুষ্ঠানলৈ যোৱাৰো কোনো আগ্ৰহ নাই। আনফালে স্কুলঘৰত কেৱল ফুলেশ্বৰীৰ অনুপস্থিতি ধৰা পৰাত নম্বৰ টুকি থকা মানুহজনে মানুহ মতাই অনাৰ দায়িত্বত থকা ঘুটমুটীয়া (কেৰ্কন নে সৰুকণ) মানুহটোক ফুলেশ্বৰীক স্কুল ঘৰলৈ লৈ অহাৰ দায়িত্ব দিলে। তেওঁ গৈ দেখে ফুলেশ্বৰীয়ে এঘৰত (বৰবাবুৰ ঘৰত) কেঁচুৰা নচুৱাই আছে। সৰুকণে ফুলেশ্বৰীক স্কুললৈ ফটো তোলাবলৈ আহিবলৈ লগ ধৰাত ফুলেশ্বৰীৰ চিধা উত্তৰ— তাই ফটো তোলাবলৈ নাযায়। আনকি ভোট দিয়া বন্ধ হ'লেও তাই ফটো তোলাবলৈ নাযায়। কাৰণ তাই নাজানে নাগৰিকত্বৰ সংজ্ঞা কি! আন্দোলনৰ ভয়াৱহতাইয়ো তাইৰ সৰল মনত নাগৰিক হোৱাৰ চিন্তাৰ উদ্ৰেক কৰিব পৰা নাই। সৰুকণে যিমানেই তাইক ফটো তুলিবলৈ জোৰ নকৰক কিয় তাই কিন্তু নিজৰ সিদ্ধান্তত অটল। ফটো তোলাবলৈ তাই নাযায়—

" 'ফটো লাগিব নহয়। দুনিয়াখনে ফটো তুলি শেষ কৰিলে। তোৰ খবৰ নাই।'

'থ। জাত জাত কথা।'

'জাত জাত কথা নহয়। খাটাং কথা। ফটো যদি নোতোলাৰ, ভোট দিয়া বন্ধ।'

'হক দে বন্ধ। ভোট দিলেও যি নিদিলেও সি। বান্দীৰ কপাল।' [৫]

এইখিনিতে ভালদৰে খাব-পিন্ধিব নোপোৱা দেশ এখনত যে ভোটাধিকাৰ এক প্ৰহসনৰ বাহিৰে আন একো নহয়, সেই সম্পর্কে গল্পকাৰৰ শ্লেষাত্মক দৃষ্টিভঙ্গী প্ৰকাশ পাইছে।

অৱশেষত সৰুকণে ঘোপা চকুৰে চাই ফটো নোতোলালে অসমৰ সীমাৰ বাহিৰ হ'ব লাগিব বুলি গৰ্গৰাই কোৱাত তাই যাবলৈ মাস্তি হ'ল।

"ভাওনালৈ লগ ধৰা নাই তোক মই। যেতিয়া মিলিটাৰি লৰীত তুলি লৈ সীমাটো পাৰ কৰি থৈ আহিব তেতিয়া বুজিবি অমুকাই ভাললৈ কৈছিল নে বেয়ালৈ কৈছিল।" [৬]

অসম আন্দোলনে অসমৰ সাধাৰণ জনগণৰ খোৱা-পিন্ধা আদি মৌলিক প্ৰয়োজনসমূহ পূৰণ কৰাৰ ক্ষেত্ৰতো যে বাধাৰ সৃষ্টি কৰিছিল তাৰ উপযুক্ত প্ৰমাণ পোৱা যায় ফুলেশ্বৰী চৰিত্ৰটিৰ জৰিয়তে। আনৰ ঘৰত কাম-বন কৰিও দুবেলা-দুসাজ যোগাৰ কৰিব নোৱাৰা ফুলেশ্বৰীৰ মানুহেৰে ঠাহ খাই থকা স্কুলঘৰলৈ ফটো তোলাবলৈ যাবলৈ এসাজ ভাল কাপোৰৰ অভাৱ। আনৰ ঘৰলৈ কাপোৰ এযোৰ খুজিবলৈ গৈও তাই নানান কটু কথা শুনিবলগীয়া হৈছে—

" 'বৰ মস্কিল এ আই। ফটো নহ'লে বোলে বিদেশী হ'ম। দেশৰপৰা বোলে বাহিৰ কৰিও দিব। ছিৰা-ফটা কিবা এখন দে ফটো তোলাওঁ। 'ভোটৰ ফটোহে। ফ্ৰেমত বন্ধাই পহুশিঙত আঁৰি নথয় দে তোৰ ফটোখন। এনেকেয়ে তোলগৈ যায়। চাদৰ মেৰিয়াই বিহুৱতী হৈ নেদেখুৱালেও হ'ব।' [৭]

অৱশেষত তাই ফটা-চিটা কাপোৰেৰে হ'লেও আত্মঅধিকাৰ ৰক্ষাৰ স্বাৰ্থত তাইৰ নম্বৰটো লিখি লোৱা কলা চিলঠখন বুকুৰ ওপৰত তুলি লৈ ফটো তোলালে।

গল্পকাৰৰ ভাষাত—

'আঃ তাইৰ গাটোত এতিয়া চাদৰ নাই; ব্লাউজো নাই, বুকুৰ ওপৰত কেৱল এখন চক্-পেঞ্চিলেৰে নম্বৰ লিখা কিচ্‌কিচীয়া ক'লা চিলঠ।' [৮]

অসম আন্দোলনৰ পটভূমিত ৰচিত মনোৰমা দাস মেধিৰ আন এটি গল্প হ'ল— 'বিস্ফোৰণৰ পিছত'। [৯] এই গল্পটিত অসম আন্দোলনৰ সময়ত ঠায়ে ঠায়ে হোৱা বোমা বিস্ফোৰণৰ ভয়াৱহতাৰ ইঙ্গিত পোৱা যায়। আন্দোলনৰ সময়ছোৱাত অসমৰ বিভিন্ন প্ৰান্তত হত্যাকাণ্ড আৰু বোমা বিস্ফোৰণ সংঘটিত হৈছিল। আচলতে এই বোমাসমূহ বিদেশী লোকসকলক লক্ষ্য কৰি বিস্ফোৰণ কৰা হৈছিল যদিও সেই বোমাৰ আঘাতত বহুতো থলুৱা লোক মৃত্যুমুখত পৰিবলগীয়া হৈছিল আৰু বহুত লোক চিৰজীৱনৰ বাবে পঙ্গু হৈ পৰিবলগীয়া হৈছিল। এনে এটি ঘটনাৰ আলমত ৰচিত হৈছে 'বিস্ফোৰণৰ পিছত'।

এখন বজাৰত হোৱা বোমা বিস্ফোৰণক কেন্দ্ৰ কৰি 'বিস্ফোৰণৰ পিছত' গল্পটিৰ কাহিনীভাগ আগবাঢ়িছে। তাৰ লগতে আছে পতিহীনা পাৰুল আৰু পিতৃহীনা শিশু পুতুৰ জীৱন সংগ্ৰামৰ মৰ্মান্তিক গাঁথা। অসমৰ বেছিভাগ লোকেই খাটিখোৱা। অনবৰতে দৰিদ্ৰতাই হেচি থকা অসমীয়া জনগণক অসম আন্দোলনে যে আৰু এবাৰ গচকি থৈ গ'ল, তাত কোনো সন্দেহ নাই। গল্পটিৰ চৰিত্ৰ পাৰুল পুতুও তাৰ ব্যতিক্ৰম নহয়। প্ৰত্যেক নিশাই ঘৰত মুঢ়া সাজি পুৱা হ'লে বজাৰত বিক্ৰী কৰি সেই দুপইচাৰে তেল-নিমখ কিনি দুবেলা-দুসাজ খোৱাই যেন দুয়ো মাক জীয়েকৰ জীৱনৰ লক্ষ্য-উদ্দেশ্য। সেইদিনাও আনদিনাৰ দৰে পুতুই মাকে ৰচী এডালেৰে কান্ধত বান্ধি দিয়া ৰংচঙীয়া মুঢ়া দুটা ওলোমাই লৈ এজাক মানুহৰ মাজে মাজে বজাৰলৈ ৰাওনা হৈছে। গল্পকাৰৰ ভাষাত—

'জনস্ৰোত নুবুলি জীৱস্ৰোত বোলাই ভাল। হাঁহ আৰু কুকুৰাৰ খাং, টানি-টানি নিয়া ছাগলী, লুটিয়াই বন্ধা গাহৰি, পাৰৰ টোম, লগতে বিভিন্ন বয়স, বিভিন্ন স্তৰৰ মানুহ। কেৱল সেয়ে নহয়। কল আৰু ডাব নাৰিকলৰ থোক, বতৰৰ পাচলি, বাঁহৰ ঢাৰি-খৰাহী-ডুলি, খালী বা ভৰ্তি মোনা, ওলোমাই নিয়া বটল আৰু কেৰাচিন অনা গেলনবোৰ; এইবোৰৰ মাজতে সোমাই তায়ো ৰেলৰ ডবা এটাৰ দৰে গৈ আছে।' [১০]

পুতু ওলাই যোৱাৰ পিছত পাৰুলে ঘৰৰ সকলোবোৰ কাম কৰি আঁটাই বজাৰলৈ বুলি বাট বুলে। সেইদিনাও ঘৰখন পৰিপাটিকৈ থৈ তাই বজাৰলৈ বুলি ওলাল। কিন্তু গৈ থাকোতে ৰাস্তাতে শুনা এটা গধুৰ শব্দই তাইৰ কাণ তাল মাৰি ধৰিলে—

'তেনেতে গুৰুম্‌কৈ শব্দ এটা হ'ল। বন্দুক যেনো নালাগে, মেঘৰ গাজনি যেনো নালাগে। লাইটৰ লোড-শ্বেডিং নে কি এটা যে মাজে-সময়ে হৈ থাকে, সেই শব্দটোও এক ধৰণৰ নহয়। ঠিক তেনে ধৰণৰ শব্দ এটা, কেৱল এই শব্দটো বেছি গধুৰ।' [১১]

লাহে লাহে হাটৰ ফালৰপৰা কোঁ-কোঁৰাই চাইকেল চলাই মানুহবোৰ অহা দেখি তাইৰ বুকুখন কঁপিবলৈ ধৰিলে। হঠাৎ চাইকেল আৰোহী এজনৰ মুখৰপৰা ওলোৱা 'বোমা ফুটিছে' শব্দ দুটাই পাৰুলৰ জীৱনৰ গতিয়েই যেন স্তব্ধ কৰি পেলালে।

নিজকে বচোৱাৰ স্বাৰ্থত বজাৰলৈ বেচিবলৈ নিয়া বস্তুবোৰ য'ৰ বস্তু ত'তে পেলাই থৈ সকলোবোৰ মানুহ কেৱল ঘৰমুৱা হৈছে। ঘৰখনেই যেন একমাত্ৰ নিৰাপদ স্থান। কিন্তু ৰাতিপুৱাই হাটলৈ যোৱা পুতু ঘৃৰি নহা দেখি পাৰুলে নিজৰ জীৱনকো তুচ্ছ জ্ঞান কৰি হাটৰ ফালেহে আগুৱাই গৈ থাকিল। যোৱা বাটত তাই যাকে লগ পাইছে তাকে একমাত্ৰ জীয়েকৰ কথা সুধিছে। কিন্তু তাৰ উত্তৰত মানুহবোৰে যি মন্তব্য কৰিছে সি অতি শিহৰণকাৰী—

'মুঢ়া আগত লৈ কাৰো জীয়েক-পুতেক তাত আৰু নাই। মুঠতে জীয়া মানুহ কোনোৱেই তাত নাই। মস্ত গাহৰি এটাৰ বুকুত মিট্ এখন ভৰাই থোৱাতে আছে। আধা কটা ছাগলী, গচকত পেটু ওলোৱা মাছ, ফেনেকি পেলোৱা পাচলি কিমান চাবি! দুই এঠাইত তেজো দেখা পালোঁ।'

'তেজ?'

'কিহৰ তেজ নাজানো দেচোন। ডাঙৰ মাছৰো হ'ব পাৰে, গাহৰি-ছাগলীৰো হ'ব পাৰে। নাইবা—' [১২]

দিন গৈ গৈ সন্ধিয়া হ'ল; সন্ধিয়া আঁতৰি নিশা নামিল, তথাপি কিন্তু পুতুৰ কোনো শুংসূত্ৰ নোলাল। ৰাতি বাগৰাত ভয়ে ভাগৰে জুৰুলা হৈ পৰা মানুহবোৰ শুই পৰিল। তাৰ বিপৰীতে এফালে বিস্ফোৰণথলীত থান-বান হৈ পৰি থকা মৃতদেহবোৰ আৰু আনফালে পাৰুলৰ চকুত ভয় আৰু ভাগৰৰ কোনো চিন চাবেই নাই। তাই কেৱল হিয়া উজাৰি

কান্দিছে আৰু কান্দিছে। কিন্তু হঠাৎ বাহিৰৰপৰা শুনা 'মা' শব্দই পাৰুলৰ মন-প্ৰাণ জীপাল কৰি তুলিলে ভগা-ছিগা মূঢ়া দুটা বুকুত সাৱটি মাকৰ কাষত থিয় দিয়া পুতুক দেখি তাই চিঞৰি উঠিল। কিন্তু পখিলা খেদা বয়সৰ পুতুৰে মাকৰ পৰিৱৰ্তনীয় আচৰণত অবাক হৈ পৰিল। আনদিনা মুঢ়া বিক্ৰী কৰিব নোৱাৰিলে মাকে তাইক কিমান কটু কথা শুনায় কিন্তু তাৰ পৰিৱৰ্তে আজি মাকৰ তাইৰ প্ৰতি ইমান দৰদ কিয়! ফুল কুমলীয়া পুতুই দিনৰ ভয়াৱহতাৰ কথা যেন উপলব্ধিয়েই কৰিব নোৱাৰিলে। অতি সৰলভাৱে তাই মাকৰ আগত দিনটোৰ বৰ্ণনা দিছে এইদৰে—

"ইমানবোৰ যে বাট আছে, মা মই আজিহে জানোঁ। চবে যিপিনে দৌৰে, ময়ো দৌৰোঁ, মুঢ়া দুটা পৰি যায়, বোটলো। বুটলি উঠিয়েই দেখোঁ কাষৰ মানুহবোৰ বেলেগ। তাৰমানে সিহঁত বেলেগ বাটেৰে গ'লগৈ। ইহঁতৰ লগতে যাওঁ। আকৌ মুঢ়া সৰি পৰে। আকৌ বোটলোঁ। আকৌ মানুহবোৰ বেলেগ হৈ যায়। ইটো বাটৰপৰা সিটো বাট, সিটো বাটৰপৰা সিটো বাট।" [১৩]

আন্দোলনৰ সময়ছোৱাত, ল'ৰা-বুঢ়া সকলোৰে মাজত আলোচনাৰ বিষয় কেৱল নাৰকীয় আন্দোলনৰ ভয়াৱহতা। স্কুল-কলেজ বন্ধ হৈ পৰাৰ বাবে গাঁওবোৰত কোনোধৰণৰ শৈক্ষিক বাতাবৰণ নাই। চাৰিওফালে কেৱল বোমা, মৰা-মিলিটাৰি, জীয়া মিলিটাৰি, পুলিচ-ডাৰোগা, অত্যাচাৰ, হত্যা, লুণ্ঠন, ধৰ্ষণ, পলায়ন, কেঁচা তেজ, ৰক্তাক্ত শৰীৰৰ কথা। কিন্তু গল্পটোত সেইদিনা নবছৰীয়া পুতু বিস্ফোৰণথলীৰ পৰা সোশৰীৰে উভতি অহা ঘটনাই মানুহবোৰৰ মাজত আলোচনাৰ বিষয় সলালে। যেন বহুদিনৰ মূৰত ঠাইখনত নতুন কিবা এটাৰ উদ্ভৱ হৈছে। গতানুগতিকতাৰ পৰা ওলাই আহি সকলোৱে নতুনৰ সোৱাদ লোৱাৰ সুবিধা পাইছে—

"নতুন কথা কেৱল এটাহে যোগ হৈছে। পাৰুলৰ জীয়েকজনী উভতি আহিছে। দুহাতত দুটা ভগা মুঢ়া।" [১৪]

অসম আন্দোলনে অসমীয়া সাধাৰণ জনগণক অৰ্থনৈতিক দিশত বেয়াকৈ জুৰুলা কৰিছিল। হাট বজাৰ আদিত হোৱা বোমা বিস্ফোৰণ, বিধ্বংসী কাৰ্য, সঘনাই হোৱা অসম বন্ধ আদিয়ে বস্তু বেচা-কিনাত বাধাৰ সৃষ্টি কৰিছিল। যাৰ ফলত পাৰুল-পুতুহঁতৰ দৰে মুঢ়া বিক্ৰী কৰি খোৱা লোকে দুৰ্বিষহ জীৱন যাপন কৰিবলগীয়া হৈছিল। এইখিনিতে মনোৰমা দাস মেধিৰ 'মাটিৰ মানুহ' নামৰ গল্পটিৰ নাম ল'ব পাৰি। অসম আন্দোলনে যে খাটি খোৱা অসমীয়া মানুহখিনিক আৰ্থিকভাৱে অধিক দুৰ্বল কৰি পেলাইছিল তাৰ প্ৰমাণ পোৱা যায় এই গল্পটোত। 'বিস্ফোৰণৰ পিছত'

গল্পৰ পাৰুল-পুতুহঁতৰ দৰে মোহন 'মাটিৰ মানুহ' গল্পটিৰ এটি অতি দুখীয়া চৰিত্ৰ। হাটে-বজাৰে কল বেচি অৰ্জন কৰা দুপইচাৰে মোহনে ল'ৰা-তিৰোতাৰে ভৰা এখন সুখৰ সংসাৰ চলাই আছিল। কিন্তু আন্দোলনৰ ফলত সঘনাই হোৱা অসম বন্ধই মোহনৰ কলৰ ব্যৱসায়ত বাধাৰ সৃষ্টি কৰিলে আৰু এসময়ত গৈ সেই ব্যৱসায় সম্পূৰ্ণৰূপে বন্ধ হৈ পৰে। শেষত ধনৰ অভাৱত খাব নাপাই শুকাই-ক্ষীণাই মোহনে দু�ৰাৰোগ্য ৰোগত আক্ৰান্ত হৈ মৃত্যুবৰণ কৰিবলগীয়া হ'ল।

মনোৰমা দাস মেধিৰ 'সম্ভাব্য কাল' নামৰ গল্পটোত অসম আন্দোলনৰ বিধ্বংসী ৰূপে এগৰাকী অন্তঃসত্ত্বা মহিলাৰ জীৱনলৈ কেনেদৰে সংশয় নমাই আনিছিল তাৰ ছবি ফুটি উঠিছে। আন্দোলনৰ সময়ছোৱাত ৰাস্তা-ঘাট, দলং আদি ধ্বংস কৰা কাৰ্যই সাধাৰণ মানুহৰ যাতায়ত ব্যৱস্থা ব্যাহত কৰি তুলিছিল। যাৰ ফলত অন্তঃসত্ত্বা জবাক সময়মতে চিকিৎসকৰ ওচৰলৈ নিব নোৱাৰাত ঘৰতে অসুৰক্ষিতভাৱে সন্তান প্ৰসৱ কৰিবলগা অৱস্থা হৈছে।

আকৌ, দাস মেধিৰ 'কালভেৰি' নামৰ গল্পটিতো অসম আন্দোলনে এটি শিশুৰ জীৱনলৈ কিদৰে অন্ধকাৰ নমাই আনিছে তাৰ ছবি চিত্ৰিত হৈছে। আন্দোলনৰ সময়ছোৱাত অসমৰ শৈক্ষিক দিশটোৰ যি ক্ষতি হৈছিল সি অপূৰণীয়, অবৰ্ণনীয়। স্কুল-কলেজ সম্পূৰ্ণৰূপে বন্ধ হৈ পৰাত বিশেষকৈ শিশুসকলৰ জীৱনলৈ দুৰ্যোগ নামি আহিছিল। অ-আ, ক-খ শিকাৰ সময়খিনিতে যেন সিহঁত স্তব্ধ হৈ পৰিবলগীয়া হৈছিল। সেই শিশুসকলৰ মাজৰে অন্যতম এটি শিশু চৰিত্ৰ 'কালভেৰি' গল্পৰ বাবুল। আন্দোলনে সৃষ্টি কৰা বিভিন্ন সমস্যাৰ বাবে আৰু শিক্ষা গ্ৰহণৰ উদ্দেশ্য আগত ৰাখি মাক-দেউতাকে বাবুলক মোমায়েকৰ ঘৰলৈ পঠিয়াইছে। কিন্তু পিতৃ-মাতৃৰ পৰা আঁতৰ হোৱাৰ লগতে নতুন ঠাইখনৰ মানুহবোৰে কৰা ঠাট্টা-মস্কৰাই বাবুলক মানসিকভাৱে ভাগৰুৱা কৰি পেলাইছে। যাৰ ফলত মোমায়েকৰ ঘৰত সি নতুন একো শিকিব পৰা নাই। বৰঞ্চ হতাশা আৰু নিৰাশাই বাবুলৰ শিকাখিনিও পাহৰাইহে পেলাইছে। এনেদৰে এদিন বাবুলৰ শিক্ষা জীৱনৰ যতি পৰিছে।

৩.০০ উপসংহাৰ ঃ

অসমৰ নাগৰিকত্ব লাভ কৰা অবৈধ অনুপ্ৰৱেশকাৰী লোকসকলৰ বিতাড়নৰ উদ্দেশ্যে সৃষ্টি হোৱা অসম আন্দোলনক বিষয় হিচাপে লৈ বিভিন্ন গল্পকাৰে গল্প ৰচনা কৰিছে। আন্দোলনৰ সময়খিনিৰ অসমৰ সামাজিক, ৰাজনৈতিক, অৰ্থনৈতিক সমস্যাসমূহক গল্পকাৰসকলে তেওঁলোকৰ গল্পৰ মাজেৰে বাস্তৱ ৰূপত তুলি ধৰিবলৈ চেষ্টা কৰিছে। কিছুমান গল্পকাৰে আন্দোলনকাৰীৰ মতাদৰ্শক গল্পসমূহৰ মাজেৰে দাঙি ধৰিছে আৰু আন কিছুমান গল্পকাৰে আন্দোলনকাৰীৰ আৱেগৰ ঢৌ, আন্দোলনত চৰকাৰৰ দমননীতিৰ স্বৰূপ অতি স্পষ্টৰূপত প্ৰতিফলিত কৰিছে।

অসম আন্দোলনৰ সময়ছোৱাক নিজ চকুৰে প্ৰত্যক্ষ কৰা মনোৰমা দাস মেধিয়ে আন্দোলনৰ সময়ছোৱাক অতি নিৰ্মোহভাৱে নিজৰ গল্পত তুলি ধৰিবলৈ চেষ্টা কৰিছে। আমাৰ আলোচ্য 'বিস্ফোৰণৰ পিছত' গল্পত মনোৰমা দাস মেধিয়ে আন্দোলনৰ সময়ছোৱাত দৰং অঞ্চলত সংঘটিত হোৱা বোমা বিস্ফোৰণৰ ঘটনা এটি তুলি ধৰিছে। অসমৰ বিভিন্ন অঞ্চলত সংঘটিত হোৱা বিস্ফোৰণৰ ঘটনাক অন্য বহু কেইগৰাকী গল্পকাৰে গল্পৰ বিষয়বস্তু হিচাপে গ্ৰহণ কৰিছে। চৈয়দ আব্দুল মালিকৰ 'পো�ৰা গাঁৰত পহিলা ব'হাগ' নামৰ গল্পটি নগাঁৱৰ নেলী অঞ্চলত সংঘটিত ঘটনাৰ পটভূমিত ৰচিত এটি অন্যতম গল্প। বোমা বিস্ফোৰণে মুছলমান সম্প্ৰদায়ৰ গাঁও এখন কেনেদৰে ধ্বংসস্তুপত পৰিণত কৰিছে তাৰ জীৱন্ত ৰূপ গল্পটিত দেখা যায়।

আকৌ মনোৰমা দাস মেধিৰ সমসাময়িক অন্য কেইগৰাকীমান গল্পকাৰ যেনে— পূৰবী বৰমুদৈ, নিৰুপমা বৰগোহাঞি, অৰূপা পটঙ্গীয়া কলিতা আদিৰ গল্পৰ মাজেৰেও বোমা বিস্ফোৰণে সৰ্বস্ব কৰা জনতাৰ ছবি প্ৰতিফলিত হৈছে। উদাহৰণস্বৰূপে—

পূৰবী বৰমূদৈৰ 'ৰাজনীতি নুবুজা মানুহ' গল্পত গল্পকাৰে গহপুৰ অঞ্চলত সংঘটিত বোমা বিস্ফোৰণৰ ঘটনাক বাস্তৱ ৰূপ দিছে। সাধাৰণভাৱে জীৱন-যাপন কৰা ভদ্ৰেশ্বৰ-মালতীহঁতৰ সপোনৰ ঘৰখন বিস্ফোৰণে কেনেদৰে ছাৰখাৰ কৰি পেলালে গল্পকাৰে তাৰ সুন্দৰ বৰ্ণনা আগবঢ়াইছে। গল্পকাৰ নিৰুপমা বৰগোহাঞিৰ 'এখন অনিৰ্বচনীয় ছবি', 'উৎসৱ' আদি গল্পতো বোমা বিস্ফোৰণৰ আতংকময় পৰিস্থিতিৰ চিত্ৰ ফুটি উঠিছে। অসম আন্দোলনৰ সময়ত গুৱাহাটীৰ ফটাশিল আমবাৰীৰ এখন বজাৰত হোৱা বোমা বিস্ফোৰণৰ ঘটনাক তুলি ধৰা হৈছে 'এখন অনিৰ্বচনীয় ছবি' গল্পত। এনেদৰে বিভিন্নগৰাকী গল্পকাৰে বোমা বিস্ফোৰণকে ধৰি আন্দোলনৰ সময়ছোৱাত সংঘটিত সৰু-

বৰ ঘটনাক কেন্দ্ৰ কৰি বিভিন্ন গল্প ৰচনা কৰিছে আৰু বৰ্তমান সময়তো তেনে গল্প লিখা ধাৰা অব্যাহত আছে।

অসমীয়া জনগণক চাৰিওফালৰ পৰা নিঃস্ব কৰি পেলোৱা ঐতিহাসিক অসম আন্দোলনৰ সময়ছোৱাত বহিৰাগতসকলক বিতাড়ন কৰিবলৈ চৰকাৰে বিভিন্ন কাৰ্যপন্থা হাতত লৈছিল।

কিন্তু বহিৰাগতসকলৰ পৰিৱৰ্তে অসমত বাস কৰা সংখ্যালঘুসকলক হাৰাশাস্তি কৰা বুলি হুলস্থূল লগাত ১৯৮৩ চনত আই এম ডিটি (IMDT) আইন প্ৰণয়ন কৰা হ'ল। আইনখন গৃহীত হোৱাৰ ফলত বিদেশী চিনাক্তকৰণ কঠিন হৈ পৰিল। আই এম ডি টি আইন বলবৎ হোৱাৰ পিছতে ১৯৮৫ চনৰ ১৫ আগষ্টৰ দিনা 'অসম চুক্তি' ৰূপায়িত হ'ল। চুক্তি অনুসৰি ১৯৭১ চনৰ ২৫ মাৰ্চক ভিত্তি কৰি ৰাষ্ট্ৰীয় নাগৰিকপঞ্জী উন্নীত কৰা, বিদেশী চিনাক্তকৰণ তথা সেইসকলৰ প্ৰত্যাৱৰ্তনৰ বাবে সংশ্লিষ্ট দেশৰ সৈতে হোৱা দ্বিপাক্ষিক চুক্তিৰ জৰিয়তে বিদেশী নাগৰিকক গণতান্ত্ৰিকভাৱে অসমৰপৰা বিদায় দিয়াৰ ব্যৱস্থা হাতত লোৱা হয়। তথাপি কিন্তু অসমৰপৰা বিদেশী বিতাড়ন প্ৰক্ৰিয়া সম্পূৰ্ণৰূপে নিৰ্মূল নহ'ল। যি সমস্যাক লৈ অসমত ছয় বছৰীয়া আন্দোলন চলিছিল, 'অসম চুক্তি' স্বাক্ষৰৰ পিছত তাৰ আনুষ্ঠানিক সমাপ্তি ঘটে যদিও অনানুষ্ঠানিকভাৱে সেই সমস্যা অসমত থাকি গ'ল। ২০১৯ চনৰ CAA (Citizenship Amendment Act.) আন্দোলন তাৰেই উপযুক্ত প্ৰমাণ। ❑

প্ৰসঙ্গ সূত্ৰ ঃ

১। গগৈ, অখিল। বিদেশী সমস্যা আৰু জাতীয় আন্দোলনৰ পথ। পৃ. ১০২।
২। চুতীয়া, দীপজ্যোতি। অসম আন্দোলন আৰু অসমীয়া গল্পত ইয়াৰ প্ৰভাৱ। পৃ. ১২।
৩। দ্য আসাম ট্ৰিবিউন, ৫ মাৰ্চ ১৯১৮, পৃ. ১।
৪। দাস মেধি, মনোৰমা। সপোনৰ সোণাৰু। পৃ. ৮২।
৫। প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ। পৃ. ৮৪।
৬। প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ। পৃ. ৮৪।
৭। প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ। পৃ. ৮৫।
৮। প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ। পৃ. ৮৬।
৯। মনোৰমা দাস মেধিৰ 'বিস্ফোৰণ পিছত' গল্পটি ডাঃ ৰীতামণি বৈশ্যই হিন্দী ভাষালৈ অনুবাদ কৰিছে 'বিস্ফোট কে বাদ' নামেৰে।
১০। দাস মেধি, মনোৰমা। প্ৰেমগাথা। পৃ. ৪৫।
১১। প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ। পৃ. ৪৬।
১২। প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ। পৃ. ৪৯।
১৩। প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ। পৃ. ৫২।
১৪। প্ৰাগুক্ত গ্ৰন্থ। পৃ. ৫৪।

গ্ৰন্থপঞ্জী ঃ

মুখ্য সমল

দাস মেধি, মনোৰমা। প্ৰেমগাথা। ষ্টুডেণ্টচ্ ষ্ট'ৰচ; গুৱাহাটী- ১, প্ৰথম প্ৰকাশ, ডিচেম্বৰ, ২০০৩।
————। সপোনৰ সোণাৰু। বনলতা, গুৱাহাটী-১, প্ৰথম প্ৰকাশ, নৱেম্বৰ, ২০০৩।

গৌণ সমল ঃ

গগৈ, অখিল। বিদেশী সমস্যা আৰু জাতীয় আন্দোলনৰ পথ। আখৰ প্ৰকাশ, গুৱাহাটী-১, প্ৰথম প্ৰকাশ, ২০১২।
গোঁহাই, হীৰেণ আৰু দিলীপ বৰা (সম্পা.)। অসম আন্দোলন প্ৰতিশ্ৰুতি আৰু ফলশ্ৰুতি। বনলতা, গুৱাহাটী-ৰ। প্ৰথম প্ৰকাশ, ২০০১।
ডেকা, সঞ্জীৱ পল। অসম আন্দোলনৰ গল্প। বনলতা, গুৱাহাটী-১, প্ৰথম সংস্কৰণ, ২০২৩।

গৱেষণা গ্ৰন্থ ঃ

উপাধ্যায়, অমৃত কুমাৰ। ঐতিহাসিক অসম আন্দোলন আৰু অসমীয়া উপন্যাস। আধুনিক ভাৰতীয় ভাষা আৰু সাহিত্য অধ্যয়ন বিভাগ, গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়, ২০১৭।
চুতীয়া, দীপজ্যোতি। অসম আন্দোলন আৰু অসমীয়া গল্পত ইয়াৰ প্ৰভাৱ। আধুনিক ভাৰতীয় ভাষা আৰু সাহিত্য অধ্যয়ন বিভাগ, গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়, ২০১৩-১৪।

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

মিচিং কথিত অসমীয়াৰ ধ্বনিতত্ত্ব ঃ এটি বিশ্লেষণ

ৰিন্‌চিন্‌ বৰুৱা
গৱেষক, অসমীয়া বিভাগ
কটন বিশ্ববিদ্যালয়, গুৱাহাটী-১
৭০০২২০৪০০৬
rincinbaruah@gmail.com

ড° দিলীপ ৰাজবংশী
সহযোগী অধ্যাপক
অসমীয়া বিভাগ
কটন বিশ্ববিদ্যালয়, গুৱাহাটী-১

সংক্ষিপ্ত সাৰ ঃ

অসমৰ দ্বিতীয় বৃহৎ জনজাতীয় গোট মিচিংসকল মংগোলীয় নৃ-গোষ্ঠীৰ অন্তর্গত চীন-তিব্বতীয় ভাষা পৰিয়ালৰ অন্তর্ভুক্ত জনগোষ্ঠী । অসমৰ খিলঞ্জীয়া জনগোষ্ঠীবোৰৰ অন্যতম মিচিংসকলে নিজা ভাষা থকা সত্ত্বেও অসমীয়া ভাষিক গোষ্ঠীৰ সংস্পর্শত থকাৰ বাবেই হয়তো পৰিস্থিতিগত কাৰণত প্রথম ভাষা মিচিং-ৰ সমান্তৰালকৈ অসমীয়া ভাষা আহৰণ কৰে। বৃহত্তৰ অসমীয়া জাতি গঠনত মিচিং জনগোষ্ঠীয়ে অতীজৰে পৰা বিশেষ অৱদান আগবঢ়াই অসমীয়া জাতিক সমৃদ্ধ কৰাটো বিশেষভাৱে উল্লেখযোগ্য। অসমত বসবাস কৰা কেইটামান প্রভাৱশালী জনজাতীয় গোষ্ঠীৰ দৰে মিচিংসকলেও মাতৃভাষা অথবা প্রথম ভাষাৰ দৰে অসমীয়া ভাষাও সমান্তৰালকৈ আহৰণ কৰে। দৈনন্দিন জীৱন অথবা মিচিং সমাজ জীৱনত তেওঁলোকে মিচিং ভাষাক অগ্রাধিকাৰ প্রদান কৰিলেও আনুষ্ঠানিক কাম-কাজ আৰু ৰাজহুৱা জীৱনত তেওঁলোকৰ প্রধান ভাষা অসমীয়া। মিচিংসকলৰ কেইবাটাও ফৈদৰ ভিতৰত চামগুৰীয়া, তামাৰগঞা, বিহিয়া, বেৰেজীয়া ফৈদৰ লোকসকলে অসমীয়া ভাষাক তেওঁলোকৰ প্রথম ভাষা হিচাপে ইতিমধ্যে গ্রহণ কৰিছে। আনহাতে মিচিংসকলে প্রয়োগ কৰা অসমীয়া ভাষাত তেওঁলোকৰ প্রথম ভাষাৰ প্রভাৱ সকলো ক্ষেত্রতে সততে পৰিলক্ষিত হয়। তাৰ ভিতৰত ধ্বনিতাত্ত্বিক দিশ বিশেষভাৱে উল্লেখযোগ্য। মিচিং কথিত অসমীয়াৰ মান্য অসমীয়াৰ সৈতে উচ্চাৰণগত ভিন্নতা সহজতে কর্ণগোচৰ হয়। অর্থাৎ অসমীয়া ভাষা প্রয়োগ কৰিলেও তেওঁলোকৰ উচ্চাৰণত মিচিং ভাষাৰ চীন-তিব্বতীয় উচ্চাৰণগত বৈশিষ্ট্য কিছুমান ধ্বনিৰ মাজত সুস্পষ্ট। মিচিং ভাষাৰ নিজস্ব বৈশিষ্ট্য আৰু অসমীয়া ভাষাৰ সংমিশ্রণত মিচিং কথিত অসমীয়া ভাষা গঢ় লৈ উঠিছে। এই আলোচনাত মিচিং কথিত অসমীয়াৰ ধ্বনিতাত্ত্বিক বৈশিষ্ট্যসমূহৰ সমাগ্রিক আলোচনা আগবঢ়োৱা হ'ব।

বীজ শব্দ : মিচিং, জনজাতি, ভাষা আহৰণ, কথিত অসমীয়া, ফৈদ, ধ্বনিতত্ত্ব।

০.০০ **অৱতৰণিকা** ঃ

মিচিংসকল অসমৰ দ্বিতীয় বৃহৎ জনগোষ্ঠী। নৃ-তাত্ত্বিকভাৱে এই গোষ্ঠী মংগোলীয় আৰু ভাষাতাত্ত্বিকভাৱে এওঁলোক চীন-তিব্বতীয় ভাষা পৰিয়ালৰ অন্তর্গত। ইতিহাসে ঢুকি নোপোৱা কালতে অসমলৈ প্রব্রজিত মিচিং সকল বর্তমান সময়ত অসমৰ খিলঞ্জীয়া জনগোষ্ঠীবোৰৰ অন্যতম। মিচিং সকলৰ নিজা ভাষা মিচিং। কিন্তু

অসমীয়া ভাষিক গোষ্ঠীৰ সংস্পর্শত থকাৰ বাবেই হয়তো পৰিস্থিতিগত কাৰণত প্ৰথম ভাষা মিচিঙৰ সমান্তৰালকৈ অসমীয়া ভাষা আহৰণ কৰে। বৃহত্তৰ অসমীয়া জাতি গঠনত অন্যান্য জনগোষ্ঠীৰ দৰে মিচিংসকলেও অতীজৰে পৰা বিশেষ অৱদান আগবঢ়াই অসমীয়া জাতিক সমৃদ্ধ কৰাটো বিশেষভাৱে উল্লেখযোগ্য। অসমত বসবাস কৰা অধিকাংশ জনজাতীয় গোষ্ঠীৰ দৰে মিচিং সকলেও মাতৃভাষা অথবা প্ৰথম ভাষাৰ দৰে অসমীয়া ভাষাও সমান্তৰালকৈ আহৰণ কৰে। এওঁলোকে ঘৰুৱা জীৱন অথবা মিচিং সমাজ জীৱনত অধিক ক্ষেত্ৰত মিচিং ভাষাক অগ্ৰাধিকাৰ প্ৰদান কৰিলেও আনুষ্ঠানিক কাম-কাজ আৰু ৰাজহুৱা জীৱনত অসমীয়া ভাষাকে প্ৰাধান্য দিয়ে। অৰ্থাৎ শিক্ষা গ্ৰহণ, চৰকাৰী-বেচৰকাৰী কাৰ্যালয়, আদালত আদিৰ কাম-কাজৰ উপৰিও দৈনন্দিন জীৱনৰ অধিকাংশ কাম-কাজতে অসমীয়া ভাষাই তেওঁলোকৰ মূল ভাষা। স্বগোষ্ঠীৰ মাজত পৰস্পৰ ভাৰ বিনিময়ৰ বাহক হিচাপে মিচিং ভাষা প্ৰয়োগ কৰিলেও মিচিঙৰ বাহিৰে অসমত বসবাস কৰা অন্যান্য লোকসকলৰ সৈতে অসমীয়া ভাষাৰে কাম-কাজ চলায়। সেই পৰিৱেশত অসমীয়া ভাষা তেওঁলোকৰ বাবে প্ৰধান সংযোগী ভাষা। অসমীয়া আৰু মিচিং ভাষাৰ উমৈহতীয়া উপাদান মিশ্ৰিত মিচিং কথিত অসমীয়া ভাষা। আনহাতে মিচিং সকলে প্ৰয়োগ কৰা অসমীয়া ভাষাত তেওঁলোকৰ প্ৰথম ভাষাৰ প্ৰভাৱ সকলো ক্ষেত্ৰতে কম-বেছি পৰিমাণে সততে পৰিলক্ষিত হয়। এই ক্ষেত্ৰত ধ্বনিতাত্ত্বিক দিশ বিশেষভাৱে উল্লেখযোগ্য। মিচিং ভাষাৰ নিজস্ব বৈশিষ্ট্য আৰু অসমীয়া ভাষাৰ সংমিশ্ৰণতেই মিচিং কথিত অসমীয়া ভাষা গঢ় লৈ উঠিছে।

০.০১ অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য ঃ

মিচিং কথিত অসমীয়া ভাষাত অসমীয়া আৰু মিচিং উভয় ভাষাৰে কিছুমান সংমিশ্ৰিত ভাষাগত বৈশিষ্ট্য পৰিলক্ষিত হয়। এই আলোচনাত মিচিং কথিত অসমীয়াৰ বিশিষ্ট স্বৰধ্বনি আৰু ব্যঞ্জনধ্বনি, শব্দৰ বিভিন্ন স্থানত এই ধ্বনিসমূহৰ প্ৰয়োগ, মান্যঅসমীয়াৰ লগত উচ্চাৰণৰ ভিন্নতা আদিকে ধৰি বিভিন্ন ধ্বনিতাত্ত্বিক বৈশিষ্ট্যসমূহৰ সামগ্ৰিক আলোচনা আগবঢ়োৱাই বিষয়টোৰ অধ্যয়নৰ মূল উদ্দেশ্য।

০.০২ অধ্যয়নৰ পদ্ধতি ঃ

প্ৰস্তাৱিত গৱেষণা পত্ৰখনিত বিষয়বস্তু আলোচনাৰ বাবে মূলতঃ বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতি অৱলম্বন কৰা হৈছে।

১.০০ মিচিং সকলৰ চমু পৰিচয় ঃ

অসমত বসবাস কৰা বিভিন্ন জনজাতিসমূহৰ ভিতৰত মিচিংসকল জনসংখ্যাৰ ফালৰ পৰা অসমৰ দ্বিতীয় বৃহৎ জনজাতীয় গোট। ২০১১ চনৰ লোকপিয়ল অনুসৰি অসমৰ মিচিং জনসংখ্যা আছিল —৬,৮০,৪২৪ জন। অসমৰ লখিমপুৰ ধেমাজি, শোণিতপুৰ, গোলাঘাট, যোৰহাট, শিৱসাগৰ আদি জিলাত এই জনগোষ্ঠীৰ বসতি দেখিবলৈ পোৱা যায়। মিচিং ভাষা চীন-তিব্বতীয় ভাষা পৰিয়ালৰ তিব্বত-বর্মীয় শাখাৰ উত্তৰ অসম ঠালৰ অন্তর্ভূক্ত এটা উল্লেখযোগ্য ভাষা। মিচিং ভাষাৰ লিপি নাই। ৰোমান লিপিতেই মিচিং ভাষা সম্পর্কীয় পুথি-পাঁজি আদি ৰচিত হ'লেও অসমীয়া লিপিকো এই ক্ষেত্ৰত আগ্ৰাধিকাৰ দিয়া দেখা যায়। মিচিং জনগোষ্ঠীৰ মাজত কেইবাটাও খেল বা ফৈদ আছে। সেইসমূহৰ ভিতৰত চাঃ য়াং, আয়ান, মঃয়িং, দীলু, পাগৰ, দাম্‌বুক, চামুগুৰীয়া, তামাৰ, বংকোৱাল, বিহিয়া, বেবেজিয়া আদি উল্লেখযোগ্য। তাৰ ভিতৰত চামুগুৰীয়া, তামাৰ, বংকোৱাল, বিহিয়া আৰু বেবেজিয়া ফৈদে অসমীয়া ভাষাকে প্ৰথম ভাষা হিচাপে ইতিমধ্যে গ্ৰহণ কৰিছে। অসমীয়া ভাষাত শিক্ষা গ্ৰহণ, দৈনন্দিন জীৱনৰ কাম-কাজ, অথবা আনুষ্ঠানিক সললোবোৰ কাম-কাজত এওঁলোকে অসমীয়া ভাষাকে প্ৰয়োগ কৰে।

২.০০ মিচিং কথিত অসমীয়াৰ ধ্বনিতাত্ত্বিক পৰিচয় ঃ

মিচিংসকলে ব্যৱহাৰিক জীৱনৰ উপযোগীকৈ কথিত ব্যৱহাৰৰ বাবে মিচিং কথিত অসমীয়া ভাষাক অগ্ৰাধিকাৰ দিয়ে। মিচিং কথিত অসমীয়াৰ মান্য অসমীয়াৰ সৈতে উচ্চাৰণগত ভিন্নতা সহজতে কর্ণগোচৰ হয়। অৰ্থাৎ অসমীয়া ভাষা ব্যৱহাৰ কৰিলেও তেওঁলোকৰ উচ্চাৰণত মিচিং ভাষাৰ চীন-তিব্বতীয় উচ্চাৰণগত বৈশিষ্ট্য কিছুমান ধ্বনিৰ মাজত সুস্পষ্ট। মিচিং কথিত অসমীয়াৰ ধ্বনিতত্ত্ব মান্য অসমীয়াৰ সৈতে কেইটামান দিশত সুকীয়া বৈশিষ্ট্যৰে পৰিপূর্ণ। সেইসমূহ তলত আলোচনা কৰা হ'ল—

২.০১ মান্য অসমীয়াৰ আঠোটা বিশিষ্ট স্বৰধ্বনিৰ পৰিবর্তে মিচিং কথিত অসমীয়াত পাঁচটা বিশিষ্ট স্বৰধ্বনি উচ্চাৰিত হয়। উচ্চাৰণৰ স্থান আৰু ধৰণ অনুসৰি মিচিং কথিত অসমীয়াৰ বিশিষ্ট স্বৰধ্বনি কেইটা এনেদৰে তালিকাভূক্ত কৰিব পাৰি—

উচ্চাৰণৰ স্থান	সন্মুখ	কেন্দ্রীয়	পশ্চ
উচ্চৰণৰ ধৰণ			
উচ্চ	ই		উ
উচ্চ-নিম্ন-মধ্য	এ		
নিম্ন-মধ্য			অ
নিম্ন		আ	

২.১.১ শব্দৰ বিভিন্ন স্থানত মিচিং কথিত অসমীয়াৰ বিশিষ্ট স্বৰধ্বনি কেইটাৰ প্ৰয়োগ ঃ

	আদি		মধ্য		অন্ত্য	
	মান্য অস.	মি.ক.অস.	মান্য অস.	মি.ক.অস.	মান্য অস.	মি.ক.অস.
/অ/	শক্তি	অৰ্ক্তি	ৰং	ৰং	ভাদ	বাদ
	শনি	অনি	বগা	বগা	ডাঙৰ	ডাঙ
	সৰু	অৰু	ৰঙা	অঙা	ওখ	অৰু(অৰু অ')
	সকাম	অকাম	নখ	নক	—	—
	অথনি	অতনি	ভৰি	ৰৰি	—	—
/আ/	হাত	আত	মাঘ	মাগ্	জিভা	জিবা
	শালপতি	আলপতি	খুটা	কুন্তা	ধনীয়া	দনিআ
	আইতা	আয়	বাই	বাই	পাংখা	পাংকা
	আঠ	আত	বাগিছা	বাগিচাং	পেঁপা	পেম্পা
/হ/	হিম	ইম	পহিলা	পইলা	চুটি	চুতি
	ইফালে	ইপালে	দীঘল	দগল	ফুতনি	পুতনি
	ঈশ্বৰ	ইচৰ	—	—	ডিঙি	দিঙি
/উ/	উঠা	উতা	ক'লা	কুলা	সৰু	অৰু
	ঊনৈশ	উনৈচ	নোম	নুম	আঁঠু	আতু
	সোনকালে	উনকালে	বুধ	বুঃদ	চকু	চকু
	শুক্ৰ	উকুৰৱেউক্ৰ	টোকোন	তুকুন	পুহ	পু
	ওঁঠ	উত	চুটি	চুতি	বাহু	বাউ
	উৰুকা	উৰুকাং	ফুতনি	পুতনি	বিহু	বিউ
	উৰহী	উৰই	খুটা	কুন্তা	সৰু	অৰু
/এ/	সেউজীয়া	এউজিয়া	কেইবাটা	কেবেতা	সোনকালে	উনকালে
	সেইদিনা	এইদিনা	তেৰ	তেঅ	সমাজে	অমাজে
	এক	এক	জেঠ	জেত	তুৰামাছ	গেৰ্নে

২.১.২ মিচিং কথিত অসমীয়াৰ স্বৰসংযুতি ঃ মিচিং কথিত অসমীয়াত দুটা স্বৰৰ সংযুতি পৰিলক্ষিত হয়। যেনে—

দ্বিস্বৰ ধ্বনি ঃ

আই ঃ

মমাই (ম অ ম আ ই) (মা. অস. মামা)

চিপাই (চ ই প আ ই) (মা. অস. চিপাহী)

মিতাই (ম ই ত আ ই) (মা. অস. মিঠাই)

লাই (ল আ ই)

কাই (ক আ ই)

আউ ঃ

বাউ (ব আ উ) (মা. অস. বাহু)

ইয়া ঃ

দনিয়া (দ অ ন ই আ)

ওউ ঃ

ওউ (ও উ) (ম. অস. ঔ)

২.০২ মান্য অসমীয়াৰ একৈশটা বিশিষ্ট ব্যঞ্জনধ্বনিৰ পৰিৱৰ্তে মিচিং কথিত অসমীয়াত তেৰটা বিশিষ্ট ব্যঞ্জনধ্বনি পোৱা যায়। সেইকেইটা হৈছে —/ক, /গ/, /ঙ /, /চ/, /জ/, /ত/, /দ/, /ন/, /প/,/ব/,/ম/,/ৰ/,/ল/। 'য়' আৰু 'ৰ' শ্ৰুতিধ্বনি হিচাপে পোৱা যায়। উচ্চাৰণৰ স্থান আৰু উচ্চৰণৰ ধৰণ অনুসৰি মিচিং কথিত অসমীয়াৰ বিশিষ্ট ব্যঞ্জনধ্বনিসমূহ তলত তালিকাভূক্ত কৰা হ'ল—

উচ্চাৰণৰ স্থান	দ্বৌষ্ঠ্য		দন্তমূলীয়		তালব্য		পশ্চ-তালব্য	
উচ্চাৰণৰ ধৰণ	অঘোষ	ঘোষ	অঘোষ	ঘোষ	অঘোষ	ঘোষ	অঘোষ	ঘোষ
স্পর্শ	প	ব	ত	দ	ক	গ		
নাসিক্য	ম			ন				ঙ
উষ্ম			চ	জ				
পার্শ্বিক			ল					
কম্পিত				ৰ				

২.২.১ মিচিং কথিত অসমীয়াৰ বিশিষ্ট ব্যঞ্জনধ্বনি সমূহৰ শব্দৰ আদি, মধ্য আৰু অন্ত্য স্থানত প্ৰয়োগ—

	আদি	মধ্য	অন্ত্য
/ক/	কামিচ(কামিজ)	অকম(অসম)	নক(নখ)
/গ/	গাউ (গাৰু)	বগা	জালুগ(জালুক)
/ঙ/		ৰঙা	আদাং (আদা) (আ দ আ ঙ)
/চ/	চৰিয়াং (চৰিয়া)	ইচৰ(ঈশ্বৰ)	গুচ(ঘাচ)
/জ/	জেত(জেঠ)	এউজিআ(সেউজীয়া)	জাহাজ
/ত/	তুকুন(টোকোন)	তেন্তেলি(তেঁতেলী)	বকত(ভকত)
/দ/	দাউৰি(দৌৰি)	বেন্দি (ভেন্দি)	গাদ(গাধ)
/ন/	নক(নখ)	কুন্তা(খুটা)	গইন(গহীন)
/প/	পগা(পঘা)	কাপু(কাপোৰ)	পাপ
/ব/	বাত(ভাত)	জিবা(জিভা)	গুলাব(গোলাপ)
/ম/	মুনাং (মোনা)	জৰিমনাং (জৰিমনা)	অকম (অসম)
/ৰ/	ৰিআ (বিহা)	বৰকি(বৰশী)	দুপৰ(দুপৰীয়া)
/ল/	লকিমি(লখিমী)	বৰলাং (বৰলা)	কলাপুল(কলাফুল)

২.০৩ মিচিং ভাষাত মহাপ্রাণ ধ্বনিৰ প্ৰয়োগ নথকাৰ দৰে মিচিং কথিত অসমীয়া ভাষাটো মহাপ্রাণ ধ্বনি উচ্চাৰিত নহয়। সেয়েহে মান্য অসমীয়াৰ মহাপ্রাণ ধ্বনিবোৰ অল্পপ্রাণ ধ্বনিলৈ পৰিবৰ্তিত হয় । যেনে —

	মান্য অসমীয়া	মিচিং কথিত অসমীয়া
ফ>প	ফুংফাং	পুংপাং (প উ ঙ প আ ঙ)
	ফুটনি	পুতনি (প উ ত অ ন ই)
	ইফাল	ইপাল (ই প আ ল)
ভ>ব	ভাত	বাত (ব আ ত)
	ভৰি	বৰি (ব অ ৰ ই)
	ভালুক	বালুক (ব আ ল উ ক)
	ভোমোৰা	বুমুৰাং (ব উ ম উ ৰ আ ঙ)
ঠ>ত	ঠাই	তাই (ত আ ই)
	পিঠা	পিতাং (প ই ত আ ঙ)
	হঠাৎ	অতাত (অ ত আ ত)
	ঠাৰী	তাৰিঃ (ত আ ৰ ই ঃ)
	জেঠাই	জেতাই (জ এ ত আ ই)
থ>ত	থাপনা	তাপনা (ত আ প অ ন আ)
	তথাপি	ততাপি (ত অ ত আ প ই)
	থাল	তাল (ত আ ল)
	থুতৰী	তুতৰি (ত উ ত অ ৰ ই)
ধ>দ	ধান	দান (দ আ ন)
	ধূলি	দুলি (দ উ ল ই)
	ধীৰে ধীৰে	দিৰে দিৰে (দ ই ৰ এ দ ই ৰ এ)
	বাধা	বাদা (ব আ দ আ)
খ>ক	দুখ	দুক (দ উ ক)
	খগেন	কগেন (ক অ গ এ ন)
	খলিহনা	কলিঅনা (ক ল ই অ ন আ)
	খুটা	কুন্তা (ক উ ন্ ত আ)
	খা	কা (ক আ)
	ওখোন	অকন (অ ক অ ন)
ঘ>গ	বাঘ	বাগ (ব আ গ)
	উঘা	উগা (ব গ আ)
	ঘোচ	গুচ (গ উ চ)
	ঘোঁৰা	গুৰা (গ উ ৰ আ)
	চাংঘৰ	চাংগৰ (চ আ ঙ গ ৰ)

২.০৪ মিচিং কথিত অসমীয়াত মান্য অসমীয়াৰ কণ্ঠনলীয় /হ/ শব্দৰ সকলো স্থানতে (আদি, মধ্য, অন্ত্য) লোপ পায়। অর্থাৎ, মিচিং ভাষাত/হ/ ধ্বনিৰ উচ্চাৰণ নাই। /হ/ ৰ উচ্চাৰণ /অ/, /আ/, /ই/ আদি ধ্বনিলৈ পৰিবৰ্তিত হয়। শব্দৰ আদি স্থানত /হ/ ৰ পৰিবৰ্তন--

মান্য অসমীয়া	মিচিং কথিত অসমীয়া
হালধি	আলদি (আ ল অ দ ই)
হিম	ইম (ই ম)
হিচাব	ইচাপ (ই চ আ প)
হাত	আত (আ ত)
হেঁচা	এচা (এ চ আ)
হুকুম	উকুম (উ ক উ ম)
হুল	উল (উ ল)

শব্দৰ মধ্যস্থানত/হ/ ৰ পৰিবৰ্তন-

মান্য অসমীয়া	মিচিং কথিত অসমীয়া
গহীন	গইন (গ অ ই ন)
ব'হাগ	বআগ (ব অ আ গ)
আহাৰ	আআৰ (আ আ ৰ)
আহিন	আয়িন (আ য় ই ন)

শব্দৰ অন্ত্য স্থানত /হ/ ৰ পৰিবৰ্তন-

মান্য অসমীয়া	মিচিং কথিত অসমীয়া
কেৰাহি	কেৰাই (ক এ ৰ আ ই)
আলহী	আলই (আ ল ই)
চিপাহী	চিপাই (চ ই প আ)
বহী	বই (ব অ ই)
বিহু	বিউ (ব ই উ)
উৰহ	উৰঃ (উ ৰ অ ঃ)

২.০৫ মিচিং কথিত অসমীয়াত উষ্ম বা ঘৃষ্ট ধ্বনিৰ (শ, ষ, স) উচ্চাৰণৰ ক্ষেত্রতো মহাপ্রাণতা সমূলি উচ্চাৰিত নহয়। তদ্ভৱ শব্দৰ ক্ষেত্রত আৰু একাকী প্রয়োগত ই /ক/ হয় আৰু যুক্তাক্ষৰ বা তৎসম শব্দত কেতিয়াবা ই /ছ/ হয়।

শ, ষ, স > ক

মান্য অসমীয়া	মিচিং কথিত অসমীয়া
আশা	আকা (আ ক আ)
নিশা	নিকা (ন ই ক আ)
অসম	অকম (অ ক অ ম)
তুলসী	তুলকি (ত উ ল অ ক ই)
ভাষা	ভাকা (ভ আ ক আ)

শ>ছ

মান্য অসমীয়া	মিচিং কথিত অসমীয়া
আকাশ	আকাছ
শেষ	ছেছ

মিচিং কথিত অসমীয়াত /স /, /শ/ কেতিয়াবা /অ/, /উ/, /আ/, /এ/ ৰূপেও উচ্চাৰিত হোৱা দেখা যায়।

মান্য অসমীয়া	মিচিং কথিত অসমীয়া
সদায়	অদায়
সপ্তাহ	অপতাং
সখি	অকি
সৰু	অৰু
সোম	উম
সোনকালে	উনকালে
সেউজীয়া	এউজিয়া
শনি	অনি
শাওন	আউন

২.০৬ অসমীয়া ভাষাৰ শব্দৰ শেষত থকা অঘোষ ধ্বনি কেতিয়াবা মিচিং কথিত অসমীয়াত ঘোষ ধ্বনিলৈ পৰিবর্তিত হোৱা দেখা যায়। যেনে-

মান্য অসমীয়া	মিচিং কথিত অসমীয়া
জালুক	জালুগ্ (জ আ ল উ গ্)
তাৰিখ	তাৰিগ্ (ত আ ৰ ই গ্)

২.০৭ মিচিং কথিত অসমীয়া ভাষাত সংযুক্ত ধ্বনিৰ উচ্চাৰণ নহয়। সেয়েহে মিচিং কথিত অসমীয়াত মান্য অসমীয়াৰ সংযুক্ত ধ্বনিবোৰৰ মাজত স্বৰধ্বনি সুমুৱাই সৰলীকৃত ৰূপত উচ্চাৰণ কৰা দেখা যায়। যেনে-

মান্য অসমীয়া	মিচিং কথিত অসমীয়া
সংক্রান্তি	অংকাৰানতি (অ ঙ ক আ ৰ আ ন ত ই)
মন্ত্রী	মনতিৰি (ম অ ন ত ই ৰ ই)
মন্ত্র	মন্তৰং (ম অ ন্ ত অ ৰ ঙ)

২.০৮ মিচিং কথিত অসমীয়াত দন্তমূলীয় অঘোষ অল্পপ্রাণ /চ/ আৰু দন্তমূলীয় সঘোষ মহাপ্রাণ /ঝ/ ধ্বনিৰ উচ্চাৰণ নাই। শব্দৰ অন্ত্য স্থানত /জ/ ৰ ব্যৱহাৰ নহয়। সেয়েহে অন্ত্য অৱস্থানত থকা /জ/ ধ্বনি /ছ/ হিচাপে উচ্চাৰিত হয়-

মান্য অসমীয়া	মিচিং কথিত অসমীয়া
তেজ	তেছ
বেজ	বেছ
কাজ	কাছ
পিয়াঁজ	পিয়াছ
নেজ	নেছ
লাজ	লাছ

২.০৯ মিচিং কথিত অসমীয়াত অনুনাসিক্যৰ বিশিষ্ট মর্যাদা ৰক্ষিত হৈছে। মিচিং কথিত অসমীয়াত মান্য

অসমীয়াৰ অনুনাসিক ধ্বনি বিশিষ্ট ধ্বনি উচ্চাৰণ কঁৰোতে নাসিক্য ব্যঞ্জনৰ সহায় লোৱা হয়। মিচিং ভাষাত যিহেতু নাসিক্য ধ্বনি হিচাপে /ম/, /ন/, /ঙ/, ৰ লগতে /ঞ/ ধ্বনিকো ধৰা হয়। সেয়ে মিচিং কথিত অসমীয়াতো মান্য অসমীয়াৰ অনুনাসিক ধ্বনিবিশিষ্ট শব্দবোৰ উচ্চাৰণ কঁৰোতে নাসিক্য ব্যঞ্জন /ম/, /ন/, /ঙ/ ৰ লগতে /ঞ/ ধ্বনিৰ সহায় লোৱা হয়—

মান্য অসমীয়া	**মিচিং কথিত অসমীয়া**
পেঁপা	পেম্পা (প এ ম্ প আ)
আঁঠুৰা	আন্তুৰাং (আ ন্ ত উ ৰ আ ঙ)
কঁও	কং (ক অ ঙ)
যাঁও	যাং (য আ ঙ)
হাঁহি	আঞি (আ ঞ ই)
তেঁতেলী	তেন্তেলি (ত এ ন ত এ ল ই)
তিয়ঁহ	তিয়ং (ত ই য় ঙ)

২.১০ মিচিং কথিত অসমীয়াত স্বতঃনাসিক্যভৱন পৰিলক্ষিত হয়। কেতিয়াবা মান্য অসমীয়া ভাষাৰ শব্দত অনুনাসিকতা নথকা সত্বেও মিচিং কথিত অসমীয়াত নাসিক্য ব্যঞ্জনৰ আগম ঘটে-

মান্য অসমীয়া	**মিচিং কথিত অসমীয়া**
কপাল	কম্পাল
ঘটি	গন্তি
খুটা	কুন্তা

২.১১ মান্য অসমীয়াৰ দুটা অক্ষৰযুক্ত শব্দৰ পিছত /অ/, /আ/ থাকিলে আৰু তিনিটা বা অধিক অক্ষৰযুক্ত শব্দৰ শেষত /আ/ থাকিলে মিচিং কথিত অসমীয়াত অনুস্বাৰ ধ্বনি প্ৰয়োগ কৰি শব্দৰ উচ্চাৰণ কৰা হয়-

মান্য অসমীয়া	মিচিং কথিত অসমীয়া
পাৰ	পাৰং (প আ ৰ অ ঙ)
আদা	আদাং (আ দ আ ঙ)
জেউৰা	জেউৰাং (জ এ উ ৰ আ ঙ)
অমৰা	অমৰাং
গৰখীয়া	গৰকিয়াং
চৰিয়া	চৰিয়াং
মেতেকা	মেতেকাং
খাজনা	কাজনাং
পচলা	পচলাং
মকৰা	মকৰাং
ৰৰটোকোলা	ৰৰতুকুলাং

২.১২ 'ঢ়', 'ক্ষ', 'ঋ', 'হ্ম' আদি আখৰ অথবা সংযুক্ত আখৰ যুক্ত শব্দ মিচিং কথিত অসমীয়াত সৰলীকৃত ৰূপত উচ্চাৰিত হয় আৰু কিছু উচ্চাৰণ বিকৃতি ঘটা দেখা যায়। যেনে-

মান্য অসমীয়া	**মিচিং কথিত অসমীয়া**
পঢ়	পৰ
বুঢ়া	বুৰা
ঋষি	ৰিছি
ঋণ	ৰিণ
শিক্ষা	ইক্খা
ভিক্ষা	ভিক্খা
ব্রহ্মা	বৰ্মা

২.১৩ মিচিং কথিত অসমীয়াত একাক্ষৰিক শব্দৰ আদ্যাক্ষৰত আৰু বহু আক্ষৰিক শব্দৰ অন্ত্যাক্ষৰত স্বৰৰ দীৰ্ঘতা পৰিলক্ষিত হয়—

মান্য অসমীয়া	**মিচিং কথিত অসমীয়া**
হাল	আঃল
ৰাতি	আতিঃ
টোকাৰী	তুকাৰিঃ
লখিমী	লকিমিঃ

২.১৪ মান্য অসমীয়াৰ পদান্ত /হ/ ব্যঞ্জন মিচিং কথিত অসমীয়াত লোপ পোৱা দেখা যায়-

মান্য অসমীয়া	**মিচিং কথিত অসমীয়া**
মানুহ	মানু
মাহ	মা
চাহ	চা
বহ	ব (ব অ)

২.১৫ মিচিং সকলৰ কথিত অসমীয়া ভাষাত কেতিয়াবা মান্য অসমীয়া ভাষাত থকা দুটাতকৈ অধিক অক্ষৰযুক্ত শব্দ কিছুমান দ্বি অক্ষৰযুক্ত শব্দলৈ পৰিবৰ্তন হয়।

মান্য অসমীয়া	**মিচিং কথিত অসমীয়া**
থুৰিয়া	তুৰি

২.১৬ মান্য অসমীয়াৰ 'আই'/ 'ঐ' আৰু 'অউ'/ 'ঔ' ৰ পৰিবৰ্তে মিচিং কথিত অসমীয়াত যথাক্ৰমে 'এ' আৰু 'ও' ৰ ব্যৱহাৰ দেখা যায় —

মান্য অসমীয়া	**মিচিং কথিত অসমীয়া**
জাকৈ	জাকে
ৰৌ	ৰো

যাবলৈ	যাবলে
বৌৱেক	বোৱেক

৩.০০ উপসংহাৰ ঃ

প্ৰত্যেক ভাষাৰে ধ্বনিতত্ত্বৰ নিজস্ব কিছুমান বৈশিষ্ট্য থকাৰ দৰে মিচিংসকলৰ কথিত অসমীয়া ভাষাৰ ধ্বনিতত্ত্বৰো নিজস্ব বৈশিষ্ট্য আছে। মিচিং ভাষাৰ নিজস্ব বৈশিষ্ট্য আৰু অসমীয়া ভাষাৰ সংমিশ্ৰণত গঢ় লৈ উঠা বাবে মিচিং কথিত অসমীয়া দুয়োটা ভাষাৰ সংমিশ্ৰিত ৰূপ। নিকটবৰ্ত্তী ভাষাৰ দ্বাৰা প্ৰভাৱান্বিত হোৱাৰ ফলত প্ৰভাৱশালী ভাষাটোৰ বৈশিষ্ট্য অধিক ক্ষেত্ৰত পৰিলক্ষিত হয়। সেইফালৰ পৰা অসমীয়া ভাষা মিচিং ভাষাৰ নিকটবৰ্ত্তী প্ৰভাৱশালী ভাষা। সেইবাবেই মিচিং কথিত অসমীয়া ভাষাত অসমীয়া ভাষাৰ প্ৰভাৱ অধিক দেখা যায়। কাৰণ আনুষ্ঠানিক-অনানুষ্ঠানিক অধিক ক্ষেত্ৰত মিচিংসকলে অসমীয়া ভাষাকে মুখ্য স্থান প্ৰদান কৰে। সামগ্ৰিক ভাৱে মিচিং কথিত অসমীয়াত অসমীয়া ভাষাৰ প্ৰভাৱ থকাৰ দৰে ইয়াৰ ধ্বনিতাত্ত্বিক দিশতো সেই প্ৰভাৱ সহজতে দেখা যায়। অৱশ্যে দুয়োটা ভাষাৰে প্ৰভাৱ কম-বেছি পৰিমাণে থকা মিচিং কথিত অসমীয়াৰ ধ্বনিতত্ত্ব একপ্ৰকাৰ সংমিশ্ৰিত বৈশিষ্ট্যযুক্ত ৰূপ। ❑

সহায়ক গ্ৰন্থপঞ্জীঃ

অসমীয়া

বৰুৱা, ভীমকান্ত। অসমৰ ভাষা, বনলতা, ডিব্ৰুগড়, পঞ্চম সংস্কৰণ, ২০১০।

ভৰালী, বিভা আৰু বনানী চক্ৰৱৰ্তী। সম্পা. অসমৰ ভাষা। বনলতা, গুৱাহাটী, ২০১৩।

ভট্টাচার্য, প্রমোদচন্দ্র। অসমৰ জনজাতি। লয়ার্ছ বুক ষ্টল, গুৱাহাটী, ১৯৯৭।

ভূঞা, নয়নমণি। ভাষা আহৰণ। পূর্বায়ন প্রকাশন, গুৱাহাটী, ২০১৮।

দাস, বিশ্বজিৎ আৰু ফুকনচন্দ্র বসুমতাৰী (সম্পা.)। অসমীয়া আৰু অসমৰ ভাষা, আঁক্ বাক্ প্রকাশন,সংশোধিত দ্বিতীয় প্রকাশ, ছেপ্তেম্বৰ, ২০১৪।

দাস, বিশ্বজিৎ। সমাজ ভাষাবিজ্ঞান। বুকচ্ এণ্ড বিয়ণ্ড, নগাঁও, ২০১৫।

দুৱৰা, সপোন। ভাষা শিক্ষণৰ নতুন দিগন্ত। গুৱাহাটী, ২০০৪।

ৰাভা হাকাচাম, উপেন। অসমীয়া আৰু অসমৰ ভাষা-উপভাষা। জ্যোতি প্রকাশন। গুৱাহাটী, দ্বিতীয় পৰিবর্ধিত সংস্কৰণ, ২০১৪।

ইংৰাজী

Needham, J.F. : Outline Grammar of The Shiyang Miri Language. Assam Secretarit Press. Shillong. 1886

অপ্রকাশিত গৱেষণা গ্ৰন্থ ঃ

গগৈ, কাকলি ঃ ব্রহ্মপুত্র উপত্যকাৰ নৃগোষ্ঠীয় উপভাষা বনাম দ্বিপার্শ্বিকতা এক সমাজ ভাষাতাত্ত্বিক অধ্যয়ন, গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়, ২০১৩।

শইকীয়া, উৎপল ঃ মিচিংসকলৰ কথিত অসমীয়া ভাষা ঃএক সমাজভাষাবৈজ্ঞানিক অধ্যয়ন,গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়, ২০১৪।

তথ্যদাতা ঃ বিৱেন দলে, চাৰিঘৰীয়া গাঁও, ১নং খকণ্ডগুৰি, গোলাঘাট। কমলাৱতী পেগু, টায়ুং গাঁও, বাঁহগুৰি, গোলাঘাট। গণেশ পেগু, কুমলীয়া চাপৰি, দেৱগাঁও। বিনীতা পেগু, বালিজান আদর্শ মিচিং গাঁও,আমটেঙা, গোলাঘাট। চার্কি বৰুৱা দলে, পলাশগুৰি, ধনশিৰিমুখ। ভৱেশ কার্দং, সাপেখাতী, ধনশিৰিমুখ। পৰাণজ্যোতি দলে, কলবাৰী কেন্দ্র, যোৱহাট। জগনাথ দলে, বাঁহফলা, যোৱহাট আদিকে ধৰি কেইবাজনো ব্যক্তিয়ে তথ্য সংগ্রহৰ ক্ষেত্রত সহায়-সহযোগিতা আগবঢ়াইছে।

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

প্রবন্ধ

মহিম বৰাৰ চুটিগল্পত পৰিৱেশ চিত্ৰণৰ ভূমিকা ঃ এটি অৱলোকন

চিক্‌মি বৰা
গৱেষক, অসমীয়া বিভাগ
গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়, গুৱাহাটী-১৪
৮৭৫২০৪২৩০৭
sikmiborah81354@gmail.com

ড° প্ৰফুল্ল কুমাৰ নাথ
অধ্যাপক, অসমীয়া বিভাগ
গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়
৮৬৩৮১৭৯২২৯
pkn@gauhati.ac.in

সংক্ষিপ্তসাৰ ঃ

অসমীয়া সাহিত্যত চুটিগল্পই এখন বিশেষ আসন দখল কৰি আছে। সমাজজীৱন তথা ব্যক্তিজীৱনক বিচাৰ কৰি চোৱা, সাহিত্যিকৰ মনৰ অনুভূতি, জীৱনৰ অভিজ্ঞতা, সাহিত্যিক দক্ষতা আদি বিভিন্ন দিশৰ সংযোগৰ ফলত চুটিগল্পৰ জন্ম। অসমীয়া চুটিগল্পৰ এজন আগশাৰীৰ গল্পকাৰ হ'ল মহিম বৰা। ৰামধেনু যুগৰ বিশিষ্ট গল্পকাৰসকলৰ অন্যতম হ'ল বৰা। তেওঁৰ গল্পৰ এক সুকীয়া সোৱাদ আছে। একেবাৰে সহজ-সৰল উপস্থাপনেৰে তেওঁ গল্পসমূহত সমসাময়িক সমাজখনৰ প্ৰতিটো দিশকে পাঠকৰ আগত দাঙি ধৰিছে। তেওঁৰ গল্পসমূহ প্ৰধানতঃ গ্ৰামীণ জীৱনৰ আধাৰত ৰচিত। বিংশ শতিকাৰ চল্লিশ-পঞ্চাশৰ সময়খিনি অসমবাসীৰ কাৰণে অতিকে কঠিন সময় আছিল। দ্বিতীয় বিশ্বযুদ্ধ আৰু স্বাধীনতা সংগ্ৰামৰ ফলত সহজ-সৰল গাঁৱলীয়া মানুহবোৰৰ জীৱনত জটিলতাই দেখা দিলে। মানুহৰ জীৱনলৈ অহা এই পৰিৱৰ্তনবোৰ, সুখ-দুখ, অন্যায়-অবিচাৰবোৰক মহিম বৰাই গল্পৰ মাজেৰে ফুটায় তুলিবলৈ যত্ন কৰিলে। এই বিচিত্ৰ জীৱনক বাস্তৱ ৰূপ দিবলৈ যাওতে বৰাই পৰিৱেশ চিত্ৰণৰ ওপৰত বেছি গুৰুত্ব দিছে। সাধাৰণ পাঠকে যাতে পঢ়ি যোৱাৰ লগে লগে নিজক সেই পৰিৱেশৰ মাজত বিচাৰি পাই সেই দিশৰ ওপৰত মহিম বৰাৰ সচেতনতা দেখা যায় চুটিগল্পৰ প্ৰকাশভংগীৰ মাজেৰে। পৰিৱেশ চিত্ৰণ চুটিগল্পৰ ৰচনা-ৰীতিৰ এটা অন্যতম ভাগ। কাহিনী আৰু চৰিত্ৰক সাৰ্থক ৰূপত চিত্ৰিত কৰাত পৰিৱেশৰ প্ৰভাৱ যথেষ্ট থাকে। মহিম বৰাই পৰিৱেশ সৃষ্টিৰ জৰিয়তে তেওঁৰ গল্পসমূহত মানৱ জীৱনৰ বিভিন্ন ঘটনাক কেনেদৰে বাস্তৱ ৰূপ দিব পাৰিছে আৰু পৰিৱেশ চিত্ৰণে তেওঁৰ গল্পক কেনেদৰে কলাত্মকৰূপ প্ৰদান কৰি ছে সেয়া বিচাৰ-বিশ্লেষণ কৰি চোৱাই এই আলোচনাৰ প্ৰধান উদ্দেশ্য।

বীজশব্দ ঃ মহিম বৰা, চুটিগল্প, ৰচনাৰীতি, পৰিৱেশ চিত্ৰণ।

০.০ অৱতৰণিকা ঃ

সাহিত্যত পৰিৱেশ নিৰ্মাণ এটা উল্লেখযোগ্য উপাদান। বাস্তৱেই হওক বা কাল্পনিকেই হওক কোনো এটা ঘটনা বা কাহিনীক কেন্দ্ৰ কৰি যেতিয়া সাহিত্য সৃষ্টি কৰিবলৈ লোৱা হয় তেতিয়া পৰিৱেশৰ কথাটো আহি পৰে। পৰিৱেশ সৃষ্টিয়ে কাহিনী নিৰ্মাণৰ সময় আৰু ভৌগোলিক অৱস্থাক দাঙি ধৰে। "প্ৰত্যেক লেখকৰে এক সুকীয়া

'ষ্টাইল' থাকে। ইয়াৰ অর্থ হ'ল- লিখাৰ ধৰণ, লিখাৰ পদ্ধতি, ৰচনা-ৰীতি, ৰচনাশৈলী ইত্যাদি।"[১] চুটিগল্পৰ ক্ষেত্রখনলৈ চালেও দেখা যায় যে গল্পকাৰভেদে উপস্থাপনশৈলী বা ৰচনাশৈলী বেলেগ হয়। আনকি একেজন গল্পকাৰৰে গল্পবোৰৰ উপস্থাপনশৈলীৰ ক্ষেত্রত বৃহৎ প্রার্থক্য দেখা যায়। সেয়ে চুটিগল্পৰ ৰচনাশৈলীক কাহিনী প্রধান, পৰিৱেশ প্রধান আৰু চৰিত্র প্রধান এই তিনিটা ৰচনা-ৰীতিত ভাগ কৰিছে। এই তিনিওটা ৰচনা-ৰীতিক বেলেগ বেলেগ ভাগ হিচাপে দেখুৱাইছে যদিও ইহঁত ইটো সিটোৰ পৰিপূৰক। এটা গল্প ৰচনা কৰোতে তিনিওটা ৰীতি সাঙোৰ খাই থাকে। কেতিয়াবা ইয়াৰ কোনো এটা ৰীতিক গল্পকাৰসকলে বেছি গুৰুত্ব দিয়ে আৰু তেতিয়া সি সেই হিচাপে প্রাধান্য পায়। উদাহৰণস্বৰূপে, কেতিয়াবা পৰিৱেশ নির্মাণৰ ওপৰত ভিত্তি কৰি চৰিত্র আৰু কাহিনী অগবঢ়াই নিয়া হয়; তেতিয়া সি পৰিৱেশ প্রধান হৈ পৰে। পৰিৱেশ নির্মাণত স্থান আৰু কালক বিশেষ প্রাধান্য দিয়া হয়। "পৰিৱেশ প্লট আৰু চৰিত্রৰ পৰস্পৰ সহায়ক আৰু বহু ক্ষেত্রত পৰিপূৰক। গল্পত প্লট এটা সৃষ্টি কৰিবলৈ হ'লে স্থান আৰু কালৰ আগতীয়া ধাৰণাৰ প্রয়োজন আৰু এই ধাৰণা পাঠককো দিয়া দর্কাৰ।"[২] কিন্তু সকলো সময়তে পৰিৱেশ নির্মাণত কেৱল যে স্থান আৰু কালকেই মূল আহিলা হিচাপে গ্রহণ কৰে তেনে নহয়; কেতিয়াবা কোনো সমস্যাক বা চৰিত্রৰ মানসিক অৱস্থাক উত্থাপন কৰিবৰ কাৰণেও গল্পকাৰে পৰিৱেশ নির্মাণত গুৰুত্ব দিয়া দেখা যায়। এনে কৰাৰ ফলত কাহিনী আৰু চৰিত্রই বাস্তৱ ৰূপত পাঠকৰ আগত প্রতিফলিত হোৱাত সফল হয়। এই ক্ষেত্রত উদয় দত্তই মন্তব্য দিছে এনেদৰে- "পৰিৱেশৰ বর্ণনাই গল্পৰ কাহিনী বা চৰিত্রক বিশ্বাসযোগ্য বা বাস্তৱ ৰূপত দাঙি ধৰাত সহায় কৰে।"[৩] চুটিগল্পক সার্থক ৰূপ প্রদান কৰাত পৰিৱেশক হেম বৰাই বিশেষ গুৰুত্ব দিছে, তেওঁৰ মতে- "লেখকৰ বর্ণনা শক্তি বা পৰিৱেশ-পৰিস্থিতি সাৱলীলভাৱে দাঙি ধৰাৰ ক্ষমতাই গল্পক প্রাণ দান কৰে।"[৪] চুটিগল্প হৈছে ক্ষুদ্র সাহিত্য, গতিকে কম কথাৰ ভিতৰত সমাজৰ বাস্তৱ ছবি এখন পাঠকৰ আগত দাঙি ধৰিবলৈ পৰিৱেশ নির্মাণৰ প্রয়োজনীয়তা চুটিগল্পত যথেষ্ট। চৰিত্রৰ কার্যকলাপ, ভাষা, ৰাজনৈতিক, অর্থনৈতিক সমস্যা, সামাজিক-সাংস্কৃতিক দিশ, পাৰিবাৰিক জীৱন, প্রাকৃতিক পৰিৱেশৰ বর্ণনাৰ জৰিয়তে গল্পকাৰসকলে পৰিৱেশ একোটা নির্মাণ কৰে। চুটিগল্পতপৰিৱেশ সৃষ্টিৰ অন্তৰালত কেইবাটাও উপাদান জড়িত হৈ থাকে। সেইকেইটা হ'ল- (ক) ভাষাৰ ব্যৱহাৰ, (খ) ভৌগোলিক পৰিৱেশ আৰু সাংস্কৃতিক উ পাদান, (গ) ইংগিতময়তা, (ঘ) নাটকীয়তা, (ঙ) পটভূমিকেন্দ্রিক চৰিত্রৰ বাস্তৱ ৰূপায়ন।

ভাষা পৰিৱেশ সৃষ্টিৰ অন্যতম প্রধান উপাদান। সাহিত্যত এটা জাতিৰ পৰিচয় পোৱা যায় চৰিত্রৰ মুখৰ ভাষাৰ জৰিয়তে। ভাষাৰ লগত আঞ্চলিকতাৰ কথাটোও জড়িত হৈ থাকে। একে জাতিৰ হ'লেও অঞ্চলভেদে মানুহৰ কথা কোৱাৰ ধৰণ বেলেগ হয়। গতিকে ভাষাই পৰিৱেশ এটাক বাস্তৱ ৰূপ দিয়াত যথেষ্ট অৰিহণা যোগায়। আনহাতে ভৌগোলিক পৰিৱেশৰ ওপৰতে নির্ভৰ কৰি সংস্কৃতি গঢ় লৈ উঠে। "অসমৰ ভৌগোলিক অৱস্থিতি আৰু পৰিৱেশে ইয়াৰ সংস্কৃতিৰো গঢ় দিছে।"[৫] ভৌগেলিক অৱস্থিতি অনুযায়ী অসমৰ মানুহৰ প্রধান জীৱিকা কৃষিকর্ম। গতিকে তেওঁলোকৰ উৎসৱ-পার্বন, থকা-মেলা, খোৱা-বোৱা, ৰীতি-নীতি সকলো দিশে চহা জীৱনক প্রতিফলিত কৰে আৰু ইয়াৰ মাজেদিয়েই অসমীয়া সাংস্কৃতিক জীৱনৰো প্রতিফলন হয়। চুটিগল্পত পৰিৱেশ সৃষ্টিত অৰিহনা যোগোৱা অন্য এটা উপাদান হ'ল ইংগিতময়ী উপস্থাপন ৰীতি। সকলো কথা পোনপটীয়াকৈ ক'লে গল্পকাৰে বুজাবলৈ বিচৰা বিষয়টোৰ গূঢ়ার্থ পাঠকে বুজি নাপাব, সেয়ে প্রতীক, উপমা, শ্লেষ আদিৰ জৰিয়তে ইংগিতার্থকভাৱে এটা পৰিৱেশৰ সৃষ্টি কৰে। ই বিষয়বস্তুক সাহিত্যিক ৰূপ প্রদান কৰি প্রকাশভংগী আকর্ষণীয় কৰি তোলে। চুটিগল্পত সংলাপৰ পৰিমান কম হ'লেও কেতিয়াবা কিছুমান চুটিগল্পত সংলাপৰ পয়োভৰ দেখা যায়। চুটি চুটি বাক্যৰে চৰিত্রৰ কথোপকথনৰ দৃশ্যই নাটকীয় পৰিৱেশ এটা চিত্রিত কৰে। কেতিয়াবা আকৌ চৰিত্র এটাৰ সামাজিক স্থিতি আৰু মানসিক অৱস্থাক প্রতিফলিত কৰিবলৈও পৰিৱেশৰ সৃষ্টি কৰে। যিহেতু শব্দৰ মাধ্যমেৰেই চৰিত্রৰ মনোজগতত ক্রিয়া কৰি থকা অৱস্থাক পাঠকক বোধগম্য কৰাব লাগে। গতিকে পৰিৱেশ সৃষ্টিৰ জৰিয়তে চুটিগল্প এটাত এখন সমাজৰ সামগ্রিক স্বৰূপ বিচাৰি পোৱা যায়।

এনেদৰে বিচাৰ কৰি চোৱাৰ পিছত চুটিগল্পত পৰিৱেশ চিত্রণৰ প্রয়োজনীয়তাক কেইটামান ভাগত বিভক্ত কৰি দেখুৱাব পাৰো। সেইবোৰ হ'ল- (ক) বিষয়বস্তুৰ গঠনপ্রণালী, (খ) কাহিনীৰ ৰচনাশৈলীৰ নির্মাণ, (গ) চৰিত্রৰ ভাৱপ্রৱনতাৰ বহিঃপ্রকাশ, (ঘ) চিত্রধর্মী ৰূপত উপস্থাপন,

(ঙ) কাহিনীৰ গতিশীলতা উন্নত হোৱাত সহায় কৰে।

চুটিগল্পৰ বিষয়বস্তু, প্ৰকাশভংগী বিভিন্ন ৰূপ আদি সকলোবোৰ বিচাৰ কৰি পৰিৱেশ চিত্ৰণক দুটা ভাগত প্ৰধানকৈ ভগাব পাৰি- (ৰ) প্ৰাকৃতিক পৰিৱেশৰ চিত্ৰণ আৰু (চ) সামাজিক পৰিৱেশৰ চিত্ৰণ। এই দুটা ভাগৰ ওপৰতে ভিত্তি কৰি মহিম বৰাৰ গল্পত পৰিৱেশ চিত্ৰণৰ বিষয়ে আলোচনা কৰিব পাৰি।

০.১ আলোচনাৰ উদ্দেশ্য ঃ

ৰামধেনু যুগৰ গল্পকাৰসকলৰ ভিতৰত মহিম বৰাৰ চুটিগল্পসমূহৰ এক বিশেষ মূল্য আছে। তেওঁৰ উপস্থাপনশৈলী, কথনভংগী, ব্যক্তি জীৱন বিশ্লেষণৰ যি দক্ষতা সি অতি আকৰ্ষণীয় আৰু বাস্তৱধৰ্মী। চৰিত্ৰ, পটভূমি, কাহিনী, জীৱনৰ সংঘাট, সামাজিক দিশ আদি আটাইবোৰ দিশৰ সংমিশ্ৰণেৰে তেওঁৰ গল্পসমূহ পৰিপূৰক। মহিম বৰাৰ গল্পৰ বিভিন্ন দিশবোৰৰ ভিতৰত এটা প্ৰধান বৈশিষ্ট্য হ'ল পৰিৱেশ চিত্ৰণ। সামাজিক পৰিৱৰ্তন, সাংস্কৃতিক দিশ, প্ৰকৃতিৰ সৈতে মানুহৰ সহাৱস্থান, প্ৰতীকাত্মক বাক্যৰ প্ৰয়োগ, চৰিত্ৰৰ মানসিক স্থিতি আদি দিশবোৰক বুজাবলৈ বৰাই পৰিৱেশৰ ওপৰত নিৰ্ভৰ কৰিছে। গতিকে মহিম বৰাৰ চুটিগল্পসমূহত পৰিৱেশে কিদৰে প্ৰভাৱ পেলাইছে সেই বিষয়ে বিচাৰ কৰি ছোৱাৰ উদ্দেশ্যে এই আলোচনা পত্ৰ তৈয়াৰ কৰা হৈছে।

০.২ আলোচনাৰ পৰিসৰ ঃ

মহিম বৰাৰ বেছিভাগ চুটিগল্পই পৰিৱেশ প্ৰধান চুটিগল্প। বিষয়বস্তুৰ প্ৰকাশভংগী অনুসৰি বৰাৰ পৰিৱেশক গ্ৰাম্য, প্ৰাকৃতিক, পাৰিবাৰিক, প্ৰতীকাত্মক, পৰিৱৰ্তনশীল সামাজিক পৰিৱেশ আদি বিভিন্ন ভাগ কৰি বিশ্লেষণ কৰিব পাৰি। কিন্তু আলোচনা পত্ৰৰ সীমাবদ্ধতাৰ প্ৰতি লক্ষ্য ৰাখি প্ৰতিটো ভাগকে দুটাকৈ গল্পৰ আধাৰতহে আলোচনা কৰা হ'ব।

০.৩ আলোচনাৰ পদ্ধতি ঃ

প্ৰস্তাৱিত আলোচনা পত্ৰখন মূলতঃ বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতিৰে কৰা হ'ব। বিষয়ৰ উপস্থাপনৰ ক্ষেত্ৰত বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতিৰ লগতে বৰ্ণনাত্মক পদ্ধতিৰো ব্যৱহাৰ কৰা হ'ব।

১.০ মূল বিষয়ৰ আলোচনা ঃ

অসমীয়া সমাজজীৱনৰ এক সন্ধিক্ষণত মহিম বৰাৰ সাহিত্য প্ৰতিভা বিকশিত হৈছিল। ১৯২৪ চনত জন্মলাভ কৰা বৰাই ডেকা বয়স পাৰ কৰিছিল সমাজৰ ৰাজনৈতিক - অৰ্থনৈতিক উত্থান-পতনৰ মাজেৰে। সেয়ে সৰুৰে পৰা গাঁৱলীয়া পৰিৱেশত বাস কৰা বৰাৰ গল্পত গ্ৰাম্য পৰিৱেশে যিদৰে প্ৰাধান্য পাইছে ঠিক তেনেদৰে যুদ্ধ আৰু আন্দোলনৰ কাৰণে অসমৰ পটভূমিত দেখা দিয়া সমস্যাবোৰ আৰু এই সমস্যাই ব্যক্তিজীৱনত কেনে প্ৰভাৱ পেলাইছিল এই দিশবোৰেও মুখ্য ভূমিকা গ্ৰহণ কৰিছে। মহিম বৰাৰ চুটিগল্পৰ ৰচনাশৈলী বিচাৰি কৰিলে দেখো যে তেওঁ পৰিৱেশ চিত্ৰণত বেছি মনযোগ দিছে। তেওঁ একোটা বাতাৱৰণ সৃষ্টি কৰি বিষয়বস্তুৰ তাৎপর্য আৰু চৰিত্ৰৰ মানসিক স্থিতি বুজাবলৈ যত্ন কৰে। য়েয়ে তেওঁ শ্ৰেষ্ঠ গল্প কিছুমানত কাহিনী আৰু চৰিত্ৰ নিষ্প্ৰভ হৈ ৰৈ যায়। হীৰেন গোঁহাই মন্তব্য দিছে- "কাহিনী প্ৰধান গল্পৰ তুলনাত বৰাৰ এই গল্পবোৰে সুক্ষ্মতৰ বাতাৱৰণৰ সৃষ্টি কৰে।"[৬]

মহিম বৰায়ো এই ক্ষেত্ৰত নিজৰ মত প্ৰকাশ কৰিছে- "কাহিনী-ঘটনাতকৈ atmosphere, এটা বা-বতাহ সৃষ্টি কৰাত যত্ন লৈছিলো কেইবাটাও গল্পত।"[৭]

এই বাতাৱৰণবোৰৰ সৃষ্টিয়ে পৰিৱেশ এটাক জীৱন্ত ৰূপ দিছিল। মহিম বৰাৰ গল্পৰ এই প্ৰধান বৈশিষ্ট্যক উপস্থাপনশৈলীৰ আধাৰত কেইবাটাও ভাগত ভগাই তলত দিয়া ধৰণে ভাগ কৰি বিচাৰ কৰা হ'ল-

১.১ গ্ৰাম্য পৰিৱেশ ঃ

মহিম বৰা যিহেতু স্বৰাজোত্তৰকালৰ গল্পকাৰ গতিকে তেওঁৰ গল্পত স্বাধীনতাৰ আগৰ আৰু পিছৰ দুয়োখন সমাজেই প্ৰতিফলিত হৈছে। বৰাই বিশেষকৈ গ্ৰাম্য জীৱনক কেন্দ্ৰ কৰিয়েই গল্পবোৰ ৰচনা কৰিছে। এই সম্পৰ্কে যোগেশ দাসে কৈছে- "নগৰীয়া জীৱনতকৈ গাঁও অঞ্চল আৰু আধা নগৰ আধা গাঁও ধৰণৰ পটভূমিত তেওঁৰ প্ৰায়বিলাক প্লট স্থাপিত। খুব সম্ভৱ যিবিলাক মানুহৰ মাজত তেওঁ বিচৰণ কৰি আহিছে, যি যি পৰিৱেশ তেওঁ সহজে পাই আহিছে, সেইবিলাকৰ অৰ্থপূৰ্ণ চিত্ৰ ফুটাই তোলাত তেওঁ সিদ্ধহস্ত- - সেয়ে গল্পকাৰ ৰূপে তেওঁৰ সফলতাৰ প্ৰধান কাৰণ।"[৮] উপেন্দ্ৰনাথ শৰ্মাই কৈছে- "অসমীয়া গাঁৱলীয়া জীৱনৰ নিখুঁত ছবি বৰাৰ ৰামধেনু যুগৰ গল্পৰ বৈশিষ্ট্য।"[৯] স্বাধীনতাৰ পিছত গাঁওবোৰলৈ অহা পৰিৱৰ্তন, গাঁৱলীয়া বিভিন্ন চৰিত্ৰৰ চিত্ৰণ, কৃষি অৰ্থনীতি, চহা মানুহখিনিৰ ওপৰত চলা ৰাজনৈতিক শোষন, আধুনিকতাৰ নামত নতুন প্ৰজন্ম বিপথে

পৰিচালিত হোৱা, দৰিদ্রতাই পাৰিৱাৰিক জীৱনলৈ অনা অশান্তি আদি বিভিন্ন দিশসমূহ তেওঁৰ গ্ৰাম্য পটভূমিকেন্দ্ৰিক গল্পসমূহৰ বিষয়বস্তু।

মহিম বৰাৰ এখন নদীৰ মৃত্যু গল্পত গ্ৰাম্য পৰিৱেশৰ সফল প্ৰয়োগ ঘটিছে। স্বাধীনতাৰ পিছত নদী কাষৰীয়া গাঁও পাতি বাস কৰা মানুহবোৰৰ জীৱনলৈ অহা পৰিৱৰ্তনক দেখুৱাবলৈ যাওতে গাঁৱলীয়া জীৱনৰ বিভিন্ন পৰিৱেশকো অংকন কৰিবলগীয়া হৈছে। এনে উপস্থাপনশৈলীয়ে অসমীয়া গ্ৰাম্য সংস্কৃতিৰ পৰিচয় দিবলৈ সক্ষম হৈছে। এখন নদীৰ মৃত্যু গল্পত কৈৱৰ্ত সমাজখন বিশেষকৈ মাছ মাৰি জীৱিকা নিৰ্বাহ কৰা অঞ্চল এটাৰ কথা কোৱা হৈছে। এটা সমস্যাক কেন্দ্ৰ কৰি গল্পৰ বিষয়বস্তু নিৰ্মাণ কৰিলেও গল্পকাৰে পটভূমি কেন্দ্ৰিক সমাজখনৰ মানুহৰ থকা-মেলা, খোৱা-শোৱা, চাৰিত্ৰিক বৈশিষ্ট্য আদি সকলোবোৰ বাস্তৱসম্মত ৰূপত উপস্থাপন কৰিছে। ইয়াৰ ফলত পাঠকে পঢ়ি যাওতে নাটকৰ ৰূপত এখন ছবি চকুৰ আগত ভাহি থাকে। গাঁৱৰ মানুহবোৰ ইঘৰৰ লগত সিঘৰৰ নিজৰ ককাই-ভাইৰ নিচিনা। সকলো বস্তুৰে ভাগ-বটৰা কৰাৰ নিয়ম আছে। এঘৰে আন এঘৰলৈ যাবলৈ অকনো সংকোচ নকৰে। ধনেশ্বৰে জাল বাই অনা মাছৰ পাছিতো ঘৈণীয়েকে ভিতৰলৈ নিছে; সেই সময়তে মাছ কিমান পাইছে চাবলৈ ওচৰৰ দুই-এজনী তিৰোতা গোট খাইছেহি। গল্পকাৰে এই কথাখিনিকে বাস্তৱ ৰূপ প্ৰদান কৰিবলৈ ব্যৱহাৰ কৰা মাছৰ পাচি, তাঁতশালৰ চালি এইবোৰে গাঁৱলীয়া ঘৰ এখনৰ পৰিৱেশ সৃষ্টিত অৰিহনা যোগাইছে--

"ঘৈণীয়েকে মাছৰ পাচিটো বাহিৰৰ পৰা ভিতৰ চোতালেদি আনি তাঁতশালৰ চালিখনৰ তলতে থ'লে। ওচৰৰ দুই-এজনী তিৰোতাও গোট খালেহি, উদ্দেশ্য মাছ কিমান পালে চোৱা। সিহঁতৰ ঘৰৰ মুনিহবিলাকো গৈছিল, কোনোৱে হয়তো কেইটামান নাৰমাছ, কোনোৱে অলপ পুঠিমাছ, কোনোৱে চেলকনা মাছ কেইটামান পাই আনিছে।" [১০]

চৰিত্ৰৰ কাৰ্যকলাপে পৰিৱেশ এটাক জীৱন্ত কৰি তোলাত মুখ্য ভূমিকা গ্ৰহণ কৰে। গাঁৱৰ মানুহবোৰে ওচৰৰ কাৰোবাৰ ঘৰত কিবা ওলালে বা নতুন বস্তু আনিলে চাবলৈ যোৱাটো এটা নিয়মৰ নিচিনা। ধনেশ্বৰে অনা মাছো ঘৈণীয়েকে তাঁতশালৰ চালিখনৰ তলতে থৈছিল আৰু ঘৈণীয়েকৰ লগৰ ওচৰৰে তিৰোতাকেইজনীয়ে তাকে চাবলৈ আহিছে। এনে চাৰিত্ৰিক বৈশিষ্ট্য সচৰাচৰ গাঁৱলীয়া তিৰোতাৰ চৰিত্ৰত দেখা পোৱা যায়। আনফালে ধনেশ্বৰৰ মতে ওচৰৰ নালীয়াৰ ঘৈণীয়েক ভদ্ৰে বোলাজনীৰ নজৰ বেয়া-- "বিশেষকৈ ভদ্ৰে বোলা ওচৰ ঘৰৰ নালীয়াৰ ঘৈণীয়েকজনীক সি দুচকু পাৰি দেখিব নোৱাৰে। সেই মানুহজনীৰ নজৰ বেয়া, মাছ মাৰিবলৈ যাওতে তাইক দেখিলে তাৰ সেই দিনটো অথলে যায়।" [১১]

এনে অন্ধবিশ্বাসী চৰিত্ৰৰ অংকনেও গ্ৰাম্য পৰিৱেশটোক বিশ্বাসযোগ্য ৰূপত তুলি ধৰাত যথেষ্ট অৰিহণা যোগায়। পৰিৱেশ সৃষ্টিত সমাজ অনুযায়ী চৰিত্ৰৰ নিৰ্মাণ আৰু সাংস্কৃতিক দিশৰ ভূমিকা অতি প্ৰয়োজনীয়। আনহাতে সমাজখনৰ পৰিৱেশক সঠিক ৰূপত প্ৰতিফলিত কৰিবলৈ হ'লে মানুহৰ দৈনন্দিন জীৱনত ব্যৱহাৰ কৰা সৰু সৰু নীতি-নিয়ম তথা ব্যৱহাৰিক দিশবোৰকো উপস্থাপন কৰিব লাগিব। ধনেশ্বৰৰ চৰিত্ৰত অন্ধবিশ্বাস প্ৰকাশ পোৱাৰ দৰে মাছ চাবলৈ অহা বোৱাৰী কেইজনীৰ চৰিত্ৰটো জ্যেষ্ঠজনৰ প্ৰতি থকা সন্মান দেখুওৱা হৈছে। তিৰোতাবোৰৰ মাজত শুকাই যোৱা কলংখনৰ লগতে সিহঁতৰ জীৱনলৈ অহা দৰিদ্রতা, অভাৱ-অনাটন আদি বিভিন্ন সমস্যাৰ কথা ওলাই থাকোতে ধনেশ্বৰৰ দেউতাক অহাৰ উমান পায় কথা বন্ধ হ'ল আৰু ওৰণি টানিলে--

"কেইবাজনীয়েও একেলগে কিবা এটা ক'বলৈ গৈছিল, এনেতে আগফালৰ দুৱাৰমুখত কাহ এটাৰ শব্দ শুনি সকলোৱে কথা বন্ধ কৰি ওৰণিবিলাক টানি টানি ল'লে। বুঢ়াই অৰ্থাৎ ধনেশ্বৰৰ দেউতাকে চিলিমটো বোৱাৰীয়েকৰ ফালে আগবঢ়াই দি ক'লে, "অঙঠা দিলেই হ'ব। ধপাত আছেই। জয়ধন আহিছে।" [১২]

তিৰোতাকেইজনীৰ বিয়লিমেলৰ সকলো কথাই বুঢ়াই শুনি আছিল। কলিকালত অন্যায়, অবিচাৰ, দুৰ্নীতি আদিয়ে কেনেদৰে সমাজ বেৰি ধৰিব শাস্ত্ৰ জ্ঞানৰ মাজেৰে বুঢ়াই গাই যাবলৈ ধৰিলে। ইয়াৰ মাজতো কিন্তু গাঁৱলীয়া, প্ৰকৃতি নিৰ্ভৰশীল মানুহবোৰৰ আচৰণত মানৱীয়তা আৰু নৈতিকতাৰ নিদৰ্শন প্ৰকাশ পাইছে। ধনেশ্বৰৰ দেউতাকক অহা দেখি কথা বন্ধ কৰি ওৰণি টানি লোৱা বোৱাৰীজনীৰ চৰিত্ৰৰ মাজেৰে গ্ৰাম্য সমাজৰ বোৱাৰীৰ নৈতিক আচৰণেৰে গাম্ভিৰ্যপূৰ্ণ পৰিৱেশ প্ৰতিফলিত কৰিছে।

নদীয়াল মানুহৰ জীৱনক লৈ গল্পটো লিখা হৈছে। গতিকে মাছ বিক্ৰী কৰি আৰু খেতি কৰি জীৱিকা নিৰ্বাহ

কৰা এই মানুহখিনিৰ জীৱন নিৰ্বাহ প্ৰণালী, পিন্ধন-উৰণ, খোৱা-বোৱা, কথা কোৱা ভাষা আদিত সিহঁতৰ সামাজিক জীৱনৰ পৰিচয় পোৱা যায়। পৰিৱেশ এটা নিৰ্মাণৰ ক্ষেত্ৰত এই উপাদানবোৰৰ প্ৰভাৱ যথেষ্ট আছে।

গ্ৰাম্য পটভূমিৰ ওপৰত লিখা এচেৰেঙা স্মৃতিৰ জোনাক মহিম বৰাৰ এটা অন্যতম শ্ৰেষ্ঠ গল্প। গল্পটোত গ্ৰাম্য সমাজ এখনৰ ঘৰুৱা পৰিৱেশৰ লগতে মানুহৰ ব্যক্তিগত জীৱনৰ আনুষংগিক বহুতো কথাই স্থান পাইছে। শৈশৱ কালতেই গল্পৰ নায়কে লিলি নামৰ এজনী ছোৱালীৰ প্ৰেমত পৰা কাহিনীটোৱেই গল্পৰ মূল বিষয়বস্তু। পঢ়ি থকা বয়সতে ৰাস পূৰ্ণিমাৰ দিনা ভাওনাত লিলিক দেখি নায়ক প্ৰেমত পৰিছিল; কিন্তু সেই ভালপোৱা সফল হ'বলৈ নেপালে। চেঙেলীয়া বয়সত প্ৰেমত পৰা নায়কে চাকৰি কৰি আদহীয়া হোৱাৰ পিছত হঠাতে লিলিৰ গিৰিয়েকক লগ পাই প্ৰথম প্ৰেমৰ স্মৃতিত ভোল হৈ পৰিছে।

লিলিৰ গিৰিয়েকৰ অনুৰোধ ৰক্ষা কৰি নায়কে ওচৰৰে মাষ্টৰ এজনৰ লগত দেওবাৰে লিলিহঁতৰ ঘৰলৈ যাত্ৰা কৰিলে। মাষ্টৰৰ পৰা জানিব পাৰিলে যে সেই দিনাও ৰাস পূৰ্ণিমা আছিল আৰু ওচৰৰ গাঁও এখনত ভাওনাও আছে। নায়কৰ এনে লাগিল যেন আগৰ সেইদিনটোৱহে পুনৰাবৃত্তি ঘটিছে। এনেদৰে অতীত-বৰ্তমানৰ নানা চিন্তাৰ মাজেদি তেওঁলোক গৈ লিলিহঁতৰ ঘৰ পালেগৈ। গল্পৰ পটভূমি যিহেতু গাঁৱলীয়া সমাজক কেন্দ্ৰ কৰি নিৰ্মাণ কৰিছে, গতিকে লিলিহঁতৰ ঘৰৰ চৌপাশৰ যি বৰ্ণনা দিয়া হৈছে সি প্ৰকৃতিৰ মাজত বাস কৰা গাঁৱলীয়া ঘৰুৱা জীৱনৰ পৰিৱেশৰ স্পষ্ট নিদৰ্শন দাঙি ধৰিছে--

"নঙলামুখত ভৰি দিয়াৰ লগে লগেই পিছফালৰ ভৰুণ পাণ-তামোলৰ বাৰীখনৰ কোলাত নিকা পৰিপাটি ঘৰ-দুৱাৰবোৰে মনত এটা গম্ভীৰ ছাপ বহুৱাই দিলে। নঙলামুখত এজোপা শেৱালি। ধুনীয়াকৈ সৰা-মোচা পিৰালিৰে ৰ'দত উজ্জ্বল গেৰুৱা ৰং লৈছে। বহল, কেঞাবন এডালিও নথকা চিকুণ চোতালৰ বুকুখন বগলী পাখিৰ দৰে ভক্‌ভকাই আছে, বাওহাতে ভড়ালঘৰটো, তাৰ আগত গোহালিটো। সকলোবোৰেই সাজি-কাচি যেন ভাওনা চাবলৈ ৰৈ আছে। আনকি পিৰালিৰ কাষত পাতি থোৱা দা-কটাৰি ধৰাওঁতে অ'ত ত'ত ক্ষয় হোৱা শিল চটাও যেন কৰবাৰ লখিমী হাতৰ পৰশত বিস্ময়কৰভাৱে সজীৱ হৈ উঠিছে। শিলচটাই আমালৈ কেৰাহিকৈ চাই মিছিকিয়াই হাঁহি দিয়া মই নিজেই দেখিলো।"[১৩]

নঙলামুখ, শেৱালিজোপা, ভঁৰাল, গোহালি, দা-কটাৰি ধোৱোৱা শিলচটা, তামোলজোপা আদি উপাদানবোৰ অসমীয়া গাঁৱলীয়া মানুহৰ ব্যৱহাৰিক জীৱনত ওতঃপ্ৰোতঃ সম্বন্ধ আছে। এইবোৰৰ উপস্থাপনে গাঁৱলীয়া মানুহ এঘৰৰ চৌপাশৰ পৰিৱেশক সজীৱ ৰূপত তুলি ধৰাত সহায় কৰিছে। আনহাতে 'শিলচটাই আমালৈ কেৰাহিকৈ চাই মিচিকিয়ে হাঁহি দিয়া...' বাক্যাংশই আগন্তুক সময়ত নায়কে সম্মুখীন হ'বলগীয়া পৰিস্থিতিৰ ইংগিতো গল্পকাৰে পৰিৱেশটো বৰ্ণনাৰ মাজতে অতি দক্ষতাৰে উপস্থাপন কৰিবলৈ সক্ষম হৈছে।

চৰিত্ৰসমূহৰ কথা কোৱাৰ ধৰণবোৰেও উক্ত চৰিত্ৰটো কোনখন সমাজত বসবাস কৰা বা কেনেধৰণৰ পৰিৱেশত থকা এই কথাৰ প্ৰমান পোৱা যায়। এনে চাৰিত্ৰিক বৈশিষ্টবোৰেও পৰিৱেশ এটাক জীৱন্ত ৰূপ প্ৰদান কৰাত বিশেষ ভূমিকা গ্ৰহণ কৰা দেখা যায়। 'এচেৰেঙা স্মৃতিৰ জোনাক' গল্পত লিলিৰ শাহুৱেকৰ চৰিত্ৰটো গল্পকাৰে আকৰ্ষনীয় ৰূপত অংকন কৰিছে। শাহুৱেকৰ কথা কোৱাৰ ধৰণে গাঁৱৰ শাহুৱেক চৰিত্ৰক প্ৰতিনিধিত্ব কৰিছে--

"হঁয়েৰা, ওপৰ চকুৰানী, বাৰীলৈ যোৱা বাটটোৰ ওপৰতে পৰি থকা গোবৰ চুবাৰ ওপৰেদি কেইবাৰ অহা-যোৱা কৰিলি, ঠাইতে পাণজোপাৰ গুৰিলৈ দলি মাৰি দিব নোৱাৰিলি?"[১৪]

কোনো এটা পৰিৱেশ নিৰ্মাণ কৰাত চৰিত্ৰৰ সংলাপ আৰু কাৰ্যকলাপে বিশেষ ভূমিকা গ্ৰহণ কৰে। অসমীয়া গ্ৰাম্য সংস্কৃতিৰ অন্যতম উপাদান হ'ল গালি-শপনি। এই গল্পটোত গ্ৰাম্য পৰিৱেশক সাৰ্থক ৰূপ প্ৰদান কৰাত বুঢ়ীয়ে বোৱাৰীয়েকক পৰা গালিবোৰে বিশেষ সহায় কৰিছে। আনফালে এনেদৰে গালি দিয়াৰ পিছতে যেতিয়া বুঢ়িয়ে আলহি অহা দেখিছে তেতিয়া গাঁৱৰ তিৰোতাৰ স্বাভাৱিক প্ৰতিক্ৰিয়া অনুসৰি কৰা শুশ্ৰষাই পৰিৱেশটো নাটকীয় কৰি তুলিছে--

"এইবাৰ কথাৰ লগে লগে বুঢ়ীয়ে হাতত তামোলৰ বাকলি কেইটামান লৈ চ'ৰাঘৰলৈ ওলাই আহোতে আমাৰ মুখামুখি হৈ অপ্ৰস্তুত হৈ গ'ল। ওৰণিখন টান মাৰি এফলীয়া কৰি সুধিলে, "ইবিলাক ক'ৰপৰা আহিছে? চিনি দেখোন পোৱা নাই। অথনিৰে পৰাই ৰৈ আছেহি নেকি? সোমাই

বহকহিচোন-চকীতে। দোষ নকৰিব দেউতাসকল।" লৰালৰিকৈ তামোলৰ বাকলিকেইটা দলি মাৰি পেলাই চোতালৰ আন এটা বাটেদি বুঢ়ী ভিতৰ সোমাল।...অলপ পিছতে থৰক-বৰককৈ বুঢ়া এজন ওলায় আহিল, মাষ্টৰে পৰিচয় দিয়াত বুঢ়াই আদৰ সাদৰকৈ ভিতৰলৈ গ'ল। ভিতৰতে এখন চোতাল। চাৰিওফালে সৰু সৰু ঘৰ। বাৰাণ্ডাতে চকপীৰা পাৰি বুঢ়াই কাঠি তুলাই আছিল। তাৰ পৰা উঠি গৈছে।" [১৫]

অচিনাকি পুৰুষ আলহীক হঠাতে দেখি দীঘলকৈ ওৰণি লোৱা আৰু কথাত সন্মানসূচক ব্যৱহাৰ কৰা আদিয়ে গ্ৰাম্য সাংস্কৃতিক পৰিৱেশক বাস্তৱতা প্ৰদান কৰিছে। এই সমগ্ৰ দৃশ্যটোতে এখন গৃহস্থী ঘৰৰ পৰিৱেশৰ বৰ্ণনা পোৱা যায়। কাহিনীৰ উপযোগীকৈ চৰিত্ৰ নিৰ্মাণ, সংলাপৰ ব্যৱহাৰ, ভাষাশৈলীৰ নিপুণতা আদিয়ে গল্পটোক বিশেষত্ব প্ৰদান কৰিছে।

লিলিৰ ঘৰত নায়কহঁতৰ অতিথি শুশ্ৰূষা কৰি কথা-বতৰা পতাৰ যি দৃশ্য দেখুওৱা হৈছে সি একেবাৰে নাটকীয়। প্ৰথমে বুঢ়ী তাৰ পিছত বুঢ়াৰ আলহীৰ লগত অতিথিসুলভ কথা-বতৰাৰ আৰম্ভ হৈছে। এখন সচৰাচৰ ঘৰুৱা জীৱনৰ ছবি অংকন কৰিছে। আলহী গ'লে এখন ঘৰত হ'বলগীয়া স্বাভাৰিক পৰিৱেশ এটাৰ সৃষ্টি কৰিছে--

"হেৰ বাপাহঁতলৈ তামোলৰ বটাতোকে দিব পৰা নাইনে এতিয়ালৈকে? তয়নো লৈ নাহ কিয়?

বুঢ়ীয়ে বোৱাকীয়েকলৈ চাই চিঞৰি উঠিল, তাৰ পিছট আমালৈ চাই ক'লে, "ল'ৰা-ছোৱালীকেইটা ভাওনা ঘৰত। আজি ৰাস ভাওনা পাতিছে। সিহঁত দিনটো তাতে।" [১৬]

নায়কৰ বুঢ়া-বুঢ়ীৰ লগত কথা-বতৰা হৈছে যদিও লিলিৰ লগত দেখা দেখি হোৱা নাই। বুঢ়ীয়ে লিলিক তামোল এখন হ'লেও আনিবলৈ আদেশ দিছে। বুঢ়া-বুঢ়ীৰ চৰিত্ৰত নিৰক্ষৰ মানুহৰ বৈশিষ্ট্য ফুটি উঠিছে। ভাওনা, তামোলৰে অতিথি সৎকাৰ কৰা আদিয়ে গ্ৰাম্য সংস্কৃতিৰ লগতে গাঁৱলীয়া সমাজৰ ব্যৱহাৰিক জীৱনৰ ছবিও প্ৰকাশ পাইছে। এনে এটা পৰিৱেশ ফুটাই তুলিবলৈ ৰৰাই গাঁৱলীয়া জীৱনৰ সৰু সৰু কথাবোৰ অনুধাৱন কৰি চাইছে আৰু সেইবোৰক গল্পত প্ৰতিস্থা কৰিছে। গাঁৱলীয়া সমাজত বহুত কম শাহুৱেকেহে বোৱাৰীয়েকক ভাল মাতেৰে কথা কয়। প্ৰায়বোৰ শাহুৱেকে গালি-শপনি পাৰি কামৰ আঁসোৱাহ ধৰিহে প্ৰতিটো কথা কয়। গতিকে গল্পটোত গাঁৱলীয়া পটভূমিৰ এখন পাৰিবাৰিক ঘৰুৱা পৰিৱেশ নিৰ্মাণ কৰোতে বুঢ়ীৰ দৰে চৰিত্ৰৰ উপস্থিতি স্বাভাৰিকতে প্ৰয়োজনীয়। বুঢ়ীৰ চৰিত্ৰই লিলিৰ বৈবাহিক জীৱনক সঠিক ৰূপত উপস্থাপন কৰাত সহায় কৰিছে।

মহিম বৰাৰ প্ৰায় সকলোবোৰ গল্পতে গ্ৰাম্য পৰিৱেশৰ প্ৰকৃত ছবি ফুটি উঠিছে। ৰস, টোপ, এটা নতুন খোজ, কেঞা আঙুলী আদি গল্পত গ্ৰাম্য পৰিৱেশৰ চিত্ৰণৰ জৰিয়তে সেই সমাজখনৰ সামগ্ৰিক ৰূপটোৰ লগতে মানুহৰ আচৰণ, ব্যৱহাৰ,চিন্তা-ধাৰা আদি দিশবোৰো প্ৰতিফলিত কৰিছে। ৰস গল্পত ভটাগুটিৰ দৰে ভয়হীন ডেকাৰ দুঃসাহসিক কাৰ্যৰ বৰ্ণনাৰ মাজেৰে গাঁওখনত বাস কৰা মানুহবোৰৰ মনত সৃষ্টি হোৱা ভয়, শংকা, অন্ধবিশ্বাসৰ প্ৰতিফলন ঘটিছে। সেইদৰে টোপ গল্পত হৰিবল বুঢ়াৰ জৰিয়তে গ্ৰাম্য পৰিৱেশটোক ফুটায় তুলিবলৈ বিচাৰিছে। বেনু আৰু চেনি নামৰ দুটা শিশুক বৰশিত মাছ লগোৱা কৌশলৰ মাজেৰে গ্ৰমীণ সমাজৰ বিভিন্ন দিশক বিচাৰ কৰিছে। কেঙা আঙুলি গল্পত এখন বিয়া ঘৰৰ পৰিৱেশ সৃষ্টিৰ জৰিয়তে চহা মানুহৰ মনত থকা লোকবিশ্বাস নাৰী জীৱনৰ কিছুমান দিশক ফুটায় তুলিছে।

১.২ প্ৰাকৃতিক পৰিৱেশ ঃ

পৰিৱেশ চিত্ৰণৰ কাৰণে বৰাই প্ৰকৃতিৰ ওপৰত নিৰ্ভৰ কৰা প্ৰায়বোৰ গল্পতে পৰিলক্ষিত হয়। মানুহৰ জীৱনৰ সুখ-দুখ, যন্ত্ৰণা, প্ৰেম-বিৰহ, মানসিক অৱস্থা আদি প্ৰকাশ কৰিবলৈ প্ৰকৃতিৰ উপাদানক ব্যৱহাৰ কৰি আহিছে। তেওঁৰ চুটিগল্পত বহু সময়ত প্ৰকৃতিয়ে চৰিত্ৰৰ ভূমিকা লোৱা দেখা যায়। কেতিয়াবা কোনো এটা ঘটনাৰ আগজাননী দিবৰ কাৰনেও প্ৰকৃতিক ৰহস্যময় ৰূপত উপস্থাপন কৰে। 'কাঠনিবাৰী ঘাট' গল্পত বৰুণৰ বায়েকৰ জীৱনলৈ আহি থকা আকস্মিক বিপদক ইংগিত দিবলৈ বৰাই অতি কলাসুলভ ভাৱে কাব্যিকতাৰে প্ৰকৃতিৰ ৰহস্যময় পৰিৱেশক বৰ্ণনা কৰিছে। যাৰ কাৰণে চৰিত্ৰ বা কাহিনীয়ে স্পষ্টতা লাভ কৰিব নোৱাৰিলেও পৰিৱেশ চিত্ৰণৰ সাৰ্থকতাই 'কাঠনিবাৰী ঘাট'ক চিৰযুগমীয়া কৰিলে।

অসমীয়া সাহিত্যত কাঠনিবাৰী ঘাট নামেৰেই গল্পকাৰ মহিম বৰাৰ এটা সুকীয়া পৰিচ আছে। কাঠনিবাৰী ঘাটৰ ৰচনাশৈলী, ব্যঞ্জনাময়ী বাক্যৰ প্ৰয়োগে গল্পটোক এটা কবিতাৰ শাৰীলৈ লৈ গৈছে। বৰাৰ কাঠনিবাৰী ঘাট এটা

পৰিৱেশ প্ৰধান গল্প। প্ৰথম পুৰুষত বৰ্ণিত গল্পটোত নায়কে জাহাজৰ কাৰণে বৈ থকা ব্ৰহ্মপুত্ৰৰ পাৰ, কয়লাৰ পাহাৰবোৰ, পানী শুকাই ওলায় পৰা ঝাওবনবোৰ, বালিচাপৰিবোৰ আদি প্ৰকৃতিৰ মনোমোহা দৃশ্য আৰম্ভণিতে অংকন কৰিছে--

"পাৰত দ'ম হৈ পৰি থকা কয়লাৰ পাহাৰবোৰ, গড়াখহনীয়াত জুৰুলা হোৱা ব্ৰহ্মপুত্ৰৰ পাৰ, পানী শুকাওঁতে ওলায় পৰা ঝাওবন ভৰা বালিচাপৰিৰ সেউজীয়া টোবোৰ চকুৰে নেদেখা হোৱালৈকে লৰিয়ে আছে। .... একমাত্ৰ চাহ দোকানখন, বালিত পোতা বাঁহৰ চাঙৰ ওপৰতে খেৰৰ চালি এখনত আত্মপ্ৰকাশ কৰি আছে। কেৰাচিনৰ টিনৰ টাপলি দি সজা বহল জপ দুৱাৰখন দাঙি থোৱা অৱস্থাত চালিখনেৰে আন এখন চালি হৈ গ'ল। তাৰ তলত বাঁহ খুটা চাৰিটাৰ ওপৰত দুচলা ফলীয়া বাঁহ পেলাই দিয়াৰ লগে লগেই সেইখন এখন সুন্দৰ বেঞ্চ।" [১৭]

এনে বৰ্ণনাই প্ৰকৃতি আৰু মানুহৰ সহাৱস্থানৰ সুন্দৰ প্ৰতিচ্ছবি দাঙি ধৰিছে; লগতে ব্ৰহ্মপুত্ৰৰ পাৰৰ মনোমোহা পৰিৱেশবো সুন্দৰ প্ৰতিফলন ঘটিছে। প্ৰকৃতিৰ এনে প্ৰকাশভংগীয়ে পাঠকক আকৰ্ষিত কৰি ৰখাত সহায় কৰে। মহিম বৰাৰ কাঠনিবাৰী ঘাটত মাজে মাজে প্ৰকৃতিয়ে ৰহস্যময় ৰূপো ধাৰণ কৰিছে। নায়কৰ আগত প্ৰকৃতিয়ে ভিন্ন ৰূপত খেলা কৰি আছে--

"চাওঁতে চাওঁতে সৰু সৰু টোবিলাকে সৰু সৰু আঙুলিৰে সেন্দূৰবিলাক টপাটপ টানি ক'ৰবাত মৌ-মেল চাবলৈ ধৰিলে।" [১৮]

"দুৰণিৰ চাহ-বাগিচাৰ কলঘৰৰ অস্পষ্ট ধোৱাবোৰ ইতিমধ্যে অন্ধকাৰৰ লগত মিলি যাবলৈ ধৰিছে। ক'লা অসুৰ যেন বুটখন, তাত কাম কৰা খালাচি, বনুৱা শ্ৰেনীৰ মানুহ কেইটা, চাহ দোকান সৰু সৰু পৰিয়ালটো আৰু আমি যাত্ৰী নামৰ প্ৰানী কেইটাক অন্ধকাৰবোৰে অকলে পাই আগুৰি পেলালে।" [১৯]

গল্পটোৰ আৰম্ভণিতে অংকন কৰা প্ৰকৃতিৰ এনে ৰহস্যময় পৰিৱেশে কাহিনীৰ পূৰ্বাভাস দিয়াত সহায় কৰিছে। গল্পকাৰে যি পৰিৱেশ নিৰ্মাণ কৰিছে সি পৰৱৰ্তী কাহিনীৰ বিষয়বস্তুৰ প্ৰতীক। গল্পৰ নায়কে পৰৱৰ্তী সময়ত প্ৰত্যক্ষ কৰিবলগীয়া ঘটনাৰ আগজাননী যেন এই নৈসৰ্গিক পৰিৱেশৰ চিত্ৰনেৰে পাঠকক বুজাই দিছে। জাহাজৰ কাৰণে অপেক্ষা কৰি থকা নায়কে এগৰাকী ন-বোৱাৰী আৰু লগত অহা ভায়েকক লগ পাইছে। গিৰিয়েকৰ চাইকেল এক্সিডেন্টৰ কাৰণে মাকৰ ঘৰৰ পৰা অহা ন-বোৱাৰীজনীয়ে নাজানে যে গিৰিয়েকৰ ইতিমধ্যে মৃত্যু হৈছে। ন-বোৱাৰী গৰাকীৰ জীৱনলৈ অপ্ৰত্যাশিতভাৱে অহা এই বিপদক ৰৱাই প্ৰকৃতিৰ জৰিয়তে আগতীয়াকৈ বুজাই দিছে--

"কাঠনিবাৰী ঘাট টোপনিত লালকাল। বুটখনেও টোপনি জালত কলমুটিয়াই এঙামূৰি দিবলৈ ধৰিলে।.... কাষৰ গড়াৰ পৰা মাটি অলপ খহি পৰিল।" [২০]

গড়াৰ পৰা হুৰ হুৰাই খহি পৰা মাটিবোৰ যেন বৰুণৰ বায়েকৰ সুখৰ সংসাৰখনৰ আৰু ভৱিষ্যতৰ আশা-আকাংক্ষাবোৰৰ প্ৰতীক। ন-বোৱাৰীজনীয়ে নাজানে যে তেওঁৰ স্বামীৰ ইতিমধ্যে এক্সিডেন্টত মৃত্যু হৈছে। গল্পকাৰেও শেষলৈকে কোৱা নাই যে বোৱাৰীজনীৰ জীৱনৰ গতি সলনি হ'বলৈ গৈ আছে। পাঠকৰ উৎকণ্ঠাক ঘনিভূত কৰিবলৈকে ৰৱাই এনে এক ৰহস্যময় পৰিৱেশক সঘনাই গল্পত অংকন কৰিছে-

"ব্ৰহ্মপুত্ৰৰ সিপাৰৰ কাজিৰঙাৰ এন্ধাৰৰ মাজত বাঘ এটাই চিকাৰৰ বাটত জোপ লৈ আছে (নিশ্চয়হ্নু)। দূৰণিৰ বালিচাপৰিত, কঁহুৱা আৰু ঝাওবনৰ মাজত, ব্ৰহ্মপুত্ৰৰ বহল, ক'লা পানী ধাৰাত একোটা ৰহস্য শুই শুই চকু পিৰিকিয়াব লাগিছে। তৰা কেইটামানে জুম বান্ধি ৰহস্যটোনো কি, ভূমুকিয়াই ফুৰিছে। বুটৰ নিচেই কাষতে থকা পাৰটোত বহি বহি 'জুটুলা-জুটুলি' চুলিৰে ধুবুনি ছোৱালী কেইজনীমানে কাপোৰ থুকুচিব লাগিছে "ছপ্-ছপ্-ছপাৎ।" ধেৎহ্নু টোবোৰহেহ্নু" [২১]

কাহিনীৰ মূল বক্তব্যক যেনেদৰে ৰহস্যময়তাত গল্পকাৰে আগুৰাই নি আছে ঠিক তেনেদৰে বৰুণৰ বায়েকৰ জীৱনৰ সত্য ঘটনাটোকো ৰহস্যৰ মাজত সুমুৱাই ৰাখিছে। প্ৰকৃতিৰ মাজত দেখা দিয়া এনে ৰহস্যই গল্পটোত বহু ঠাইত আচহুৱা পৰিৱেশ এটাৰ সৃষ্টি কৰিছে। ৰৱাৰ এনেধৰণৰ বৰ্ণনাশৈলীক প্ৰথমবাৰ পঢ়োতে সাধাৰণ পাঠকে আমনি অনুভৱ কৰিব কিন্তু গল্পৰ বিষয়বস্তুৰ ৰহস্য নজনাকৈ আঁতৰিও আহিব নোৱাৰে। ইয়াতেই গল্পকাৰৰ দক্ষতাৰ প্ৰমাণ পোৱা যায়।

মহিম ৰৱাই গল্পটোত প্ৰথমৰ পৰা শেষলৈকে এটা পৰিৱেশৰ চিত্ৰণৰ ওপৰতহে বিশেষ মনযোগ দিলে। গল্পটো

নিঃসন্দেহে এটা পৰিৱেশ প্ৰধান গল্প। কাৰণ ইয়াত কোনো কাহিনী নাই। মাত্ৰ এটা আকস্মিক ঘটনা আৰু এগৰাকী বিৱাহিতাৰ জীৱনলৈ নামি অহা দুৰ্দশাৰ এটা মাত্ৰ দৃশ্য অংকন কৰিবলৈকে বৰাই বৰ সাংঘাটিকভাৱে প্ৰাকৃতিক পৰিৱেশ এটা নিৰ্মাণ কৰাত সফল হ'ব পাৰিলে। আনহাতে ইয়াত কোনো চৰিত্ৰয়ো প্ৰাধান্য পোৱা নাই। নায়কে কেৱল গাভৰু বোৱাৰীগৰাকীৰ সেন্দৰ্য্যময় ৰূপটোক প্ৰশংসা তথা ৰহস্যৰে আৱৰি থকা পৃথিৱীৰ ক্ৰিয়া প্ৰতিক্ৰিয়াবোৰৰ লগত তুলনা কৰাতে সীমাৱদ্ধ থাকিল। ইফালে বৰুণ আৰু বোৱাৰীগৰাকীৰ চৰিত্ৰই কোনো ক্ৰিয়াশীলতা লাভ কৰিব পৰা নাই। মুঠতে এগৰাকী নাৰীৰ সকলো আশা-আকাংক্ষা আধাতে মৰহি যোৱাৰ এক কৰুণ ঘটনাক প্ৰকৃতিৰ ৰহস্যময় পৰিৱেশৰ ইংগিতেৰে গল্পটোক এটা কবিতাৰ ৰূপ দিছে।

প্ৰাকৃতিক পৰিৱেশৰ কাব্যিক শৈলীৰে লিখা নিঃসন্দেহ মহিম বৰাৰ এটা উল্লেখযোগ্য গল্প। ইয়াৰ কাব্যিক ৰচনাশৈলী তথা প্ৰকৃতিৰ ৰহস্যময়ী বৰ্ণনা প্ৰায় 'কাঠনিবাৰী ঘাট' গল্পৰ সমপৰ্যায়ৰ। স্বাতী, বসন্ত আৰু বিজন তিনিটা চৰিত্ৰই গল্পটোৰ মুখ্য চৰিত্ৰ। বিজনৰ বান্ধৱী স্বাতীক বসন্তলৈ বিয়া দিয়া হৈছে। বসন্তৰ লগতো ভাল বন্ধুত্ব গঢ়ি তোলা বিজনে কেইবাবছৰৰ পিছত স্বাতীহতঁৰ ঘৰলৈ আহিছে। তিনি বন্ধুৱে পিকনিক্ খাবলৈ যাওতে প্ৰকৃতিৰ যি ৰহস্যময় পৰিৱেশৰ বৰ্ণনা কৰিছে তাৰ মাজত আগন্তুক সন্মুখিন হ'বলগীয়া পৰিস্থিতিৰ তাৎপৰ্য লুকাই আছে--

"আমি আগবাঢ়িলোঁ। চাৰিওফালে নাতি-উচ্চ কিছুমান গছক কেনিও পোহৰ সোমাব নোৱাৰাকৈ আগুৰি ধৰিছে বিবিধ বনৰীয়া লতাই। কুঁহিপাতত বিবিধ ৰঙৰ থোপা লৈ ফুলা বনৰীয়া ফুলত ফাগুণৰ জুইশিখা যেন এই জ্বলি উঠিল।... উদ্ভিন্ন যৌৱনা প্ৰকৃতি। ভৰ যৌৱনৰ উগ্ৰ বোল এতিয়াও আহি পোৱা নাই। তাৰ থাইত জিলিকি উঠিছে স্নিগ্ধ, শীতল, কলপতীয়া ৰঙৰ উজ্জ্বল আভা এটি। ঠিক যেন কলপাতত পৰি থকা নৱজাত শিশুৰ কোমল মুখ এখনিৰ সৰল স্বৰ্গীয় জেউতি। হাবিৰ মাজৰ নানান বনৰীয়া চৰাইৰ গহীন মাতবোৰ পৰ্বতৰ বুকুত প্ৰতিধ্বনিত হৈ উঠিছে।" [২২]

নিঃসন্দেহ গল্পটোত পাৰিবাৰিক সমস্যাক মূল বিষয় হিচাপে দেখুৱাইছে। স্বাতী আৰু বসন্তৰ সংসাৰখন ভালদৰে চলা নাই। বিজনে দুই দম্পতিৰ মাজত চলি থকা অশান্তিৰ কথা অনুমান কৰিব পাৰিছে। এমহীয়া সন্তানক হেৰুৱাই স্বাতী আৰু বসন্তৰ জীৱনলৈ দুখ আৰু সন্দেহ নামি আহিছে। স্বাতী অসুখীয়া হৈ পৰিছে। মহিম বৰাই প্ৰকৃতিৰ ক্ৰিয়া-কলাপৰ মাজেৰে স্বাতী-বসন্তৰ সংসাৰখনত চলি থকা যুদ্ধখনক দেখুৱাবলৈ যত্ন কৰিছে--

"বাহিৰত তেতিয়া ধুমুহাৰ হো-হোৱনি ক্ৰমাৎ বেছি হৈ পৰিছে। একো একোটা হেঁচাত যেন প্ৰকাণ্ড বাংলাটো ফুটবল মৰাদি ওপৰলৈ মাৰি পঠিয়াব।... যেন আউলী-বাউলী তিৰোতা এজনীয়ে দীঘল, কৰুণ, হিয়াভগা, ৰাউচি টানি, হাবিয়ে-বননিয়ে, পথাৰে-বাকৰিয়ে, নৈৰ পাৰে পাৰে ঢাপলি ধৰিছে, মৰা সন্তানৰ মৰিশালিখনলৈ।" [২৩]

বিজনৰ আগত বসন্তই মানসিক ভাৰসাম্য হেৰুৱাই পেলাইছে। পাৰ হৈ অহা বিপদৰ ৰাতিটোক বুজাবলৈ বৰাই প্ৰাকৃতিক পৰিৱেশৰ অংকন কৰিছে। যি পৰিৱেশে সিহঁতৰ সংসাৰ খনৰ লগতে সন্তান হেৰুওৱা মাতৃ হিচাপে স্বাতীৰ মানসিক যন্ত্ৰণাৰ উমান পাঠকক দিছে। জীয়েক বীণুৰ জন্মক লৈ স্বাতী আৰু বসন্তৰ মাজত সন্দেহৰ সৃষ্টি হৈছিল। এই সন্দেহেই সিহঁতৰ সংসাৰত ব্যাঘাত জন্মাইছিল। কিন্তু বীণুৰ মৃত্যুৱে স্বাতী-বসন্তৰ মাজলৈ আকৌ বিশ্বাস উভতাই আনিলে। বিশ্বাস ঘূৰি অহাৰ পিছত ধুমুহাই আক্ৰান্ত কৰা স্বাতীৰ সংসাৰলৈও শান্তি ঘূৰি আহিছে। ধুমুহাৰ পিছত স্বাতী-বসন্তৰ ঘৰৰ পৰিৱেশটোৰ অৱস্থা বুজাবলৈ মহিম বৰাই আকৌ প্ৰকৃতিৰ সহায় লৈছে--

"ঘড়ীত তেতিয়া দুই বাজিছে। ধুমুহা ইতিমধ্যে শাম কটিছে। হো-হোৱনিৰ শব্দ ক্ৰমে নাইকীয়া হ'ল; মাজে মাজে গছৰ পাতবোৰত জৰজৰণি তুলি, ধুমুহাই এৰি যোৱা দুই এছাটি বতাহে বাট বিচাৰি ফুৰিছে। জুৰুলা গছ-গছনিয়ে যেন থাকি থাকি হুমুনিয়াহ কাঢ়ি উঠিছে।" [২৪]

নিঃসন্দেহ গল্পত স্বাতী-বসন্তৰ সংসাৰত দেখা দিয়া অশান্তি, বিভেদবোৰেই গল্পৰ বিষয়বস্তু। গল্পটোৰ কথক চৰিত্ৰ বিজনৰ জৰিয়তে কাহিনী আগবঢ়াই নিয়া হৈছে। প্ৰকৃতিৰ বৰ্ণনাৰ মাজেৰে গিৰিয়েক-ঘৈণীয়েকৰ মাজৰ সম্পৰ্ক তথা সংসাৰৰ খুটি-নাতিবোৰ উপস্থাপন কৰিছে। গল্পৰ গূঢ়াৰ্থ বাস্তৱৰূপত প্ৰতিফলিত কৰাত প্ৰাকৃতিক পৰিৱেশৰ বৰ্ণনাত বৰাই গুৰুত্ব দিছে। ব্যঞ্জনাময়ী বাক্যৰ প্ৰয়োগে গল্পটোক দ্বাৰ্থকতা প্ৰদান কৰিছে। এফালে বাহিৰত প্ৰকৃতিৰ বিধ্বংসী ৰূপ আৰু আনফালে স্বাতী-বসন্তৰ বৈবাহিক জীৱনত যি ধুমুহাৰ সৃষ্টি কৰিছে সেই দুয়োটা পৰিৱেশৰ বৰ্ণনাই ইটোয়ে সিটোক প্ৰতীকী অৰ্থত বুজাইছে।

প্ৰাকৃতিক পৰিৱেশ আৰু ঘৰুৱা পৰিৱেশৰ উপস্থাপনত গল্পটোৱে সাৰ্থকতা লাভ কৰিছে।

কাঠনীবাৰি ঘাট আৰু নিঃসন্দেহ গল্পৰ উপৰিও ডফলা কাইট আৰু মাছ আৰু মানুহ গল্পত প্ৰাকৃতিক পৰিৱেশে চৰিত্ৰৰ ভূমিকা গ্ৰহণ কৰিছে। দ্বিতীয় যুদ্ধৰ পটভূমিৰ আধাৰত লিখা ডফলা কাইট গল্পত মিলিটাৰীয়ে অসমত সৃষ্টি কৰা পৰিস্থিতিৰ লগতে অসমৰ নৈসৰ্গিক পৰিৱেশবোৰ মনোৰম বৰ্ণনা দিছে। তেনেদৰে মাছ আৰু মানুহ গল্পত জীৱকান্ত আৰু মাছৰ মাজত হোৱা যুঁজখনৰ কথা ক'বলৈ যাওতে পথাৰ, নৰা, পুখুৰি, বিল, কুঁৱলী আদি উপাদানবোৰৰ সংমিশ্ৰণেৰে গ্ৰমীণ সমাজৰ প্ৰাকৃতিক পৰিৱেশ এটা আকৰ্ষণীয় ৰূপত অংকন কৰিছে।

১.৩ প্ৰতীকাত্মক পৰিৱেশ ঃ

মহিম বৰাৰ চুটিগল্পত প্ৰতীকাত্মক পৰিৱেশৰ পয়োভৰ সততে পৰিলক্ষিত হয়। সাহিত্য বুলি কলেই বিষয়-বৈচিত্ৰ, কলা-কৌশলৰ কথা আহি পৰে। সাহিত্যিক সকলে নিজৰ লেখনিক সাহিত্যৰ ৰূপ দিওতে সেই কৌশলবোৰ অৱলম্বন কৰা সততে পৰিলক্ষিত হয়। এই কৌশলবোৰৰ ভিতৰত প্ৰতীকে অসমীয়া সাহিত্যত বিশেষ স্থান দখল কৰি আছে। মহিম বৰাৰ চুটিগল্পতো পৰিৱেশ-পৰিস্থিতিক বৰ্ণনা কৰোতে প্ৰতীকাত্মক ৰচনা শৈলীৰ প্ৰয়োগ কৰিছে। চুটিগল্পৰ পৰিসৰ যিহেতু অতি কম, গতিকে গল্পকাৰে কম কথাৰ জৰিয়তে নিজৰ বক্তব্যক উপস্থাপন কৰিবলৈ প্ৰতীকাত্মক পৰিৱেশৰ সহায় ল'বলগীয়া হয়। মহিম বৰাই চৰিত্ৰৰ মানসিক অৱস্থা, মানৱ জীৱনত সন্মুখীন হোৱা বিভিন্ন পৰিস্থিতিক বুজাবলৈ কেইবাটাও গল্পত প্ৰতীকধৰ্মী ৰচনাৰ সহায় লৈছে। তেওঁৰ প্ৰতীকাত্মক পৰিৱেশৰ উপস্থাপনে গল্পবোৰৰ সাহিত্যিক মৰ্যদা বহুগুণে বৃদ্ধি কৰিছে।

মহিম বৰাৰ ৰাতি ফুলা ফুল এটা পৰিৱেশ প্ৰধান গল্প। চৰিত্ৰৰ মনোজগতত ক্ৰিয়া কৰি থকা বিভিন্ন চিন্তাক প্ৰতিফলিত কৰিবলৈ গল্পকাৰে পৰিৱেশৰ ওপৰত গুৰুত্ব দিছে। ইয়াত পৰিৱেশক প্ৰতীকধৰ্মী ৰূপত উপস্থাপন কৰিছে। এগৰাকী মাকৰ জীয়েকৰ বিয়াক লৈ মনৰ মাজত চলি থকা চিন্তা, গুণাগথা প্ৰকাশ কৰিবলৈ গল্পৰ আৰম্ভণিতে বৰাই প্ৰতীকধৰ্মী পৰিৱেশ এটাৰ সৃষ্টি কৰিছে--

"ইঞ্জিনৰ বিৰাট ধপধপ আৱাজ কৰি মটৰ চাইকেল এখন যেতিয়া পদুলিয়েদি সোমাই আহিল, নমিতাৰ মাক তেতিয়া গা-ধোৱা ঘৰত। তেওঁৰ বুকুৰ ভিতৰতো যেন দুখন মটৰ চাইকেলৰ ইঞ্জিনে সমানে গৰ্জন কৰি উঠিল।...আজি আৰু চাবোন নলগালে, মূৰটো যেনে-তেনে টুকি চুলিখিনিৰ ওপৰত শুকান গামোচা এখন খোপা বন্ধাদি বান্ধি চেপা মাতেৰে চিঞৰি উঠিল, "নমিতা, প্ৰমীলা যাচোন। বসন্ত আহিব পায়, আৰু কোনোবা আহিব পাৰে।"[২৫] (পৃ.১৬৩)

নমিতা নামৰ এজনী অবিবাহিতা ছোৱালীৰ কাৰণে ল'ৰা বিচৰা সমস্যাটোৱেই গল্পটোৰ মূল বষয়বস্তু। নমিতাৰ লগৰ ছোৱালীবোৰ বিয়া হৈ যোৱাৰ উপৰিও তাইতকৈ সৰু ছোৱালী কিছুমানৰো বিয়া হ'বলৈ আৰম্ভ হৈছে। কিন্তু নমিতাক ল'ৰাবোৰে চাবলৈ আহি অপচন্দ কৰি গুছি যায়। সেয়ে নমিতাৰ মাক চিন্তাত পৰিছে আৰু শেষত ভাগিণীয়েক বসন্তৰ ওপৰতে সকলো আশা এৰি দিছে। কিয়নো ওচৰৰে সবিতাৰ বিয়ালৈ বসন্তৰ লগত তপন নামৰ ল'ৰা এটা আহিব আৰু তাকে এবাৰ নমিতাহতঁৰ ঘৰলৈ আনিবলৈ মাকে বসন্তক কৈছে। সেয়ে বসন্তৰ বাইকৰ শব্দ শুনি নমিতাৰ মাক অস্থিৰ হৈ পৰিছে। উধাতু খাই গা ধোৱা ঘৰৰপৰা ওলায় আহিছে। জীয়েকৰ বিয়া সম্বন্ধে নমিতাৰ মাকৰ মনত সৃষ্টি হোৱা মানসিক অশান্তিক প্ৰকাশ কৰিবলৈ আৰম্ভণিতে যি পৰিৱেশৰ সৃষ্টি কৰিছে তাত গল্পকাৰ সফল হৈছে। ইঞ্জিনৰ বিৰাট ধপধপ শব্দ, মাকে গা ধোৱাৰ পৰাই জীয়েকহতঁক মাতি বসন্তক শুশ্ৰূষা কৰিবলৈ উথপথপ্ লগোৱা কাৰ্যই বিষয়বস্তুক গভীৰতা প্ৰদান কৰিছে, লগতে নমিতাৰ মাক চৰিত্ৰটোক সাৰ্থক কৰি তুলিছে।

গধূলি হৈ অহাৰ লগে লগে নমিতা আৰু মাকৰ আশাও ডাঙৰ হৈ আহিল। সিহঁতৰ আকাংক্ষিত সপোন যেন বাস্তৱত পৰিণত হোৱাৰ সময় আহি পৰিছে। তপনৰ হাতত থকা কেমেৰাই ৰাতি ফুলা ফুলজোপাৰ ফটো মাৰিবলৈ আহিব আৰু সেই চেগতে নমিতাৰ মাকে কথাটো উলিয়াব। গধূলি হোৱাৰ লগে লগে তপন আহিল হয়, কিন্তু সি ফটো মাৰিয়েই বাহিৰৰ পৰা গুছি গ'ল। নমিতা, মাক আৰু বসন্তই ভবাৰ মতে কথাবোৰ নহ'ল--

"বসন্তই সন্তৰ্পণে সকলোৰে মুখবিলাক চাবলৈ চেষ্টা কৰিলে। এক সংগীতমুখৰ নীৰৱতা অদৃশ্য বিজুলী-সোঁতৰ দৰে সিহঁতক ঘেৰি থকা বায়ুমণ্ডলৰ মাজেদি সৰ্পিল গতিৰে যেন প্ৰৱাহমান।

অকস্মাতে আহি পৰা এক বিজুলীৰ চমকে সকলোকে-- বিশেষকৈ জেঠায়েকক সচকিত কৰি তুলিলে।

ফ্লেছ বাল্‌বৰ চমকহু এখন ফটো লোৱা হৈ গ'ল। নিষ্ঠুৰ চিকাৰী এজনে শৰালি এজাকৰ মাজলৈ যেন আতৰ্কিতে চেৰাগুলী এটা মাৰি পঠিয়ালে। বিয়াঘৰত হঠাৎ বেগুৰ কনচার্ট বাজি উঠিল, লগে লগে উৰুলিৰ ধ্বনি। নিশ্চয় কইনা উলিয়াবৰ হ'ল।" [২৬]

পৰিৱেশটোৰ মাধ্যমেৰে নমিতা, নমিতাৰ মাকৰ আশাভংগ হোৱা দেখুৱাইছে। তপন চৰিত্রটো গল্পকাৰে আধুনিক স্বার্থপৰ মানুহৰ বৈশিষ্ট্যৰে ৰূপায়ন কৰিছে। যি নিজৰ স্বার্থ পূৰণ হোৱাৰ পিছত গুছি আহিছে। আনকি ধুনীয়াকৈ ফুলি থকা ফুলপাহ নমিতাক চিঙি আনিবলৈ কওতেও অকণো সংকোচ কৰা নাই। শেষৰ পৰিৱেশটোৱে আচলতে নমিতাৰ বিয়াৰ প্রতি থকা শেষ আশা চূর্ণ হোৱাৰ লগতে তপনৰ চৰিত্রক প্রতীক অর্থত দেখুৱাবলৈ যত্ন কৰিছে। গল্পটোত আৰম্ভণিৰ পৰা শেষলৈকে বিভিন্ন পৰিৱেশৰ সমাহাৰ ঘটিছে। পৰিৱেশ সৃষ্টিৰ আঁৰত বিবাহাপোযুক্ত ছোৱালী ঘৰত থাকিলে বা দৰা নোলালে মাককে ধৰি ঘৰৰ অন্য মানুহৰ যি অসহায় অৱস্থা হয় সেই লৈয়ে গল্পটোৰ মূল বিষয়বস্তু নির্মাণ কৰা হৈছে। ভাগিণীয়েক বসন্তৰ লগত নমিতাৰ মাকে পতা কথা-বতৰাৰ পৰা চৰিত্রটোৰ তীব্র মানসিক অস্থিৰতাৰ প্রতিফলন ঘটিছে। যি মাকে এসময়ত নমিতাৰ কাৰণে ডাক্তৰ-ইঞ্জিনিয়ৰ বিচাৰিছিল সেই মাকে তপনৰ একুৰি বেয়া অভ্যাসকো নেওচা দি জীয়েকক বিয়া দিয়াৰ কথা ভাবিছে। পৰিস্থিতিত পৰি মানুহৰ চিন্তা-চেতনাৰ কেনেদৰে পৰিৱর্তন ঘটে সেই কথাও পৰিৱেশৰ জৰিয়তে গভীৰভাৱে প্রকাশ কৰাত মহিম বৰা সফল হৈছে। গল্পটোত বিশেষকৈ মানুহৰ জীৱনৰ এক সত্যক প্রতিফলিত কৰিছে। ৰাতি ফুলা ফুল এজোপাৰ লগত সংগতি ৰাখি নমিতাৰ বিয়াৰ প্রতি থকা হাবিয়াস, মাকৰ চিন্তা, বসন্তৰ তপনৰ সিদ্ধান্তৰ প্রতি থকা উৎকণ্ঠা আদি সঠিক ৰূপত প্রকাশ কৰিবলৈ সক্ষম হৈছে। হীৰেন গোঁহাঞে এই গল্পৰ সম্পর্কে মত দিছে -- "কিন্তু ৰাতি ফুলা ফুল গল্পটোৰ পৰিৱেশ বেলেগ, চৰিত্র বেলেগ, মর্মার্থ বেলেগ ধৰণৰ। বাহিৰত দেখাত ওপৰৰ গল্পবোৰৰ দৰেই। কিন্তু এক অনুভূতিঘন অভিজ্ঞতাৰ সৰস বর্ণনাই আমাৰ অজ্ঞাতেই গল্পটো আন এক স্তৰলৈ তুলি লৈ গৈছে, আৰু সেই অভিজ্ঞতাৰ মূল্যায়ন বা মনন হৈছে জীৱনৰ সমৃদ্ধবোধৰ ভিত্তিত। এটা কবিতাৰ দৰেই গল্পটো আগৰপৰা গুৰিলৈ এক কেন্দ্রীয় অনুভূতিৰ আধাৰত নির্মিত, আৰু শেষ মূহুর্তত সেই অনুভূতি অসহনীয় তীব্রতাৰে উত্তপ্ত।" [২৭]

মহিম বৰাৰ কুলিটোৱে মাতে কিয় গল্পত প্রতীকধর্মী পৰিৱেশে প্রাধান্য পাইছে। নায়ক-নায়িকাৰ প্রেমত বিৰহ আৰু আনন্দৰ মূহুর্তবোৰ কুলি এটাৰ মাতৰ জৰিয়তে বুজাইছে। ইয়াৰোপৰি নায়কে মনৰ বেজাৰত হাবিত বহি বাহি বজাই থাকোতে প্রকৃতিৰ বিভিন্ন উপাদানে চৰিত্রৰ মনৰ কথা, জীৱনৰ দুখ-কষ্ট প্রকাশ কৰাত সহায় কৰিছে। ভদ্রকান্ত আৰু পুতেক মোহনৰ মাজত মুহিতাক লৈ মনোমালিন্যৰ সূত্রপাত হৈছে। মোহনে গাঁৱৰে মুহিতাক বিয়া কৰাব বিচাৰে কিন্তু সমাজৰ বৰমূৰীয়া তথা মোহনৰ দেউতাক ভদ্রকান্তই সমাজৰ পৰা বাদ পেলাই থোৱা মুহিতাক বোৱাৰী কৰিবলৈ অস্বিকাৰ কৰে। কিন্তু মোহনে এই অপবাদ বিশ্বাস নকৰে। সমাজৰ পৰা এঘৰীয়া কৰা মুহিতাৰ কথা ভাবি মোহনে হাবিৰ আম এজোপাৰ তলত বহি থাকে। তাতে কুলি এটাই মতা শুনিলে। কুলিৰ মাতত মোহনৰ মনৰ বতৰা আছে। সমাজৰ বৰমূৰীয়াসকলৰ সিদ্ধান্তত খণ্ডত জ্বলি থকা মোহনৰ মনৰ বিদ্রোহ আৰু অশান্তী হাবিখনৰ চাৰিওফালৰ পৰিৱেশৰ অংকনৰ জৰিয়তে দেখুৱাইছে--

"শুকান পাতত মৰমৰণি উঠে। আমজোপাৰপৰা দূৰত ছাঁত শুই আছে ছাগলী এজনী। লগতে দুটা পখৰা চিখৰা পোৱালী তাইৰ ডিঙিত ডিঙি পেলাই শুই আছে। গম পোৱা নাই শিয়ালে নিব-- সি মনতে কয়। কিন্তু তাৰ বিশ্রামত বাধা দিবলৈ তাৰ সত নাযায়। গা-গছজোপাত বগাই ফুৰিছে মজাৰলি আমৰলি পৰুৱাবোৰ। উঠা উঠিছে, নমা নামিছে কিয়? সি হ'লে একো বুজিব পৰা নাই। .... গা-গছডালৰ অলপ আঁতৰত শুকাই দ'ম হৈ পৰি থকা পাতবোৰৰ ফাঁকে ফাঁকে সুৰুঙা বিচাৰি দুৰৰি বনবোৰ শেঁতা সেউজীয়া মুখবিলাকেৰে ভুমুকি মাৰি বাহিৰৰ জগতখন যেন চাবখুজিছে। সি একান্ত মনে চাই ৰ'ল। বৰ খং উঠি গ'ল তাৰ। এই অপদার্থ বুঢ়া পাতবোৰ, যাৰ জীৱনত পচি-জহি সাৰ হৈ মাটিৰ লগত মিহলি হৈ যোৱাৰ বাহিৰে একো সার্থকতা নাই। সিহঁতকেই শৰীৰৰ সমস্ত হেঁচা দি বাট বন্ধ কৰি থৈছে এই দূৰৰিবোৰক।" [২৮]

হাবিৰ মাজত থকা আমগছ, পৰুৱা, দূৰৰিবন আদি প্রাকৃতিক উপাদানবোৰৰ জৰিয়তে গল্পকাৰে প্রতীকধর্মী পৰিৱেশ এটা অংকন কৰিছে। এই উপাদানবোৰে ভদ্রকান্ত, মোহন আৰু মুহিতা যিখন সমাজত বাস কৰে তাকে

প্রতিনিধিত্ব কৰিছে। লগতে পুৰণি আৰু নতুন প্ৰজন্মৰ চিন্তাধাৰাৰ প্ৰাৰ্থক্যও দেখুৱাইছে। পুৰণি কিছুমান গোড়া সামাজিক ৰীতি-নীতিয়ে নতুন প্ৰজন্ম বা মোহন, মুহিতাৰ দৰে ডেকা-গাভৰুক নিজৰ ইচ্ছামতে জীয়াই থকাত বাধা প্ৰদান কৰে। ইয়াত ৰঙা পৰুৱাবিলাকক সমাজৰ অন্যায়-অবিচাৰ, শুকান দ'ম হৈ পৰি থকা পাতবিলাকক সমাজৰ বুঢ়া মানুহবোৰ আৰু কোমলীয়া দূৰৱিবনবোৰ মোহন, মুহিতাৰ দৰে উঠি অহা ডেকা-গাভৰুক বুজাইছে। প্ৰকৃতিৰ এনে ক্ষুদ্ৰ উপাদানবোৰ লৈ সমাজৰ তথা মানৱ জীৱনৰ চলি থকা কিছুমান অন্যায়-অধৰ্ম, কু-সংস্কাৰৰ বিৰুদ্ধে সাহিত্যৰ মাধ্যমেৰে প্ৰতিফলন কৰিব পৰা যি বিচক্ষনতা মহিম বৰাৰ গল্পত পোৱা যায় তাক শলাগিবলগীয়া।

১.৪ পাৰিৱাৰিক জীৱনৰ পৰিৱেশ ঃ

পাৰিবাৰিক জীৱনক অতি চিত্ৰাকৰ্শক ৰূপত তুলি ধৰাত বৰাৰ দক্ষতা অপৰিসীম। বিশেষকৈ বৰাই গ্ৰাম্য সমাজৰ পৰিয়ালৰ জীৱনক কেন্দ্ৰ কৰিয়েই বহুতো গল্প ৰচনা কৰিছে। এনে কৰিবলৈ যাওঁতে বৰাই ঘৰুৱা পৰিৱেশৰ পুংখানুপুংখ ছবি অংকন কৰিছে। মহিম বৰা যিহেতু গাঁৱত ডাঙৰ হোৱা; গতিকে সদায় দেখি অহা বাস্তৱ ঘটনাবোৰকে অতি সৰলভাৱে প্ৰতিফলিত কৰিছে। গাঁৱৰ গিৰিয়েক-ঘৈণীয়েকৰ মাজৰ কাজিয়া, এসোপা ল'ৰা-ছোৱালীৰ সৈতে দৰিদ্ৰ জীৱনৰ যন্ত্ৰণা, গিৰিয়েক-ঘৈণীয়েকৰ মাজৰ প্ৰেম আদি বৈশিষ্ট্যবোৰক উপস্থাপন কৰিবলৈ যাওতে বৰাই এখন ঘৰৰ ভিতৰৰ আৰু বাহিৰৰ সকলো দিশৰ নাটকীয় বিৱৰণ আগবঢ়াইছে। গতিকে এখন ঘৰৰ সামগ্ৰিক পৰিৱেশ এটাক মূৰ্ত ৰূপ দিয়াত গল্পকাৰ সফল হৈছে।

দৰিদ্ৰতাই মানুহৰ জীৱনলৈ অশান্তি আনিছিল। বিশেষকৈ স্বাধীনতাৰ পিছত হোৱা মূল্যবৃদ্ধি আৰু নিবনুৱা সমস্যাই গাঁওবোৰত বেছিকৈ প্ৰভাৱ পেলাইছিল। ফলত অভাৱ অনাটনে সহজ-সৰল মানুহবোৰৰ সংসাৰ সমস্যাৰে জৰ্জৰিত হৈ পৰিছিল। গিৰিয়েক-ঘৈণীয়েকৰ মাজত আন্তৰিকতা থাকিলেও অভাৱে সেই সম্পৰ্কত আউল লগাইছিল। উপাৰ্জনৰ পথ নাইকীয়া হোৱাত মতা মানুহবোৰে ঘৰৰ প্ৰয়োজনীয়তা পূৰণ কৰিব নোৱাৰি ঘৈণীয়েকহতঁক মাৰ-ধৰ কৰি সেই খং উলিয়াইছিল। গাঁৱলীয়া তিৰোতাই গিৰিয়েকৰ হাতত মাৰ খোৱাতো সচৰাচৰ ঘটনা। গতিকে গল্পত পাৰিবাৰিক পৰিৱেশটোৰ বাস্তৱ ৰূপ দিবলৈ বৰাই এনে দিশবোৰকো তেওঁৰ লিখনিৰ বিষয়বস্তু হিচাপে গ্ৰহণ কৰিছে। মহিম বৰাৰ 'ওচৰঘৰীয়া' গল্পত এনে বিষয়বস্তু পোৱা যায়। ই এখন গৃহস্থী ঘৰৰ পৰিৱেশ নিৰ্মাণ কৰাত অৰিহনা যোগায়।

ওচৰঘৰীয়া গল্পত এহাল দৰিদ্ৰ-পীড়িত মতা-মাইকীৰে এজাক ল'ৰা-ছোৱালীৰে সংসাৰ চলোৱা কথা আছে। গল্পটোৰ প্ৰথমতেই সিহঁতৰ দৰিদ্ৰতাৰে ভৰা জীৱনৰ ছবি পৰিৱেশ চিত্ৰণৰ জৰিয়তে দেখুৱাইছে--

"আবেলি অফিচৰপৰা আহি ঘৰ সোমোৱাৰ লগে লগে চকুত পৰিল ওচৰৰ খালি হৈ পৰি থকা ঘৰটো পিলপিলিয়া এজাক ল'ৰা-ছোৱালীৰে ভৰি পৰিছে। ভাবিছিলোঁ নগৰৰ ভিতৰত এই ঘৰটোৱেই শেহলৈকে খালি পৰি থাকিব। কেচা ভেটিৰ বাঁহৰ খুঁটাৰ ঘৰ। পাকঘৰৰ নামত এখন চালি, এচুকত হালি পৰিছে। অৰ্থাৎ এটা চুকত বাঁহডালৰ গাঁঠি একাই গৈছে। চাৰিওফালে এসময়ত এখন জেওৰা আছিল, অ'ত ত'ত থিয় হৈ থকা দুই এডাল জেওৰাই সেই ঐকিহ্য ঘোষণা কৰিছে। পাইখানা নামৰ চালিখনৰ ওপৰৰ চালখন তাহানিয়ে ধুমুহাই উৰুৱাই লৈ গৈছে।" [২৯]

ঘৰটোৰ অৱস্থা আৰু তাৰ চাৰিওকাষৰ যি পৰিৱেশ সি এইটোৱেই বুজাইছে যে কিমান দুখীয়া হ'লে মানুহ তেনে এটা পৰিৱেশত বাস কৰিব পাৰে। গল্পৰ কথক য'ত ভাড়া লৈ থাকে তাৰ কাষৰ জৰাজীৰ্ণ ঘৰটোতে দৰিদ্ৰ পৰিয়ালটো থাকিবলৈ আহিছে। বাহিৰৰ জগতখনৰ প্ৰতি উদাসিন পৰিয়ালটোৱে এজাক ল'ৰা-ছোৱালীৰ সৈতে খুজি-মাগি হ'লেও পেট পুৰোৱাটোৱেই একমাত্ৰ উদ্দেশ্য আছিল। যিদিনা ভাতৰ যোগাৰ কৰিব নোৱাৰিছিল সেইদিনাই গিৰিয়েক-ঘৈণীয়েকৰ কাজিয়াই হুলস্থুলীয়া পৰিৱেশৰ সৃষ্টি হৈছিল। ৰাতিপুৱাই বজাৰ কৰিবলৈ ওলায় যোৱা মানুহটো ৰাতি মদ খাই ঘৰ সোমোৱাত ঘৈণীয়েকৰ সৈতে কাজিয়ৰ সূত্ৰপাত হৈছে আৰু মতা মানুহৰ দম্ভালিৰে কোনো দোষ বিচাৰ নকৰাকৈ ঘৈণীয়েকক মাৰ-ধৰ কৰিছে--

"সন্ধিয়াৰ কোৰাছটো আধাঘন্টামান পিছতে মাৰ-পিত আৰু কান্দোন-কাটোনত পৰিণত হৈছিল, ইত্যাদি। বৰ্তমান ল'ৰা-ছোৱালিৰ মাত নুশুনাত বুজিব পাৰিলোঁ ভাগৰত খাই বৈ শুলে। কিন্তু বৰ্তমানযি আৰম্ভ হৈছে তাৰ নাম 'দৈত্য সংগীত'। মুনিহ মানুহ এটাই ঘৰৰ ভিতৰত গুজৰি-গুমৰি ফুৰিছে। মাতৰপৰাই বুজিব পাৰিলোঁ, মানুহটো বৰ শকত-

আৰত আধাসেৰী কলিজা থকা হ'ব লাগিব। গৃহিনী জনীয়েও সমানে উত্তৰ কাটি গৈছে। গৃহিণীৰ মাতত খাৰণিৰ চোক।"[৩০]

গিৰিয়েক ঘৈণীয়েকৰ কাজিয়া,মাৰধৰ, মাতৰ ডাঙৰ শব্দ আহি আখ্যায়কৰ কানত পৰিছিল। গল্পটোতত আখ্যায়কৰ জৰিয়তেহে পাৰিবাৰিক পৰিৱেশটো চিত্রিত কৰিছে। অভাৱ-অনাটন, দৰিদ্রতাই পৰিয়ালটোলৈ অশান্তি আনিছিল। ইয়াৰ লগতে অকৰ্মণ্য গিৰিয়েকে মদ খাই ঘৈণীয়েকৰ ওপৰত চলোৱা অত্যাচাৰৰ ছবিখনো প্রকাশ পাইছে।

ঘটনাৰ খুটিনাটি মাৰি বর্ণনা কৰা মহিম বৰাৰ গল্পৰ বৈশিষ্ট্য। এই বৈশিষ্ট্যই গল্পবোৰক আধিক জীৱন্ত কৰি তোলে। আখ্যায়কে চকুৰে দেখা নাই যদিও সিহঁতৰ কথা-বতৰা, মাৰ-ধৰ কৰা শব্দ আদিয়ে ঘৰখনৰ ভিতৰত কেনে পৰিৱেশৰ সৃষ্টি কৰি আছে তাক অনুমান কৰিব পাৰিছে--

"লগে লগে আকৌ এটা কোব। এইবাৰ স্থান-কাল পাহৰি গৈ ইনাই-বিনাই চিঞৰিবলৈ ধৰিলে। বোধহয় ল'ৰা-ছোৱালীজাকেও আগতেই সাৰ পাইছিল আৰু বাপেকৰ ভয়তে চুপ হৈ আছিল। এতিয়া মাকে তেনেদৰে কন্দা দেখি সিহঁত আৰু ৰ'ব নোৱাৰিলে; সকলোৱে একেলগে ৰাউচি জুৰি দিলে।

'চুপ্-চপপ্- এটা এচাকৈ নেলু চিঙিম। তহঁতৰ পৰা মোৰ এতিয়া 'মান মর্যাৎ' যাব নেকি?"

ডাঙৰ শিল বৰষুণ এজাকৰ পিছত অৱশিষ্ট দুই এটা শিল ঠলৰ ঠলৰ পৰাৰ দৰে চৰ, ভুকু, চাপৰৰ শব্দ শুনা গ'ল।"[৩১]

দৰিদ্র মানুহৰ জীৱনক মহিম বৰাই সহানুভূতিৰ দৃষ্টিৰে চাইছে। তেওঁৰ বেছিভাগ গল্পত দৰিদ্র মানুহৰ জীৱন সংগ্রামৰ ছবি প্রতিফলিত হৈছে। আখেজ আৰু ওচৰচুবুৰীয়া গল্প দুটাত দৰিদ্রতাই দাম্পত্য জীৱনলৈ আনি দিয়া অশান্তিৰ ছবি পৰিস্ফুট হৈছে। অভাৱে গিৰিয়েক-ঘৈণীয়েকৰ মাজৰ সম্পর্কবোৰ ঘুণীয়া কৰিছিল। সময়মতে পাকঘৰত খোৱা বস্তু গোটায় দিব নোৱাৰা পুৰুষবোৰে ঘৈণীয়েকহতঁক মাৰধৰ কৰিছিল। আখেজ গল্পত তেনে এক বিষয়বস্তুক কেন্দ্র কৰিয়ে লিখা হৈছে। ককাকৰ দিনত ধনে-ধানে উভৈনদী হৈ থকা মনেশ্বৰৰ ঘৰৰ অৱস্থা স্বাধীনতাৰ পিছত কংগ্রেছৰ শাসনকালত দিনক দিনে শোচনীয় হৈ আহিল। আনহাতে যি ৰূপেশ্বৰৰ ককাকে এসময়ত মনেশ্বৰৰ ঘৰত হালোৱা আছিল সেই ৰূপেশ্বৰ এতিয়া মহাজন হ'ল। স্বাধীনতাৰ পিছত মৌজাদাৰ, ঠিকাদাৰ শ্রেনী মানুহৰ জন্ম হ'ল আৰু সেই সুযোগতে ৰূপেশ্বৰৰ দৰে বহুত সুবিধাবাদী মানুহ ধনী হ'ল; কিন্তু মনেশ্বৰৰ দৰে যিবোৰ মানুহে স্বাধীনতাৰ আন্দোলন কৰি পুলিচৰ মাৰ খাই ঘূণীয়া হৈছিল সেইবোৰ মানুহে চৰকাৰৰ পৰা সাহায্য পোৱাৰ পৰিৱর্তে খাজনা দিব নোৱাৰাৰ কাৰণে থকা মাটিখিনিও হেৰুৱাবলগা হ'ল। ফলত খেতি কৰি দুবেলা দুমুঠি খাই থকা মানুহবোৰৰ বছেৰেকলৈ ধান-চাউলে নোজোৰা হ'ল। যিটো সময়ত ৰূপেশ্বৰৰ দৰে মহাজনৰ খেতি-পথাৰ, মাটি-বাৰীয়ে ভৰি আছে সেই সময়ত মনেশ্বৰৰ অৱস্থা একেবাৰে শোচনীয়। মনেশ্বৰ আৰু ৰূপেশ্বৰৰ জীৱনৰ পার্থক্য দেখুৱাবলৈ গল্পকাৰে পথাৰ আৰু কৃষি কর্মৰ জৰিয়তে এটা পৰিৱেশ নির্মাণ কৰাৰ লগতে মনেশ্বৰৰ জীৱনকো বাস্তৱৰূপত পাঠকৰ আগত দাঙি ধৰিবলৈ যত্ন কৰিছে। পৰিৱেশটো আচলতে প্রতীকাত্মকৰূপত উপস্থাপন কৰিছে--

"সি পথাৰৰ ফালে দাখন কাষলতিৰ তলতে লৈ ওলাই গ'ল। বাটৰ দুয়োকাষে পথাৰ। মাটি শুকাই গৈছে, খেৰ-বোকা দিয়া মাটিও শিলহেন হৈ চপৰা বান্ধিছে। অথচ, অথচ মৌজাদাৰ মহাজনৰ বিৰাট পথাৰ, তাৰ মাটি লহপহকৈ ফোপাই আহিছে ঠনধৰা তেজাল ৰোৱাৰে।"[৩২]

অভাৱে মনেশ্বৰৰ ঘৰুৱা পৰিৱেশ বেয়া কৰি আনিলে। চাউল গোটাই দিব নোৱাৰা মনেশ্বৰে কেইবাসাজো ভাত খোৱা নাই। ঘৈণীয়েকে খনীয়াখন বেছি লোকৰ ঘৰত কাম কৰি গোটোৱা চাউলে ভাত খাবলৈ মনেশ্বৰে অপমানবোধ কৰিছে। মহাজন, মৌজাদাৰৰ ওচৰতে মাটি, সোণ সকলো গ'ল। পৰিয়াল চলাবলৈ কোনো উপায় নথকাত মনেশ্বৰে সেই খং ঘৈণীয়েকৰ ওপৰতে উঠালে। ঘৈণীয়েকৰ মাত সি শুনিব নোৱাৰা হ'ল। গিৰিয়েক ঘৈণীয়েকৰ কাজিয়া আৰু মাৰপিটে ঘৰখনত প্রায়ে অসুস্থ পৰিৱেশ এটাৰ সৃষ্টি কৰি থাকে--

"গিৰিয়েকক এমুঠি সিজাই দিবই লাগিব। কেইসাজ যে ভাত নাই। এনেতে বাহিৰৰ পৰা আহিল চাহপানীৰ হুকুম। জুহাল বন্দী। মনৰ বিচাতত বকিলে মাকেহ্লু সিজোৱা পাততে সিজাই নাখালে চাহ। মনেশ্বৰৰ পৌৰুষত লাগিল।...আকৌ কুৰুক্ষেত্র কাণ্ড। ফলীয়া বাহৰ খৰি এচটা লৈ উৰাই-ঘূৰাই মৰিয়ালে। বাধা দিওতে জীয়েককো এই

প্রথম মাৰিলে। ৰাউচি টানি মাকে দুগুণ্ডেকিবলৈ ধৰিলে-- বিহকাঁড়ৰ দৰে একো একোযাৰ কথাই মনেশ্বৰৰ কলিজা যেন থকা সৰকা কৰি দিলে। চট্‌ফটাবলৈ ধৰিলে সি। তথাপি মাকৰ মুখ নমৰে, 'ফাট দিয়া আই বসুমতী। এই মতাৰ মুখ নাচাওঁ-- খুৰাব নোৱাৰে, পিন্ধাব নোৱাৰে-- বৰমতা ওলাইছে এওঁ।"[৩৩]

জীৱনৰ জটিল পৰিস্থিতি চম্ভালিব নোৱাৰি ঘৈণীয়েক, ল'ৰা-ছোৱালীক মাৰপিট, গালি-গালাজ কৰিলেও মনেশ্বৰে কিন্তু সিহঁতৰ ভাত মুঠি যোগাৰ কৰাৰ চিন্তাই অহৰহ কৰি আছে। ঘৈণীয়েকে মাৰ খালেও গিৰিয়েকে ভাত নাখালে দুখ কৰি থাকে। কিন্তু এই মৰম-চেনেহবোৰ সিহঁতৰ দৰে দৰিদ্রতাৰে ভৰা জীৱনত প্রকাশ কৰিবলৈ সুবিধা নাপায়। এনেদৰে ঘৰুৱা অশান্তিৰ পৰিৱেশ সৃষ্টি কৰি মহিম বৰাই মনেশ্বৰৰ মানসিক অৱস্থাৰ প্রতিফলন কৰিবলৈ যত্ন কৰিছে।

মনেশ্বৰে ঘৈণীয়েকক মাৰপিট কৰাৰ পিছতে এটা ভূমিকম্পৰ পৰিৱেশ সৃষ্টি কৰিছে। মনেশ্বৰৰ মতে এই ভূমিকম্প দৰিদ্র মানুহৰ ওপৰত মহাজন, মৌজাদাৰে চলোৱা শোষণ আৰু অন্যায়ৰ প্রতিশোধ। এই প্রতিশোধ স্বয়ং বসুমতিয়ে লৈছে-

"জোঁকাৰ-জোঁকাৰ, গর্জনি, হো-হোৱনি। বসুমতীয়ে সঁচাই ফাঁট মেলেই বা। ঘৈণীয়েকে লৰালৰিকৈ জুইকুৰাত পানী মাৰি শোৱাকোঠালৈ লৰ দিলে ল'ৰা-ছোৱালীকেইটাৰ ওচৰলৈ। মনেশ্বৰ তেতিয়াও স্থিৰ। কিন্তু আৰু নহয়। ঘৰটো যেন হালি আহিছে। ...মহাজনৰ ঘৰৰ ফালে বিৰাট শব্দ। মনেশ্বৰৰ চোতালত প্রকাণ্ড ফাঁট। এইবাৰ মনেশ্বৰ কিৰিলি পাৰি উঠিল, "হৰিবোল, তুমি আছা প্রভু। মহাজনৰ দালান ঘৰ চূর্ণাকৃত কৰিছা তুমি। বস্তাই বস্তাই দমাই থোৱা চাউলৰ বস্তাবোৰ তোমাৰ বুকুলৈ লৈ যোৱা আই বসুমতীহু বসুমতীৰ আজি আখেজ পুৰাবৰ দিন। আৰু থিয় হৈ থাকিব নোৱাৰি। বলিয়াৰ দৰে ঢলং-পলংকৈ মানুহবোৰ পৰিছে। গৰুবোৰ পঘা চিঙি লৰিছে। চৰাইবোৰে আর্তনাদ কৰি উঠিছে। মনেশ্বৰ বহি পৰিল। জোৰণি কমাৰ লগে লগে লৰ ধৰিলে মহাজনৰ ঘৰলৈ। মৰিশালি হৈ পৰিছে সেই ঠাই।"[৩৪]

ভূমিকম্পৰ এনে ভয়ংকৰ পৰিস্থিতি সৃষ্টিৰ মাজত মনেশ্বৰৰ ৰূপেশ্বৰৰ প্রতি থকা 'আখেজ' প্রতিফলিত হৈছে। বস্তাই বস্তাই চাউল গুদামত ভৰাই থাকোতে মনেশ্বৰে লঘোণীয়া ল'ৰা-ছোৱালীকেইটাই খাবলৈ চাউলকেইটামান বিচাৰি যাওতে ৰূপেশ্বৰে দিয়া নাছিল। সেই ৰূপেশ্বৰে ভূমিকম্পৰ পৰা ৰক্ষা কৰিবলৈ মনেশ্বৰক প্রাণ ভিক্ষা কৰিছে। ল'ৰা-ছোৱালীৰ মুখৰ ভাত কাঢ়ি নিয়া ৰূপেশ্বৰক কিন্তু পিতাক হিচাপে মনেশ্বৰে ক্ষমা নকৰিলে। অন্যায় কৰি ধনি হ'লেও সেই সুখৰ পৰিসিমা বহুত চুটি এই কথা মহিম বৰাই ৰূপেশ্বৰৰ মাজেৰে দেখুৱাইছে। দুখীয়া মানুহৰ সকলো কঢ়ি আনি মহাজন হোৱা ৰূপেশ্বৰক বসুমতীয়েও ক্ষমা নকৰিলে। গল্পটোত ব্যক্তিগত জীৱনৰ লগতে সমাজত চলি থকা অন্যায়-অধর্মৰ ছবিখনো বাস্তৱৰূপত প্রকাশ কৰিবলৈ সক্ষম হৈছে।

মহিম বৰাৰ চক্রৱৎ আৰু এটি পুৰাৰ জন্ম গল্পটো পাৰিবাৰিক পৰিৱেশৰ বিভিন্ন ৰূপ আছে। চক্রৱৎ গল্পত দৰিদ্রতাৰ কবলত পৰা পৰিয়াল এটালৈ নামি অহা দুর্যোগ আৰু এটি পুৰাৰ জন্ম গল্পত নৰ প্রজন্মৰ অসামাজিক কর্মই ঘৰখনলৈ অনা অশান্তি আদি কথাবোৰক চিত্রধর্মী ৰূপত প্রকাশ কৰিবলৈ যাওতে পৰিৱেশ চিত্রণে গল্পকেইটাত প্রাধান্য পাইছে।

১.৫ মানসিক অৱস্থা প্রতিফলিত পৰিৱেশ ঃ

প্রত্যেক মানুহে বাহ্যিক জগতখনত বিচৰণ কৰাৰ সমান্তৰালভাৱে মানসিক জগতখনতো অনবৰতে বিচৰণ কৰি থাকে। বাহিৰৰ সমাজখন এজন মানুহৰ কাৰণে যিমান দৰকাৰি তেনেকৈ মানসিক জগতত ক্রিয়া কৰি থকা বিষয়বোৰো গুৰুত্বপূর্ণ। সেয়ে সাহিত্যিকসকল সমাজৰ প্রতি যিমান দায়বদ্ধ তেনেদৰে সেই সমাজত বাস কৰা মানুহবোৰৰ ভিতৰৰ মানুহজনক উলিয়াই আনিব পৰাতো সমানে গুৰুত্বপূর্ণ দিছে। এই ক্ষেত্রত আধুনিক যুগৰ সাহিত্যিকসকলে মানুহৰ মনস্তাত্বিক দিশটোৰ ওপৰত গুৰুত্ব দিছে। চুটিগল্পৰ ক্ষেত্রত বিশেষকৈ ৰামধেনু যুগৰ গল্পকাৰসকলে চৰিত্রৰ মনৰ অৱস্থাক বিভিন্ন উপায়েৰে প্রতিফলিত কৰাত সফল হৈছে। মহিম বৰায়ো চৰিত্রৰ মনত

খেলি থকা বিভিন্ন অৱস্থাক পৰিৱেশ চিত্রণৰ মাধ্যমেৰে চুটিগল্পত উপস্থাপন কৰা দেখা গৈছে।

এচেৰেঙা স্মৃতিৰ জোনাক গল্পত নায়কে হঠাতে পুৰণি প্রেমিকা লিলিৰ গিৰিয়েকক দেখি অতিতৰ স্মৃতিত ভোল হৈ পৰিছে। লিলিৰ প্রতি থকা একপক্ষীয় প্রেমৰ স্মৃতি ৰোমন্থন কৰি থাকোঁতে অকলশৰে হাঁহি দিয়া নায়কে ঘৰৰ কাম কৰা ৰান্ধনী ল'ৰাটোৰ আগত অপ্রস্তুত অনুভৱ কৰিছে। এনে অৱস্থাই পৰিৱেশটো হাস্যমধুৰ কৰি তোলাৰ লগতে নায়কৰ মানসিক অৱস্থাৰো প্রতিফলন ঘটাইছে।

"... মই ধৰি ল'লোঁ লিলি মোৰ প্রেমত পৰিলেইহুঁ অকলশৰে এটা মানুহে হোহোৱাই হাঁহি উঠা দেখিলে ৰান্ধনি ল'ৰাটো অবাক হ'বই, বেৰত আঁউজাই থোৱা কেটেঙা হাৰকিউলছখনো অবাক হৈ গ'ল। ৰান্ধনি ল'ৰাটোৱে সন্ধিয়া মই ঘৰতে থকা দেখি চাহ একাপ লৈ আহিছিল মই অপ্রস্তুত হৈ দুটামান কাহ মাৰি তাকেহে উলতি ধমক দিলোঁ, যেনে-চাহকাপৰ ৰং ধৰা নাই, গতিকে সি বেছিকৈ ইকনমি মিজাৰ' লৈছে আৰু এই সময়ত আধাকাপ চাহ অর্থাৎ এক চিংগল চাহেই হ'লহেঁতেন, গতিকে সি মোক দেৱলীয়া কৰিব খুজিছে ইত্যাদি।" [৩৫]

নায়কে মনৰ অৱস্থা লুকুৱাবলৈ কাম কৰা ল'ৰাটোক কোৱা কথাখিনিয়ে পৰিৱেশটো হাস্যমধুৰ কৰি তোলাৰ লগতে ইয়াৰ মাজেৰে নায়কৰ মনৰ চঞ্চলতাও প্রকাশ পাইছে।

চৰিত্রৰ মনৰ অস্থিৰতাক পাঠকৰ আগত তুলি ধৰিবলৈ মহিম বৰাই পৰিৱেশ নির্মাণত বিশেষ গুৰুত্ব দিয়ে। এচেৰেঙা স্মৃতিৰ জোনাক গল্পত বৰাই তেনে এটা পৰিৱেশেই নির্মাণ কৰিছে। লিলিয়ে তামোল লৈ নায়কহঁতৰ আগত ওলাওতে নায়কৰ মনত বিভিন্ন কথাই অস্বস্তিৰ সৃষ্টি কৰিছে। যৌৱন কালত প্রেমত পৰা লিলিক আদহীয়া বয়সত সন্মুখত দেখি মনৰ খেলি মেলি আনৰ পৰা লুকুৱাবলৈ যত্ন কৰা নায়কে লিলিৰো একে অৱস্থা হোৱা বুলি অনুমান কৰিছে--

"ত্রস্তভাৱে ওৰণিখন টানি এহাতে এঁঘটি পানী আৰু এহাতে বটা লৈ বোৱাৰী আমাৰ ওচৰলৈ আহিল। বটাত কতা তামোলৰ উপৰিও, দুখন পাণত দুজনৰ খুন্দা তামোল। সকলোৱে যেন কিবা একো এযাৰ ক'ব খুজিছে। আমি চকীতে গা লৰালোঁ মাত্র। মই হাত মেলি বটাতো বুঢ়ালৈ আগবঢ়াই দিলোঁ। মাষ্টৰক, বুঢ়িক দিয়াৰ পিছতে নিজে তামোল এখন লৈ "ভালনে তোমাৰ?" বুলি কথাযাৰ সুধিবলৈহে পালোঁ, লিলিয়েও ইমান সময় উচপিচাই থাকি একেলগেই কিবা এযাৰ সুধি পেলালে। কোনেও কাৰো কথা নুশুনিলোঁ। এনে অস্বস্তিকৰ অৱস্থাটো সহজ কৰিবলৈ যেন লিলিয়ে অজানিতেই শাহুৰেকৰ কোলাৰ পৰা কেচুঁৰাটো নিজৰ কোলালৈ লৈ গ'ল। বুজিলো মাকৰ কোলা অকল কেঁচুৰাৰ কাৰণেই যে নিৰাপদ নহয়, কেচুৰা কোলাত লৈ মাকো বহুখিনি নিৰাপদ।" [৩৬]

এনেধৰণৰ পৰিৱেশে ইংগিতার্থক অর্থ প্রকাশ কৰিছে। নায়ক আদহীয়া হ'ল আৰু লিলিৰো ঘৰ-সংসাৰ বহুখিনি আগবাঢ়িল। কিন্তু লিলিক দেখি অতীতৰ কথা মনত পৰা নায়কে লিলিৰ অনুভৱতো সেইখিনিকে দেখা পোৱাৰ অনুমানকৰিছে- 'বুজিলো মাকৰ কোলা অকল কেঁচুৰাৰ কাৰণেই নিৰাপদ নহয়, কেঁচুৰা কোলাত লৈ মাকো বহুখিনি নিৰাপদ।'-- এই বাক্যাংশই নায়কৰ মনৰ অৱস্থাহে প্রকাশ কৰিছে। লিলিৰ প্রতিটো কামতেই নায়কে নিজৰ চিন্তাৰ মিল দেখিছে। যেন লিলিয়ে নায়কৰ পৰা বাচিবলৈহে সকলো কাম কৰিছে। গল্পৰ এনে উপস্থাপনশৈলীয়ে নায়কৰ মানসিক চিন্তাৰ প্রতিফলন ঘটোৱাৰ লগতে লিলি চৰিত্রকো গতিশীলতা প্রদান কৰিছে।

কুলিটোৱে মাতে কিয় গল্পত মোহনৰ চৰিত্রত পৰিৱর্তনশীল মানসিকতাক দেখুৱাইছে। দেউতাক আৰু সমাজৰ বিৰুদ্ধে গৈ প্রেমিকা মুহিতাক আপোন কৰি ল'বলৈ বিচাৰিছে। সমাজ এখন বর্তি থাকিবলৈ কিছুমান নীতি-নিয়ম বা জ্যেষ্ঠসকলৰ পৰামর্শৰ প্রয়োজন হয়। কিন্তু কিছুমান গোড়া সিদ্ধান্তই নৱ-প্রজন্মক মুকলিকৈ জীয়াই থকাত প্রতিবন্ধকতাৰ সৃষ্টি কৰি আহিছে। বিশেষকৈ নাৰীসকল সদায় শোষণৰ বলি হৈ আহিছে। এই গল্পত মুহিতা চৰিত্রটোক গল্পকাৰে শোষিত চৰিত্রৰ ৰূপত অংকন কৰিছে। কিন্তু নৱ-প্রজন্মক প্রতিনিধিত্ব কৰা মোহন চৰিত্রই সমাজৰ এনে অন্যায়ৰ প্রতিবাদ কৰি দেউতাকৰ বিৰুদ্ধে গৈ মুহিতাক আপোন কৰি ল'বলৈ বিচাৰিছে। মোহনৰ পৰিৱর্তনশীল মনৰ ধাৰণাক গল্পকাৰে পোনপটিয়াকৈ নকৈ পৰিৱেশৰ মাধ্যমেৰে বুজাবলৈ যত্ন কৰিছে--

"আন্ধাৰ কোঠাৰ বন্দীবোৰ বহুদিনৰ মূৰত মুকলি আকাশৰ তলৰ স্বাধীনতাৰ পৰশ পোৱাৰ দৰে শোঁতা হাঁহি এটা গোটেই দূৰৰিডৰাতে বিয়পি পৰিল। সিহঁতে যেন স্বস্তিৰ নিশ্বাস এটা পেলালে। সিহঁতৰ কাষতে সি মুঠাৰ কঠটো

পাৰি ল'লে। ভৰিটো অৱশভাৱে পেলাই দি দুইখন হাত মুৰৰ তলত জুকিয়াই লৈ সি ওপৰলৈ চাই ৰ'ল। কুলিটোৱে আকৌ মাতি উঠিল।"[৩৭]

মোহনৰ পৰিৱৰ্তনশীল হ'বলৈ আৰম্ভ কৰা মনটোৰ কথা গল্পকাৰে এনে ব্যঞ্জনাময় পৰিৱেশৰ সৃষ্টিৰ জৰিয়তে দেখুৱাইছে। সমাজলৈ ভয় কৰি মুহিতাৰ পৰা আঁতৰি থকা মোহনে সমাজৰ সকলো কথা আওকান কৰি মুহিতাক আপোন কৰি ল'বলৈ চিন্তা কৰিছে। ইয়াতে লেখকৰ প্ৰগতিশীল চিন্তাধাৰাৰ প্ৰকাশ ঘটিছে। সমাজৰ অযুক্তিকৰ সিদ্ধান্তই আজিৰ ডেকাৰ ইচ্ছাক দমন কৰি ৰাখিব নোৱাৰে। সেয়ে মোহনে বাপেকৰ বিৰুদ্ধে থিয় হৈ ঘৰৰ পৰা ওলায় আহিছে। মোহনৰ প্ৰতিবাদী মনটোক বহি থকা হাবিখনত ঘটি থকা বিভিন্ন অৱস্থাৰ মাধ্যমেৰে উপস্থাপন কৰিছে।

২.০ উপসংহাৰ ঃ

'মহিম বৰাৰ চুটিগল্পত পৰিৱেশ চিত্ৰণৰ ভূমিকা' বিষয়টোৰ ওপৰত অধ্যয়ন কৰি আমি তলৰ সিদ্ধান্ত কেইটাত উপনিত হ'ব পাৰো-

(ক) চুটিগল্পৰ ৰচনা-ৰীতি হিচাপে পৰিৱেশ চিত্ৰণে মহিম বৰাৰ গল্পসমূহত প্ৰধান বৈশিষ্ট্য হিচাপে স্থান লাভ কৰিছে আৰু এই ৰীতিৰেই বৰাই তেওঁৰ প্ৰায়বোৰ গল্পৰ জৰিয়তে ব্যক্তিজীৱনৰ বিভিন্ন সমস্যাক নাটকীয় ৰূপ দিছে।

(খ) প্ৰকৃতিৰ অবিহনে মানুহ জীয়াই থাকিব নোৱাৰে। এক কথাত ক'বলৈ গ'লে প্ৰকৃতিয়ে মানুহৰ জীৱনক নিয়ন্ত্ৰণ কৰে। গল্পকাৰসকলেও আৰম্ভণিৰ পৰা প্ৰকৃতিক চুটিগল্পৰ এক প্ৰধান কৌশল হিচাপে ব্যৱহাৰ কৰি আহিছে। মহিম বৰায়ো চুটিগল্পৰ বিষয়বস্তুক বুজাবৰ কাৰণে প্ৰকৃতিৰ সঘন ব্যৱহাৰ কৰিছে। বহু ক্ষেত্ৰত এই প্ৰকৃতিয়ে গ্ৰাম্য পটভূমিক বাস্তৱিক ৰূপ দিয়াত সহায় কৰাৰ উপৰিও গল্পৰ বিষয়বস্তুৰ উপস্থাপন আৰু চৰিত্ৰ চিত্ৰণৰ ক্ষেত্ৰত প্ৰতীক হিচাপেও ব্যৱহাৰ কৰিছে। গতিকে মহিম বৰাৰ গল্পৰ পৰিৱেশক বিভিন্ন ভাগত ভাগ কৰি আলোচনা কৰিলেও ইটো পৰিৱেশৰ লগত সিটোৰ ওতঃপ্ৰোতঃ সম্পৰ্ক আছে।

(গ) পৰিৱেশ সৃষ্টিৰ মাজেৰে মহিম বৰাই যি বাৰ্তা প্ৰেৰণ কৰিব বিচাৰে সেই কথা প্ৰায়ে আওপকীয়াকৈ ব্যক্ত কৰে। কেতিয়াবা এনে পৰিৱেশে পাঠকক হাঁহিৰ খোৰাকো যোগায়। সমস্যাৰে জৰ্জৰিত মানৱজীৱনৰ সংগ্ৰামক দেখুৱাবলৈ যাওতে পাঠকৰ মনত তেওঁ সুখানুভূতি প্ৰদান কৰা কৌশলে গল্পক আকৰ্ষনীয় কৰি তোলে।

(ঘ) চৰিত্ৰ অনুযায়ী সংলাপ আৰু ভাষা ব্যৱহাৰৰ যি দক্ষতা সি মহিম বৰাৰ গল্পসমূহত বাস্তৱ পৰিৱেশ এটা চিত্ৰণত যথেষ্ট সহায় কৰিছে।

(ঙ) পৰিৱেশ একোটা নিৰ্মাণ কৰি তেওঁ সমসাময়িক সমাজখনৰ ৰাজনৈতিক-অৰ্থনৈতিক দিশসমূহক জীৱন্ত ৰূপত তুলি ধৰিছে।

(চ) বৰাৰ চুটিগল্পৰ এনে প্ৰকাশভংগীয়ে অসমীয়া গ্ৰাম্য-সাংস্কৃতিক জীৱনটো বাস্তৱ ৰূপত প্ৰকাশিত হৈছে।❑

প্ৰসংগটোকা ঃ

১। শৰ্মা, হৰিনাথ ঃ সাহিত্য প্ৰৱেশ, পৃ.১৮৯।

২। দত্ত, উদয় ঃ চুটিগল্প, পৃ. ৭৬।

৩। সদ্যোক্ত, পৃ. ৭৮।

৪। বৰা, হেম ঃ সাহিত্য বিচাৰৰ মূল কথা, পৃ. ১৪৭।

৫। গগৈ, লীলা ঃ অসমৰ সংস্কৃতি, পৃ. ৪।

৬। গোহাঁই, হীৰেন (সম্পা.) ঃ গল্প সমগ্ৰ মহিম বৰা, পাতনি।

৭। বৰকটকী, অৰিন্দম (সম্পা.) ঃ মহিম বৰা কৃতিত্বৰ অৱলোকন, পৃ. ১৭৩)।

৮। গোহাঁই, হীৰেন (সম্পা.) ঃ গল্প সমগ্ৰ মহিম বৰা, পৃ. ৩৭৭।

৯। সদ্যোক্ত, পৃ. ৩৮৩।

১০। সদ্যোক্ত, পৃ. ১৭২।

১১। সদ্যোক্ত, পৃ. ১৭২।

১২। সদ্যোক্ত, পৃ. ১৭৮।

১৩। সদ্যোক্ত, পৃ. ৩১।

১৪। সদ্যোক্ত, পৃ. ৩১।

১৫। সদ্যোক্ত, পৃ. ৩১।

১৬। সদ্যোক্ত, পৃ. ৩১।

১৭। সদ্যোক্ত, পৃ. ১।

১৮। সদ্যোক্ত, পৃ. ১।

১৯। সদ্যোক্ত, পৃ. ১।

২০। সদ্যোক্ত, পৃ. ৫।

২১। সদ্যোক্ত, পৃ. ৫।

২২। সদ্যোক্ত, পৃ. ৫৭।

২৩। সদ্যোক্ত, পৃ.৫৯।

২৪। সদ্যোক্ত, পৃ. ৬১।

২৫। সদ্যোক্ত, পৃ. ১৬৩।

২৬। সদ্যোক্ত, পৃ. ১৭১।

২৭। সদ্যোক্ত, পাতনি।

২৮। সদ্যোক্ত, পৃ.৯৯।

২৯। সদ্যোক্ত, পৃ. ৩৪।

৩০। সদ্যোক্ত, পৃ. ৩২।

৩১। সদ্যোক্ত, পৃ.৩৬।

৩২। সদ্যোক্ত, পৃ. ১০৫।

৩৩। সদ্যোক্ত, পৃ. ১০৬।

৩৪। সদ্যোক্ত, পৃ. ১০৬-১০৭।

৩৫। সদ্যোক্ত, পৃ. ২৯।

৩৬। সদ্যোক্ত, পৃ. ৩২।

৩৭। সদ্যোক্ত, পৃ. ৩৭।

সহায়ক গ্রন্থপঞ্জী ঃ

মুখ্য উৎস ঃ

১। গোহাঁই, হীৰেন (সম্পা.) ঃ গল্প সমগ্র মহিম বৰা, বনলতা, গুৱাহাটী, তৃতীয় প্রকাশ, ২০১২।

গৌণ উৎস ঃ

২। গগৈ, লীলা ঃ অসমৰ সংস্কৃতি, বনলতা, গুৱাহাটী, ৰচ ম সংস্কৰণ, ২০১৯।

৩। দত্ত, উদয় ঃ চুটিগল্প, ষ্টুডেন্টচ্ ষ্ট'ৰচ্, গুৱাহাটী, নতুন সংস্কৰণ, ২০১৮।

৪। ঠাকুৰীয়া, ৰামমল ঃ সাহিত্য বিচাৰ, বীণা লাইব্রেৰী, গুৱাহাটী, নতুন সংস্কৰণ, ২০১৯।

৫। বৰকটকী, অৰিন্দম (সম্পা.) ঃ মহিম বৰা কৃতিত্বৰ অৱলোকন, ক্রান্তিকাল প্রকাশন, নগাঁও, প্রথম প্রকাশ, ২০১৬।

৬। বৰা, হেম ঃ সাহিত্য বিচাৰৰ মূলকথা, চন্দ্র প্রকাশ, পাণবজাৰ, গুৱাহাটী, প্রথম প্রকাশ,১৯৯৫।

৭। শর্ম্মাদলৈ, হৰিনাথ ঃ সাহিত্য-প্রৱেশ, পদ্মপ্রিয়া লাইব্রেৰীৰ হকে, শান্তিপুৰ, নলবাৰী, ষষ্ঠ প্রকাশ, ২০২১।

लेखकों से निवेदन

- द्विभाषी राष्ट्रसेवक में प्रकाशन हेतु पत्रिका की प्रकृति के अनुरूप भाषा, साहित्य, समाज, कला व संस्कृति विषयक लेख आमंत्रित हैं।
- अनूदित रचनाओं के संदर्भ में मूल लेखक की अनुमति/स्वीकृति अनिवार्य है।
- लेखक अपनी रचनाएँ केंद्रीय हिंदी निदेशालय द्वारा स्वीकृत मानक हिंदी यूनिकोड में 13 प्वाइंट में टंकित कराकर पत्रिका के ई-मेल : rastrasewak51@gmail.com पर अथवा स्पष्ट अक्षरों में लिखकर समिति कार्यालय के पते (मंत्री, असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, रूपनगर, गुवाहाटी-781032, असम) पर भेजें।
- अस्वीकृत रचनाएँ लौटाई नहीं जाएँगी। अत: भेजी गई रचना की प्रति अपने पास अवश्य रखें।
- लेखक अपनी रचना के साथ अपना नाम, पदनाम, मोबाइल नं., ई-मेल, पूरा पता सहित एक पासपोर्ट साइज फोटो अवश्य भेजें।
- शोधपत्र की न्यूनतम शब्द-सीमा 2000 और अधिकतम 3000 होनी चाहिए और सार 150 से 200 शब्दों के भीतर होना चाहिए।
- असमीया भाषा में लिखे गए लेख को पेजमेकर फारमेट में गीतांजलि फंट, 12 प्वांइट में टाइप कराकर भेज सकते हैं।
- शोधपत्र के लेखन में एमएलए शैली का अनुपालन करना होग।
- शोधपत्र में क्रमश: शीर्षक, सार, प्रस्तावना, उद्देश्य, संसाधन/सामग्री, प्रविधि/पद्धति, क्षेत्र, मूल विषयवस्तु का विश्लेषण, परिणाम/उपलब्धियाँ, निष्कर्ष और उद्धृत कार्य शामिल होंगे।
- शोधपत्र की मौलिकता हेतु रचना के साथ घोषणा-पत्र संलग्न किया जाना आवश्यक है।
- लेखक अपनी तथ्यात्मक सटीकता के लिए पूरी तरह जिम्मेदार हैं।

द्विभाषी राष्ट्रसेवक का सदस्यता प्र-पत्र

यहाँ से काटिए

नाम : .....

पदनाम : .....

पूरा पता : .....

: .....

ई-मेल : ..... मोबाइल : .....

RTGS का विवरण : .....

सदस्यता शुल्क

व्यक्तिगत		*संस्थागत*	
प्रति अंक	: रु. 100/-	प्रति अंक	: रु. 150/-
वार्षिक	: रु. 1000/-	वार्षिक	: रु. 1,500/-
आजीवन सदस्य	: रु. 10,000/-		

निर्धारित शुल्क मनीऑडर/डी.डी. के द्वारा असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति के नाम से समिति कार्यालय के पते पर भेजा जा सकता है। ऑनलाइन शुल्क निम्न विवरण के अनुसार भेजें :-

Name of Beneficiary	: Asom Rastrabhasha Prachar Samiti
A/c No.	: 0853010182614
Name of Bank & Branch	: Punjab National Bank, G.S. Road
IFS Code	: PUNB0085320

अधिक जानकारी के लिए संपर्क करें -

डॉ. क्षीरदा कुमार शइकीया, मंत्री, असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, सेवा मंदिर पथ, रूपनगर, डाक : इंद्रपुर, जिला : कामरूप महानगर, गुवाहाटी-781032 (असम), मो. 9101541380, ई-मेल : rastrasewak51@gmail.com

दीक्षांत समारोह में उपाधि पत्र ग्रहण करते हुए स्नातक-स्नातिका।

दीक्षांत समारोह में उपस्थित प्रचारक-प्रचारिका, शिक्षक-शिक्षिका, स्नातक-स्नातिका एवं आमंत्रित अतिथि गण।

POSTAL REGISTRATION NO. GH/127/2022-24 ❖ Date of Publication : 31st January, 2024 ❖ RNI No. ASSBIL/2009/31008

असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, गुवाहाटी

संपादकीय कार्यालय :

प्रधान संपादक, द्विभाषी राष्ट्रसेवक, असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, सेवा मंदिर पथ, रूपनगर, गुवाहाटी-781032

arpsguwahati.com ✉ rastrasewak51@gmail.com 9101541395/9101541380